प्राचीन
हस्तलिखित

वृहद् मन्त्र महार्णवम्

ॐ

अथ बृहद् मन्त्र महार्णवम्

भाषा-टीका सहितम्

प्रथम खण्डः

[सामान्य-ज्ञान एवं साधन-विधि प्रकरणम्]

देहाती पुस्तक भण्ड़ार

4422, नई सड़क, दिल्ली-110 006

फोन : 23261030, 23985175

न्यौछावर: 1100/-

(एक हजार एक सौ मात्र)

visit us at www.dehatipustakbhandar.com, E-mail : hcb60@hotmail.com

सम्पादक:
विद्या-वारिधि, आचार्य पं० राजेश दीक्षित
(सहस्राधिक ग्रंथों के सुप्रसिद्ध लेखक)

ॐ

सत्यधर्म समाश्रित यत्कर्म्मः कुरुते नरः ।
तदेव सफलं कर्म्म सत्यं जानीहि सुव्रते ॥

× × ×

नहि सत्यात्परो धर्मः न पापमनृतात्परम् ।
तस्मात्सर्व्वात्मना मर्त्यः सत्यमेकं समाश्रयेत ॥

× × ×

सत्यहीना वृथा पूजा सत्यहीनो वृथा जपः ।
सत्यहीनं तपो व्यर्थमूषरे वपनं यथा ॥

× × ×

सत्यरूपं परं ब्रह्म सत्यं हि परमं तपः ।
सत्यमूलाः क्रियाः सर्व्वाः सत्यात्परतरो नहि ॥

× × ×

सूर्य

चन्द्र

मंगल

बुध

गुरु

शुक्र

शनि

राहु

मं०
मं०
८

भा०
टी०

महाकाली
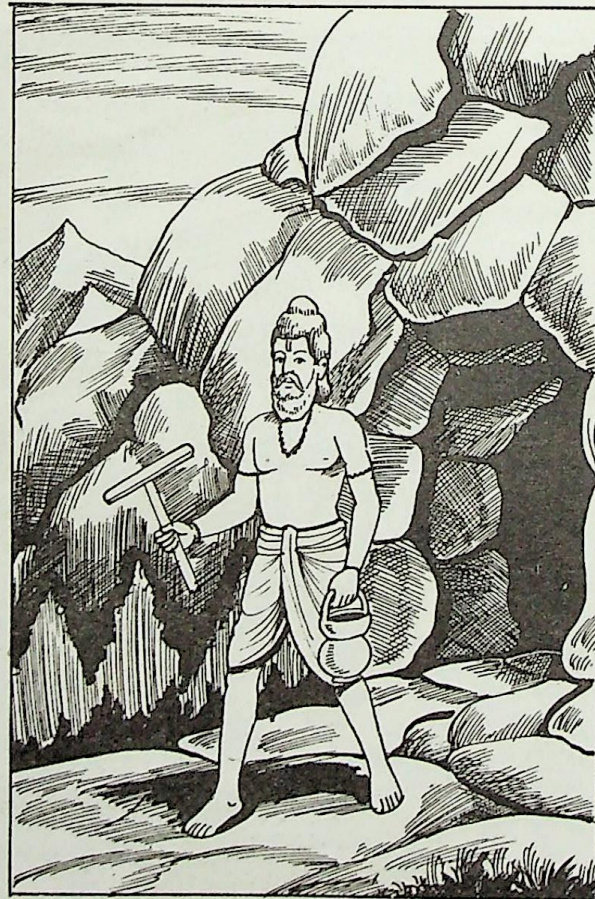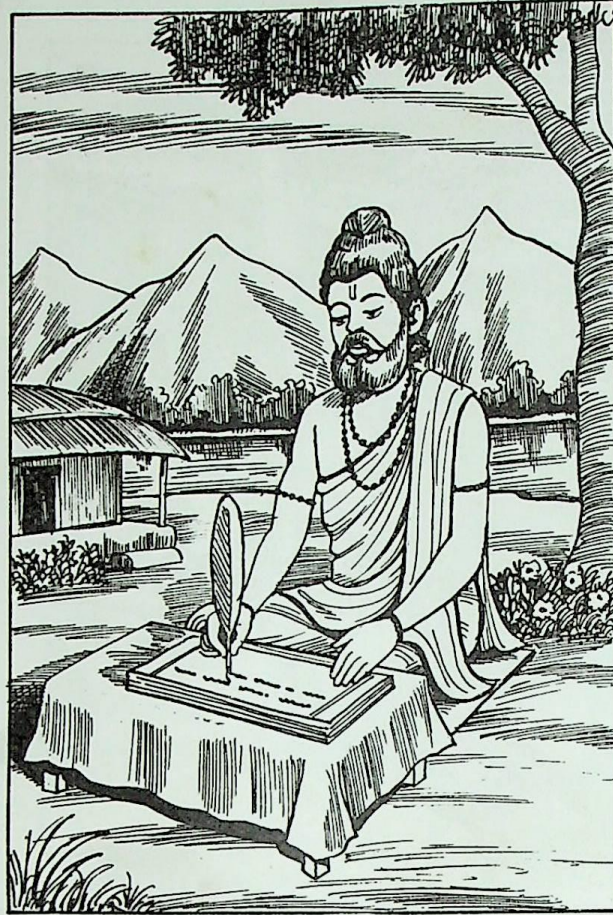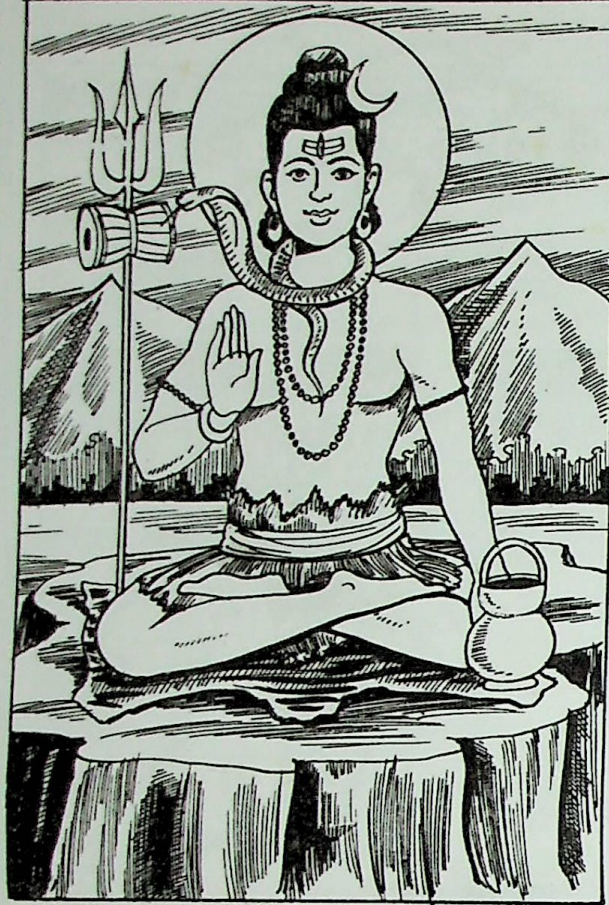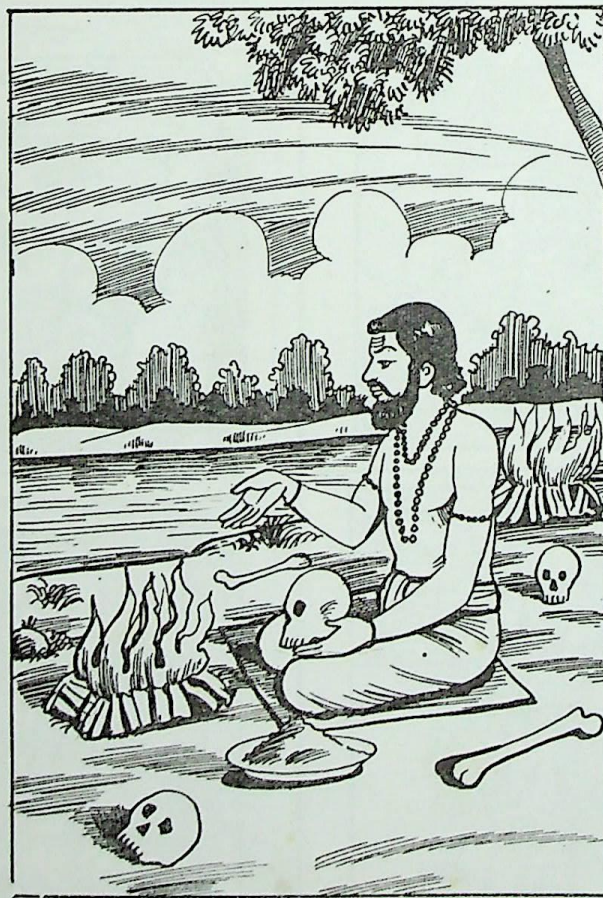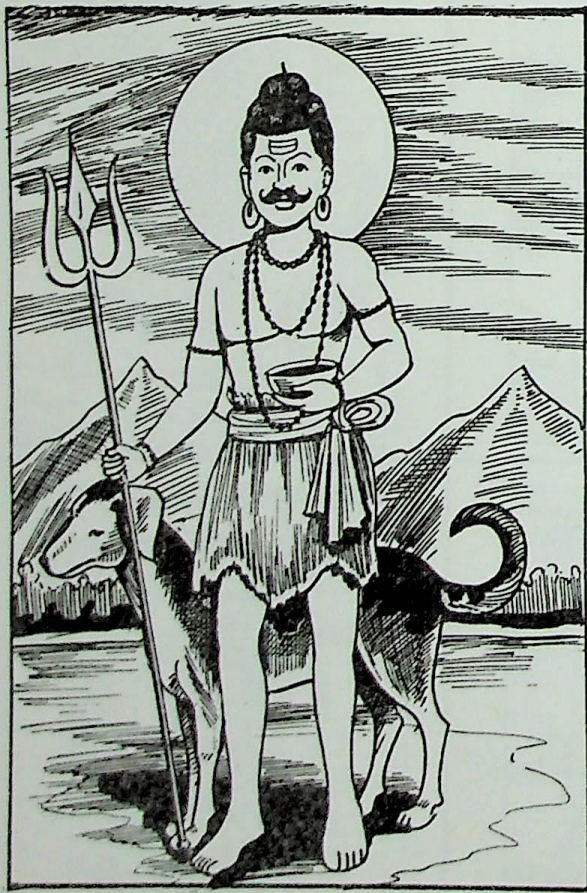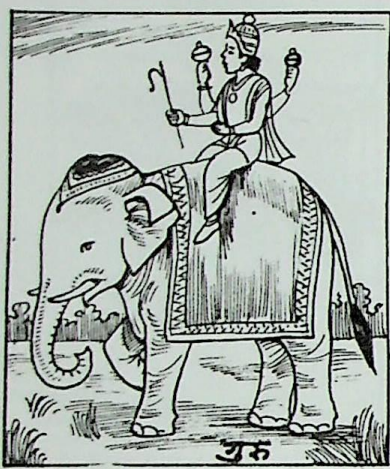
वचनामृतम्

किं जपेन किं तपसा किमन्यत्तीर्थ सेवया:।
श्रीगुरोरर्चितौ येन पादौ तेनार्चितं जगत् ॥१॥
ब्रह्माण्ड भाण्डमध्ये तु यानि तीर्थानि सन्ति वै।
गुरोपादोदके तानि निवसन्तीहि सन्ततम् ॥२॥
गुरो: पादोदकं येन शिरसा पुण्यभाग्भवेत्।
सर्व तीर्थ जलं पुण्यं लभतेनात्र संशय: ॥३॥

× × ×

प्रणवं निष्कलं साक्षाद् ब्रह्म विष्णु शिवात्मकम्।
प्रणवं प्रजपेद्यस्तु स साक्षाद्विष्णु रूप धृक् ॥

× × ×

शक्तिमाश्रित्य निवसेद् यत्र कुत्राश्रमे वसन्।
साधकस्यार्चितां शक्तिं साधकं ज्ञानकारिणीम् ॥
इहलोके सुखं भुक्त्वा देवीदेहे प्रलीयते।
साधकेन्द्रो महासिद्धिं लब्धवायाति हरे: पदम् ॥
क्रोधान्मोहाच्छला क्वापि यदि पूजां न कारयेत्।
कल्प कोटिशतेनापि तस्य सिद्धिर्न जायते ॥

मनसायो जपेन्मंत्र मीशान ध्यानमास्थित:।
देहेनानेन संसिद्ध: प्रयाति परमं पदम् ॥१॥
लिङ्गे वा स्थण्डिले वापि सर्वकाम फलप्रदम्।
इहलोके परे स्वर्गं राज्यं चैव लभेन्नर: ॥२॥
सद्यादिभिर्यजन्तीह ये शिवं सर्वकारणम्।
ते मोक्षमाप्नुवन्तीह मुनयो। मोक्ष कांक्षिण: ॥३॥

× × ×

आदित्याभिमुखो भूत्वा ऊर्ध्वबाहु: शिवार्चक:।
ब्रह्महत्यादि पापानि नश्यन्त्येव न संशय: ॥

× × ×

ये कुर्वन्ति कुलाचारं सत्यव्रता जितेन्द्रिया:।
व्यक्ताचारा दयाशीला नहि तान्बाधते कलि: ॥
गुरुशुश्रूषणे युक्ता भक्ता मातपदाम्बुजे।
अनुरक्ता: स्वदारेषु नहि तान्बाधते कलि: ॥
सत्यव्रता: सत्यनिष्ठा: सत्यधर्म परायणा:।
कुल साधान सत्याये नहि तान्बाधते कलि: ॥
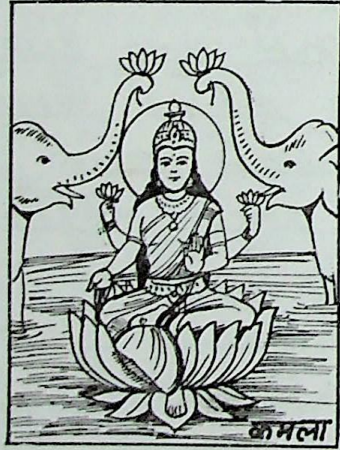
अथ बृहद् मन्त्र महार्णवस्य खण्डानुक्रमणिका

टिप्पणी:- प्रत्येक खण्ड की विस्तृत विषयानुक्रमणिका उसी खण्ड के साथ दी गई है।

हिन्दू धर्म किसी व्यक्ति-विशेष द्वारा प्रवर्तित नहीं है। इसका आधार वेदादि धर्म ग्रंथ हैं, जिन्हें 'श्रुति' तथा 'स्मृति' - इन दो श्रेणियों में विभक्त किया गया है। श्रुति-श्रेणी में वेद की चार संहितायें अर्थात् (१) ऋग्वेद, (२) यजुर्वेद, (३) सामवेद और (४) अथर्ववेद, ब्राह्मण-ग्रंथ तथा उपनिषदों की गणना की जाती है। वेद-संहितायें स्तुति-प्रधान, ब्राह्मण-ग्रंथ यज्ञ-कर्म-प्रधान तथा आरण्यक एवं उपनिषद् ज्ञान-चर्चा प्रधान हैं। 'श्रुति' श्रेणी के ग्रंथों को अपौरुषेय माना जाता है। स्मृति-ग्रंथ ऋषि-प्रणीत हैं।

श्रुति- 'ऋग्वेद' को चारों संहिताओं में प्रथम माना जाता है, अन्य वेद-संहिताओं में इसके अनेक सूक्त संगृहीत हैं। इसमें विभिन्न देवताओं की स्तुतियां हैं तथा अनेक सामाजिक विषयों की चर्चा की गई है। यह संहिता अष्टकों तथा मण्डलों में विभक्त है, जिन्हें वर्गों तथा अनुवाकों में बाँटा गया है। शौनक की अनुक्रमणी के अनुसार इसमें १०,५८० मन्त्र हैं। यह सूक्तों अर्थात् स्तोत्रों का भण्डार है। 'सामवेद' में अधिकांश मन्त्र ऋग्वेद के ही पाये जाते हैं। केवल ७२ मन्त्र ही इसके अपने हैं। यह संहिता 'पूर्वार्चिक' तथा 'उत्तरार्चिक' - इन दो भागों में विभक्त है। पूर्वार्चिक में ६ प्रपाठक हैं। इसे 'छन्द', छन्दसी' तथा 'प्रकृति' भी कहा जाता है। उत्तरार्चिक को 'ऊह' तथा 'रहस्य' भी कहते हैं।

'यजुर्वेद' में कुछ मन्त्र 'ऋग्वेद' के तथा कुछ अथर्ववेद के पाये जाते हैं। यह 'शुक्ल' तथा 'कृष्ण' – इन दो भागों में विभक्त है। शुक्ल यजुर्वेद को 'वाजसनेयि-संहिता' तथा कृष्ण-यजुर्वेद को 'तैत्तिरीय संहिता' भी कहते हैं। कृष्ण-यजुर्वेद को पूर्ववर्ती तथा शुक्ल-यजुर्वेद को परवर्ती माना जाता है। शुक्ल-यजुर्वेद याज्ञवल्क्य को प्राप्त हुआ था। तैत्तिरीय-संहिता अर्थात् कृष्ण-यजुर्वेद ७ अष्टकों अर्थात् काण्डों में विभक्त है। इसमें मन्त्रों के साथ ब्राह्मण का मिश्रण है तथा अश्वमेध, राजसूय, अतिरात्र, ज्योतिष्टोम आदि यज्ञों का वर्णन भी पाया जाता है। वाजसनेयि-संहिता अर्थात् शुक्ल-यजुर्वेद की १७ शाखाएँ हैं। इसमें ४० अध्याय हैं, जो १९७५ कण्डिकाओं में विभक्त हैं। इसके प्रारंभिक २५ अध्याय प्राचीन तथा अन्तिम १५ अध्याय परवर्ती माने जाते हैं। इसमें अश्वमेध, पुरुषमेध, चातुर्मास्य, अग्निष्टोम, अग्निहोत्र आदि यज्ञों का वर्णन है।
'अथर्ववेद' में कुल ६०१५ मन्त्र हैं। यह संहिता २० काण्डों में विभक्त है तथा प्रत्येक काण्ड अनुवाकों तथा सूक्तों में बँटा है। इसमें १२०० मन्त्र ऋग्वेद के पाये जाते हैं।

ब्राह्मण-ग्रंथ दो भागों में विभक्त हैं – (१) कर्मकाण्ड सम्बन्धी तथा (२) ज्ञान-काण्ड सम्बन्धी। ज्ञानकाण्ड-सम्बन्धी ब्राह्मण ग्रंथों को 'उपनिषद्' कहा जाता है। प्रत्येक ब्राह्मण-ग्रंथ में कोई-न-कोई उपनिषद् भी है, परन्तु कुछ उपनिषद् स्वतन्त्र रूप में भी पाये जाते हैं। कुछ उपनिषद् आरण्यकों में भी मिलते हैं।

ब्राह्मण-ग्रंथों में मुख्य रूप से यज्ञ-विषय का, आरण्यकों में

वाणप्रस्थ आश्रम के नियमों का तथा उपनिषदों में ब्रह्म-ज्ञान का निरूपण किया गया है। प्रत्येक ब्राह्मण-ग्रंथ का किसी-न-किसी वेद से सम्बन्ध है । इन ब्राह्मण ग्रंथों में 'ऐतरेय' तथा 'कौषीतकि' ऋग्वेद से; 'ताण्ड्य', 'सामविधान', 'आर्षेय', 'षड्विंश', 'वंश', 'छान्दोग्य', 'देवताध्याय', 'संहितोपनिषद्', 'जैमिनीय', 'मन्त्रब्राह्मण' तथा 'सत्यायन' सामवेद से; 'तैत्तिरीय' कृष्ण-यजुर्वेद से; 'शतपथ' शुक्ल-यजुर्वेद से तथा 'गोपथ' अथर्व-वेद से सम्बन्धित हैं।

आरण्यक-ग्रंथों में 'ऐतरेय', 'कौशीतकि' तथा 'बृहदारण्यक' प्रमुख हैं। उपनिषदों की संख्या १२३ से ११८४ तक बताई जाती है, परन्तु इनमें १० उपनिषद् ही प्रमुख माने जाते हैं — (१) ईश, (२) केन, (३) कठ, (४) प्रश्न, (५) मुण्डक, (६) माण्डूक्य, (७) तैत्तिरीय, (८) ऐतरेय, (९) छान्दोग्य तथा (१०) बृहदारण्यक। 'श्वेताश्वतर' तथा 'कौशीतकि' को भी महत्वपूर्ण माना गया है।

उक्त 'श्रुति' ग्रंथों के अतिरिक्त कुछ ऐसे ऋषि-प्रणीत ग्रंथ भी हैं, जिनका श्रुति-ग्रंथों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनमें 'वेदाङ्ग' तथा 'सूत्र ग्रंथ' हैं। वेदाङ्ग में -(१) शिक्षा (२) कल्प, (३) व्याकरण, (४) निरुक्त, (५) ज्योतिष तथा (६) छन्द की गणना की गई है। इन्हें 'शास्त्र' भी कहा जाता है। इस प्रकार ४ वेद तथा ६ शास्त्र हिन्दू-धर्म के मुख्य आधार हैं। सूत्र ग्रंथों का आधार भी वेद ही हैं। सूत्रग्रंथों के नाम हैं -(१) श्रौत सूत्र, (२) धर्म सूत्र तथा (३) गृह्य सूत्र । श्रौत सूत्रों में यज्ञ-यज्ञों की विधियों का

'धर्मसूत्र' में समाज-व्यवस्था के नियमों का तथा 'गृह्यसूत्र' में गृहस्थों के आह्निक कृत्य, संस्कार तथा अन्य धार्मिक विषयों का वर्णन है।

ऋग्वेद के 'सांख्यायन' तथा 'आश्वलायन'; सामवेद के 'मशक', 'कात्यायन' तथा 'द्राह्यायन'; शुक्ल-यजुर्वेद का 'कात्यायन'; कृष्ण-यजुर्वेद के 'आपस्तम्ब', 'हिरण्यकेशी', 'बौधायन' तथा भारद्वाज आदि के ६ एवं अथर्ववेद का 'वैताना' - ये सब श्रौतसूत्र हैं।

धर्मसूत्रकारों में आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी, बौधायन, वशिष्ठ, गौतम आदि प्रमुख हैं।

सामवेद के गोभिल' तथा 'खदिर'; ऋग्वेद के 'सांख्यायन', शाम्बव्य तथा आश्वलायन; अथर्ववेद का 'कौशिक', शुक्ल-यजुर्वेद का 'पारस्कर' तथा कृष्ण-यजुर्वेद के ८ गृह्यसूत्र हैं।

स्मृति - जिन महर्षियों ने 'श्रुति' के मन्त्रों को प्राप्त कर, अपनी 'स्मृति' की सहायता से धर्म-विषयक जिन ग्रंथों की रचना की उन्हें 'स्मृति' कहा जाता है। इनमें २० ऋषियों के नाम प्रमुख हैं - मनु, अत्रि, विष्णु, हारीत, याज्ञवल्क्य, उशना, अंगिरा, यम, आपस्तम्ब, सम्वर्त, कात्यायन, बृहस्पति, पाराशर, व्यास, शंख, लिखित, दक्ष, गौतम, शातातप तथा वशिष्ठ, इन ऋषियों के नाम पर ही इनकी स्मृतियाँ हैं। इनमें भी १८ स्मृतियाँ प्रमुख मानी गई हैं तथा वर्तमान काल में 'मनुस्मृति' को सर्वोपरि माना जाता है। मनुस्मृति के बाद याज्ञवल्क्य स्मृति को महत्व प्राप्त है।

सं० म० ३८ भा० टी०

स्मृति-ग्रंथों सामाजिक-धर्म की मर्यादाओं का अर्थात् वर्णाश्रम धर्म, राजधर्म एवं सामान्य-धर्म का निरूपण करते हुए प्रातः से सन्ध्या तक के दैनिक-कर्तव्य एवं स्त्री पुरुषों के लिए विभिन्न आवश्यक कर्तव्यों तथा सामाजिक नियमों का वर्णन किया गया है।

पूर्वोक्त स्मृतिकारों के अतिरिक्त निम्नलिखित ऋषियों को भी स्मृतिकार माना गया है तथा इनकी स्मृतियों को उप-स्मृतियों के रूप में स्वीकार किया जाता है। इन उप-स्मृतिकारों के नाम हैं — गोभिल, विश्वामित्र, जमदग्नि, आश्वलायन, भारद्वाज, प्रजापति, पैठीनसि, वृद्धशातातप, पितामह, छागलेय, मरीचि, कश्यप, जाबालि, च्यवन, बौधायन आदि।

स्मृतियों के अतिरिक्त (१) रामायण तथा (२) महाभारत — इन दो इतिहास-ग्रंथों एवं १८ पुराणों को भी स्मृति-श्रेणी में ही गिना जाता है। पुराणों में सृष्टि-क्रम, मन्वन्तर क्रम, प्रमुख ऋषियों, अवतारों, राजवंशों, प्रमुख व्यक्तियों, तीर्थों एवं उपासना, व्रत, दान, आचार-विचार, नियम, वर्णाश्रम धर्म, लोकाचार, राजधर्म आदि का विशद वर्णन है। इन्हें एक प्रकार से प्राचीन इतिहास ग्रंथ भी कहा जा सकता है और धर्म-ग्रंथ भी। पुराणों के रचयिता महर्षि वेदव्यास माने गये हैं। पुराणों की नामावलि इस प्रकार है — (१) ब्रह्म (२) पद्म, (३) विष्णु, (४) शिव, (५) भागवत, (६) नारद, (७) मार्कण्डेय, (८) अग्नि, (९) भविष्य, (१०) ब्रह्मवैवर्त, (११) लिङ्ग, (१२) वराह, (१३) स्कन्द,

(१४) वामन, (१५) कूर्म, (१६) मत्स्य, (१७) गरुड़ और (१८) ब्रह्माण्ड। इनमें श्रीमद्भागवत को महापुराण माना जाता है।

उक्त १८ पुराणों के अतिरिक्त १८ उप-पुराण भी हैं। 'देवी भागवत' में उनके नाम इस प्रकार बताये गये हैं — (१) सनत्कुमार, (२) नरसिंह, (३) बृहन्नारदीय, (४) शिव अथवा शिवधर्म, (५) दुर्वासा, (६) कपिल, (७) मानव, (८) औशनस, (९) वरुण, (१०) का-लिका, (११) साम्ब, (१२) नन्दिकेश्वर, (१३) सौर, (१४) पाराशर, (१५) आदित्य, (१६) महेश्वर, (१७) भागवत और (१८) वशिष्ठ।

इनके अतिरिक्त ब्रह्माण्ड, कौर्म, भार्गव, आदि, मुद्गल, कल्कि, देवीपुराण, महाभागवत, बृहद्धर्म, परानन्द तथा पशुपति पुराण नामक ११ उप-पुराण अथवा 'अति-पुराण' और भी पाये जाते हैं। यों, उप-पुराणों की संख्या ६४ के लगभग बताई जाती हैं, परन्तु उनमें से अधिकांश अनुपलब्ध हैं।

इस प्रकार ४ वेद, १८ स्मृतियाँ, १८ पुराण तथा २ इतिहास-ग्रंथ — (१) रामायण और (२) महाभारत — ये कुल मिलाकर ४२ ग्रंथ हिन्दू-धर्म के मुख्य आधार-ग्रंथ हैं। पूर्वकाल में वेदानुसार ही हिन्दुओं के सभी कृत्य सम्पादित होते थे, परन्तु कालान्तर में वेद-विद्या का प्रचार सीमित हो जाने से स्मृतियों तथा पुराणों में वर्णित धर्म का हिन्दू-समाज में व्यापक-प्रसार हुआ। वर्तमान-काल में वैदिक-कर्मकाण्ड की महत्ता तो सर्वोपरि बनी हुई है, परन्तु इष्ट-साधन में पुराणादि का महत्व अधिक मान्य हो गया है।

आगम - तन्त्र शास्त्र को 'आगम' कहते हैं। इस शास्त्र में देवताओं की साधना विधियों का प्रमुख रूप से वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त अन्य विषय भी इसमें पाये जाते हैं। यह शास्त्र तीन भागों में विभक्त है - (१) आगम, (२) तन्त्र और (३) यामल। 'आगम' नामक तन्त्र-ग्रंथों में - देवताओं की पूजन एवं साधन-विधि, पुरश्चरण, षट्-कर्म-साधन, चतुर्विध ध्यान योग तथा सृष्टि-प्रलय आदि विषयों का वर्णन किया गया है। तन्त्र-ग्रंथों में — व्रत, शौचाशौच, राज-धर्म, दान-धर्म, युग-धर्म, तीर्थ, देवस्थान, सृष्टि प्रलय, मन्त्र-निर्णय, कल्प, पुराणाख्यान, ज्योतिष, स्त्री-पुरुष लक्षण आदि का उल्लेख पाया जाता है तथा यामल-ग्रंथों में— कल्पसूत्र, युग-धर्म, जातिभेद, वर्णभेद, ज्योतिष, नित्यकृत्य, सृष्टितत्त्व आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है।

तन्त्र शास्त्र सम्प्रदायात्मक है। वैष्णव, शैव और शाक्त - इन सभी के अलग-अलग तन्त्र ग्रंथ पाये जाते हैं। विष्णु और उनके अवतारों के उपासकों को 'वैष्णव', शिव तथा उनके प्रतिरूपों के उपासकों को 'शैव' तथा शक्ति एवं उनके प्रतिरूपों के उपासकों को 'शाक्त' कहते हैं। यों, गणपति-उपासकों को 'गाणपत्य' एवं सूर्य-उपासकों को 'सौर' कहा जाता है। ये लोग स्वयं को वैष्णव, शैव तथा शाक्तों से पृथक मानते हैं, परन्तु इनकी संख्या अत्यल्प है। विभिन्न सम्प्रदायों के ग्रंथों की संख्या बहुत बड़ी है। केवल शाक्तों के ही प्रमुख आगम ग्रंथ ६४ हैं। इन ग्रंथों में आर्यों की परम साधना वीराचार का प्रामाणिक-निरूपण किया गया है।

वाराही तन्त्र के अनुसार देवलोक, ब्रह्मलोक तथा पाताल लोक में तन्त्रों के समस्त श्लोकों की संख्या ९ लाख है, परन्तु भारत में ये मन्त्र केवल १ लाख की संख्या में ही पाये जाते हैं। तीन लोकों में विभक्त होने के कारण आगम भी तीन प्रकार के कहे गए हैं। चौथे प्रकार को 'ऐश्वर' नाम दिया गया है।

समस्त तन्त्रों की संख्या १९२ कही गई है। पृथ्वी की क्रान्ति रेखा के अनुसार उन्हें तीन सम्प्रदायों में बाँटा गया है। इनमें से ६४ तन्त्र 'विष्णुक्रान्ता' हैं, जो कि गौड़ राज्य में अधिक प्रचलित हैं; ६४ तन्त्र 'रथक्रान्ता' हैं, जिनका प्रचार नेपाल आदि देशों में अधिक है। शेष ६४ तन्त्र अन्य स्थानों में प्रचलित हैं।

तन्त्र शास्त्र का आविर्भाव सामवेद तथा अथर्ववेद से माना जाता है। महर्षियों ने इन वेदों के आधार पर ही स्वानुभव से युक्त तन्त्र ग्रंथों का निर्माण किया है, अतः इस शास्त्र को अवैदिक नहीं माना जा सकता, यह अलग बात है कि युगीन आवश्यकतानुसार उनके स्वरूप में परिवर्तन किया गया है। स्वरूप-भिन्नता के कारण उनपर अवैदिक होने का दोषारोपण करना युक्ति-संगत नहीं होगा। अथर्ववेद में मान्त्रिक-प्रयोगों का विस्तृत विवेचन तथा विश्लेषण किया गया है। 'अथर्वन्' शब्द का आशय ही मन्त्र-प्रयोग है। ऐसा मन्त्र-प्रयोग, जिसके द्वारा रोगों का अपगम किया जा सके। अथर्ववेद को 'अथर्वाङ्गिरा' भी कहा जाता है। 'अङ्गिरा' शब्द हानि तथा विनाश' का सूचक है और अथर्वन् शब्द सर्जन अथवा शान्ति' का; अतः अथर्वाङ्गिरा का अर्थ हुआ विनाश अथवा

हानि का शमन करने वाला। इस प्रकार अथर्ववेद को तन्त्र शास्त्र का उद्गम माना जाता है।

तन्त्र शास्त्र की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। वेदपरक साहित्य में आगे चलकर जिन तन्त्र ग्रंथों की रचना हुई उन्हें विविध आस्थाओं के अनुरूप अलग-अलग भेदों में बाँटा गया है। 'आगम' शब्द का अर्थ ही अनादि-स्रोत अथवा गुरु-परम्परा से चला आने वाला स्रोत है। समय-समय पर इस शास्त्र में अनेकानेक अन्वेषण तथा परिवर्तन भी होते रहे हैं।

विद्वानों की मान्यता है कि प्राचीन महर्षियों के एक वर्ग ने चतुर्मुख ब्रह्मा से वेद-विद्या प्राप्त की थी जिसके द्वारा उन्होंने इहलोक तथा परलोक के तत्त्वदर्शन में सामंजस्य स्थापित किया। दूसरे वर्ग ने श्रीविष्णु से भक्ति-विद्या प्राप्त की, जिसके द्वारा उन्होंने आत्म-तत्त्व एवं परमात्व-तत्त्व - इन दोनों में एकत्व स्थापित किया। तीसरे वर्ग ने भगवान् सदा शिव से मन्त्र-विद्या प्राप्त की जिसके द्वारा वे लौकिक-जीवन से पारलौकिक-जीवन के परे पहुँचकर मूलतत्त्व का साक्षात्कार करने में सक्षम हुए। अस्तु, मन्त्र-विद्या अथवा तन्त्रशास्त्र के आदि गुरु भगवान् सदाशिव शङ्कर ही माने जाते हैं।

कलिकाल से पूर्व मन्त्र-विद्या को रहस्यात्मक माना जाता था और इसकी उपलब्धि कुछ विशिष्ट व्यक्ति ही कर पाते थे, परन्तु कलियुग में भगवती पार्वती की प्रार्थना पर भगवान् शंकर ने सर्वसाधारण के लिए इसको प्रकट किया है - ऐसी भी मान्यता है। तन्त्र सम्बन्धी जितने भी ग्रंथ उपलब्ध होते हैं, उन सबमें शिव-पार्वती के कथनोपकथन से प्रारम्भ इसका एक प्रत्यक्ष प्रमाण है।

मं०
म०
४७

केवल हिन्दू धर्म ही नहीं; परवर्ती बौद्ध तथा जैन धर्म में भी तन्त्र-मन्त्रों का अत्यधिक विस्तार पाया जाता है। श्वेताम्बर जैनियों के मन्त्र-विद्या के लगभग २०० ग्रंथ बताये जाते हैं, जिनमें से १४८ ग्रंथों की नाम-सूची गुजराती लेखक श्री धीरजलाल टोकरसीशाह ने अपने 'तंत्रोनुं तारण' नाम गुजराती ग्रंथ में प्रस्तुत की है। दिगम्बर जैन विद्वानों ने भी मन्त्र शास्त्र पर अनेक ग्रंथ लिखे हैं। बौद्ध-धर्म में महायान से लेकर वज्रयान तथा सहजयान तक मन्त्र-तन्त्र साधना का अत्यधिक विकास हुआ है। इसके अतिरिक्त इस्लाम धर्म में भी तान्त्रिक प्रयोग प्रचुरता से पाये जाते हैं।

प्राचीन शास्त्रीय मन्त्रों के अतिरिक्त लोक भाषाओं के मन्त्र जिन्हें जंजीरा तथा शाबर मन्त्र कहा जाता है प्रचुरता से पाये जाते हैं। पढ़ने तथा सुनने में ये मन्त्र अत्यन्त सामान्य से प्रतीत होते हैं, परन्तु प्रभाव में अत्यन्त चमत्कारी सिद्ध होते हैं, अतः शास्त्रीय मन्त्रों की तुलना में इनके महत्व को भी नकारा नहीं जा सकता।

सैकड़ों वर्षों की दासता तथा विदेशियों के आक्रमण एवं विधर्मियों द्वारा इस देश के साहित्य को समूल नष्ट करदेने के प्रयासों में भारतीय-वाङ्मय की बहुमूल्य धरोहर का अधिकांश भाग विलुप्त हो चुका है। पाश्चात्य-सभ्यता एवं अशिक्षा के अन्धकार ने स्वयं भारतीयों को भी प्राचीन ग्रंथों को अनुपयोगी समझ कर नष्ट कर देने के लिए प्रेरित किया है। इससे भारतीय संस्कृति, साहित्य तथा ज्ञान-विज्ञान की अपूरणीय क्षति हुई है। फिर भी, जो कुछ शेष बचा है, वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

भा०
टी०

तन्त्र शास्त्र के अध्ययन की दिशा में भारतीय जनता का ध्यान विगत कुछ वर्षों से पुन: अधिकाधिक आकर्षित होरहा है — यह प्रसन्नता का विषय है। अभीतक यह विद्या अत्यन्त रहस्यमय बनी हुई थी तथा साधारण-से-साधारण मन्त्र को भी उसके जानकार लोग इस प्रकार छिपाकर रखते थे कि अधिकांश मन्त्र उनकी जीवन-लीला समाप्त होने के साथ ही विलुप्त होते चले गए। अब इस स्थिति में भी थोड़ा सुधार हुआ है तथा तन्त्र-मन्त्र सम्बन्धी अनुभूत प्रयोगों को विद्वज्जन पत्र-पत्रिकाओं तथा पुस्तकों आदि के माध्यम से सर्वसाधारण की जानकारी के लिए प्रकाशित करने लगे हैं। तन्त्र-मन्त्र सम्बन्धी साहित्य भी अब बड़ी संख्या में प्रकाशित होने लगा है तथा तान्त्रिक प्रयोगों की वैज्ञानिकता पर अविश्वास करने वाले तार्किक महानुभाव भी इस रहस्यमयी विद्या की ओर आकृष्ट होकर, इसे सीखने तथा इसकी सत्यता की परख करने के हेतु लालायित हो उठे हैं। यद्यपि ढोंगियों तथा ठगों की कमी नहीं है, तथापि अन्धकार में प्रकाश की किरणें भी कहीं-कहीं दिखाई देती हैं। उन किरणों को एकत्र कर, एक प्रकाश-पुञ्ज के रूप में प्रस्तुत करना ही 'मन्त्र महार्णव' के सङ्कलन का प्रमुख उद्देश्य है।

यह ग्रंथ ५ खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड में तन्त्र शास्त्र एवं मन्त्र-साधन सम्बन्धी सामान्य ज्ञान तथा आवश्यक विधियों का उल्लेख किया गया है। द्वितीय खण्ड में प्राचीन शास्त्रोक्त सिद्ध मन्त्र संकलित हैं। तीसरे खण्ड में यन्त्र सहित

साधन किये जाने वाले मन्त्रों का उल्लेख है। चौथे खण्ड में जैन, इस्लामी तथा लोक प्रचलित शाबर मन्त्र सङ्कलित किए गए हैं। पंचम खण्ड में विभिन्न देवी-देवताओं के पौराणिक एवं तन्त्रशास्त्रीय स्तोत्र, हृदय, कवच आदि संगृहीत हैं। यन्त्र-सहित मन्त्र-साधन प्रकरण में तथा अन्य खण्डों में विभिन्न देवी-देवताओं के साधन-पूजन यन्त्र तथा चित्रादि देकर विषय-वस्तु को अधि-काधिक बोधगम्य बनाने की चेष्टा की गई है।

मन्त्र-सिद्धि के लिए आवश्यक ज्ञान तथा कर्तव्य-कर्मों के विषय में प्रथम प्रकरण में विस्तृत प्रकाश डाला गया है, अतः प्रत्येक साधक को उनका समुचित ज्ञान होना आवश्यक है। इस के बिना मन्त्र-सिद्धि में सफलता नहीं मिल सकती। सम्यक्-साधन के अभाव में असफल होने पर मन्त्र-विद्या को दोषी ठहराना उचित न होगा। इस ग्रंथ में संकलित सभी मन्त्र तथा उनके प्रयोग प्राचीन तथा प्रामाणिक माने जाने वाले ग्रंथों, महात्माओं, सिद्ध-पुरुषों तथा अन्य स्रोतों से सङ्कलित किये गये हैं। श्रद्धा, विश्वास, निष्ठा एवं विधि पूर्वक साधना करने से प्रत्येक मन्त्र की सिद्धि में सफलता मिलना सुनिश्चित है। अश्रद्धा, अवि-श्वास, जल्दबाजी तथा क्रिया-कर्म की अपूर्णता के अतिरिक्त असंयम तथा विधि-निषेधों का समुचित पालन न करने से ही मन्त्र-सिद्धि नहीं हो पाती। अतः इस दिशा में साधकों को सजग बने रहना आवश्यक है।

मन्त्रों की वैज्ञानिकता एवं प्रामाणिकता के विषय में हमें अपनी ओर से कुछ नहीं कहना है। यह विद्या ही मूलतः श्रद्धा-विश्वास एवं साधना की भित्ति पर आ-

-धारित है। श्रद्धालु, विश्वासी एवं संयमी-साधक ही मन्त्र-साधन में सफल हो पाते हैं। अवि-श्वासियों तथा असंयमियों को जीवन भर प्रयत्न करते रहने पर भी कोई सफलता नहीं मिल पाती।

हमने भरसक प्रयत्न किया है कि प्रत्येक मन्त्रादि को उस के शुद्ध स्वरूप में ही प्रस्तुत किया जाय, फिर भी दृष्टि-दोष अथवा मानवीय अपूर्णता के कारण कहीं कोई अशुद्धि रहजाना संभव हो सकता है। जिन विद्वज्जनों को ऐसी कोई त्रुटि दिखाई दे, वे कृपापूर्वक हमें सूचित करने का कष्ट करें, इस अनुग्रह के लिए हम उनके अत्यन्त आभारी होंगे तथा उनके आधार पर ग्रंथ के अगले संस्करण को परिमार्जित एवं संशोधित कर दिया जायगा।

इस ग्रंथ के लिए सामग्री-चयन में हमें जिन प्राचीन तथा अर्वाचीन ग्रंथों, पत्र-पत्रिकाओं, सिद्धजनों, तान्त्रिकों-मान्त्रिकों एवं अन्य सूत्रों से सहायतायें प्राप्त हुई हैं तथा जिन की सामग्री को उद्धृत किया गया है, उन सभी के प्रति हम हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

आशा है, मन्त्र-विद्या के प्रेमियों तथा साधकों के लिए यह ग्रंथ उपयोगी सिद्ध होगा। यन्त्र तथा तन्त्र विषयक सामग्री के लिए हमारे द्वारा सम्पादित 'वृहद् यन्त्र महार्णव' तथा 'वृहद् तन्त्र महार्णव' नामक ग्रंथों का अध्ययन करना चाहिए।
किमधिकम् ?

विद्वज्जन वशंवद,

— राजेश दीक्षित

अथ वृहद् मन्त्र महार्णव प्रथम खण्डस्य विषयानुक्रमणिका

क्रमाङ्क	पृष्ठाङ्क
(५२) रविवार-चक्र, शनिवार-चक्र	९४
(५३) गुरुवार-चक्र ९७, (५४) बुधवार-चक्र	९८
(५५) कार्यनाशक-सिद्धि चक्र	९९
(५६) दिशाशूल-विचार, (५७) योगिनी-विचार	९९
(५८) तिथि-विचार, (५९) चन्द्र-सूर्य का अधिकार	१००
(६०) चन्द्रमा की स्थिति १००, (६१) मुद्रा-विचार	१०१
(६२) कलश-वर्णन, (६३) कुण्ड-वर्णन	१०२
(६४) होम-व्यवस्था १०३, (६५) होम-द्रव्य	१०४
(६६) मुद्रा १०५, (६७) स्रुक् और स्रुव	१०५

क्रमाङ्क	पृष्ठाङ्क
(६७) जप तथा मन्त्र विधान	१०६
(६८) मारण-कर्म	१०६
(६९) मन्त्र-उत्कीलन विधि	१०७
(७०) यन्त्र-विधान, (७१) यन्त्र-लेखन	१०९
(७२) यन्त्र-धारण	११०
(७३) विशेष-कर्तव्य, (७४) हवन-सामग्री	१११
(७५) उपसंहार	११२

अपि तन्त्र विरुद्धं वा गुरुणा कथ्यते यदि । स्वमतं सदृशं वेदैर्महिरिद्ध वचो यथा ॥
सर्वं गुर्वाज्ञया कार्यं तत्त्वस्यागमनं विना। अद्वैतं द्वैततैश्चर्य न द्वैतं गुरुणा सह ॥
गुरुर्गतिः गुरुर्देवो गुरुर्देवी तथा प्रिये । स्वर्गलोके मर्त्यलोके नागलोके च वर्तते ॥
अभिचारो भवेत्कल्पे ह्यविश्वासान्न संशयः ।
संशयेन कृतं यत्नं विपरीतं प्रजायते ॥

ॐ

अथ वृहद् मन्त्र महार्णवम् प्रथम खण्डः

सामान्य ज्ञान - यास्काचार्य ने 'मन्त्र' शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा है- 'जिसका मनन किया जाय, उसे 'मन्त्र' कहते हैं। 'मन्त्र' शब्द जहाँ 'मत्रि गुप्त भाषणे' धातु से निष्पन्न बताया जाता है, वहीं उसे 'मनु-अवबोधने' तथा 'त्रैङ् रक्षणे'- इन दो धातुओं से भी सिद्ध किया जाता है, इसका निर्वचन होता है- 'मन्तारं त्रायते-इति मन्त्रः' अर्थात् जो मनन करने वाले व्यक्ति की रक्षा करे, उसे 'मन्त्र' कहते हैं। पूर्व मीमांसकों के मत से 'मन्त्र' देवता का शब्दमय विग्रह है। मन्त्रोच्चारण के द्वारा जो 'शब्द-स्फोट' होता है, उससे देवता का मूर्त्त रूप बनता है। मन्त्र को बारम्बार जपने से, शब्दों के पारस्परिक संघर्ष के कारण वातावरण में एक प्रकार की विद्युत्-तरंगें उत्पन्न होने लगती हैं, जो मन्त्र-जपने वाले की इच्छित भावनाओं को बल प्रदान करती हैं, फलस्वरूप वह जो चाहता है, वही होने लगता है।

मन्त्रों का महत्व असीम है। देवता मन्त्र के महत्व को मानते हैं एवं तदनुरूप ही आचरण करते हैं। मन्त्र-साधन से देवता का सूक्ष्म रूप में साक्षात्कार होता है। इसीलिए मन्त्र को देवता का सूक्ष्म रूप माना जाता है।

मं० मं० ५ त — भा० टी०

मन्त्रों के देवता- देवताओं का उल्लेख वेद में भी पाया जाता है, इससे सिद्ध होता है कि देवताओं की एक अलग सृष्टि है। वैदिक कालीन ऋषियों ने उनके दर्शन किये थे तथा उनके हृदयों में देवताओं के पवित्र सूक्त, जिन्हें स्तोत्र अथवा मन्त्र कहा जाता है, आविर्भूत हुए थे। इसी प्रकार तान्त्रिक ऋषियों ने भी अनेक देवी-देवताओं का साक्षात्कार किया है और उनके साधन-मन्त्र उन्हें प्राप्त हुए हैं। देवताओं की संख्या बड़ी है। देवताओं की भाँति देवियाँ भी बहुसंख्यक हैं। जिन मन्त्रशक्तद्रष्टा ऋषियों को सच्चिदानन्द परब्रह्म के अनिर्वचनीय रूप के मातृशक्ति के रूप दर्शन प्राप्त हुए, उनके माध्यम से आध्यात्मिक-जगत में देवियों को एक विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ है। मन्त्र-विद्या में तो देवियों का महत्व सर्वोपरि रूप में प्रतिष्ठित है। इसी कारण मन्त्र-जगत् में शक्ति-साधना अर्थात् शाक्त-साधन का विशेष महत्व है। देवियों में दश महाविद्याएँ प्रमुख मानी गई हैं। इनके नाम हैं — (१) काली, (२) तारा, (३) षोडशी, (४) भुवनेश्वरी, (५) धूमावती, (६) छिन्नमस्ता, (७) त्रिपुरभैरवी, (८) बगलामुखी, (९) मातङ्गी और (१०) कमला। ये देवियाँ दो कुलों में विभक्त हैं — (१) काली-कुल तथा (२) श्री-कुल। काली-कुल में (१) काली, (२) तारा, (३) भुवनेश्वरी एवं (४) छिन्नमस्ता — इन चार महाविद्याओं की गणना की जाती है। इनके अतिरिक्त (१) रक्तकाली, (२) महिषमर्दिनी, (३) त्रिपुरा, (४) दुर्गा तथा (५) प्रत्यङ्गिरा — इन पाँच विद्याओं को भी काली-कुल में ही गिना जाता है।

श्री-कुल में (१) षोडशी अर्थात् त्रिपुर सुन्दरी, (२) त्रिपुरभैरवी, (३) बगला,

(४) कमला, (५) धूमावती और (६) मातङ्गी — ये छः महाविद्यायें हैं। इनके अतिरिक्त (१) बाला, (२) स्वप्नावती, एवं (३) मधुमती - ये तीन विद्यायें भी इसी कुल में गिनी जाती हैं।

कलियुग में निम्न लिखित देवी-देवताओं के मन्त्र सिद्धिप्रद कहे गए हैं — (१) गणेश, (२) विष्णु, (३) शिव, (४) राम, (५) कृष्ण, (६) पशुपति, (७) नृसिंह, (८) सूर्य, (९) अघोर, (१०) भैरव, (११) पशुपति, (१२) क्षेत्रपाल, (१३) हयग्रीव, (१४) वराह, (१५) यक्षनायक, (१६) चेटक, (१७) अग्नि, (१८) गोपाल, (१९) प्रणव, (२०) सुदर्शन, (२१) आग्नेयास्त्र, (२२) लक्ष्मी, (२३) उमा, (२४) नील सरस्वती, (२५) कालरात्रि, (२६) कर्ण पिशाचिनी, (२७) दशमहाविद्यायें तथा (२८) चौंसठ योगिनियाँ आदि। इनमें दशमहाविद्याओं को चारों वर्णों के लिए सिद्धिप्रदा कहा गया है।

दश महाविद्यायें तथा आठ विद्यायें - ये कुल मिला कर १८ सिद्ध-विद्यायें हैं। इनके अतिरिक्त तन्त्र ग्रंथों में (१) महाभैरव, (२) चण्डेश्वर, (३) शूलपाणि, (४) बटुक भैरव, (५) उच्छिष्ट गणपति (६) बेताल, (७) श्मशान भैरवी, (८) मार्तण्डभैरव, (९) उन्मुखी, (१०) चण्डिका तथा (११) वाग्भवा आदि को भी शीघ्र-सिद्धि दायक तथा मनोभिलाषा पूरक कहा गया है।

मन्त्रों के ऋषि — जिस ऋषि ने जिस मन्त्र को सर्वप्रथम अपनी आत्मा में अनुभव किया, वही उस मन्त्र का ऋषि माना गया है। जैसे - विश्वामित्र गायत्री मन्त्र के ऋषि हैं। अधिकांश प्राचीन मन्त्रों, कवच, स्तोत्र आदि के प्रारंभ में विनियोग के साथ मन्त्र-द्रष्टा ऋषि का नाम भी पाया जाता है।

मन्त्रों के छन्द बीज आदि- प्रत्येक मन्त्र का एक छन्द होता है, एक देवता तथा एक ऋषि होता है। इसी प्रकार प्रत्येक मन्त्र का एक बीज भी होता है, जो उसे विशेष बल प्रदान करता है। यह नियम शास्त्रीय मन्त्रों का है। प्रत्येक मन्त्र की एक शक्ति भी होती है। यह शक्ति मन्त्र चैतन्य को धारण किये रहती है तथा मन्त्र चैतन्य में समाया रहता है। मन्त्र का बार-बार जप करते रहने से उसमें छिपा हुआ चैतन्य प्रकट हो जाता है। उस समय साधक को अपने इष्टदेव के दर्शन प्राप्त होते हैं। जिस प्रकार अग्नि वायु से शक्ति प्राप्त करती है, उसी प्रकार साधक मन्त्र द्वारा शक्ति प्राप्त करता है। मन्त्र के द्वारा साधक को देवता का साक्षात्कार होता है। मन्त्र-साधन से साधक को गुप्त तथा प्रबल शक्तियाँ प्राप्त होती हैं, जिनके द्वारा वह अपनी मनोभिलाषाओं की पूर्ति में समर्थ बनता है।

मन्त्र के विश्वास पूर्वक अनुष्ठान से उस मन्त्र का देवता साधक की ओर आकृष्ट होता है। मन्त्र की शक्ति वातावरण में एक प्रकार का कम्पन उत्पन्न करती है। उस कम्पन से, जिस देवता का वह मन्त्र है, उसकी आकृति का निर्माण होता है तथा वह देव-आकृति मन्त्र-साधक पर प्रसन्न होकर उसकी अभीप्सित कामनाओं की पूर्ति करती है। मन्त्र-जप का यही रहस्य है।

मन्त्र-सिद्धि न होने का कारण- मन्त्र-सिद्धि न होने के अनेक कारण हैं। उनमें प्रमुख कारण है - अश्रद्धा अथवा अविश्वास। जो लोग स्वभावतः अविश्वासी, अश्रद्धालु तथा शङ्कालु हों, उन्हें लाख प्रयत्न करने पर भी मन्त्र-साधन में सफलता नहीं मिल पाती।

मं०
म०
३०

दृढ़-विश्वासी साधक ही मन्त्र-साधना में सफल हो पाते हैं। मन्त्र-सिद्ध न होने के अन्य कारण निम्न लिखित हैं—

(१) विधि-विधान में थोड़ी सी भी त्रुटि हो जाने पर मन्त्र-सिद्धि नहीं होती। अतः मन्त्र-सिद्धि के लिए आवश्यक साधन, जैसे—स्थान, आसन, सामग्री, माला, जप, हवन, मार्जन आदि की यथा नियम व्यवस्था करनी चाहिए।

(२) सात्विक-साधनों द्वारा प्राप्त धन से लाई गई सामग्री का ही मन्त्र-साधन जप, हवन आदि में प्रयोग करना चाहिए। छल, कपट, धोखा, चोरी, रिश्वत आदि से प्राप्त धन द्वारा उपलब्ध सामग्री मन्त्रानुष्ठान में सफलता प्राप्त नहीं होने देती।

(३) अधिकारी गुरु द्वारा दीक्षा लिए बिना किसी भी मन्त्र का साधन सफल नहीं होता। केवल पुस्तकीय-ज्ञान के आधार पर मन्त्र-साधन करने वालों को सदैव निराशा ही हाथ लगती है तथा गुरु-कृपा से समुचित साधनों के अभाव में भी शिष्य मन्त्र-सिद्धि प्राप्त कर लेता है। अतः किसी भी मन्त्र का साधन करने से पूर्व गुरु-दीक्षा लेना आवश्यक है।

(४) कभी-कभी पूर्व जन्मों के अशुभ कर्मों का प्रभाव भी मन्त्र-सिद्धि में बाधक बनता है तथा स-विधि अनुष्ठान किए जाने पर भी साधक को मन्त्र-साधन में सफलता नहीं मिल पाती। ऐसी स्थिति में पूर्वकृत अशुभ कर्मों को क्षय करने हेतु अन्य उपाय करने चाहिए, तत्पश्चात् ही मन्त्र-साधना में प्रवृत्त होना चाहिए।

भा०
टी०

मन्त्र की प्राप्ति- यों, मन्त्र को किसी भी स्थान से (यथा-ग्रंथ आदि) प्राप्त किया जा सकता है, परन्तु साधन के लिए वही मन्त्र उपयोगी तथा फलदायक होता है, जिसे गुरुमुख से विधि पूर्वक प्राप्त किया गया हो। आरंभ में ऋषियों ने भगवान् सदाशिव से मन्त्र-विद्या प्राप्त की थी। तत्पश्चात् गुरु-परम्परा से ही इस विद्या को प्राप्त करने का क्रम चलता चला आया है। प्रत्येक मन्त्र-साधक के लिए गुरु ही शिव-स्वरूप हैं, अतः गुरु-मुख से प्राप्त मन्त्र को शिव-प्रसाद के रूप में ग्रहण करना चाहिए।

गुरु बनने अर्थात् किसी व्यक्ति को मन्त्र देने का अधिकारी भी वही व्यक्ति हो सकता है, जिसने स्वयं भी किसी विशिष्ट-साधक गुरु से स-विधि मन्त्र-ज्ञान प्राप्त किया हो। जो लोग पुस्तकीय-ज्ञान के आधार पर ही मन्त्र-साधन करते हैं अथवा दूसरों को मन्त्र प्रदान करते हैं, उनकी अथवा उनके शिष्य की मन्त्र-साधना सफल नहीं होती-यह बात निश्चित रूप से स्मरण रखनी चाहिए। यह नियम शास्त्रीय मन्त्रों के लिए ही है। शाबर तथा अन्य प्रकार के मन्त्रों का साधन स्वतन्त्र रूप में भी किया जा सकता है, परन्तु यदि उन्हें भी गुरु-मुख से ग्रहण किया जाय तथा उनके विधि-निषेधों का समुचित ज्ञान एवं साधन सम्बन्धी निर्देश गुरु द्वारा प्राप्त कर लिये जाँय तो शीघ्र सफलता मिलती है। जिस व्यक्ति ने शास्त्रीय विधि के अनुसार मन्त्र-दीक्षा गुरु-मुख से प्राप्त की हो तथा जिसने पूर्णाभिषेक तक मन्त्रों के सभी संस्कार कराये हों तथा विधि-पूर्वक मन्त्र-साधन किया हो, उसके मन्त्र-सिद्ध होने में कोई सन्देह नहीं रहता।

मन्त्र-दीक्षा- तन्त्र ग्रंथों में मन्त्र-दीक्षा की दो प्रमुख प्रणालियों का वर्णन पाया जाता है- (१) क्रियावती तथा (२) कलावती। क्रियावती-दीक्षा-प्रणाली अधिक विस्तृत तथा दुस्साध्य है। इस प्रणाली द्वारा प्राप्त दीक्षा अत्यधिक प्रभावशाली मानी जाती है। दूसरी, कलावती दीक्षा-प्रणाली सरल तथा सुसाध्य है। पाठकों की जानकारी के लिए उसके संक्षिप्त रूप को यहा दिया जा रहा है।

दीक्षा-ग्रहण करने के तीन दिन पूर्व शिष्य क्षौर-कर्मादि करे। दीक्षा के एकदिन पूर्व उपवास रक्खे तथा समस्त पापों को नष्ट करने के उद्देश्य से १०८ बार अथवा १००० बार गायत्री मन्त्र का जप करे एवं तिल-कांचन का दान करे।

दीक्षा के दिन नित्य-कर्मों से निवृत्त होकर स्वस्ति वाचन सहित निम्न लिखित संकल्प वाक्य का उच्चारण करे-

"ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्र: श्री अमुक देवशर्मा धर्मार्थकाममोक्ष प्राप्तिकाम: अमुकदेवताया: अमुकाक्षरमन्त्र दीक्षामहं करिष्ये।" इस संकल्प-वाक्य में जहाँ-जहाँ 'अमुक' शब्द का प्रयोग हुआ है, वहाँ-वहाँ आवश्यक नामों का उच्चारण करना चाहिए।

सङ्कल्पोपरान्त शिष्य गुरु का वरण करे तथा हाथ जोड़कर कहे- "ॐ साधु भवानास्ताम्'। गुरु उत्तर में कहे — 'ॐ साध्वहमासे।' फिर शिष्य कहे- ' ॐ अर्चयिष्यामो भवन्तं।' तब गुरु अनुमति देते हुए कहे- 'ॐ अर्चय"। तत्पश्चात् शिष्य गन्ध, पुष्प, वस्त्रादि से गुरु का पूजन करे। फिर गुरु की दाँयी जांनु का स्पर्श करते हुए इस प्रकार सङ्कल्प कहे-

'ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्रः श्री अमुकदेव शर्मा श्री अमुक देवतायाः मत्कर्तृकामुक मन्त्र दीक्षा कर्मणि अमुक गोत्रं श्री अमुक देव शर्माणमेभिः पाद्यादिभिरर्चितं गुरुत्वेन भवन्तमहं वृणे।'
इस पर गुरु स्वीकृति देता हुआ कहे- 'ॐ वृतोऽस्मि।'

गुरु-वरण होजाने के उपरान्त शिष्य गुरु से इस प्रकार कहे- 'ॐ यथाविहितं गुरुकर्म कुरु।' गुरु उत्तर में कहे- 'ॐ यथा ज्ञानतः करवाणि।' फिर गुरु द्वार-देवता का पूजन कर, पूजा-स्थान में पहुँच कर, नित्यार्चन क्रम से इष्टदेवता का विधिपूर्वक पूजन आरम्भ करे। जब श्रीपात्र-स्थापन तथा पूजन हो चुके, तब दीक्षाभिषेकार्थ कलश-स्थापन तथा पूजनादि कृत्य निम्नानुसार करे-

सर्वतोभद्रमण्डल बनाकर 'ॐ मण्डलाय नमः' इस मन्त्र से उसका पूजन करे फिर धान्य द्वारा कर्णिका के मध्यभाग का पूजन कर अक्षत निक्षेप करे, तत्पश्चात उस पर दर्भ बिछाकर, उसके ऊपर अक्षत युक्त विष्टर अर्थात् कुश स्थापित कर, मण्डल पर 'ॐ आधार शक्त्यै नमः' आदि मन्त्रों से पीठ-देवताओं का पूजन कर, मण्डल पर प्रदक्षिण क्रम से 'ॐ यं धूम्रार्चिषे नमः' आदि मन्त्रों द्वारा दस वह्नि कलाओं का पूजन करे। फिर कुम्भ को 'फट्' मन्त्र से धोकर, चन्दन-अगरु तथा कर्पूर से धूपित कर, त्रिगुण सूत्र से वेष्टित करे तथा गन्ध-पुष्प द्वारा 'ॐ कुम्भाय नमः' मन्त्र से उसका पूजन करे। फिर कुश, अक्षत तथा नवरत्न को कुम्भ में छोड़ कर, 'ॐ' का उच्चारण तथा कुम्भ एवं पीठ देवता के ऐक्य का ध्यान करते हुए उसे पीठ के ऊपर स्थापित करे। फिर कुम्भ के

ऊपर प्रदक्षिणा क्रम से 'ॐ कं भं तापिन्यै नमः' आदि मन्त्रों से सूर्य की द्वादश कलाओं का पूजन कर, आत्मा तथा मन्त्र के ऐक्य की भावना करते हुए, देय-मन्त्र तथा मातृका मन्त्र का प्रतिलोम जप करते हुए, मूलमन्त्र का उच्चारण कर, कुम्भ को देवता समझ कर, उसे तीर्थ-जल से परिपूर्ण करे। फिर प्रदक्षिणा क्रम से उस जल में चन्द्रमा की अमृतादि षोडश कला-ओं का न्यास कर, 'ॐ अं अमृतायै नमः' आदि मन्त्रों से उनका पूजन कर, अन्य शंख-पात्र को तीर्थ-जल से भर कर तथा गन्धाष्टक द्वारा आलोड़ित कर, उसी जल में समस्त कलाओं का आवाहन कर, उनकी पूजा करे। फिर शंख-पात्र के तीर्थ-जल को कुंभ के तीर्थ-जल में छोड़ दे। तदुपरान्त पीपल, पनस तथा आम के पत्तों को इन्दुवल्ली लता से वेष्टित कर, उसे कल्पवृक्ष मानते हुए, उससे कुम्भ के मुख को ढँक दें, तत्पश्चात् कुम्भ-मुख पर फल तथा अक्षत युक्त शराव (सरैया) को कल्पवृक्ष का फल मानते हुए, स्थापित करें। फिर दो रेशमी वस्त्रों से कुम्भ को वेष्टित कर, कुम्भ में मूल-मन्त्र द्वारा यन्त्र-विग्रह सहित देवता का ध्यान कर, यन्त्र के बिन्दु में यथाविधि उसका आवाहन-पूजन आदि करें।

कलश में देवता के पूजनोपरान्त देय मन्त्र के दसों संस्कार निम्नानुसार करने चाहिए-

(१) **जनन** - मातृका यन्त्र लिखकर, मन्त्र का उद्धार करना चाहिए।

(२) **जीवन** - प्रणव-पुटित कर, मन्त्र के प्रत्येक वर्ण का दस बार जप करना चाहिए।

(३) **ताडन** - मन्त्र के वर्णों को चन्दन से लिखकर 'यं' बीज पढ़कर, कुशा से ताड़न करना चाहिए।

(४) **हनन**- मन्त्र वर्ण लिख कर 'रं' बीज से मन्त्राक्षरों की संख्या द्वारा हनन करें।

(५) **अभिषेचन**- 'मन्त्र अभिषिञ्चयामि नमः' - इस मन्त्र से पीपल के पत्ते से मन्त्रवर्ण-संख्या से जल द्वारा उसका अभिषेक करना चाहिए।

(६) **विमलीकरण**- 'ॐ ह्रौं' इस मन्त्र से मूल-मन्त्र को सम्पुटित कर, २५बार जप करना चाहिए। इसे 'विमलीकरण' कहते हैं।

(७) **आप्यायन**- 'यं' बीज से पुष्प द्वारा, जल से मन्त्र का १० बार प्रोक्षण करना चाहिए। इसे 'आप्यायन' कहते हैं।

(८) **तर्पण**- मधु-मिश्रित जल द्वारा 'मन्त्रं तर्पयामि स्वाहा' - इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए मन्त्र का १० अथवा १०० बार तर्पण करना चाहिए।

(९) **दीपन**- 'ॐ ह्रीं श्रीं- से पुटित कर, मन्त्र का १०८ बार जप करना चाहिए।

(१०) **गुप्ति**- मन्त्र को अप्रकट रखने को 'गुप्ति' कहते हैं।

इसके पश्चात् गुरु दोनों सूतकों की निवृत्ति के हेतु मन्त्र को प्रणव से पुटित कर, ७ बार जप करे, फिर कलशस्थ पञ्चपल्लवों द्वारा कलश के जल से गुरु निम्न लिखित मन्त्रों का उच्चारण करते हुए शिष्य का अभिषेक करे-

"ॐ सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्माविष्णु, शिवादयः। वासुदेवो जगन्नाथस्तथा सङ्कर्षणो विभुः ॥१॥ प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते। आखण्डलो ऽग्निर्भगवान् यमश्च निऋतिस्तथा ॥२॥ वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथाशिवः। ब्रह्मणासहिता ह्येते

दिक्पालाः पान्तु ते सदा ॥३॥ कीर्तिर्लक्ष्मी धृतिर्मेधा पुष्टि श्रद्धा क्षमा मतिः। बुद्धिर्लज्जावपुः शान्ति माया निद्रा च भाविनी ॥४॥ एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु देवपत्न्यः समागताः ॥५॥ आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुध जीव सितार्क जाः। एते त्वामभिषिञ्चन्तु राहुः केतुश्च पूजिताः॥६॥ देवदानव गन्धर्वा यक्षराक्षस पन्नगाः। ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च ॥७॥ देवपत्न्यो द्रुमा नागा दैत्याश्चाप्सरसां गणाः। अस्त्राणि सर्वशास्त्राणि राजानो वाहनानि च ॥८॥ औ-षधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये। सरितः सागराः शैलाः तीर्थानि जलदा नदाः॥९॥ एते त्वामभिषिञ्चन्तु धर्मकामार्थ सिद्धये॥ १०॥

ॐ गुरवश्चाभिषिञ्चन्तु सिञ्चेद् गणपतिस्तथा। अभिषिञ्चेच्च बटुकः क्षेत्र-पालोभिषिञ्चतु ॥११॥ ॐ योगिन्यश्चाभिषिञ्चन्तु अभिषिञ्चन्तु भैरवाः। पीठानां शक्तयश्चा-भिषिञ्चन्तु कालिका सदा ॥१२॥ ॐ श्रीचक्रस्याभिषिञ्चन्तु क्रमेण चक्रनायिकाः। कामेश्वर्यभि-षिञ्चेत् सिंचेच्च भगमालिनी ॥१३॥ ॐ नित्यक्लिन्नाभिषिञ्चेत् भेरुण्डाप्यभिषेचयेत्। अभिषिञ्चेत् वह्नि संस्था महाविद्येश्वरी सिंचेत् ॥१४॥ ॐ शिवदूत्यभिषिंचेत् त्वरिता सेच-येत् सदा। नवमी चाभिषिंचेत् कुलदेव्यानि सुन्दरी ॥१५॥ ॐ नित्यानित्याभिषिंचेत् सिंचेत नीलपताकिनी। विजया चाभिसिंचेत सिंचेत सर्वमंगला॥ १६॥ ॐ सिञ्चेज्ज्वालामालिनीच विचित्रा सेचयेत्सदा। अनुलोमविलोमेन सिंचेच्च तिथिरूपतः॥१७॥ ॐ सिंचन्तु अणिमा-द्यादि सिद्धयोष्टौ क्रमेण हि। अणिमाद्यभिषिंचेत् लघिमा चाभिषिंचतु ॥१८॥

ॐ महिमाद्यभिषिंचेत् ईशित्वा सेचयेत् तथा। वशित्वाद्यभिषिंचेत प्राकाम्या
सेचयेत्तथा ॥१९॥ ॐ ततोभिषिंचेत् प्राप्तिश्च सिंचेत कामावसायिका। अभिषिंचेच्च ब्र-
-ह्माणी सिंचेन्माहेश्वरी तथा ॥२०॥ ॐ कौमारी चाभिषिञ्चेत वैष्णवी चाभिषिञ्चतु।
वाराही चाभिषिञ्चेत इन्द्राणी चाभिषिञ्चतु ॥२१॥ ॐ चामुण्डाप्यभिषिंचेत् महालक्ष्मी
सिञ्चेत्तथा। सर्वसंक्षोभिणी सिञ्चेत् सिञ्चेत विद्रावणी तथा ॥२२॥ ॐ सर्वाकर्षिण्यभिषिं
चेत् सर्ववशीकरिणी तथा। सिञ्चेत् सर्वोन्मादिनी च अभिषिञ्चेत् महांकुशा ॥२३॥ ॐ
अनङ्गकुसुमा सिञ्चेदनङ्गमेखला तथा। अनङ्गमदना सिञ्चेदनङ्गमदनातुरा ॥२४॥ ॐ अनङ्गले-
खा सिञ्चेदनङ्गवेगिनी तथा। सिञ्चेदनङ्गकुसुमा अनङ्गमालिनी सिंचेत ॥२५॥ एता गुप्ततरा
देव्यः सर्वसंक्षोभणे स्थिताः। अभिषिंचन्तु ताः सर्वाः चक्रस्था नायिकागणाः ॥२६॥ ॐ
सर्वसंक्षोभिणी शक्तिरभिषिंचेत् सदा च सा। सर्वविद्राविणी शक्तिरभिषिञ्चतु सर्वदा॥
२७॥ सिंचेत् सर्वाकर्षिणी च सर्वाह्लादिनी तथा। ॐ सर्वसम्मोहिनी सिंचेत सर्वस्तम्भिकारिणी
॥२८॥ सिंचेत सर्वजृम्भिणी च सर्ववशंकरी। ॐ सिञ्चेत सर्वरञ्जनी च सर्वोन्मादिनी
तथा ॥२९॥ सर्वार्थसाधिनी सिञ्चेत् सर्वसम्पत्तिपूरणी। ॐ सर्वमन्त्रमयी सिञ्चेत् सर्वद्वन्द्व-
क्षयंकरी ॥३०॥ एतास्तु सर्वदायिन्यः सौभाग्यचक्रमागताः। ॐ अभिषिञ्चन्तु ताः सर्वाः सौभा-
ग्यचक्रनायिकाः ॥३१॥ सर्वसिद्धिप्रदा सिञ्चेत् सर्वसम्पत्प्रदा तथा। सर्वप्रियंकरी सिञ्चेत सर्व
मङ्गलकारिणी ॥३२॥ सिञ्चेत् सर्वकामदा च सर्वदुःखविमोचिनी। सर्वमृत्युप्रशमनी सर्ववि-
घ्न विनाशिनी ॥३३॥ सर्वाङ्गसुन्दरी सिञ्चेत सर्वसौभाग्यदायिनी। एताश्च कुल कौलिन्या

श्चाभिषिञ्चन्तु सर्वदा ॥ ३४ ॥ बहिर्दशार चक्रस्था: समस्ता : चक्रनायिका: । ॐ सर्वज्ञा चाभिषिंचे-त सर्वशक्त्यभिषिंच तु ॥३५॥ सर्वैश्वर्य प्रदा सिञ्चेत सर्वज्ञान मयी तथा । ॐ सर्व व्याधिविनाशिनी च सर्वाधार स्वरूपिणी ॥३६॥ सर्वपाप हरा सिंचेत सर्वानन्दमयी सिंचेत्। ॐ सर्वरक्षा स्वरूपिणी च सर्वेप्सित फल प्रदा ॥३७॥ एतानि गर्भयोगिन्य: सर्वरक्षाकरा स्मृता:। ॐ अभिषिंचन्तु ता: सर्वा: निगर्भाश्चक्र नायिका: ॥३८॥ वशिनी चैव वाग्देवी अभिषिंचेत् समाहिता: । ॐ कामेश्वरी मोदिनी च विमला अरुणा सिंचेत॥३९॥जयिनी च तत: सिंचेत सिंचेत सर्वेश्वरी तथा । ॐ कौलिनी चाभिषिंचेत सर्वसाध्कसिद्धये ॥४०॥ एता रहस्य योगिन्य : सर्वरोग हरा स्मृता:। ॐ अभिषिंचन्तु ता: सर्वा: चक्रस्था वसुनायिका: ॥४१॥ त्रिकोणस्था महादेवी अभिषिं-चेत सुन्दरी। ॐ इन्द्राद्याश्चाभिषिञ्चन्तु रुद्रा एकादशास्तथा ॥४२॥ सर्वे ते चाभिषिंचंतु ब्रह्मविष्णु शिवादय: ॐ सर्व नद्यो ऽभिषिंचंतु समुद्राद्याश्च ये परे ॥४३॥ एतेत्वामभिषिंचं तु पर्वता: सुरव वासना: ॥४४॥

इसके बाद शिष्य शेष बचे जल से आचमन कर, वस्त्र-युगल पहिनकर गुरु के समीप बैठे तथा गुरु अपने देवता को शिष्य मे आक्रान्त हुआ समझ के एवं दोनों स्थानों के देवताओं में एकता का चिन्तन करते हुए गंधादि से देवता का पूजन करे। फिर 'ॐ सहस्रारे हुं फट्' — इस मन्त्र द्वारा शिष्य का शिखा-बन्धन कर तथा 'फट्' से उसका संरक्षण कर, उसके शरीर में तीन कुशों द्वारा आगे लिखे अनुसार कलान्यास करे—

"ॐ निवृत्यै नमः"— चरणतल से जानु पर्यन्त।
"ॐ प्रतिष्ठायै नमः"— जानु से नाभिपर्यन्त।
"ॐ विद्यायै नमः"— नाभि से कण्ठ पर्यन्त।
"ॐ शान्त्यै नमः"— कण्ठ से ललाट पर्यन्त।
"ॐ शान्त्यतीतायैनमः"— ललाट से ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त।
"ॐ शान्त्यतीतायै नमः"— पुनः ब्रह्मरन्ध्र से ललाट पर्यन्त।
"ॐ शान्त्यै नमः"— ललाट से कण्ठ पर्यन्त।
"ॐ विद्यायै नमः"— कण्ठ से नाभि पर्यन्त।
"ॐ प्रतिष्ठायै नमः"— नाभि से जानु पर्यन्त।
"ॐ निवृत्यै नमः"— जानु से चरण तल पर्यन्त।

कलान्यास के पश्चात् गुरु शिष्य के मस्तक पर हाथ रख कर देय-मन्त्र का १०८ बार जप करने के बाद इस प्रकार कहे— "अमुक मन्त्रं तेऽहं ददामि।' इतना कह कर शिष्य के हाथ में जल दे। तब शिष्य इस प्रकार कहे—'ददस्व।' फिर गुरु कहे—'अयं मन्त्र आवयोः तुल्य फलदो भवतु।' इसके पश्चात् गुरु ऋष्यादि-संयुक्त मन्त्र को, शिष्य के दाँये कान में तीन बार सुनाये। स्त्री तथा शूद्र शिष्य के बाँये कान में मन्त्र सुनाना चाहिए। मन्त्र सुनने के पश्चात शिष्य गुरु को दण्डवत प्रणाम करके इस प्रकार कहे— "त्वत्प्रसादादहं देव

कृतकृत्योऽस्मि सर्वतः। मायामृत्युमहापाशाद्विमुक्तोऽस्मि शिवोऽस्मि च॥" तब गुरु इस प्रकार कहे—"उत्तिष्ठ वत्स मुक्तोऽसि सम्यगाचारवान् भव। कीर्तिश्रीकान्तिपुत्रायुर्बलारोग्यं सदाऽस्तु ते।" यह कह कर गुरु दण्डवत्-प्रणाम करते हुए शिष्य को उठाये। तत्पश्चात् शिष्य (१) गुरु, (२) मन्त्र एवं (३) देवता—इन तीनों को एक समान समझ कर १०८ बार मन्त्र का जप करे। तत्पश्चात् हाथ में कुश, जल तथा तिल—इन तीनों को लेकर निम्न लिखित सङ्कल्प वाक्य पढ़े.

"ॐ अद्यैतद् कृतैतद् अमुकदेवतायाः अमुकमन्त्र ग्रहण प्रतिष्ठार्थं दक्षिणाभिधं द्रव्यं वह्नि दैवतं अमुक गोत्राय अमुक शर्मणे गुरवे तुभ्यमहं सम्प्रददे।"— इस सङ्कल्प वाक्य में जहाँ-जहाँ 'अमुक' शब्द आया है, वहाँ-वहाँ यथोचित शब्दों का उच्चारण करना चाहिए। तदुपरान्त यथाशक्ति दक्षिणा देकर गुरुदेव को सन्तुष्ट करना चाहिए। फिर ब्राह्मणों को भोजन कराकर तथा उन्हें दक्षिणा देकर विदा करने के उपरान्त स्वयं भी भोजन करना चाहिए।

यह 'कलावती-दीक्षा' की सरल विधि है, जो एक ही दिन में पूर्ण हो जाती है। यह विधि शास्त्रीय (तन्त्रेतर) एवं शाबर मन्त्रों के लिए आवश्यक नहीं है। केवल तन्त्र-शास्त्रीय मन्त्रों की दीक्षा में ही इसका प्रयोग होता है। अन्य मन्त्रों के लिए गुरु जिस प्रकार भी उचित समझें, दीक्षा दे सकते हैं। परन्तु गुरु-मुख से प्राप्त मन्त्र ही सिद्ध होते हैं तथा साधक की कामनायें पूर्ण करते हैं—यह ध्यान में रखना आवश्यक है।

मं०
म०
४४

मन्त्र-साधन – तान्त्रिक-साधन में ६ कर्म मुख्य माने गये हैं– (१) शान्ति कर्म, (२) वशीकरण, (३) स्तम्भन, (४) विद्वेषण, (५) उच्चाटन और (६) मारण। इन्हें 'षट कर्म' कहा जाता है। मोहन, आकर्षण, जृंभण तथा पौष्टिक कर्म इन्हीं ६ के अन्तर्गत आजाते हैं। इन कर्मों की संक्षिप्त व्याख्या निम्नानुसार है–

'शान्ति-कर्म'– जिस मन्त्र-प्रयोग के द्वारा रोग-पीड़ा, ग्रह-पीड़ा, भय, उपसर्ग तथा कृत्यादि दोषों की शान्ति हो, उसे 'शान्ति-कर्म' कहते हैं। 'पौष्टिक-कर्म' की गणना भी इसी के अन्तर्गत की जाती है। यों, जिस मन्त्र-प्रयोग से धन-धान्य, सौभाग्य, यश तथा कीर्ति आदि की वृद्धि हो, उसे 'पौष्टिक-कर्म' कहा जाता है।

'वशीकरण'– जिस मन्त्र प्रयोगादि से जीवों को (स्त्री-पुरुष तथा पशु-पक्षी आदि) वश में किया जासके और वह वशीभूत व्यक्ति इच्छानुसार कार्य करने लगे, उसे 'वशीकरण' कहते हैं। 'आकर्षण' तथा 'मोहन' प्रयोग भी इसी के अन्तर्गत आते हैं। 'आकर्षण-प्रयोग' के द्वारा दूर रहनेवाले स्त्री-पुरुष, पशु-पक्षी आदि को अपने पास बुलालिया जाता है तथा 'मोहन-प्रयोग' के द्वारा मनुष्य, पशु-पक्षी आदि प्राणियों को सम्मोहित किया जाता है।

'स्तम्भन'– जिस मन्त्रादि प्रयोग के द्वारा मनुष्य, पशु-पक्षी आदि जीवों की गतिविधियों (हलचलों) का निरोध हो, उसे 'स्तम्भन-कर्म' कहते हैं। 'जृंभण-कर्म' को भी इसी के अन्तर्गत माना जा सकता है। जृंभण-प्रयोगों के द्वारा मनुष्य तथा पशु-पक्षी आदि प्रयोगकर्ता की आज्ञा अथवा सूचनानुसार कार्य करने को विवश होते हैं। इस प्रयोग को 'वशीकरण' श्रेणी में भी रखा जा सकता है।

भा०
टी०

'विद्वेषण'- जिस प्रयोग के द्वारा दो भिन्न भावापन्न मनुष्यों के बीच मतभेद उत्पन्न हो जाँय अथवा मित्रता टूट जाय अथवा लड़ाई-झगड़ा हो जाय, उसे 'विद्वेषण' कहते हैं।

'उच्चाटन'- जिस प्रयोग के द्वारा मनुष्य अथवा अन्य प्राणी अपना स्थान छोड़ कर अन्यत्र चले जाँय अथवा अपना मान-सम्मान खो दें, उसे 'उच्चाटन-कर्म' कहते हैं।

मारण - जिस मन्त्रादि के प्रयोग द्वारा किसी मनुष्य अथवा अन्य जीव की मृत्यु हो जाय, उसे 'मारण-कर्म' कहते हैं।

उक्त कर्मों के और भी अनेक भेद-उपभेद हैं; परन्तु उन सबकी गणना षट्कर्मों के अन्तर्गत ही की जाती है।

षट्कर्मों के देवता - प्रत्येक कार्यकारी-शक्ति का एक अधिष्ठातृ-देवता होता है, पृथ्वी का जीव पृथ्वी-देवता, जल का जीव वरुण-देवता आदि। इसी प्रकार प्रत्येक मन्त्र का भी एक देवता होता है। मन्त्र के कम्पन से उस देवता का आकार बनता है। मन्त्र-जप से उस मन्त्र का अधिष्ठातृ-देवता साकार अथवा निराकार रूप में मन्त्र-साधक की कामनायें पूर्ण करता है। मन्त्र-जप अथवा मन्त्र-साधन में त्रुटि होने पर उसका देवता जपकर्त्ता को अभीप्सित-फल नहीं देता अपितु कभी-कभी मन्त्र का त्रुटिपूर्ण जप जपकर्त्ता को हानि पहुँचाने वाला भी सिद्ध होता है। तान्त्रिक षट्कर्मों की अधिष्ठातृ-देवियाँ इस प्रकार कही गई हैं -(१) शान्ति कर्म की 'रति', (२) 'वशीकरण' की 'वाणी'; (३) स्तम्भन की 'रमा', (४) 'विद्वेषण' की ज्येष्ठा, (५) उच्चाटन की दुर्गा तथा (६) 'मारण' की भद्रकाली। कर्म के आरंभ में इनकी पूजा करना योग्य है।

किस देवता का मन्त्र ग्रहण करना चाहिए और किसका नहीं; इस संबंध में भी विचार करना आवश्यक है। सामान्यत: कुल-परम्परा के इष्ट-देवता का मन्त्र ग्रहण किया जाता है। परन्तु मन्त्रदाता अथवा मन्त्र लेने वाले की रुचि के अनुसार भी विभिन्न देवी-देवताओं के मन्त्र ग्रहण किये जाते हैं। तन्त्र शास्त्र का विधान है कि अनुकूल देवता का ही मन्त्र ग्रहण करना चाहिए। यह भी लिखा है कि दशमहाविद्यायें सिद्ध विद्यायें हैं; अत: इनका मन्त्र ग्रहण करने में किसी विचार की आवश्यकता नहीं है।

कौन देवता अपने कुल का है, अपनी राशि में पड़ता है, अपने गण का है, अपने नक्षत्र का है और वह शत्रु-भाव का है अथवा मित्र-भाव का; ऋणी है अथवा धनी है— इन सब बातों का विचार किए बिना मन्त्र ग्रहण करने से लाभ के स्थान पर हानि भी हो सकती है।

कुलाकुल चक्र— 'कुलाकुल चक्र' द्वारा मन्त्र का विचार किया जाता है। इस चक्र की विचार-विधि यह है कि यदि साधक के नाम का पहला अक्षर तथा मन्त्र का पहला अक्षर एक ही कोष्ठक में पड़ता हो तो उस मन्त्र को अपने कुल का समझ कर, ग्रहण कर लेना चाहिए। यदि मित्र के कोष्ठक में पड़ता हो तो भी मन्त्र ग्रहण करने योग्य होता है। परन्तु यदि मन्त्र का पहला अक्षर शत्रु के कोष्ठक में पड़ता हो तो उसे ग्रहण नहीं करना चाहिए, क्योंकि वह हानिकारक सिद्ध होगा। 'कुलाकुल चक्र' में प्रत्येक अक्षर के तत्त्व दिए गए हैं अर्थात् कौन सा अक्षर किस तत्त्व के अन्तर्गत आता है, यह बताया गया है। मन्त्र के आदि अक्षर

तथा अपने नाम के आदि अक्षर से तत्त्व का विचार करना चाहिए। जल भूमि का तथा वायु अग्नि का मित्र है। आकाश सभी का मित्र है तथा वायु भूमि का एवं अग्नि जल तथा भूमि का शत्रु है। 'कुलाकुलचक्र' नीचे दिया जा रहा है -

॥ कुलाकुल-चक्रम् ॥

वायु	अ	आ	ए	क	च	ट	त	प	य	ष
अग्नि	इ	ई	ऐ	ख	छ	ठ	थ	फ	र	क्ष
भूमि	उ	ऊ	ओ	ग	ज	ड	द	ब	ल	त्र ळ
जल	ऋ	ॠ	औ	घ	झ	ढ	ध	भ	व	स
आकाश	ऌ	ॡ	अं	ङ	ञ	ण	न	म	श	ह

राशिचक्र - 'कुलाकुल-चक्र' के बाद 'राशि-चक्र' द्वारा अपनी तथा मन्त्र की राशि का विचार करना चाहिए। राशि-चक्र का स्वरूप अगले पृष्ठ पर प्रदर्शित है।

राशि-चक्र का स्वरूप अगले पृष्ठ पर प्रदर्शित है।

राशि-चक्र से सर्व प्रथम अपनी तथा मन्त्र की राशि का निश्चय करें। अपने नाम के पहले अक्षर तथा मन्त्र के पहले अक्षर से राशि निश्चित की जाएगी।

अपनी राशि से मन्त्र की राशि तक गिन कर, उसका फलाफल निम्नानुसार समझना चाहिए -

यदि अपनी राशि से मन्त्र की राशि पहली, पाँचवीं अथवा नवीं पड़े तो उसे 'मित्र राशि' समझना चाहिए। ऐसा मन्त्र ग्रहण करने योग्य तथा श्रेष्ठ होता है। यदि अपनी राशि से मन्त्र की राशि छठी, आठवीं अथवा बारहवीं पड़े तो मन्त्र श्रेष्ठ सिद्ध नहीं होगा- यह समझना चाहिए। ऐसा मन्त्र शत्रु-राशि का होता है।

यदि अपनी राशि से मन्त्र की राशि तीसरी, सातवीं अथवा ग्यारहवीं हो तो ऐसा मन्त्र पुष्टिकर अर्थात् अपने लिए कल्याणकर सिद्ध होगा, परन्तु यदि अपनी राशि से मन्त्र की राशि चौथी, आठवीं अथवा बारहवीं हो तो उसे 'घातक' समझना चाहिए।

नक्षत्र-चक्र - 'राशि चक्र' के बाद 'नक्षत्र-चक्र' से अपना तथा मन्त्र का गण देखना चाहिए।

राशि-चक्रम्

भाव का नाम	लग्न	धन	सहज	बन्धु	पुत्र	शत्रु	कलत्र	मृत्यु	धर्म	कर्म	आय	व्यय
राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
	अ	उ	ॠ	ए	ओ	अः	क	च	ट	त	प	य
	आ	ऊ	ऌ	ऐ	औ	श	ख	छ	ठ	थ	फ	र
	इ	ऋ	ॡ			ष	ग	ज	ड	द	ब	ल
	ई					स	घ	झ	ढ	ध	भ	व
						ह	ङ	ञ	ण	न	म	
						ळ(त्र)						
						क्ष						
						अं						

नक्षत्र-चक्रम्

नक्षत्र	अश्विनी	भरणी	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिरा	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	आश्लेषा
वर्ण	अ आ	इ	ई उ ऊ	ऋ ॠ ऌ ॡ	ए	ऐ	ओ औ	क	ख ग
गण	देव	नर	राक्षस	नर	देव	नर	देव	देव	राक्षस

नक्षत्र	मघा	पूर्वाफाल्गुनी	उत्तराफाल्गुनी	हस्त	चित्रा	स्वाती	विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा
वर्ण	घ ङ	च	छ ज	झ ञ	ट ठ	ड	ढ ण	त थ द	ध
गण	राक्षस	नर	नर	देव	राक्षस	देव	राक्षस	देव	राक्षस

नक्षत्र	मूल	पूर्वाषाढा	उत्तराषाढा	श्रवण	धनिष्ठा	शतभिषा	पूर्वभाद्रपदा	उत्तराभाद्रपदा	रेवती
वर्ण	न प फ	ब	भ	म	य र	ल	व श	ष स ह	ळ क्ष अं अः
गण	राक्षस	नर	नर	देव	राक्षस	राक्षस	नर	नर	देव

नक्षत्र-चक्र से विचार का नियम इस प्रकार है- यदि साधक के नाम का प्रथमाक्षर मनुष्य गण में हो तो उसके लिए मनुष्य गण वाला मन्त्र सर्वश्रेष्ठ तथा देवगण वाला मन्त्र उत्तम एवं राक्षस गण वाला मन्त्र घातक सिद्ध होगा। यदि साधक के नाम का प्रथमाक्षर देवगण का हो तो उसके लिए देवगण वाला मन्त्र सर्वश्रेष्ठ, मनुष्य गण वाला मन्त्र मध्यम तथा राक्षसगण वाला मन्त्र शत्रु अर्थात् हानिकर सिद्ध होगा। यदि साधक के नाम का प्रथमाक्षर राक्षस गण का हो तो उसके लिए राक्षसगण वाला मन्त्र ही ठीक रहेगा. अन्य गणों वाले मन्त्र हानिकर अथवा अशुभ सिद्ध होंगे।

इसी चक्र द्वारा अपने तथा मन्त्र के नक्षत्र को भी निश्चित करना चाहिए। फिर अपने नक्षत्र से मन्त्र के नक्षत्र तक गिनना चाहिए। जो संख्या आवे, उसका फल इस प्रकार समझना चाहिए — १-जन्म, २-सम्पत्, ३-विपत्, ४-क्षेम, ५-प्रत्यरि, ६-साधक, ७-वध, ८-मित्र तथा ९-परम मित्र। यदि इतनी संख्याओं के भीतर मन्त्र न आये तो इसी क्रम से दुबारा-तिबारा गणना करनी चाहिए।

अकडम-चक्र- अगले पृष्ठ पर दिए गए 'अकडम-चक्र' का विचार करना भी आवश्यक है। इस चक्र में साधक को अपने नाम के प्रथमाक्षर से, दक्षिणावर्त क्रम से उस प्रकोष्ठ तक गणना करनी चाहिए, जिसमें मन्त्र का पहला अक्षर आता हो। इसका फलाफल इस प्रकार कहा गया है कि यदि पहले प्रकोष्ठ में मन्त्राक्षर हो तो वह 'सिद्ध'; दूसरे में हो तो 'साध्य', तीसरे में हो तो सुसिद्ध एवं चौथे में हो तो 'अरि' होता है। इसी क्रम से यदि आव-

-श्यक हो तो दुबारा-तिबारा भी गिनना चाहिए।

'सिद्ध' तथा 'सुसिद्ध' मन्त्र 'उत्तम' होते हैं, उन्हें ग्रहण करना फलदायक रहता है। 'साध्य' मन्त्र 'मध्यम' होता है तथा 'अरि' मन्त्र हानिकर होता है। अतः 'अरि' मन्त्र को सर्वथा त्याग देना चाहिए। 'साध्य' मन्त्र कठिनाई से सिद्ध होता है।

अकथह-चक्र - मन्त्र का शुभाशुभ जानने हेतु 'अकथह' चक्र का भी प्रयोग किया जाता है। इसकी गणना भी 'अकडम' चक्र की भाँति ही की जाती है अर्थात् (1) सिद्ध, (2) साध्य, (3) सुसिद्ध और (4) अरि। आवश्यकतानुसार इस चक्र में भी दुबारा-तिबारा गणना करने का नियम है। अपने नाम के प्रथमाक्षर से मन्त्र के प्रथमाक्षर के आधार पर विचार करना चाहिए। 'अकथह' चक्र अगले पृष्ठ पर दिया जा रहा है।

अकडम चक्रम्

अ क ड म चक्रम्			
१ अ क थ ह	२ उ ड़ प	३ आ ख द	४ ऊ च फ
५ ओ ड ब	६ लृ क्ष म	७ औ ढ श	८ लॄ अ य
९ ई ध न	१० ऋ ज भ	११ ई ग घ	१२ ॠ छ व
१३ अः त स	१४ ऐ ठ ल	१५ अं ण ब	१६ ए ट र
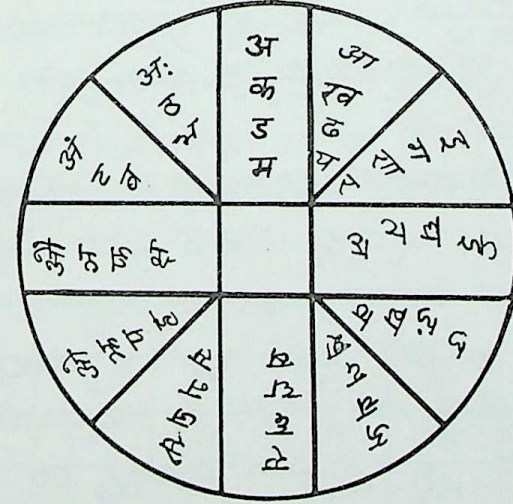
ऋणी-धनी चक्र- 'ऋणी-धनी चक्र' से भी मन्त्र का विचार किया जाता है। 'ऋणी-धनी चक्र' को अगले पृष्ठ पर दिया गया है। इस चक्र से विचार करने का नियम यह है कि मन्त्र के जितने अक्षर हों, उन्हें अलग-अलग करलें तथा उन अक्षरों पर जो मात्राऐं हों, उन्हें भी अलग-अलग करलें, यथा- किसी अक्षर पर 'ि' -यह मात्रा हो तो उसे 'इ' मानलें तथा ु-यह मात्रा हो तो उसे 'उ' मानलें- इत्यादि। फिर इसी प्रकार अपने नाम के अक्षरों को भी अलग-अलग करलें। मात्राओं सम्बन्धी नियम इसमें भी पूर्ववत रहेगा।

अब 'ऋणी-धनी चक्र' के कोष्ठकों को देखें। इसमें सबसे ऊपर की पंक्ति में मन्त्रवर्णों के तथा सबसे निचली पंक्ति में साधक के नाम वर्णों के अङ्क दिए गए हैं तथा मध्य की पंक्तियों में स्वर तथा व्यञ्जन वर्ण हैं।

जिन कोष्ठकों में मन्त्र के सभी अक्षर (स्वर-व्यंजन) पड़ें, उनके ऊपर लिखी हुई संख्याओं को लिखलें जाँच तथा उन सबको जोड़कर अलग रखलें। फिर अपने नाम के अक्षरों

संख्याओं को जोड़कर अलग रखलें। अब मन्त्राक्षरों की संख्या में ८ का भाग दें तथा नामाक्षरों की संख्या में अलग से ८ का भाग दें। भाग देने से जो संख्यायें प्राप्त हों, उन्हें अलग-अलग लिख कर रखलें। अब मन्त्राक्षरों का शेष और साधक के नामाक्षरों का शेष - इन दोनों में जो अधिक हो उसका इस प्रकार विचार करें कि यदि मन्त्र का शेष साधक के शेष से कम हो तो मन्त्र साधक का ऋणी है और यदि साधक का शेष मन्त्र के शेष से कम हो तो साधक मन्त्र का ऋणी है अर्थात मन्त्र धनी है। जो मन्त्र ऋणी हो उसको ग्रहण करना चाहिए। यदि दोनों के शेष अक्षर एक समान हों तो भी मन्त्र ग्रहण करने योग्य होता है, परन्तु यदि मन्त्राङ्क और नामाङ्क में कुछ भी शेष न बचा हो तो उस मन्त्र को कभी भी ग्रहण नहीं करना चाहिए। धनी मन्त्र विलम्ब से सिद्धिदायक तथा शून्य शेषवाला मृत्यु-कारक होता है।

ऋणी-धनी-चक्रम्

मन्त्राक्षरों के अङ्क	६	६	६	०	३	४	४	०	०	०	३
स्वर	अ आ	इ ई	उ ऊ	ऋ ॠ	ऌ ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
व्यञ्जन	क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
व्यञ्जन	ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
व्यञ्जन	ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
साधक के नामाक्षरों के अङ्क	२	२	५	०	०	२	१	०	४	४	१

दीक्षा-ग्रहण का समय- मन्त्र-दीक्षा लेते समय तथा मन्त्र का अनुष्ठान करते समय काल, तिथि, दिन, नक्षत्र आदि का विचार करना आवश्यक है।

मास- ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद, पौष तथा मलमास में मन्त्र की दीक्षा नहीं लेनी चाहिए। कुछ विद्वान केवल चैत्र तथा मलमास को ही दीक्षा-ग्रहण के लिए अशुभ बताते हैं। परन्तु इन सभी मासों को दीक्षा के लिए त्याग देना ही उपयुक्त रहता है। दीक्षा के लिए फाल्गुन का महीना सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। गोपाल मन्त्र की दीक्षा चैत्र मास में ही उत्तम मानी गई है।

पक्ष- वर्जित मासों के अतिरिक्त अन्य मासों में दोनों ही पक्षों में दीक्षा ली जा सकती है, परन्तु शुक्ल पक्ष उत्तम माना जाता है।

वार - मंगलवार तथा शनिवार के अतिरिक्त अन्य किसी भी वार में दीक्षा ली जा सकती है।

तिथि- प्रतिपदा, चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी तथा अमावस्या- ये तिथियाँ दीक्षा के लिए वर्जित कही गई हैं। कुछ विद्वान पौर्णमासी को भी अच्छा नहीं मानते। शुक्लपक्ष की षष्ठी, सप्तमी तथा द्वादशी भी वर्जित हैं। द्वितीया, पंचमी, षष्ठी तथा त्रयोदशी को केवल विष्णुमन्त्र की दीक्षा ग्रहण करनी चाहिए। जिस दिन मेघ-गर्जन हो एवं भूकम्प का कोई उत्पात हो, उस दिन तथा सायंकाल में किसी भी तिथि को दीक्षा ग्रहण नहीं करनी चाहिए।

नक्षत्र- भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, श्रवण, धनिष्ठा- ये सभी नक्षत्र दीक्षा में वर्जित हैं। शिव तथा अग्नि मन्त्र के ग्रहण में आर्द्रा तथा कृत्तिका नक्षत्र दोषी नहीं माने जाते। अश्विनी, रोहिणी,

तक तथा पूर्वाभाद्रपदा से रेवती तक नक्षत्र मन्त्र-दीक्षा के लिए उचित कहे गए हैं।

लग्न- वृष, सिंह, कन्या, धनु तथा मीन – ये लग्न मन्त्र-दीक्षा के लिए श्रेष्ठ मानी गई हैं। विष्णु-मन्त्र ग्रहण करने के लिए वृष, सिंह, वृश्चिक तथा कुम्भ; शिव-मन्त्र के लिए मेष, कर्क, तुला और मकर एवं शक्ति-मन्त्र के लिए मिथुन, कन्या, धनु तथा मीन लग्न शुभ कही गई हैं।

योग- प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, धृति, वृद्धि, ध्रुव, सुकर्मा, साध्य, शुक्ल, हर्षण, वरीयान, शिव, ब्रह्म, सिद्ध तथा ऐन्द्र – ये योग मन्त्र-दीक्षा के लिए शुभ हैं।

करण- बव, कौलव, तैतल तथा वणिज – ये करण मन्त्र-दीक्षा में शुभ होते हैं।

अन्य- भाद्रपद मास की षष्ठी, आश्विन कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी, कार्तिक शुक्ल पक्ष की नवमी, मार्गशीर्ष मास की तृतीया, पौष शुक्ल पक्ष की नवमी, माघ शुक्ल पक्ष की चतुर्थी, फाल्गुन शुक्ल पक्ष की नवमी, चैत्र मास की चतुर्दशी, वैशाख मास की अक्षय तृतीया, ज्येष्ठ मास का दशहरा, आषाढ़ शुक्ल पक्ष की पंचमी तथा श्रावण कृष्ण पक्ष की पंचमी – इन तिथियों में मन्त्र ग्रहण करने के लिए तिथि, वार, योग, करण आदि के विचार की आवश्यकता नहीं है। चैत्र शुक्ला त्रयोदशी, वैशाख शुक्ला एकादशी, ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्दशी, आषाढ़ मास की नाग पंचमी, श्रावण मास की एकादशी तथा फाल्गुन शुक्ल पक्ष की षष्ठी – ये तिथियाँ भी मन्त्र-दीक्षा के लिए शुभ मानी गई हैं। शक्ति-मन्त्र की दीक्षा के लिए चतुर्दशी तथा अष्टमी एवं गणपति-मन्त्र की दीक्षा के लिए चतुर्थी श्रेष्ठ मानी गई है। सूर्य ग्रहण में भी

दीक्षा ली जा सकती है। परन्तु सूर्य ग्रहण में शक्ति-मन्त्र की दीक्षा तथा चन्द्र-ग्रहण में विष्णु-मन्त्र की दीक्षा शुभ नहीं होती।

गंगा आदि पवित्र तीर्थों में, कुरुक्षेत्र में, काशी में, कैलाश में तथा देवी के चारों पीठों में दीक्षा लेते समय, समय का विचार नहीं किया जाता।

स्थान - गुरु का घर, देव-मन्दिर, गो-शाला, नदी-तट, जंगल, आँवला तथा बेल के वृक्ष के समीप, पर्वत के ऊपर गुफा में तथा गंगा-तट पर दीक्षा लेना शुभ माना गया है। कन्या का घर, कामरूप देश, मतंग देश, चन्द्र पर्वत, सूर्य-क्षेत्र तथा गया - ये स्थान मन्त्र-दीक्षा के लिए वर्जित हैं।

विशेष - सङ्कट के समय अथवा किसी विशेष-स्थिति में कालादि का विचार किये बिना कभी भी दीक्षा लेना वर्जित नहीं माना गया है अर्थात् ऐसे अवसर पर चाहे जब मन्त्र-दीक्षा ली जा सकती है।

दीक्षा का पात्र - श्रद्धालु, विश्वासी, सदाचारी, पुण्यात्मा, गुरु-वाक्यों पर विश्वास करने वाला, निरभिमानी, वासना-रहित, सत्यवादी, निस्वार्थ, सहिष्णु, लोकसेवी, शास्त्र-ज्ञ, विघ्नों को दूर करने में सक्षम, जिज्ञासु तथा नित्य-कर्म करने वाला, निष्पाप व्यक्ति ही मन्त्र-दीक्षा का अधिकारी कहा गया है। जो किसी स्त्री, मित्र अथवा अन्य व्यक्ति के अधीन हो, जो रोगी अथवा अङ्ग-हीन हो, जो यश अथवा धन प्राप्ति का अभिलाषी हो, जो कुकर्मी, चोर, हिंसक, पर-निन्दक, आचार-भ्रष्ट, अज्ञानी, क्रोधी अथवा पाखण्डी हो, उसे मन्त्र-

मन्त्र-दीक्षा का अधिकारी नहीं समझना चाहिए। ऐसे व्यक्ति को मन्त्र देने से वह अपना अथवा दूसरों का अकल्याण ही करेगा। शुद्ध, सात्विक एवं सबको स्नेह करने वाला व्यक्ति ही मन्त्र-साधन का उचित अधिकारी है।

धर्म, नियम तथा मर्यादा-पालन के भाव जिसमें अधिक हों, उसे राम-मन्त्र की; जिसमें प्रेम-भावना अधिक हो, उसे गोपाल-मन्त्र की; जिसमें भक्ति की अधिकता हो, एवं ऐश्वर्य की कामना हो उसे विष्णु-मन्त्र की; जिसमें क्रोध की भावना अधिक हो, उसे रुद्र अथवा काली-मन्त्र की उपासना शीघ्र फलदायक होती है। इसी प्रकार अपनी रुचि तथा स्वभाव के अनुकूल देवी-देवताओं के मन्त्र की दीक्षा लेनी चाहिए। साधक की जैसी कामना हो, उस कामना की पूर्ति के लिए उपयुक्त देवी-देवता का मन्त्र ग्रहण करना ही उचित रहता है, यथा- धन प्राप्ति के लिए लक्ष्मी की, विद्या-प्राप्ति के लिए सरस्वती की तथा काम-प्राप्ति के लिए रति एवं कामदेव के मन्त्रों की दीक्षा लेना फलदायक सिद्ध होगा।

मन्त्र-संस्कार - दीक्षा ग्रहण करने के उपरान्त साधक को उचित है कि वह सर्वप्रथम मन्त्र का यथोचित संस्कार करे। मन्त्र के १० संस्कार कहे गए हैं- (१) जनन, (२) दीपन, (३) बोधन, (४) ताड़न, (५) अभिषेक, (६) विमलीकरण, (७) जीवन, (८) तर्पण, (९) गोपन तथा (१०) आप्यायन। ये सभी संस्कार अत्यावश्यक हैं। यदि मन्त्र तीन अथवा पाँच अक्षर का हो तो ये सभी संस्कार आठ-दस घण्टे में ही अर्थात् एक दिन में ही पूरे हो जाते हैं; यदि मन्त्र बड़ा हुआ तो दसों संस्कारों के पूर्ण होने में तीन अथवा अधिक दिन भी लग सकते हैं।

इन संस्कारों की विधि निम्नानुसार समझनी चाहिए -

(१) **जनन** - चन्दन, कुंकुम अथवा गोरोचन से भोजपत्र के ऊपर एक आत्माभिमुख त्रिकोण लिखें। उसके तीनों कोणों में ६-६ समान रेखाएं खींचें। इस प्रकार जो ४९ त्रिकोण बनेंगे, उनमें से प्रथम ईशान कोण से आरंभ करके त्रिकोण-कोष्ठकों में मातृकावर्ण लिखें। फिर उसमें देवता का आवाहन करें तथा मन्त्र के एक-एक वर्ण का उद्धार करके उन्हें अलग पत्र (कागज़) पर लिखें। इसी को मन्त्र का 'जनन' कहा जाता है।

(२) **दीपन** - मन्त्र को 'हंस' मन्त्र से सम्पुटित करके १००० बार जपें। यही 'दीपन' संस्कार होगा।

(३) **बोधन** - मन्त्र को 'हूं' बीज से सम्पुटित करके ५००० बार जप करने से 'बोधन' संस्कार होता है।

(४) **ताड़न** - मन्त्र को 'फट्' से सम्पुटित करके १००० बार जपने से 'ताड़न' संस्कार पूर्ण होगा।

(५) **अभिषेक** - मन्त्र को भोजपत्र पर लिखकर 'ॐ हंसः ॐ' इस मन्त्र से उसे अभिमन्त्रित कर १००० बार जपे हुए जल से अश्वत्थपत्रादि द्वारा मन्त्र का 'अभिषेक' संस्कार करना चाहिए।

(६) **विमलीकरण** - मन्त्र को 'ॐ त्रों वषट्' इस मन्त्र द्वारा सम्पुटित करके उसका १००० बार जप करने से उसका 'विमलीकरण' संस्कार सम्पन्न होता है।

(७) **जीवन** - मन्त्र को 'स्वधा-वषट्' से सम्पुटित करके, उसका १००० बार जप करने से 'जीवन' संस्कार पूर्ण होता है।

(८) **तर्पण** - मूल मन्त्र से दूध, जल एवं घृत द्वारा १०० बार तर्पण करने से 'तर्पण' संस्कार पूर्ण हो जाता है।

(९) **गोपन**- मन्त्र को 'ह्रीं' बीज से सम्पुटित करके 1000 बार जपने से उसका 'गोपन' संस्कार पूर्ण हो जाएगा।

(१०) **आप्यायन**- मन्त्र को 'ह्रौं' बीज से सम्पुटित करके उसका १००० बार जप करने से 'आप्यायन' संस्कार पूर्ण होता है।

मन्त्र-चैतन्य- मन्त्र-चैतन्य के लिए निम्नलिखित प्रयोग करना चाहिए-

मन्त्र के पहले 'क्लीं श्रीं ह्रीं' तथा 'अ'कार से 'क्ष'कार तक अनुस्वार युक्त मातृका-वर्ण लगा कर, मन्त्र का उच्चारण करें। फिर 'क्लीं श्रीं ह्रीं' तथा मातृकावर्णों का पूर्ववत् उच्चारण करें। इस प्रकार १०८ बार जप करें। इस प्रयोग से मन्त्र चैतन्य हो जाएगा।

पुरश्चरण - किसी भी मन्त्र के प्रयोग से पूर्व (यदि वह 'शाबर मन्त्र' नहीं है तो) उसका पुरश्चरण करना आवश्यक है। पुरश्चरण के बिना किसी मन्त्र की सिद्धि नहीं होती। प्रत्येक मन्त्र के पुरश्चरण की जप-संख्या तथा पुरश्चरण-विधि अलग-अलग होती है। उन विधियों में जो बातें सब में समानरूप से पाई जाती हैं, उनके विषय में यहाँ लिखा जा रहा है।

शाबर मन्त्र के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार के मन्त्र पुरश्चरण द्वारा ही सिद्ध होते हैं। शास्त्रों में विभिन्न मन्त्रों के पुरश्चरण के लिए जो संख्या दी गई है, वह सतयुग के लिए है। त्रेता में उस संख्या का दुगुना, द्वापरयुग में तिगुना तथा कलियुग में चौगुना जप

करने से पुरश्चरण पूरा होता है। पुरश्चरण के फल का प्रमाण यह है कि उसके अन्त में साधक को मन्त्र-देवता का प्रत्यक्ष साक्षात् होता है और वे उसे अभीष्ट-फल प्रदान करते हैं। प्रत्यक्ष साक्षात् से तात्पर्य देवता का साकार रूप में दर्शन न देना होकर, साधक के हृदय में उसके स्वरूप की अनुभूति होना ही है।

पुरश्चरण में मन्त्र की जितनी जप-संख्या निर्दिष्ट हो, उसे एक ही क्रम से जप कर पूरा किया जाता है। पुरश्चरण का प्रारम्भ शुभ मुहूर्त में करना चाहिए। यथा- यदि तीन अक्षरों का मन्त्र हो और उसकी जप संख्या तीन लाख निर्दिष्ट की गई हो तो नित्य प्रति दस हजार की संख्या में जप करने से पुरश्चरण तीस दिन में पूरा हो जाएगा। जैसा कि पहले बताया जा चुका है यदि मन्त्र की पुरश्चरण-जप-संख्या तीन लाख निर्दिष्ट की गई हो तो कलियुग में बारह लाख की संख्या में जपना चाहिए तथा इसी संख्या के आधार पर तर्पण, हवन आदि कृत्य (जिनके विषय में आगे लिखा जाएगा) करने चाहिए।

पुरश्चरण-काल ही साधक के लिए सबसे कठिन-साधना का समय होता है। इस अवधि में नित्य प्रातः काल उठकर नित्य-कर्म तथा स्नानादि से निवृत्त होकर इष्ट देवता के मन्त्र का जप करना आरम्भ कर देना चाहिए।

पुरश्चरण के लिए तीर्थ, नदी-तट, गुफा, पर्वत, समुद्र-तट, जंगल, उद्यान, गोशाला अथवा देव-मन्दिर उपयुक्त स्थान हैं। बेल, पीपल अथवा आँवले के वृक्ष के नीचे बैठ कर भी पुरश्चरण किया जा सकता है। इन सबके अभाव में अपने ही घर का कोई

एकान्त, शान्त, स्वच्छ तथा हवादार कमरा भी उपयुक्त रहेगा।

पुरश्चरण कर्ता को स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। जितेन्द्रिय तथा संयमी बने रह कर सात्विक भोजन करना चाहिए। बाल-कटवाना, तैल-मर्दन, बिना देवता का भोग लगाये भोजन करना, परान्न-भोजन, दान-लेना, पर-स्त्री संसर्ग अथवा उसका ध्यान स्त्री-सहवास तथा काम, क्रोध, लोभ, मोह, आलस्य आदि पुरश्चरणकर्त्ता के लिए सर्वथा त्याज्य हैं। पितृ-तर्पण न करने से भी पुरश्चरण व्यर्थ हो जाता है।

यदि अपने पास सामग्री न हो तो तीर्थ के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान से एवं पर्व के अतिरिक्त अन्य तिथियों में शुद्ध, श्रद्धालु तथा सदाचारी मनुष्य से एक दिन की सामग्री भिक्षा के रूप में ग्रहण कर लेनी चाहिए। इसी प्रकार प्रत्येक दिन अलग-अलग लोगों से, जो शुद्ध तथा सदाचारी हों, एक-एक दिन की सामग्री भिक्षा के रूप में ली जा सकती है।

जप के समय मौन रहना आवश्यक है। मौन-भङ्ग होने पर प्रणव (ॐ) का जप करके पुनः जप आरंभ करना चाहिए। यदि किसी समय क्रोधादि का विकार उत्पन्न हो जाय तो आचमन एवं प्राणायाम करके पुनः जप आरंभ करना चाहिए। मल-मूत्रादि के वेग को रोक कर जप करना वर्जित है। शरीर, मुख, स्थान, वस्त्र, सामग्री तथा मन - इन सबकी स्वच्छता आवश्यक है। हर समय हर प्रकार की प्रकार की पवित्रता आवश्यक शर्त है।

पहले दिन जितनी संख्या में मन्त्र-जप किया जाय, प्रतिदिन उतनी ही संख्या में मन्त्र-जप करते रहना चाहिए। कभी कम और कभी अधिक संख्या में मन्त्र-जप करने

से जप भ्रष्ट हो जाता है।

जप की अवधि में, जब निर्दिष्ट संख्या में जप पूरा हो चुके, तब हविष्यान्न का भोजन करना चाहिए तथा सन्ध्या-समय नित्य कर्म करके, रात्रि के समय इष्ट देवता का स्मरण करते हुए पृथ्वी पर शयन करना चाहिए। जब तक पुरश्चरण पूरा न हो जाय, तब तक दिनचर्या नियमित एवं संयमित बनी रहनी चाहिए। लोक-व्यवहार की बातों से स्वयं को अलग रखना आवश्यक है। त्रिकाल-संध्या, मौन, ब्रह्मचर्य एवं अक्रोध का पालन करते हुए ब्रह्मचर्य का निष्ठापूर्वक पालन करना चाहिए तथा स्नान, पूजा, पितृ-तर्पण, देवस्तुति करते हुए यथाशक्ति दान भी देते रहना चाहिए। क्रोध न करें। स्त्री, शूद्र तथा नास्तिकों से न बोलें। असत्य-भाषण को पास न आने दें तथा एकान्त में शयन करें।

यदि पुरश्चरण की अवधि में मृत्यु-शौच अथवा जातक-शौच अर्थात् किसी की मृत्यु हो जाय अथवा किसी का जन्म हो (अपने घर में) तो भी अनुष्ठान को नहीं छोड़ना चाहिए। पुरश्चरण-काल में नृत्य, गायन, सुगन्धित तैल आदि का सेवन तथा किसी अन्य देवता की पूजा करना वर्जित है।

पुरश्चरण के पाँच अङ्ग हैं— (१) जप अर्थात् इष्ट-देवता की पूजा सहित इष्ट-मन्त्र का निश्चित संख्या में जप करना; (२) हवन अथवा होम; (३) तर्पण; (४) अभिषेक अथवा मार्जन एवं (५) ब्राह्मण-भोजन। कुछ लोग हवन आदि को यथा विधि न करके उनके स्थान पर दूनी संख्या में मन्त्र-जप कर लेते हैं; परन्तु यह प्रक्रिया उचित नहीं

पुरश्चरण के पाँचों अङ्गों का यथाविधि सम्पन्न होना आवश्यक है।

जप- पुरश्चरण के प्रथम जप-अङ्ग में देवता का यथाविधि पूजन करने के पश्चात्
ही मन्त्र-जप किया जाता है। इसमें पूजा-स्थान के शोधन से आरंभ कर, आवरण-पूजातक
की सभी प्रक्रियाएँ पूर्ण की जाती हैं। उन्हें करने में कम-से-कम दो घण्टे का समय लगता है
तत्पश्चात् कम-से-कम दो घण्टे तक मन्त्र-जप भी किया जाता है। इस प्रकार नित्य चार घण्टे
का समय लगाना आवश्यक होता है।

मन्त्र-जप सुसंस्कृत अर्थात् जिस कर्म के लिए मन्त्र-जप किया जा रहा हो, उसके
लिए उपयुक्त माला (इस सम्बन्ध में आगे लिखा जाएगा) लेकर किया जाता है। जप-काल में
जप कर्ता के सम्मुख शुद्ध घृत के दीपक का निरन्तर जलते रहना आवश्यक है।

पुरश्चरण का प्रारंभ सङ्कल्प लेकर किया जाता है। सङ्कल्प-वाक्य इस प्रकार है-
"ॐ तत्सत् अद्येत्यादि" - इस सङ्कल्प वाक्य के अन्त में 'अमुक गोत्रः श्रीमदमुकदेवशर्माहमुक
मन्त्र सिद्धि कामो अमुक मन्त्रीय इयत् संख्यक जप अमुकमन्त्रकारणक इयत् संख्याक हवन
इयत् संख्या तर्पण इयत्य संख्याभिषेक इयत्संख्या ब्राह्मण भोजन अमुकमन्त्रस्य पुरश्चरण
कर्म करिष्ये" - यह कहा जाता है। यदि साधक होमादि करने में असमर्थ हो तो इस संकल्प
वाक्य में 'अमुक मन्त्रस्य कारणक इयत्संख्य कामुकानुकल्प इयत्संख्या जप' - इत्यादि रूप से
वाक्य-योजना कर लेनी चाहिए। देव-पूजन के बाद मन्त्र-जप नियत संख्या में पूरा करके
अपने कल्पानुसार दशांश हवन करना चाहिए।

मं० मं० ३३

भा० टी०

हवन- जप का दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश अभिषेक तथा अभिषेक का दशांश ब्राह्मण-भोजन कराने का नियम है। मन्त्र-जप पूरा हो जाने पर ये सभी कर्म नित्य पूरे कर देने चाहिए। नियत संख्या में मन्त्र-जप समाप्त करने के बाद दशमांश मन्त्र संख्या से हवन करना चाहिए। हवन कुण्ड में अथवा वेदी (स्थण्डिल) में करना चाहिए। यदि कुण्ड विधि से हवन करने में कठिनाई हो तो स्थण्डिल (वेदी) से ही करना चाहिए, हवन करने से मन्त्र विशेष रूप से जागृत होता है तथा पुरश्चरण की सिद्धि होती है, अतः हवन अवश्य तथा विशेष रूप से करना चाहिए।

तर्पण- यदि समीप ही कोई नदी हो तो उसमें जाकर तर्पण करना सर्वोत्तम रहता है, अन्यथा अपने पूजा-गृह में एक बड़े ताम्रपात्र में ही जल भर कर तर्पण करना चाहिए। यदि नदी में तर्पण किया जाय तो नाभि-पर्यन्त जल में खड़े होकर करना चाहिए तथा जल में इष्टदेवता के मन्त्र की भावना करके, उसमें सूर्य मण्डल से तीर्थों का आवाहन कर, होम की दशमांश संख्या में तर्पण करना चाहिए। यदि ताम्रपात्र में तर्पण करना हो तो पात्र को जल से परिपूर्ण कर, उसमें कर्पूरादि अष्टगन्ध तथा दूर्वा छोड़ कर, उस जल से तर्पण करना चाहिए, मन्त्र के साथ 'अमुक देवता तर्पयामि नमः' — इस वाक्य की योजना करके देवता को जला-ञ्जलि प्रदान करनी चाहिए।

अभिषेक- तर्पण का दशमांश 'अभिषेक' अर्थात् 'मार्जन' करना चाहिए। यदि नदी हो तो नदी में अन्यथा ताम्र-पात्र के जल से कुम्भ-मुद्रा [illegible] दूर्वा से अपने सिर पर, मन्त्रोच्चारण

के अन्त में 'अमुक देवतां अभिषिञ्चयामि नमः' - इस वाक्य को जोड़ कर अभिषेक करना चाहिए।

ब्राह्मण-भोजन- मार्जन कर चुकने के बाद मार्जन अर्थात् अभिषेक की दशांश संख्या में ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। ब्राह्मणों को आदर पूर्वक आमन्त्रित करे। उनके आने पर उनका इष्ट-देवता के रूप में अर्घ्य-पाद्य से पूजन करे, फिर श्रेष्ठ आसन पर बैठाकर उन्हें भक्ष्य, भोज्य, चर्व्य, चोष्य, लेह्य तथा पेय -- ये षट्-रस भोजन कराये। अन्तिम ताम्बूल प्रदान कर यथाशक्ति दक्षिणा दे। अन्त में, ब्राह्मणों को विदाकर स्वयं भोजन करे।

कुछ लोग मन्त्र-जप की समाप्ति पर नित्य हवन, अभिषेक आदि न करके मन्त्र जप पूरा हो जाने के बाद ही एक साथ अन्य कर्मों को करते हैं। परन्तु इसके स्थान पर प्रत्येक कर्म को प्रतिदिन ही सम्पन्न करते जाना अधिक उचित रहता है।

पुरश्चरण का कार्य यदि गुरु-सान्निध्य में हो सके, तब तो कहना ही क्या है, पुरश्चरण की समाप्ति पर गुरुदेव द्वारा मन्त्र-सिद्धि का आशीर्वाद अभीप्सित फलदायक होता है। परन्तु यदि गुरुदेव की उस समय उपस्थिति न हो सके तो उन्हें मन-ही-मन प्रणाम करके आशीर्वाद ग्रहण करना चाहिए।

पुरश्चरण की उक्त तपस्या लगभग दो-तीन मास में पूरी हो जाती है। जो साधक इस अवधि में सभी कर्मों को यथाविधि सम्पन्न करते हैं, उनकी मन्त्र-सिद्धि में कोई सन्देह नहीं रह जाता। अतः मन्त्र-ग्रहण करने वाले को पुरश्चरण करना आवश्यक है। शास्त्रों में पुरश्चरण की अनेक विधियों का वर्णन पाया जाता है, उनमें से किसी भी एक

विधि द्वारा पुरश्चरण किया जा सकता है।

विशेष- ग्रहण-काल में मन्त्र-जप करने पर, ग्रहण के अन्त में ही मन्त्र-जप संख्या का दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश अभिषेक (मार्जन) तथा मार्जन का दशांश ब्राह्मण-भोजन करना चाहिए।

(२) गोपाल-मन्त्र में हवन की संख्या के बराबर ही तर्पण किया जाता है (३) यदि सामान्य अनुष्ठान करते समय बीच में ही ग्रहण आ जाय, तो सामान्य-अनुष्ठान को छोड़ना नहीं चाहिए, (४) सामान्य-पुरश्चरण के लिए चन्द्र-ग्रहण में दीक्षा नहीं लेनी चाहिए।

अन्य-(१) पुरश्चरण की दीक्षा कार्तिक, आश्विन, वैशाख, मार्गशीर्ष तथा श्रावण-इनमें से किसी भी मास में ली जा सकती है। (२) चन्द्र-तारा-शुद्धि होने पर शुक्लपक्ष में पुरश्चरण आरंभ करना चाहिए। (३) पुरश्चरण के लिए जो स्थान निश्चित किया जाय, उसकी सीमा दो-चार गज के घेरे में निश्चित कर लेनी चाहिए तथा अनुष्ठान के पूरा होने तक साधक को उस सीमा से बाहर नहीं जाना चाहिए। आहार-विहारादि सब काम उस सीमा के भीतर ही करने चाहिए। (४) अनुष्ठान-स्थान पर कूर्म-चक्र के अनुसार मण्डप बनाना चाहिए। (५) प्रतिदिन स्नानादि से निवृत्त होकर, पीपल, गूलर अथवा पाकर-इन में से किसी एक वृक्ष की लकड़ी से बारह-बारह अंगुल की १० कीलें बनाकर तथा प्रत्येक प्रत्येक कील पर "सुदर्शनाय अस्त्राय फट्"-इस मन्त्र को १०८ बार जप कर, उन्हें वेदिका के दसों तरफ गाड़ देना चाहिए। फिर "ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय ..." [illegible]

पूजन करके, उनके ऊपर दसों दिशाओं में इन्द्रादि लोकपालों की पूजा पंचोपचार से करनी चाहिए। तत्पश्चात् "ॐ भूः भुवः स्वः इन्द्र लोकपालाय इह आगच्छ" — इत्यादि नाम लेकर आवाहन करना चाहिए। वेदी के मध्य भाग में क्षेत्रपाल, वास्तु, ब्रह्म तथा ईशान की पूजा करनी चाहिए। तदुपरान्त विघ्न-विनाश का सङ्कल्प पढ़ कर, वेदी के मध्य में गणेशजी का आवाहन करके पंचोपचार पूजन करना चाहिए। फिर दिक्पालों को उपहार दे कर उनसे क्षेत्र-प्रवेश की प्रार्थना करनी चाहिए। फिर दशों-दिशाओं में बलि-द्रव्य डाल कर, गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिए। इसके बाद सामर्थ्यानुसार दान देकर, गुरु तथा ब्राह्मणों को प्रसन्न करके तथा उनसे आज्ञा लेकर इष्ट-मन्त्र का जप आरंभ करना चाहिए। जिस देवता के मन्त्र का जप करना हो, उस देवता के गायत्री-मन्त्र का जप करना चाहिए। गायत्री-मन्त्र का जप १००० की संख्या में करना चाहिए। इस जप से साधक के पाप नष्ट हो जाते हैं तथा विघ्नों की शान्ति हो जाती है।

गायत्री-जप से पूर्व 'मैं पाप-नाश के लिए जप करता हूँ' — इस प्रकार का संकल्प पढ़ लेना चाहिए। पुरश्चरण के पूर्व दिन उपवास करना चाहिए। फिर, दूसरे दिन नित्य-क्रिया के पश्चात् संकल्प पूर्वक भूत-शुद्धि, प्राणायाम तथा मन्त्र-देवता की मुद्रा बन्धन सहित, उस देवता की पूजा-पद्धति के अनुसार पूजा करनी चाहिए तथा देवता का अपने हृदय में ध्यान करना चाहिए। जप की समाप्ति पर हवन, तर्पणादि करें तथा कलश से जल लेकर अपने मस्तक पर अभिषेक करें। यह प्रतिदिन का कृत्य है। पुरश्चरण की समाप्ति पर, उसी दिन ब्राह्मण-भोजन, हवन तथा दान करना चाहिए। फिर गुरु देव को यथाशक्ति दान दें तथा

दूसरे दिन देवता का पूजन तथा हवन करायें।

ग्रहण में अनुष्ठान- सूर्य अथवा चन्द्र ग्रहण के समय समुद्र में जा मिलने वाली नदियों के जल में खड़े होकर, ग्रहण आरंभ होने से समाप्ति-काल तक मन्त्र-जप करने का कई गुणा फल होता है। नदी में नाभि पर्यन्त जल में खड़े होकर मन्त्र-जप करना चाहिए ग्रहण के समय एक मिनट का समय भी व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए। ग्रहण-काल में जितनी संख्या में मन्त्र-जप हो जाय, ग्रहण की समाप्ति पर, उस संख्या के दशांश का हवन करना चाहिए तथा ब्राह्मण भोजन कराना चाहिए।

राशि-सिद्धि- राशि भेद से मन्त्र-सिद्धि के विषय में यह नियम है कि मेष, वृष अथवा मिथुन राशि में सूर्य-प्रवेश के समय १०,००० की संख्या में मन्त्र का जप करना चाहिए। कर्क राशि में सूर्य-प्रवेश के समय १ हजार की संख्या में, सिंह राशि में सूर्य-प्रवेश के समय २० हजार की संख्या में, कन्या राशि में सूर्य-प्रवेश के समय १२ हजार की संख्या में, तुला राशि में सूर्य-प्रवेश के समय १ हजार की संख्या में, वृश्चिक राशि में सूर्य-प्रवेश के समय १० हजार की संख्या में, धनु राशि में सूर्य-प्रवेश के समय १० हजार की संख्या में, मकर राशि में सूर्य-प्रवेश के समय ४० हजार की संख्या में, कुंभ राशि में सूर्य-प्रवेश के समय १० हजार की संख्या में तथा मीन राशि में सूर्य-प्रवेश के समय २० हजार की संख्या में प्रतिदिन मन्त्र का जप करने से वह सिद्ध हो जाता है। जप का दशांश हवन तथा बाद में ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिए।

नक्षत्र-सिद्धि - अश्विनी नक्षत्र में १ हजार, भरणी तथा कृत्तिका में २ हजार,
रोहिणी में १ हजार, मृगशिरा में ५ हजार, आर्द्रा में ६ हजार, पुनर्वसु में १ हजार, पुष्य में ७ हजार,
आश्लेषा में ६ हजार, मघा में १० हजार, तीनों पूर्वा में ११ हजार, तीनों उत्तरा में १२ हजार, हस्त
में २३ हजार, अनुराधा में यथाशक्ति, ज्येष्ठा में २ हजार, मूल में ५ हजार, शतभिषा में
२ हजार तथा रेवती नक्षत्र में ५ हजार की संख्या में जप करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

समय-सिद्धि - अष्टमी, नवमी तथा चतुर्दशी को सूर्योदय से सूर्योदय तक
अथवा सूर्यास्त से सूर्यास्त तक एक आसन पर बैठकर जप करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है।
यह नियम दोनों पक्षों के लिए है। सूर्योदय से १०-१० घड़ी तक एक-एक ऋतु रहती है,
यथा सूर्योदय से वसन्त ऋतु १० घड़ी तक, तत्पश्चात् क्रमशः ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त तथा शिशिर
ऋतुऐं होती हैं। सूर्योदय से वसन्त ऋतु के अन्त तक अर्थात् १० घड़ी तक मन्त्र जप करने
से भी पुरश्चरण-सिद्धि होती है। इसी प्रकार प्रत्येक 'योग' में योग-संख्या पर तथा प्रत्येक
संक्रान्ति में संक्रान्ति संख्या तक की अवधि में जप करने से मन्त्र-सिद्धि होती है।

मंत्र की प्रकृति - मन्त्र की प्रकृति ४ प्रकार की बताई गई है - (१) शत्रु, (२)
साध्य, (३) सिद्ध और (४) सुसिद्ध। मन्त्र के अक्षर तथा नाम राशि के अक्षर, मन्त्र-जप
आरंभ करने वाली तिथि के अङ्क, वाराङ्क, नक्षत्राङ्क अथवा प्रहर के अंकों को एकत्र कर ४ का
भाग दे। यदि १ शेष बचे तो शत्रुता, २ बचें तो साध्यता, ३ बचें तो सिद्धि तथा ० बचे तो
सुसिद्धि समझनी चाहिए। शत्रु-प्रकृति के मन्त्र से काम नहीं बनता, साध्य प्रकृति का मन्त्र

बने हुए काम को बिगाड़ देता है, सिद्ध-प्रकृति का मन्त्र अवसर आने पर कार्य सिद्ध करता है तथा सुसिद्ध-प्रकृति का मन्त्र शीघ्र फलदायक होता है।

मन्त्रों के भेद- सभी मन्त्रों के दो मुख्य भेद माने गये हैं :- (१) पल्लव और (२) योजन। जिस मन्त्र के आदि में नाम की योजना हो, उसे 'पल्लव' कहते हैं। ऐसे मन्त्र मारण, संहार, ग्रह-भूत-निवारण, उच्चाटन तथा विद्वेषण कर्म में प्रशस्त माने जाते हैं। जिस मन्त्र के अन्त में नाम की योजना हो, उसे 'योजन' कहते हैं। ऐसे मन्त्र शान्ति, पुष्टि, वशीकरण, मोहन, दीपन, प्रायश्चित्त आदि कर्मों के लिए प्रशस्त कहे गये हैं।

इनके अतिरिक्त मन्त्रों के कुछ उप-भेद भी होते हैं। यथा - (१) नाम के प्रथम, मध्य तथा अन्त में मन्त्र हो तो उसे 'रोधक' कहा जाता है। ऐसे मन्त्र अभिमुखीकरण, सब प्रकार की पीड़ा-निवारण तथा ज्वर-ग्रह-विवाद आदि की शान्ति के कामों में प्रशस्त कहे गए हैं। (२) नाम के एक-एक अक्षर के पीछे मन्त्र हो तो उसे 'पर' संज्ञक मन्त्र कहा जाता है। ऐसे मन्त्र का प्रयोग शान्ति-कर्म में किया जाता है। (३) नाम के पहले अनुलोम तथा अन्त में विलोम मन्त्र हो तो उसे 'सम्पुट' कहते हैं। ऐसे मन्त्र का प्रयोग कीलन, स्तम्भन, मृत्यु-निवारण तथा रक्षादि कार्यों में किया जाता है। सम्पुट मन्त्र में पहले मन्त्र के वर्ण का उच्चारण करके फिर साध्य-नाम का उच्चारण करना चाहिए। तत्पश्चात् मन्त्र के सभी अक्षरों का विलोम क्रमानुसार उच्चारण किया जाना चाहिए। (४) मन्त्र के दो-दो अक्षर तथा साध्य-नाम के दो-दो अक्षरों का

क्रमानुसार उच्चारण करने पर 'विदर्भ' मन्त्र होता है। इसका प्रयोग वशीकरण, आकर्षण तथा पुष्टि कर्म में किया जाता है।

मन्त्रों के वर्ण-संख्यात्मक भेद- एक वर्णात्मक मन्त्र को 'कर्त्तरी' द्व्यक्षर मन्त्र को 'सूची', त्र्यक्षर मन्त्र को 'मुद्गर', चतुरक्षर मन्त्र को 'मुसल', पंचाक्षर मन्त्र को 'क्रूर' षडक्षर मन्त्र को 'शृंखल' सप्तवर्णात्मक मन्त्र को 'क्रकच' अष्टाक्षर मन्त्र को 'शूल', नवाक्षर मन्त्र को 'वज्र', दशाक्षर मन्त्र को 'शान्ति', एकादशाक्षर मन्त्र को 'परशु' द्वादशाक्षर मन्त्र को चक्र, त्रयोदशाक्षर मन्त्र को 'कुलिश', चतुर्दशाक्षर मन्त्र को 'नाराच', पंचदशाक्षर मन्त्र को 'भुशुण्डी' तथा षोडशाक्षर मन्त्र को 'पद्म' कहते हैं।

मन्त्रों के लिङ्ग-भेद- लिङ्गानुसार मन्त्रों के तीन भेद होते हैं - (१) स्त्री संज्ञक, (२) पुरुष संज्ञक तथा (३) नपुंसक संज्ञक। जिन मन्त्रों के अन्त में 'स्वाहा' पद रहता है, वे 'स्त्री-संज्ञक', जिनके अन्त में 'हुं फट्' पद रहता है, वे 'पुरुष संज्ञक' तथा जिनके अन्त में 'नमः' पद रहता है, वे 'नपुंसक संज्ञक' होते हैं। शान्ति तथा अभिचार-कर्म में पुरुष संज्ञक; क्षुद्रक्रियादि के नाश में स्त्री-संज्ञक तथा इनके अतिरिक्त कर्मों में नपुंसक संज्ञक मन्त्रों का प्रयोग किया जाता है।

मन्त्रों के आग्नेयादि भेद- जिस मन्त्र के अन्त में 'ॐ' शब्द हो, वह आग्नेय संज्ञक' होता है। जिस मन्त्र में इन्दु तथा अमृताक्षर विद्यमान हो, उसे 'सौम्य' संज्ञक माना जाता है। यदि सौम्य मन्त्र 'हुं फट्' से पल्लवित हो तो वह रुद्र भाव को

भजता है अर्थात् वह भी 'आग्नेयवत्' हो जाता है।

जब तक नासिका के बाँये-छिद्र से श्वास चलता है, तब तक मन्त्र की 'सुप्तावस्था' समझनी चाहिए। सुप्तावस्था का मन्त्र किसी भी समय में सिद्धि नहीं देता। जब नासिका के दाँये-छिद्र से श्वास चलता है, तब मन्त्र की 'जाग्रतावस्था' होती है। सुप्तावस्था में जप करने से मन्त्र निष्फल हो जाता है तथा सिद्धि नहीं देता। जब तक दक्षिण-नासिका से श्वास चलता है, तब तक आग्नेय-मन्त्र जाग्रत् रहता है तथा जब तक वाम-नासिका से श्वास-चलता है, तब तक सौम्य-मन्त्र जाग्रत् रहता है। जिस समय दोनों नासा-छिद्रों से श्वास चल रहा हो, उस समय तक सभी मन्त्र जाग्रत् रहते हैं। जाग्रत्-मन्त्र को जपने से सिद्धि अवश्य प्राप्त होती है।

मन्त्रों के अधिष्ठातृ देवता- तन्त्र शास्त्र में मन्त्रों के अधिष्ठाता देवताओं के नाम इस प्रकार बताये गये हैं- (१) रुद्र, (२) मङ्गल, (३) गरुड़, (४) गन्धर्व, (५) यक्ष, (६) रक्ष, (७) भुजङ्ग, (८) किन्नर, (९) पिशाच, (१०) भूत, (११) दैत्य, (१२) इन्द्र, (१३) सिद्ध, (१४) विद्याधर और (१५) असुर। किसी-किसी शास्त्र में १८ देवता भी बताये गये हैं।

कर्मानुसार वर्णभेदात्मक मन्त्रों का प्रयोग- मन्त्रच्छेद-कर्म में 'कर्त्तरी', भेद-कर्म में 'सूची', भंजन में 'मुद्गर', शोषण में 'मुशल', बन्धन में 'शृंखल', छेदन में 'क्रकच', घात-कर्म में 'शूल', स्तम्भन में 'वज्र', मोक्ष-कर्म में 'शान्ति', विद्वेषण में 'परशु', सर्वकर्मों में चक्र, उत्साह-कर्म में 'कुलिश', सैन्य-भेद में 'नाराच', मारण में

'भुशुण्डी', शान्ति-पुष्टि कर्म में 'पद्म' तथा रंजक-कर्म में 'चक्र' संज्ञक मन्त्र प्रशस्त कहे गए हैं।

पंच शुद्धि- देवता के पूजन को पंचशुद्ध्यात्मक विधि से करना चाहिए। पाँच प्रकार की शुद्धियाँ इस प्रकार हैं-(१) भूमि-शोधन, (२) देह-शोधन, (३) द्रव्य-शोधन, (४) देवता-शोधन तथा (५) मन्त्र-शोधन। इनके विषय में संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है -

(१) भूमि-शुद्धि- पूजा-स्थान को शुद्ध करना ही 'भूमि-शुद्धि' है। द्वार-देवताओं का बाहर पूजन करने के बाद साधक को पूजा-गृह में प्रविष्ट हो कर, विघ्नोत्सारण करके, पूजा-गृह में सामान्य-अर्घ्य की स्थापना करके सर्वप्रथम भूमि-शोधन करना चाहिए। सर्वप्रथम पृथ्वीदेवी को अर्घ्य देकर, ब्रह्मा तथा वास्तुदेवता का पूजन करे, तत्पश्चात् मण्डप को सजाये। भूमि-शोधनोपरान्त आसन का शोधन करे। फिर 'कूर्म-चक्र' के अनुसार आसन बिछाकर उसपर बैठे तथा अपनी दाँईं ओर पूजा-सामग्री रखकर, सामने घृत का दीपक जलाये और उसके समीप देवता का यन्त्र बना कर, उसे चौकी पर स्थापित करे। तत्पश्चात् गुरु, गणेश एवं इष्ट देवता को नमस्कार कर, देह-शोधन की प्रक्रिया आरम्भ करे।

(२) देह-शुद्धि- देह-शोधन की प्रक्रिया में सर्वप्रथम प्राणायाम करना चाहिए, फिर भूत-शुद्धि, प्राण-प्रतिष्ठा, सृष्टि-स्थिति-संहार-मातृकाओं का न्यास, इष्ट देवता का न्यास, ऋष्यादि के कराङ्ग, षडङ्ग तथा अन्यान्य आवश्यक न्यास करे। इन प्रक्रियाओं से साधक की देह शुद्ध हो जाती है और वह देवता-स्वरूप हो जाता है।

मं० म० ८२

(३) द्रव्य-शुद्धि- देह-शुद्धि के पश्चात् पूजा के लिए संगृहीत सामग्री का शोधन करना चाहिए। जिन वस्तुओं को साफ करना आवश्यक हो, उन्हें साफ करे तथा जिन्हें जल से धोने के बाद उपयोग में लाना उचित हो, उन्हें जल से धोये। इसी प्रकार सब द्रव्यों को शुद्ध करले। तत्पश्चात् अपने इष्ट-देवता का अपने हृदय-कमल के दश दल पद्म पर मानस-पूजन तथा जप आदि करे। इसमें पीठन्यास, ध्यान आदि भी किए जाते हैं। मानस-पूजा की समाप्ति पर अपने सम्मुख स्थापित यन्त्र में देवता का पूजन करने के लिए विशेषार्घ्य पात्रों की स्थापना करे। तत्पश्चात् देवता का अपने हृदय-कमल से यन्त्र के बिन्दु में आवाहन करे। फिर उसका अवगुण्ठन, सकलीकरण तथा अमृतीकर-ण करे।

(४) देव-शुद्धि- अमृतीकरण करने के बाद उसका परमीकरण करने से देव-शुद्धि होती है। फिर षोडश उपचारों से देवता का पूजन करे तथा उसकी आज्ञा ग्रहण कर आवरण-पूजा करे, तत्पश्चात् मन्त्र-जप करे।

(५) मन्त्र-शुद्धि- प्रत्येक मातृका वर्ण के अन्त में अपने मन्त्र के एक-एक अक्षर की योजना कर, समग्र मातृकाओं का जप करने से मन्त्र की शुद्धि हो जाती है। इस प्रकार मन्त्र को शुद्ध करने के बाद उसका यथोचित संख्या में जप करना चाहिए।

जप की समाप्ति पर देवता के स्तोत्रादि का पाठ कर, अन्तिम पुष्पांजलि

भा० टी०

संख्या पूर्ण न हो जाय, तब तक प्रतिदिन यह क्रियायें करनी चाहिए। पूजन की यह सम्पूर्ण प्रक्रिया श्रीगुरुदेव से ही प्राप्त होती है तथा प्रक्रिया के पूर्ण ज्ञान के बिना पुरश्चरण में सफलता नहीं मिल पाती, अतः इस प्रक्रिया का यथोचित ज्ञान गुरुदेव से प्राप्त कर लेना चाहिए।

पुरश्चरण के अन्य नियम - पुरश्चरण-काल में खान-पान तथा रहन-सहन सम्बन्धी कुछ नियमों का पालन करना आवश्यक होता है। नीचे इन नियमों की संक्षिप्त जानकारी प्रस्तुत की जा रही है।

स्थान - मन्त्र पुरश्चरण की साधना किसी एकान्त तथा शान्त स्थान में करनी चाहिए। यदि ग्राम में पुरश्चरण करना हो तो 'कूर्म चक्र शोधन' करके तदनुसार उचित स्थान में साधन करना चाहिए। परन्तु यदि पवित्रतीर्थ, समुद्र-तट, नदी-तट, अथवा वन में पुरश्चरण करना हो तो कूर्मचक्र-शोधन की आवश्यकता नहीं रहती।

भोजन - पुरश्चरण-काल में हेमन्त ऋतु में उत्पन्न होने वाले अन्न—जौ, मटर, तिल, मूंग, फाकुन तथा सेंधानमक, समुद्र नमक, गाय का दूध और उसी का दही तथा घी; केला, नारंगी, आम, आँवला, नारियल, इमली, सोंठ, जीरा, पीपल, हरड़, गुड़, शक्कर, मिश्री, ईख के रस से निर्मित वस्तुऐं तथा घृत में पकी वस्तुऐं — ये सब हविष्य मानी गई हैं तथा इन्हीं वस्तुओं का संग्रह करके यथारुचि सेवन करना चाहिए। उड़द, मसूर, अरहर, चना, कोदों, गाजर, शहद, सामान्य-नमक, क्षार, मांस, घृत-रहित, बासी तथा कृमि-युक्त भोजन निषिद्ध हैं।

निषिद्ध-कार्य - पुरश्चरण काल में मैथुन, ऋतुकाल के अतिरिक्त अन्य किसी

भी समय में अपनी पत्नी तक का स्पर्श, पर-स्त्री गमन अथवा किसी भी प्रकार का रसिक-वार्तालाप एवं चिन्तन, क्रोध, कुटिलता, हिंसा, क्षौर-कर्म, उबटन, तैल-मर्दन तथा देवता को अर्पित किए बिना भोजन करना आदि बातें निषिद्ध हैं।

पुरश्चरण कर्त्ता को —(१) भूशायी अर्थात् पृथ्वी पर शयन आवश्यक है। पवित्र वस्त्र धारण कर कुश अथवा कम्बल को पृथ्वी पर बिछाकर, उस पर शयन करना चाहिए तथा प्रतिदिन धारण करने के वस्त्रों एवं आत्मा को शुद्ध कर लेना चाहिए। (२) ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन करना चाहिए तथा कामेच्छा को उद्दीप्त करने वाले कारणों को त्याग देना चाहिए। (३) मौन धारण करना चाहिए ताकि मिथ्या-भाषण एवं कटु-भाषणादि से बचा जा सके। (४) आचार्य तथा गुरु की सेवा का सौभाग्य यदि पुरश्चरण-काल में मिल सके तो उससे मन्त्र-सिद्धि शीघ्र हो सकती है। (५) नित्य नियमपूर्वक स्नान करना चाहिए। (६) इष्टदेव का पूजन नियमित रूप से, बिना किसी व्यतिक्रम के करते रहना चाहिए। (७) अपनी सामर्थ्यानुसार नित्य अथवा किसी विशेष अवसर पर दान भी देते रहना चाहिए। (८) गुरु तथा इष्ट-देवता की वन्दना करते रहना चाहिए।

उक्त आठ नियमों का पालन करते रहने से मन्त्र-सिद्धि शीघ्र होती है। पुरश्चरण की अवधि में परान्न-भोजन वर्जित है तथा हर प्रकार की वासनाओं को त्याग देना आवश्यक है। जो साधक इन नियमों का पालन नहीं कर पाते, उन्हें

मन्त्रों की कुल्लुका- किसी भी मन्त्र का जप करने से पूर्व साधक को उसकी कुल्लुका अपने मस्तक पर स्थापित करलेनी चाहिए अर्थात् मूर्द्धा में उसका न्यास कर लेना चाहिए।

मुख्य मन्त्रों की कुल्लुकाएं निम्नानुसार होती हैं -

(१) 'तारा-मन्त्र' की — "ॐ ह्रीं स्त्रीं हूँ' (२) 'काली-मन्त्र की — ' क्रीं हूँ स्त्रीं ह्रीं फट्' (३) 'छिन्नमस्ता-मन्त्र' की - 'श्रीं ह्रीं ह्रीं ऐं ह्रीं ह्रीं स्वाहा'। (४) 'वज्र वैरोचिनी-मन्त्र' की - 'श्रीं ह्रीं ह्रीं ऐं ह्रीं ह्रीं स्वाहा हूँ' (५) 'भैरवी-मन्त्र' की - ' ह स रैं', (६) 'त्रिपुर सुन्दरी-मन्त्र की - 'ऐं क्लीं ह्रीं त्रिपुरे भगवति स्वाहा' अथवा 'क्लीं', (७) 'मञ्जुघोष-मन्त्र' की — ॐ अर व च ल धीं', (८) 'भुवनेश्वरी-मन्त्र' की - ' ह्रीं', (९) 'मातङ्गी-मन्त्र' की 'ॐ'. (१०) 'धूमावती-मन्त्र' की - 'ह्रीं', (११) 'षोडशी-मन्त्र' की - 'स्त्रीं', (१२) 'लक्ष्मी-मन्त्र' की - 'श्रीं', (१३) 'सरस्वती-मन्त्र' की 'ऐं' तथा (१४) 'अन्नपूर्णा-मन्त्र' की - 'क्लीं'। - ये कुल्लुकाएं हैं।

मन्त्र-सेतु - मन्त्र-जप करने से पूर्व मन्त्र-सेतु का हृदय पर जप कर लेना चाहिए। ब्राह्मण तथा क्षत्रिय साधक के लिए 'प्रणव' अर्थात् 'ॐ', वैश्य के लिए 'फट्' तथा शूद्र के लिए 'ह्रीं' मन्त्र-सेतु है।

महा सेतु - महासेतु के जप से मन्त्र को प्रत्येक समय तथा प्रत्येक अवस्था में जपते रहने का अधिकार मिल जाता है। 'त्रिपुर सुन्दरी' का महासेतु 'ह्रीं', कालिका की 'क्रीं' तथा तारा का 'हूँ' है। अन्य सभी देवताओं का महासेतु 'स्त्रीं' है। महासेतु का जप

मन्त्र-जप से पूर्व, कण्ठ-देश स्थित विशुद्ध-चक्र में करना चाहिए।

निर्वाण- प्रणव के बाद 'अं' इत्यादि अनुस्वार युक्त समस्त स्वर वर्णों की योजना कर अपने मन्त्र से संयुक्त करके, फिर प्रणव के बाद 'ऐं' तथा अनुस्वार युक्त समस्त स्वरवर्णों सहित प्रणव की योजना करें, इस प्रकार सम्पुट करके 'मणिपूर-चक्र' में जप करने से 'निर्वाण' होता है।

मुख-शोधन- झूठन, असत्य-भाषण तथा कलह-विवाद आदि से दूषित जिह्वा का शोधन करने के उद्देश्य से मुख-शोधन मन्त्र का जप इष्ट-मन्त्र के जप से पूर्व ही 10 बार कर लेना उचित है। 'मुख-शोधन मन्त्र' इस प्रकार कहे गए हैं- (1) 'त्रिपुर सुन्दरी' का मुख-शोधन मन्त्र-' श्री ॐ श्री ॐ श्री ॐ', (2) 'श्यामा' का — 'क्रीं क्रीं क्रीं ॐ ॐ ॐ क्रीं क्रीं क्रीं'; (3) 'तारा' का - 'ह्रीं हूं ह्रीं'; (4) 'दुर्गा' का — 'ऐं ऐं ऐं', (5) 'बगलामुखी' का — 'ऐं ह्रीं ऐं'; (6) 'मातङ्गी' का — ' ॐ ऐं ॐ', (7) 'लक्ष्मी' का — 'श्रीं', (8) 'धूमावती' का — 'ॐ', (9) 'धनदा' का — 'ॐ धूं ॐ' तथा (10) अन्य देवताओं का 'ॐ' है।

मन्त्र-दोष- भ्रम-वश मन्त्र में आठ प्रकार के दोष आ जाते हैं। वे इस प्रकार हैं —

(1) 'अभक्ति' — जो मन्त्र को केवल 'अक्षर-वर्ण' ही समझता है अथवा अपने मन्त्र को दूसरे के मन्त्र से हीन समझता है, उसे 'अभक्ति-दोष' लगता है। इस दोष को दूर करने के लिए मन्त्र का अधिकाधिक जप करना चाहिए। जप, ध्यान तथा तप से मंत्र

की अधिष्ठातृ देवी अथवा देवता प्रसन्न होते हैं, जिससे साधक के मन में भक्ति का उदय होता है, तब मन्त्र-सिद्धि में विलम्ब नहीं होता। (२) 'अक्षर-भ्रान्ति'— यह दोष गुरु अथवा शिष्य की भूल से मन्त्राक्षरों के उलट-फेर अथवा कम-अधिक होने से आता है। इसके निवारणार्थ साधक को गुरु, उनके पुत्र अथवा किसी अन्य साधक से पुनः मन्त्र ग्रहण करना चाहिए। (३) 'लुप्त'— मन्त्र में किसी वर्ण की न्यूनता से यह दोष आता है। (४) 'छिन्न'— मन्त्र के किसी संयुक्त वर्ण में से कोई अंश छूट जाने पर यह दोष आता है। (५) 'ह्रस्व'— दीर्घवर्ण के स्थान पर ह्रस्व उच्चारण करने से यह दोष आता है। (६) 'दीर्घ'— ह्रस्ववर्ण का उच्चारण दीर्घवत् करने से यह दोष आता है। (७) 'कथन'— जाग्रत-अवस्था में किसी व्यक्ति से अपना मन्त्र कह देने पर यह दोष लगता है तथा (८) 'स्वप्न-कथन'— स्वप्नावस्था में अपना मन्त्र किसी को बता देने से यह दोष लगता है।

उक्त दोषों में संख्या ३, ४, ५ तथा ६ के दोषों का निवारण पुनः मन्त्र-ग्रहण करने से ही होता है तथा संख्या ७ एवं ८ के दोषों के निवारणार्थ गुरुदेव जैसी व्यवस्था दें, तदनुसार कार्य करना चाहिए।

मन्त्रार्थ एवं पल्लवादि को जाने बिना मन्त्रों का जप निष्फल सिद्ध होता है, यह तो है ही; परन्तु यह भी देखा गया है कि गुरु की कृपा से अज्ञानी व्यक्तियों की साधना भी सफल हो जाती है। अतः गुरु की कृपा एवं मन्त्र के प्रति अपनी अटल निष्ठा तथा विश्वास को ही सर्वोपरि समझना चाहिए

माला-संस्कार - 'सुसंस्कृत-माला' का विशेष महत्व माना गया है। माला को सुसंस्कृत करने के लिए नौ पीपल के पत्ते लेकर, उनमें से एक पत्ते को बीच में रख कर शेष ८ पत्तों को इस प्रकार सजा कर रक्खा जाता है कि वह अष्टदल-कमल के स्वरूप का हो जाय। बीच वाले पत्ते पर माला रख कर, 'ॐ अं आं' से 'हं लं क्षं' तक के स्वर-व्यंजन (अनुस्वार युक्त) वर्णों का उच्चारण करते हुए पंचगव्य से माला को सिंचित करें, फिर आगे लिखे सद्योजात मन्त्र का उच्चारण कर, उसे शुद्ध-जल से धोवें। मन्त्र इस प्रकार है - "ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः। भवे भवे नाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः।" फिर वामदेव मन्त्र द्वारा माला पर चन्दन, अगरु, गन्ध आदि चढ़ावें। मन्त्र इस प्रकार है - "ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कल-विकरणाय नमो बलविकरणाय नमः। बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः।" इसके बाद अघोर-मन्त्र द्वारा धूप प्रदान करें। मन्त्र इस प्रकार है - "ॐ अघोरेभ्यो ऽथ घोरेभ्यो घोर घोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते ऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः।" फिर तत्पुरुष मन्त्र से लेपन करें। मन्त्र इस प्रकार है - "ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।" इसके बाद माला के प्रत्येक दाने पर एक-एक बार अथवा सौ-सौ बार ईशान-मन्त्र का जप करें। मन्त्र इस प्रकार है - "ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणो ऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्।" जप के बाद अपने इष्टदेवता की, माला में यथाविधि प्राण-प्रतिष्ठा करें। फिर इष्टमंत्र

द्वारा उसका पूजन कर, इस भाँति स्तुति करें— "माले माले महामाले सर्वतत्त्वस्वरूपिणि। चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव।" यदि माला में शक्ति की प्रतिष्ठा की गई हो तो इस प्रार्थना के आदि में 'ह्रीं' और जोड़ लेना चाहिए तथा माला के पूजन में लाल फूलों का उपयोग करना चाहिए।

वैष्णव-साधक को "ॐ ऐं श्रीं अक्षमालायै नमः"— इस मन्त्र से माला का पूजन करना चाहिए।

जप के लिए माला का विधान- पद्मबीज (कमलगट्टा), रुद्राक्ष, शंख, मोती, स्फटिक, मणि, स्वर्ण, चांदी, प्रवाल (मूंगा), कुश की जड़ एवं तुलसी-काष्ठ की माला सामान्य पूजा में प्रयुक्त होती है। इनमें शंख से लेकर कुश-मूल तक की माला सबसे श्रेष्ठ मानी गई है। विष्णु-मन्त्रों के जप के लिए तुलसी की माला तथा शिव एवं शक्ति मन्त्रों के जप के लिए रुद्राक्ष की माला प्रशस्त मानी गई है। मारणादि प्रयोग में पद्मबीज की माला, पाप-नाश के हेतु कुश-मूल की माला, पुत्रकामनादि में स्वर्ण तथा रत्न की माला एवं धन-कामना में प्रवाल (मूंगा) की माला प्रयोग में लाना माना गया है। विशेष-प्रयोजन तथा विशेष अनुष्ठान में अन्य वस्तुओं की मालाओं पर भी मन्त्र-जप किया जाता है।

वशीकरण-मन्त्रों को मोती अथवा हीरे की माला पर, आकर्षण मन्त्रों को गजमुक्ता की माला पर, विद्वेषण तथा उच्चाटन मन्त्रों को बहेड़े की माला पर, मारण-मन्त्रों को अपने-आप मरे हुए गधे के दाँतों की माला पर तथा धर्म-कामार्थ सिद्धि के

मं० मं० ७०

मन्त्रों को शंख-मणि-निर्मित माला पर जपना प्रशस्त कहा गया है। पद्माक्ष से निर्मित माला पर सर्वकामार्थ सिद्धि के मन्त्रों को जपना चाहिए। रुद्राक्ष की माला पर सब प्रकार के मन्त्रों का जप सिद्धिदायक रहता है।

शाक्त-पूजा में पद्म बीजादि की माला प्रशस्त मानी गई है। 'मुण्डमाला तंत्र' के अनुसार धूमावती के जप में श्मशान के धतूरे की माला शुभ होती है। कामना-भेद से भी अलग-अलग द्रव्यों की मालाएँ बनाई जाती हैं, जैसे — शत्रु-नाश के लिए कमल गट्टे की माला, पाप-नाश के लिए कुश-मूल की माला, पुत्र-लाभ के लिए जीवित-पुत्रिका (जियापोता) की माला, अभिलषित-फल प्राप्ति के लिए चाँदी की माला तथा विपुल धन-लाभ के लिए मूँगे की माला पर मन्त्र-जप किया जाता है।

भैरवी-विद्या के सम्बन्ध में 'वाराहीतन्त्र' का कहना है — 'स्वर्ण, स्फटिक, मणि, शंख अथवा मूंगे की माला तय्यार करें। जीवित-पुत्रिका, कमलगट्टा, रुद्राक्ष अथवा भद्राक्ष की माला न बनायें। 'त्रिपुर-सुन्दरी' के जप में रक्त-चन्दन की माला प्रशस्त कही गई है।

रक्त चन्दन बीज की माला को भुक्ति-मुक्ति दायक कहा गया है। विष्णु-मन्त्र के जप में तुलसी की, गणेश-मन्त्र के जप में गजदन्त की तथा त्रिपुरा-मन्त्र के जप में रुद्राक्ष एवं लाल चन्दन की माला श्रेष्ठ मानी गई है।

'मुण्डमाला तन्त्र' के अनुसार तारा-मन्त्र के जाप में महाशंख की माला प्रशस्त है। मनुष्य के ललाट में कान तथा आँख के बीच की हड्डी को महाशंख

भा० टी०

कहा जाता है। 'योगिनी तन्त्र' के अनुसार - 'जिसके हाथ में महाशंख की माला है, सिद्धि उसके निकट ही विद्यमान रहती है। उसके अभाव में स्फटिक की माला को सर्वोत्तम समझना चाहिए।'

मनुष्य के दाँतों की माला समस्त कामनाओं को सिद्ध करती है। उसमें मेरु के स्थान पर 'राज-दन्त' को स्थापित करना चाहिए।

शान्ति तथा पुष्टि कर्म के लिए मन्त्र जपना हो तो माला के दानों को कमल के तन्तु की डोरी में पिरोयें। आकर्षण तथा उच्चाटन कर्म के लिए दानों को घोड़े की पूँछ के बाल में पिरोयें। मारण-कर्म में दानों को मनुष्य की नसों के सूत्र में पिरोयें। बटेड़े आदि के दानों को रुई निर्मित सूत्र की डोरी में पिरोना चाहिए। रेशम का सूत्र सब मालाओं के लिए प्रशस्त कहा गया है। शान्ति-कर्म में श्वेत, वशीकरण आदि में लाल तथा मारणादि कर्म में काले रंग के सूत्र का प्रयोग श्रेष्ठ माना गया है। लाल-रंग सब कार्यों के लिए प्रशस्त माना गया है। सूत्र को पहले तीन गुना करके फिर तीन गुना करें, उसमें दानों को पिरोते समय वर्णमाला की विधि से 'प्रणव' के साथ 'अ' से लेकर 'ह' तक के स्वर-व्यंजनों को अनुस्वार लगाकर जप करें, फिर विपरीत-विधि से करें। इस भाँति एक अक्षर के जप के साथ एक दाने को गूंथें। दानों के मध्य में ब्रह्मग्रंथि लगायें तथा प्रणव-जप के साथ सुमेरु को गूँथें। जिस मन्त्र का जप करना हो, उसके जप जप से भी माला को गूंथा जाता है। स्वर्ण, ताम्र, रजत आदि के सूत्रों से भी माला

गूँथी जाती है। ऐसे सूत्रों में दाने गूँथते समय नागपाश-ग्रन्थि देनी चाहिए तथा सूत्र के दोनों किनारे 'हुँ'—इस मन्त्र से बाँधने चाहिए। दानों के मध्य में गाँठ लगाते समय दो-तीन फेरे देते हुए मन्त्र अथवा अक्षर जपकरें। रुद्राक्ष तथा पद्मबीज आदि के दानों के मुख तथा पुच्छ भेद का ज्ञान हो सकता है। अतः मुख भाग को ऊपर तथा पुच्छ को नीचे रखना चाहिए। रुद्राक्ष में जिस ओर गहरा मुख हो, उसे तथा पद्मबीज में जिस ओर दो बिन्दु हों, उधर मुख समझना चाहिए। दानों को माला में पिरोते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वे सब रूप रंग तथा आकार में एक समान हों। एक माला में दो जाति के मनकों का प्रयोग नहीं होना चाहिए। माला के दाने अत्यन्त सूक्ष्म अथवा अत्यन्त स्थूल भी नहीं होने चाहिए।

माला के दानों के सम्बन्ध में विभिन्न मत हैं। मोती की माला में २८, बहेड़े की माला में १५ तथा रुद्राक्ष की माला में १०८ रुद्राक्ष प्रशस्त कहे गए हैं।

'गौतमीयतन्त्र' के अनुसार — '५० दानों वाली माला षट्कर्मों के लिए श्रेष्ठ कही गई है। परन्तु अर्थ-सिद्धि के कार्य तथा समस्त कामनाओं के साधन में २८ दाने, मारण-अभिचारादि कर्म में १५ दाने, काम-सिद्धि में ५४ दाने तथा अन्य सब कार्यों की सिद्धि के लिए १०८ दानों की माला प्रशस्त मानी गई है। २५ दानों वाली माला से मोक्ष-लाभ २८ दानों वाली से पुष्टि-लाभ, 30 दानों वाली से अर्थ-लाभ, ५० दानों वाली से मन्त्र-लाभ तथा १०८ दानों वाली माला पर मन्त्र-जप करने से सभी कामनाओं की सिद्धि होती है। जप करते समय माला को सदैव ढक (छिपाकर) रखना चाहिए।

'मणि-माला' अर्थात् किसी भी प्रकार के दानों की माला के अतिरिक्त मन्त्र-जप में कर-माला तथा वर्ण-माला का प्रयोग भी किया जाता है।

कर-माला के विषय में 'सनत्कुमार संहिता' में कहा गया है — कनिष्ठादि क्रम से तर्जनी के मूल पर्यन्त जो दस पर्व हैं, उनमें जप करना चाहिए। अष्टोत्तर शतादि जपने पर पूर्वोक्त नियमानुसार शतादि संख्या पूर्ण हो जाने पर, अनामिका के मूल-पर्व से आरंभ करके, कनिष्ठादि के क्रमानुसार तर्जनी के मध्य पर्व तक अष्ट पर्व में, आठ बार जप करना चाहिए।

'हंस परमेश्वर' ग्रंथ के अनुसार — अनामिका के मध्य पर्व से कनिष्ठादि में क्रमानुसार मध्यमा के तीन पर्व तथा तर्जनी का एक पर्व — इन दस पर्वों में जप करना चाहिए। तर्जनी के ऊपर स्थित दो पर्वों को मेरु जानना चाहिए। तन्त्र शास्त्रों में इसी को 'शक्तिमाला' कहा गया है।

'शक्ति-मन्त्र' के जपने का नियम यह है — अनामिका के तीन पर्व, कनिष्ठा के तीन पर्व, मध्यमा के तीन पर्व तथा तर्जनी का मूल पर्व — इन दस पर्वों में जप करना चाहिए। जो व्यक्ति तर्जनी के अग्र तथा मध्य पर्व में शक्ति-मन्त्र का जप करता है, वह पाप का भागी होता है।

जप के समय अँगुलियों को अलग-अलग नहीं करना चाहिए। सबको झुका कर तथा परस्पर इकट्ठा रखते हुए जप करना चाहिए। जप-संख्या की गिनती आवश्यक है, गिनती न होने पर जप निष्फल हो जाता है — यह तन्त्र शास्त्र का मत है। माला पूर्ण होने पर, गिनती में चावल, अँगुलियों के पोरुए, अनाज, फूल, चन्दन तथा मिट्टी के ढेलों से

गिनती नहीं करनी चाहिए। जिस माला से जप किया जाय, उसकी गिनती के लिए मनकों की एक छोटी माला संख्या गिनने के लिए बना लेनी चाहिए। जप-माला के द्वारा भी गिनती की जा सकती है तथा कागज पर लिख कर भी की जा सकती है।

'श्रीविद्या' के अष्टोत्तर-शतादि संख्यक जप में पूर्वोक्त नियमानुसार शतादि संख्यक जप करके, कनिष्ठा के मूल पर्व से आरंभ कर, तर्जनी के मूल पर्व तक, आठ पर्व में प्रदक्षिणा क्रम के अनुसार आठ बार जप करना चाहिए। अंगुली के अग्रभाग में अथवा मेरु का उल्लंघन करके जो जप किया जाता है, वह तथा पर्व-सन्धि में जो जप किया जाता है, वह निष्फल हो जाता है। जिस मन्त्र की जप-गणना जिस प्रकार बताई गई है, उसका उल्लंघन करने से उस जप का फल राक्षस ले लेते हैं। हृदय पर हाथ रख कर, अंगुलियों को परस्पर मिला कर तथा कुछ टेढ़ा करके, दोनों हाथों में वस्त्र-आच्छादन पूर्वक, दाँये हाथ से ही जप करना चाहिए।

'वर्ण-माला' के सम्बन्ध में 'सनत्कुमार तन्त्र' में कहा गया है कि 'अ' से 'क्ष' तक सब अक्षरों को 'वर्णमाला' कहा जाता है। इन इक्यावन अक्षरों की 'अ' से 'ह' तक पचास वर्णों की माला होती है तथा 'क्ष' उसका सुमेरु है। इन सब अक्षरों को अनुस्वार से संयुक्त कर, 'अ' से आरंभ करके 'ह' तक तथा 'ह' से आरंभ करके 'अ' तक अनुलोम-विलोम क्रम से जप करना चाहिए। यह माला अन्तर्यजन के कार्य में प्रशस्त कही गई है।

मं० मं० त प्र

भा० टी०

वर्ण-माला अष्ट वर्गों में विभक्त है — (१) अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः — ये सोलह वर्ण 'अ वर्ग' के हैं। (२) क, ख, ग, घ, ङ, — ये पाँच वर्ण 'क वर्ग' हैं। (३) च, छ, ज, झ, ञ, — ये पाँच वर्ण 'च वर्ग' हैं। (४) ट, ठ, ड, ढ, ण, — ये पाँच वर्ण 'ट वर्ग' हैं। (५) त, थ, द, ध, न — ये पाँच वर्ण 'त वर्ग' हैं। (६) प, फ, ब, भ, म, — ये पाँच वर्ण 'प वर्ग' हैं। (७) य, र, ल, व — ये चार वर्ण 'य वर्ग' हैं तथा (८) श, ष, स, ह, — ये चार वर्ण 'श वर्ग' के हैं।

उक्त वर्ण-माला के जपने का क्रम यह है कि अकारादि प्रत्येक वर्ण में अनुस्वार जोड़ कर, एक-एक वर्ण के पीछे एक-एक बार मन्त्रोच्चारण करते हुए जप करना चाहिए। इस प्रकार १०८ बार जप करना चाहिए। अन्तर्यजन कार्य के अतिरिक्त बाह्य-पूजादि में भी इस वर्णमाला द्वारा जप किया जा सकता है। इसके द्वारा जप का नियम यह है कि पहले 'अं' इस वर्ण का उच्चारण करके एक बार मूलमन्त्र का जप करे। इसी प्रकार 'ह' तक प्रत्येक वर्ण को अनुस्वार युक्त करके एक-एक बार मूलमन्त्र का जप करे। 'ह' तक जप पूरा हो जाने पर, दुबारा 'ह' से आरंभ करके 'अ' तक एक-एक वर्ण के पीछे एक-एक बार मन्त्र का जप करना चाहिए। इसी को 'वर्णमाला-जप' कहा जाता है। समस्त वर्णों का अन्तिम अक्षर 'ह' ही वर्ण-माला का मेरु है, अतः 'ह' का उल्लंघन नहीं करना चाहिए।

'मालिनी तन्त्र' के अनुसार - 'प्रवाल के समान प्रकाशमान रक्तरूपा निहिता

सर्पाकार कुण्डलिनी-शक्ति ही इस वर्णमाला का सूत्र है। उनके आरोहण तथा अवरोहण में शतसंख्या तथा अष्टवर्ग में अष्ट संख्या होती है।

षट्-कर्म- (१) शान्ति करण, (२) वशीकरण, (३) स्तम्भन, (४) विद्वेषण, (५) उच्चाटन तथा (६) मारण - ये 'षट् कर्म' हैं। इनके तथा इनके उपभेदों के विषय में पहले लिखा जा चुका है। अब इन कर्मों के देवता, दिशा, ऋतु, तिथि-वार आदि के विषय में संक्षिप्त जानकारी प्रस्तुत की जा रही है, ताकि साधक उचित विधि से उचित समय में ही इनका प्रारंभ करें।

देवता- शान्ति-कर्म की 'रति', वशीकरण की 'वाणी', स्तम्भन की 'रमा', विद्वेषण की 'ज्येष्ठा', उच्चाटन की 'दुर्गा' तथा मारण कर्म की 'भद्रकाली' - ये अधिष्ठातृ देवियाँ कही गई हैं। **दिशा** - शान्ति कर्म ईशान दिशा में, वशीकरण उत्तर दिशा में, स्तम्भन पूर्व दिशा में, विद्वेषण नैर्ऋत्य दिशा में, उच्चाटन वायव्य दिशा में तथा मारण कर्म आग्नेय दिशा में करना चाहिए। अर्थात् जो कर्म करना हो, उसकी निश्चित दिशा की ओर ही मुँह करके बैठना चाहिए। मतान्तर से - स्तम्भन तथा उच्चाटन के लिए पूर्व दिशा, अभिचार-कर्म के लिए अग्निकोण, विद्वेषण के लिए दक्षिण दिशा तथा नैर्ऋत्य कोण, शान्ति-कर्म के लिए पश्चिम दिशा तथा वायव्य कोण, कुलोच्छेद के लिए वायुकोण तथा कलह-विग्रह आदि के लिए नैर्ऋत्यकोण प्रशस्त हैं। जिन कर्मों का इसमें उल्लेख नहीं हुआ है, उनके लिए ईशानकोण की ओर मुँह करके बैठें

ऋतु- हेमन्त ऋतु में शान्ति-कर्म; वसन्त में वशीकरण; शिशिर में स्तम्भन; ग्रीष्म में विद्वेषण; वर्षा में उच्चाटन तथा शरद् ऋतु में मारण कर्म करना चाहिए। सूर्योदय से आरंभ कर प्रत्येक दस घड़ी अर्थात् चार घंटे बाद एक ऋतु बदल जाती है। सूर्योदय से पहले ४ घंटे तक वसन्त, तदुपरान्त ग्रीष्म, फिर वर्षा, फिर शरद, फिर हेमन्त तथा अन्त में शिशिर ऋतु रहती है। मतान्तर से - दिन के पूर्वभाग में वसन्त, मध्याह्न में ग्रीष्म, अपराह्न में वर्षा, सन्ध्याकाल में शिशिर, अर्द्धरात्रि में शरद् तथा उषःकाल में हेमन्त ऋतु रहती है।

तिथि-वार - 'आकर्षण' कर्म के लिए दशमी, एकादशी, अमावास्या, नवमी तथा प्रतिपदा तिथि एवं रवि तथा शुक्रवार प्रशस्त कहे गए हैं। 'विद्वेषण' के लिए शनि अथवा रविवार युक्त पूर्णिमा तिथि प्रशस्त मानी गई है। 'उच्चाटन' के लिए षष्ठी, चतुर्दशी एवं अष्टमी तिथि एवं शनिवार श्रेष्ठ माने जाते हैं। विशेषतः प्रदोष-काल इसके लिए सर्वोत्तम माना गया है। 'मारण' कर्म के लिए चतुर्दशी, अष्टमी तथा अमावास्या तिथि एवं शनि, मंगल तथा रविवार प्रशस्त हैं। 'स्तम्भन' के लिए बुधवार अथवा सोमवार युक्त पंचमी, दशमी अथवा पूर्णिमा तिथि श्रेष्ठ कही गई हैं। शान्ति-कर्म किसी भी तिथि अथवा वार को किये जा सकते हैं, परन्तु द्वितीया, तृतीया, पंचमी एवं सप्तमी तिथियाँ तथा बुध, गुरु, शुक्र और सोमवार - ये दिन विशेष शुभ माने गये हैं। जन-धनादि की वृद्धि के लिए किये जाने वाले पुष्टि-कर्म गुरुवार अथवा सोमवार से युक्त षष्ठी, चतुर्थी, त्रयोदशी, नवमी, अष्टमी अथवा दशमी तिथि को किये जाने चाहिए।

तत्त्व-विचार – जलतत्त्व के उदय में शान्ति-कर्म, अग्नितत्त्व के उदय में वशीकरण, आकाश तत्त्व के उदय में विद्वेषण, वायुतत्त्व के उदय में उच्चाटन तथा पृथ्वी तत्त्व अथवा अग्नितत्त्व के उदय काल में मारण-कर्म करने चाहिए। शत्रु-भय अथवा अन्य किसी प्रकार का महाभय उपस्थित होने पर कालाकाल का विचार किए बिना, तत्काल ही उसकी शान्ति का उपाय करना चाहिए।

देवता के वर्ण-भेद का विचार – वशीकरण, आकर्षण तथा क्षोभन में देवता का लाल वर्ण; शान्ति-कर्म, विष-दूरी-करण तथा पुष्टि-कर्म में शुभ्र वर्ण; स्तम्भन में पीत वर्ण, उच्चाटन में धूम्रवर्ण, उन्माद में लोहित वर्ण तथा मारण-कर्म में कृष्ण वर्ण रूप में ध्यान करना चाहिए।

मारण-कर्म में देवता को खड़ा हुआ, उच्चाटन में सोया हुआ तथा अन्य कार्यों में बैठा हुआ समझ कर ध्यान करना चाहिए। सात्विक-कर्म में देवता को समासीन तथा शुभ्रवर्ण; राजस-कर्म में पीत, लोहित अथवा श्याम वर्ण एवं तामस-कर्म में कृष्ण-वर्ण तथा यान-मार्ग स्थित रूप में ध्यान करना चाहिए।

लग्न-विचार – स्तम्भन-कर्म सिंह अथवा वृश्चिक लग्न में, विद्वेषण तथा उच्चाटन कर्म कर्क अथवा तुला लग्न में एवं वशीकरण, शान्ति-पुष्टि, उच्चाटन तथा शत्रु-निग्रह आदि कर्म मेष, कन्या, धनु अथवा मीन लग्न में करने चाहिए। वशीकरण दिन के पूर्व भाग में, विद्वेषण तथा उच्चाटन मध्यभाग में, शान्ति-पुष्टि-कर्म अन्तिमभाग

में तथा मारण-कर्म सन्ध्या काल में भी किये जा सकते हैं।

कर्म-विशेष में हुंफटादि का प्रयोग- बन्धन, उच्चाटन, विद्वेषण तथा संकीर्ण कर्मों में 'हुं', छेदन में 'फट्'; अरिष्ट-ग्रह-शान्ति में 'हुं फट्'; पुष्टि-कर्म, आप्यायन, बोधन तथा मालिनीकरण में 'वौषट्'; होम-कर्म में 'स्वाहा' तथा पूजा-अर्चना में 'नमः' शब्द का प्रयोग करना चाहिए। शान्ति तथा पुष्टि-कर्म में 'स्वाहा'; वशीकरण में 'स्वधा'; विद्वेषण में 'वषट्'; आकर्षण में 'हुं'; उच्चाटन में 'वषट्' तथा मारण कर्म की पूजा में 'फट्' का प्रयोग करना चाहिए। वशीकरण, आकर्षण तथा ज्वरदूरीकरण में भी 'स्वाहा' मन्त्र प्रशस्त है। विद्वानों के मतानुसार क्रोध-शान्ति, शान्ति-कर्म तथा प्रीति-वर्द्धन कर्म में भी 'नमः' शब्द का प्रयोग करना चाहिए। सम्मोहन, उद्दीपन, पुष्टि तथा मृत्यु-निवारण में 'वौषट्'; प्रीति-भंजन, छेदन तथा मारण में 'हुं'; विद्वेषण में 'वौषट्' तथा अन्धीकरण, मन्त्र-चैतन्य एवं लाभालाभादि-कर्मों में 'वषट्' का प्रयोग करना चाहिए।

आसन-निर्णय- पुष्टि-कर्म में 'पद्मासन' से; स्तम्भन-कर्म में 'विकटासन' से; आकर्षण, पुष्टि-कर्म तथा विद्वेषण में 'कुक्कुटासन' से; शान्ति-कर्म में स्वस्तिकासन से; उच्चाटन-कर्म में 'अर्द्धस्वस्तिकासन' से, मारण-कर्म में 'अर्द्धस्थापन पार्ष्णिकासन' से, तथा वशीकरण-कर्म में 'भद्रासन' से बैठना चाहिए। पालथी मार कर, दाँये पाँव को बाँई जाँघ पर तथा बाँये पाँव को दाँई जाँघ पर जमा कर, बाँये हाथ को बाँये घुटने पर तथा दाँये हाथ को दाँये घुटने पर जमा कर, पीठ, गला तथा रीढ़ को एकदम सीध में रखकर

बैठने की क्रिया को 'पद्मासन' कहा जाता है। जानु और जाँघों के बीच दोनों भुजाओं को प्रविष्ट कर बैठने को 'विकटासन' कहते हैं। विकटासन लगा कर दोनों पाँवों को समान भाग में स्थापन पूर्वक, जानु में दोनों हाथों को शोभित करने को 'कुक्कुटासन' कहा जाता है। अन्य आसनों की जानकारी किसी योगी से अथवा योगासन सम्बन्धी पुस्तकों से प्राप्त कर लेनी चाहिए।

'वशीकरण' के लिए भेड़ के चमड़े का आसन; 'आकर्षण' के लिए व्याघ्रचर्म, 'उच्चाटन' के लिए ऊँट के चमड़े का आसन, 'विद्वेषण' के लिए घोड़े के चमड़े का आसन, 'मारण' के लिए भैंस के चमड़े का आसन तथा 'मोक्ष-साधन' के लिए हाथी के चमड़े का आसन बिछाकर, उस पर बैठना चाहिए। लाल रंग के कम्बल का आसन सब कर्मों के साधन के लिए प्रशस्त कहा गया है। आसन साफ-सुथरा तथा पवित्र होना आवश्यक है। वह कहीं से कटा-फटा अथवा कीड़ों आदि से खाया हुआ नहीं होना चाहिए। धूलि जमे, अपवित्र, जले हुए अथवा जिसमें कोई अपवित्र या अस्वच्छ वस्तु लगी हो—ऐसे आसन का प्रयोग नहीं करना चाहिए। जप करने के उपरान्त आसन को भलीभाँति झाड़-पोंछ कर तथा लपेट कर, किसी पवित्र स्थान में रख देना चाहिए। उसके ऊपर पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े आदि बीट न कर दें तथा किसी अन्य प्रकार से वह अपवित्र न हो जाय, इसका ध्यान रखना चाहिए।

कूर्म-चक्र विचार— आसन को 'कूर्म-चक्र' की विधि से बिछाना चाहिए, इससे शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है। कूर्म-चक्र-विचार की विधि इस प्रकार है—

जप अथवा पूजन के लिए जिस स्थान पर बैठना हो, उसके नौ भाग करे। फिर स्थान के नाम से सिर के अक्षर को जिस भाग में देखे, उसके भी नौ भाग करे। फिर पूर्व के अक्षर में जो मात्रा हो, उसी मात्रा के स्थान में आसन बिछाये। यथा- कोठे का पहला अक्षर कूर्म के सिर में है तथा सिर के नौवें भाग में ओ की मात्रा उत्तर दिशा के मध्यस्थान में है (दाँई ओर प्रदर्शित चित्र में इस स्थान की स्थिति स्पष्ट करने के लिए स्याही लगी हुई है) अतः यहीं पर कूर्म का मस्तक जान कर आसन बिछाना चाहिए। इसी प्रकार कूर्म चक्र में जितने भी स्थान हैं वे सभी कूर्म का सिर हो सकते हैं।

अन्य मत- कूर्म-चक्र के विषय में अन्य मत इस प्रकार है-

जिस स्थान में साधक दीप्यमान होता है, उसे दीप्त-स्थान कहा जाता है। दीप्त-स्थान

कूर्म चक्रम् (२)

ईशान कोण दाँया हाथ — पूर्व मुख — आग्नेय कोण बाँया हाथ

उत्तर — दक्षिण

वायव्य कोण दाँया पाँव — पश्चिम पूंछ — नैऋत्य कोण बाँया पाँव

	कखगघङ		चछजझञ	
शषसह	अं अः	अ / आ	इ ई	टठडढण
	ओ औ	कूर्मचक्र	उ ऊ	
	ए ऐ	लृ लॄ	ऋ ॠ	
	यरलव	पफबभम	तथदधन	
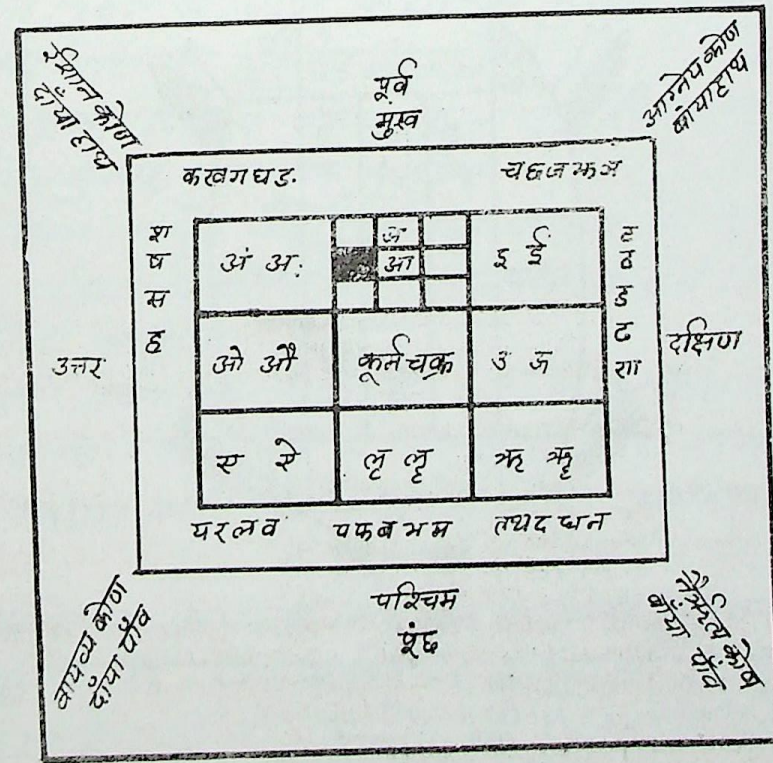
का आश्रय लेकर किये जाने वाले कर्म ही सफल होते हैं। अस्तु, पूजनादि के लिए मनोनीत स्थान में कूर्म-चक्र बनाकर, विचार पूर्वक, आसन पर स्थित होना चाहिए।

इस चक्र के विभिन्न कोष्ठकों में विभिन्न अक्षरों की परिकल्पना की जाती है, उन्हें दाँई ओर के चित्र में प्रदर्शित किया गया है। चक्र के जिस कोष्ठक में ग्राम, नगर अथवा स्थान आदि के नाम का प्रथमाक्षर हो, उसे कूर्म का मुख समझना चाहिए तथा मुख के दोनों ओर के कोष्ठक उसके हाथ, हाथों के नीचे वाले दोनों कोष्ठक उसकी कुक्षियाँ कुक्षियों के नीचे वाले दो कोष्ठक उसके पाँव तथा शेष कोष्ठक उसकी पूँछ समझने चाहिए।

इसी प्रकार मध्यवर्ती ९ कोष्ठकों का भी विभाजन कर लेना चाहिए। मण्डप के

कूर्म - चक्रम् (२)
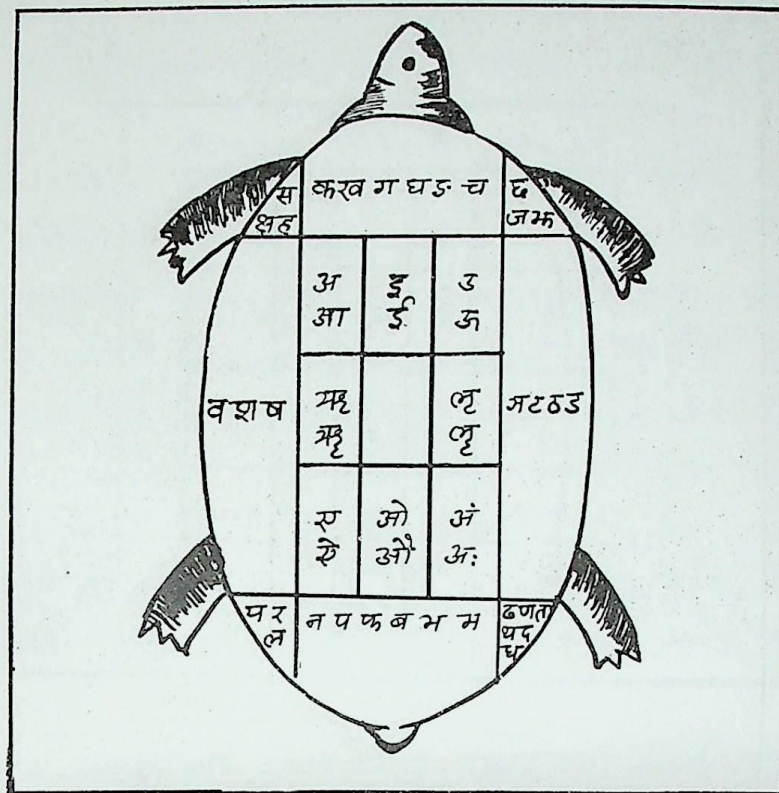
जिस भाग में कूर्म का मुख हो, वहीं बैठकर जप-पूजा आदि कार्य करने से मन्त्र सिद्ध होता है। हाथ वाले भाग में कार्य करने से साधक अल्पजीवी होता है। कुक्षि वाले भाग में कार्य करने से उदासीन, पाँव वाले भाग में कार्य करने से दुःखी तथा पूँछ वाले भाग में कार्य करने से बन्धन तथा उच्चाटनादि से पीड़ित होता है।

शुभ कार्य चक्र- शुभ कार्य (जप-पूजनादि) के लिए शुभाशुभ-दिशा चक्र का विचार करना भी आवश्यक है। इसके विषय में निम्नानुसार समझना चाहिए -

जिस दिन मन्त्र लिखने अथवा मन्त्र जपने बैठे, उस दिन आसन को पूर्व दिशा में रखना चाहिए। दूसरे दिन अग्नि कोण में, फिर दक्षिण दिशा में। इसी क्रम से सातवें दिन उत्तर दिशा में रखना चाहिए। ईशान कोण को खाली रखना चाहिए।

शुभ-कार्य हो तो चन्द्रमा, शुभ वार तथा शुभ दिशा को सामने अथवा दाँई ओर रखना चाहिए। योगिनी, दिशाशूल तथा निकृष्ट वार को पीठ पीछे अथवा बाँई ओर रखना चाहिए

निकृष्ट-कार्य के लिए योगिनी, निकृष्ट वार तथा दिशाशूल को सामने अथवा बाँई ओर रखना चाहिए।

मध्यम-कार्य के लिए चन्द्रमा तथा मध्यम वार को सामने अथवा दाँई ओर एवं योगिनी को पीछे तथा शुभवार को कोण में हो तो सामने के कोण में रखना चाहिए। निकृष्ट वार हो तो दिशा में रखे। शुभवार हो तो सामने की दिशा में निकृष्टवार को रखे। अगले पृष्ठ पर प्रदर्शित दिशा-चक्र के अनुसार बैठना ठीक रहेगा।

शुभाशुभ दिशा-चक्रम्
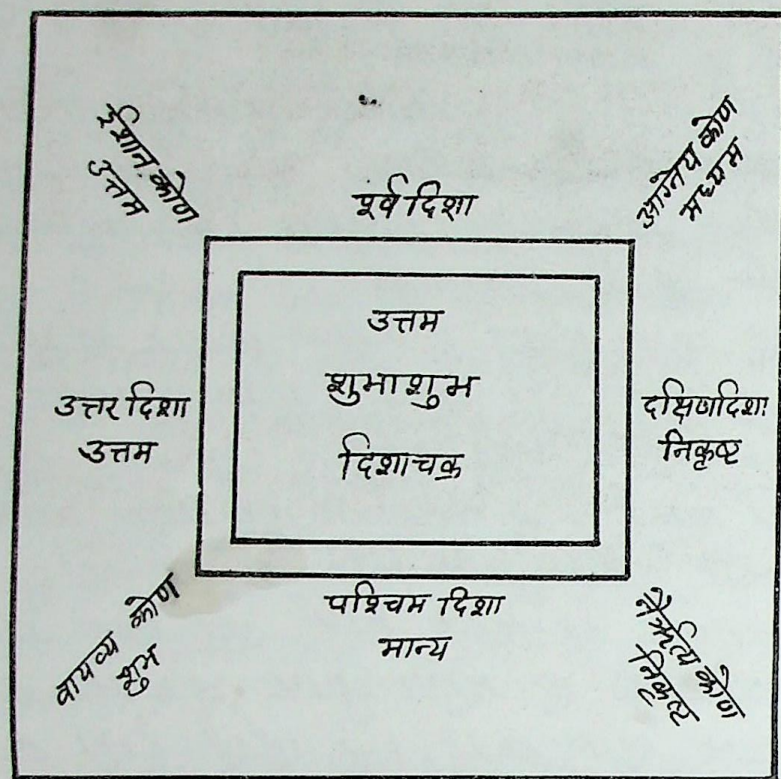
विभिन्न वारों में कार्य-आरंभ करने हेतु दिशा-चक्र की शुभाशुभ स्थितियों को अगले पृष्ठों पर दिए गए चित्रों में अलग-अलग प्रदर्शित किया गया है।

रविवार-चक्र

रविवार के दिन किसी कार्य को आरंभ करे तो अगले पृष्ठ पर प्रदर्शित चित्र के अनुसार बैठने से कार्य शीघ्र सिद्ध होता है।

शनिवार-चक्र

शनिवार के दिन किसी कार्य को आरंभ करना हो तो अगले पृष्ठ पर प्रदर्शित शनिवार-चक्र के अनुसार बैठना चाहिए।

बुधवार एवं गुरुवार के लिए भी अलग अलग चित्र प्रदर्शित किए गए हैं।

रविवार-चक्र (१)

ईशान कोण खाली

उत्तम
पूर्व दिशा, रविवार

अग्निकोण चन्द्रवार: उत्तम

उत्तरदिशा
शनिवार
अति निकृष्ट

रविवार चक्र
(१)

दक्षिण दिशा
मंगलवार
कनिष्ठ

पश्चिम दिशा, गुरुवार
उत्तम

वायव्यकोण शुक्रवार सामान्य

नैऋत्य कोण बुधवार सामान्य
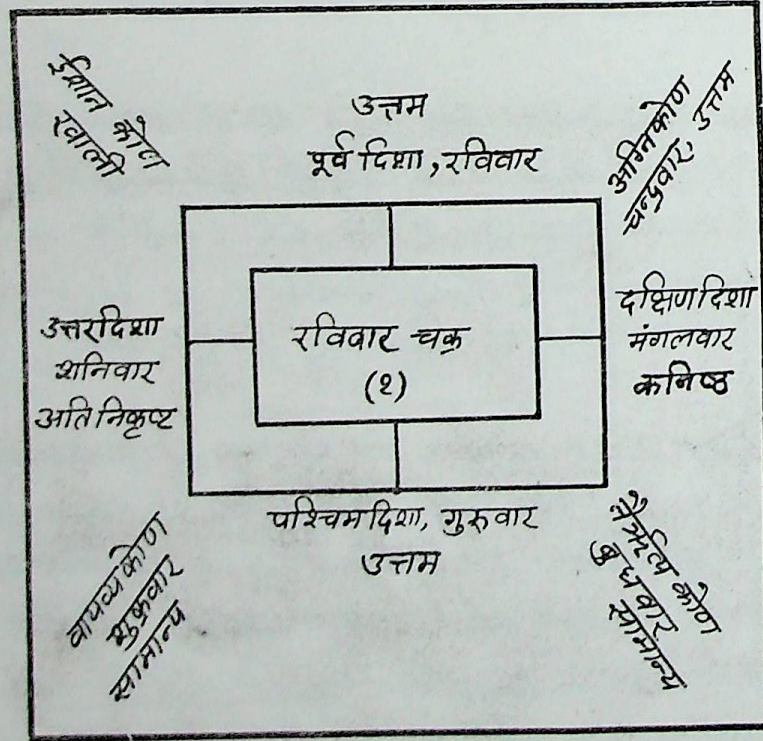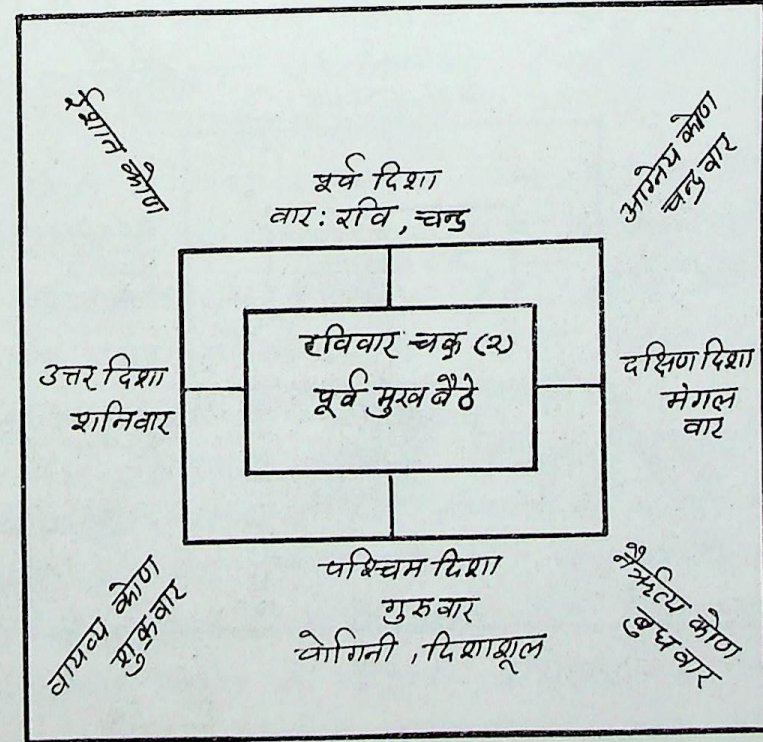
रविवार चक्र (२)

अधिकार प्राप्ति के हेतु कहीं जाना हो तो रविवार के दिन पिछले पृष्ठ पर प्रदर्शित 'रविवार चक्र (२) के अनुसार बैठना चाहिए। पूर्व मुख बैठे, चन्द्रमा तथा शुभवार रवि सम्मुख रहे; बृहस्पति (गुरु) योगिनी तथा दिशाशूल पीठ पीछे रहें। अतिनिकृष्ट शनिवार बाँई ओर हो तो मनोरथ शीघ्र सिद्ध होता है।

यदि किसी के काम में विलम्ब (विघ्न) डालना हो तो भी इसी विधिसे बैठकर ध्यान आरंभ करना चाहिए। इस चक्र में योगिनी सामने; शनि दाँये; दिशाशूल बाँये; बुध-शुक्र पीछे; रवि-चन्द्र उत्तम तथा शुक्र पर मंगल की दृष्टि है।

शनिवार-चक्र- दांई ओर प्रदर्शित शनिवार चक्रानुसार, किसी कार्य को शनिवार के दिन बैठनेसे कार्य शीघ्र सिद्ध होता है। इस चक्रानुसार पश्चिम-मुख बैठने से चन्द्रमा, सामान्य दिशा एवं सामान्य वार

शनिवार चक्र

गुरुवार-चक्र

पूर्व दिशा
गुरु अथवा चन्द्र

ईशान कोण योगिनी

अग्निकोण शुक्र

उत्तर दिशा
बुध

गुरुवार चक्र
पूर्व की ओर मुँह करके बैठे

दक्षिण दिशा
शनि

वायव्य कोण
मंगल

पश्चिम दिशा
चन्द्रवार

नैऋत्य कोण
रवि, दिशाशूल
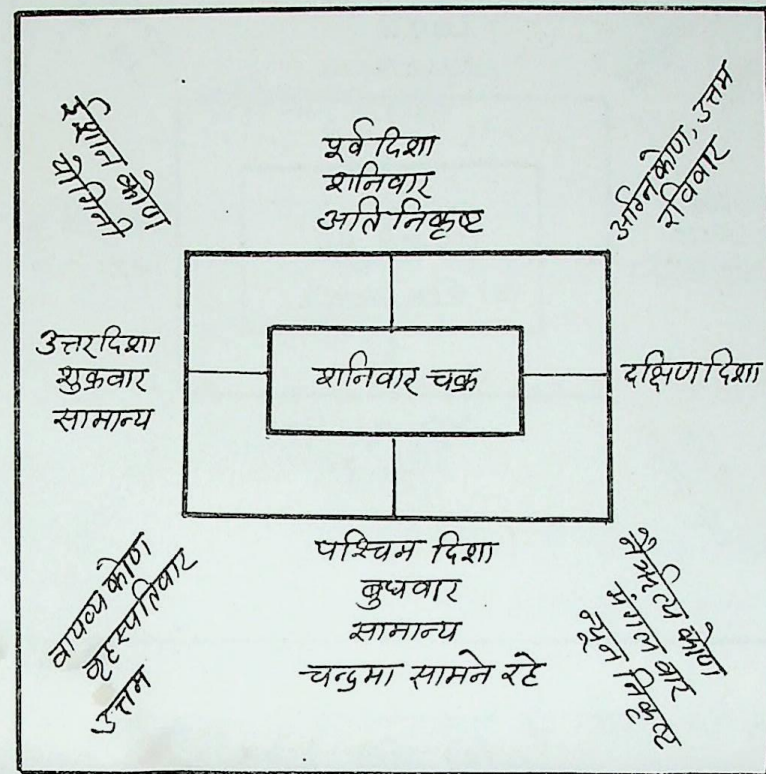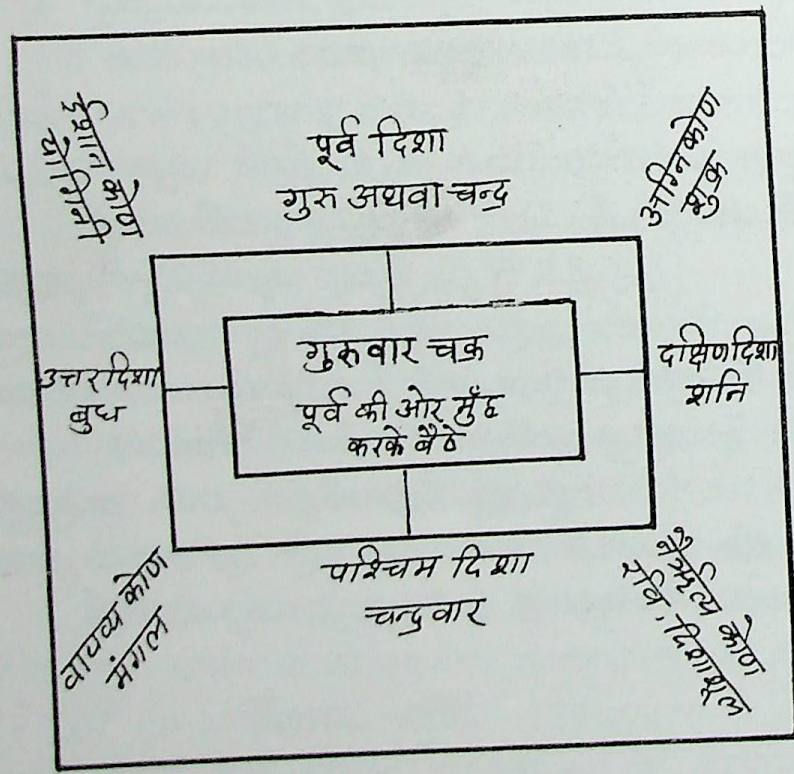
सामने, शुक्र सामान्य वार दाँये, योगिनी ईशान कोण में, पीठ पीछे सामान्य दिन, अत्यन्त निकृष्ट शनिवार एक दम पीठ पीछे, उत्तम वार चन्द्र बाँई ओर शुक्र को देखता है। योगिनी की दृष्टि बाँई ओर मंगल पर रहती है तथा बृहस्पतिवार रविवार को देखता है।

गुरुवार चक्र

किसी मनोरथ की प्राप्ति, वैर अथवा क्रोध संबंधी कार्य के लिए शुक्लपक्ष के पहले गुरुवार को बाँये स्वर में बैठना चाहिए। मुख पूर्व दिशा की ओर तथा योगिनी शुभ कोण अथवा शुभ दिशा में हो तो शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है।

गुरुवार-चक्र को इसी पृष्ठ पर बाँई ओर प्रदर्शित किया गया है। इस स्थिति में चन्द्र, गुरु सामने अथवा गुरु सामने और चन्द्रवार पीछे, योगिनी ईशान कोण में, शनि बाँये, दिशाशूल दाँये शुक्र-मंगल सामने के कोण में, रविवार तथा योगिनी आमने-सामने के कोणों में तथा बुध और शनि

आमने-सामने की दिशाओं में रहेंगे।

बुधवार-चक्र

किसी अधिकार की वृद्धि के लिए बुधवार के दिन कार्य आरम्भ करे तो दाँई ओर प्रदर्शित चक्र के अनुसार बैठने से कार्य शीघ्र सिद्ध होता है।

इस चक्रानुसार पूर्वाभिमुख बैठने से चन्द्रमा तथा बुध सामने रहेंगे। रवि पीछे की ओर बुध को देखेगा। शुक्र और गुरु दाँये रहेंगे, मंगल बाँये रहेगा, योगिनी और शनि दोनों पीछे रहेंगे।

ईशान मुख बैठने से चन्द्र, बुध तथा गुरु दाँये, योगिनी बाँये, शनि पीछे तथा मंगल भी बाँये तुल्य रहेंगे।

मारण, उच्चाटन आदि का कार्य आरंभ करना हो तो नैर्ऋत्य-मुख बैठने से शनि सामने, योगिनी दाँये, वृहस्पति बाँये तथा चन्द्रमा बाँई ओर को रहेगा।

बुधवार - चक्र

ईशान कोण

पूर्व दिशा
बुधवार, चन्द्रवार

आग्नेय कोण
गुरुवार

बुधवार चक्र

उत्तरदिशा
मंगलवार

शुभ-कार्य को
पूर्वाभिमुख
तथा
अशुभ-कार्य को
नैर्ऋत्य-मुख बैठे

दक्षिणदिशा
शुक्रवार

वायव्य कोण
सोमवार
योगिनी

पश्चिम दिशा
रविवार

नैर्ऋत्य कोण
शनिवार
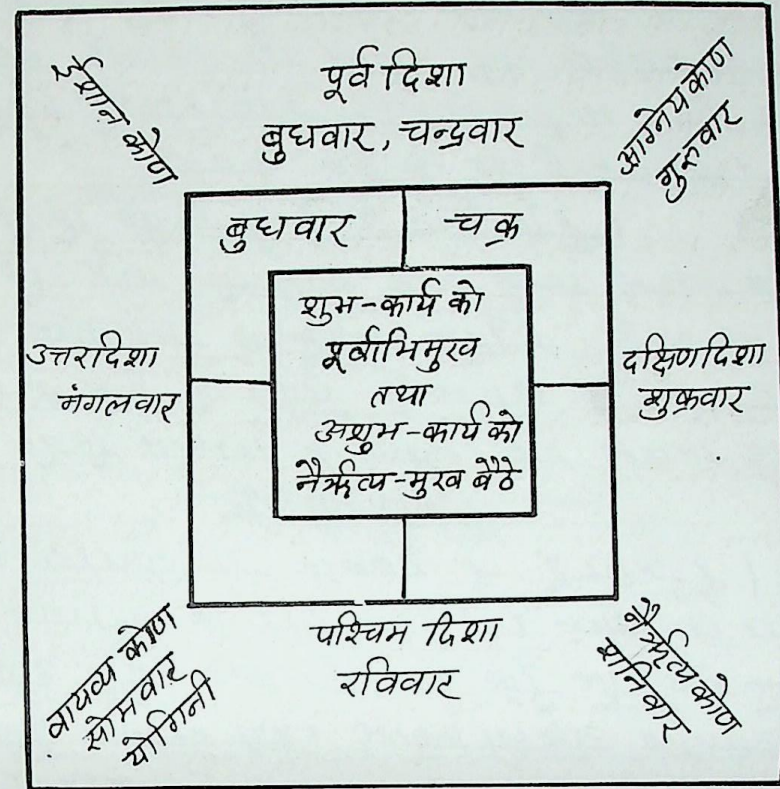
कार्य-नाशक सिद्धि चक्र

यदि कोई कार्य-नाशक उपाय करना हो तो दाँई ओर प्रदर्शित चक्र के अनुसार समय देख कर बैठना चाहिए।

ईशान-मुख बैठने से शनि दाँये, योगिनी बाँये पीछे चन्द्र तथा सामने शुक्र रहता है। इसरीति से बैठने पर मनोरथ की सिद्धि अवश्य होती है।

दिशाशूल-विचार- सोम तथा शनिवार को पूर्व में, रवि तथा शुक्रवार को पश्चिम में, बुध तथा मंगलवार को उत्तर में तथा गुरुवार को दक्षिण में दिशाशूल रहता है। जिस दिन जिस दिशा में दिशाशूल हो, उस दिन उस दिशा में किसी भी कार्य के लिए प्रस्थान करना निषिद्ध है।

योगिनी-विचार - प्रतिपदा तथा नवमी को पूर्व में, तृतीया तथा एकादशी को आग्नेय कोण में, पंचमी तथा त्रयोदशी को दक्षिण में, चतुर्थी तथा द्वादशी को नैऋत्य कोण में, षष्ठी तथा चतुर्दशी को पश्चिम में, सप्तमी तथा पूर्णिमा को वायव्य कोण में, द्वितीया तथा दशमी को

कार्य-नाशक-सिद्धि चक्र
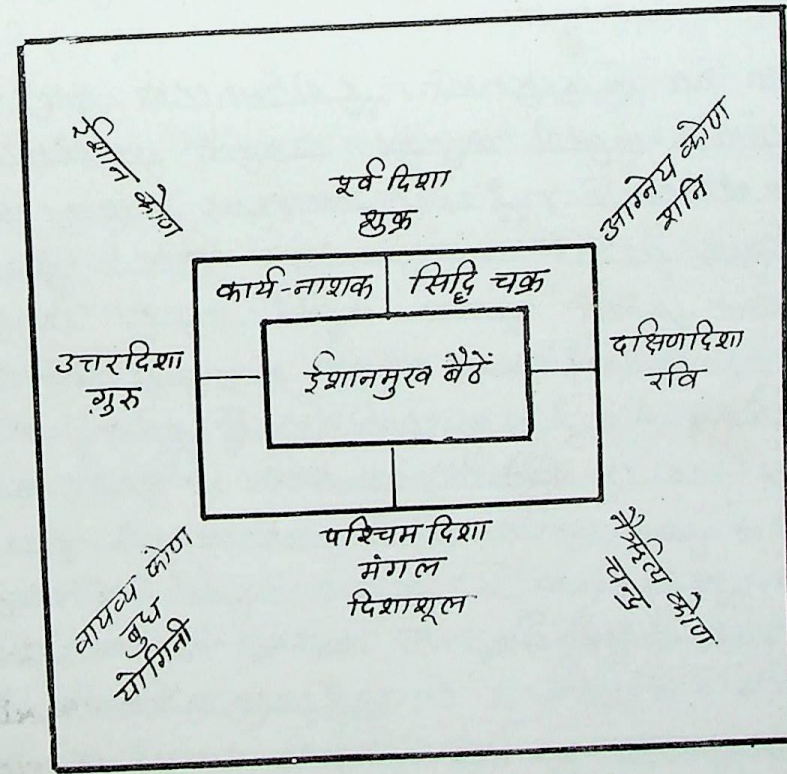
उत्तर में एवं अष्टमी तथा अमावास्या को ईशान कोण में योगिनी का निवास रहता है। पीठ पीछे तथा बाँई ओर की योगिनी शुभ फलदायक तथा सामने एवं दाँई ओर की अशुभ फलकारक होती है।

तिथि-विचार- तिथियों के ५ प्रकार हैं -(१) नन्दा, (२) भद्रा, (३) जया, (४) रिक्ता और (५) पूर्णा। प्रतिपदा, षष्ठी तथा एकादशी को 'नन्दा'; द्वितीया, सप्तमी तथा द्वादशी को 'भद्रा'; तृतीया, अष्टमी तथा त्रयोदशी को 'जया'; चतुर्थी, नवमी तथा चतुर्दशी को 'रिक्ता' एवं पंचमी, दशमी, पूर्णिमा तथा अमावास्या को 'पूर्णा' संज्ञक तिथि होती है। शुक्रवार को नन्दा, बुध को भद्रा, मंगल को जया, शनि को रिक्ता तथा गुरुवार को पूर्णा तिथि हो तो 'सिद्धि योग' होता है। इस योग में आरंभ किए गए सभी कार्यों में सफलता प्राप्त होती है। इससे भिन्न तिथि-वारों में 'मृत्यु योग' होता है और उसमें आरंभ किए गए सभी कार्य असफल अथवा दुखदायी होते हैं।

चन्द्र-सूर्य का अधिकार- शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी तथा पूर्णिमा एवं कृष्णपक्ष की चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, दशमी, एकादशी तथा द्वादशी तिथि को 'चन्द्र-तिथि' कहा जाता है। इन तिथियों पर चन्द्रमा का विशेष अधिकार होता है। शुक्लपक्ष की चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, दशमी, एकादशी तथा द्वादशी एवं कृष्णपक्ष की प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी तथा अमावास्या को 'सूर्य-तिथि' कहा जाता है। इन तिथियों पर सूर्य का विशेष अधिकार होता है।

चन्द्रमा की स्थिति- राशियां बारह होती हैं -(१) मेष, (२) वृष, (३) मिथुन, (४) कर्क, (५) सिंह (६) कन्या, (७) तुला, (८) वृश्चिक, (९) धनु, (१०) मकर, (११) कुंभ और (१२) मीन। मेष, सिंह तथा धनु लग्न में चन्द्रमा की स्थिति पूर्व दिशा में; मिथुन, कुंभ तथा तुला में पश्चिम दिशा में; कर्क, मीन तथा

वृश्चिक में उत्तर दिशा में तथा वृष, कन्या एवं मकर में दक्षिणदिशा में रहती हैं। अपनीराशि का चन्द्रमा
कल्याणकारी, दूसरी राशि का संतोषप्रद, तीसरी का धनदायक, चौथी का कलह-कारक, पाँचवीं का ज्ञानवर्द्धक,
छठी का लाभकारी, सातवीं का राजसम्मान-दायक, आठवीं का मारक, नवीं का धर्म-लाभ-दायक, दसवीं
का मनोभिलाषापूरक, ग्यारहवीं का सर्वार्थसिद्धि दायक तथा बारहवीं का हानिकारक होता है। सिंह
अथवा वृश्चिक के चन्द्रमा में स्तम्भन-कर्म; कर्क अथवा तुला में विद्वेषण तथा उच्चाटन कर्म; मेष, कन्या,
धनु अथवा मीन में वशीकरण, शान्ति-पुष्टि तथा उच्चाटन, शत्रु-निवारण आदि कर्म करना चाहिए। जिस
समय चन्द्रमा जिस राशि में भ्रमण कर रहा होता है, वही उस समय की 'लग्न' कही जाती है। इसका ज्ञान
पञ्चांग द्वारा प्राप्त होता है।

मुद्रा-विचार- पूजनादि कार्यों में विभिन्न प्रकार की मुद्राएँ प्रदर्शित की जाती हैं।
इन मुद्राओं का निर्माण हाथ की विभिन्न अँगुलियों की विभिन्न स्थितियों द्वारा किया जाता है।
मुद्रा-प्रदर्शन से देवता प्रसन्न होते हैं तथा पाप नष्ट होते हैं। षट्-कर्म साधन में ६ प्रकार की
मुद्रायें आवश्यक मानी गई हैं—(१) पद्म, (२) पाश, (३) गदा, (४) मुसल, (५) वज्र तथा (६) खड्ग। इनके
अतिरिक्त धेनु, आवाहनी, स्थापनी, सन्निधापनी, सन्निरोधिनी, योनि, महायोनि, तत्त्व आदि
सैकड़ों प्रकार की अन्य मुद्राएँ भी होती हैं। मुद्रा-प्रदर्शन की विधि तथा विभिन्न मुद्राओं के
स्वरूप का ज्ञान किसी जानकार व्यक्ति से अथवा हमारी पुस्तक 'मुद्राओं के स्वरूप' का
अध्ययन करके प्राप्त कर लेना चाहिए। जिस कर्म में जिस मुद्रा का प्रदर्शन कहा गया है,
उसी मुद्रा की सहायता से वह कर्म सिद्ध होता है—यह स्मरण रखने योग्य है।

कलश-वर्णन - कलश का विस्तार डेढ़ हाथ का होना चाहिए। उसकी ऊँचाई १६ अंगुल, गला ४ अंगुल, मुख का विस्तार ६ अंगुल तथा तल का परिमाण ५ अंगुल होना चाहिए। कलश स्वर्ण, चाँदी, काँसी, ताँबे, मिट्टी अथवा कांच द्वारा निर्मित होना चाहिए। वह छिद्र-रहित तथा टूट-फूट-रहित होना चाहिए। स्वर्ण का कलश भोग-दायक, चांदी का मोक्षदायक, ताँबे का प्रीतिकर, कांसी का पुष्टि-वर्द्धक, कांच का वशीकरण-कारक, पत्थर का स्तम्भनोद्दीपक तथा मिट्टी का सभी कर्मों के लिए श्रेष्ठ तथा शुभफलदायक होता है। शान्ति-कर्म के लिए अनेक रत्नों से विभूषित स्वर्ण-कलश, इसके अभाव में चाँदी तथा उसके अभाव में ताँबे का कलश प्रशस्त कहा गया है। अभिचार-कर्म में लोहे का, उत्साह-कर्म में काँच का, मोहन-कर्म में पीतल का तथा उच्चाटन-कर्म में मिट्टी का कलश स्थापित करना चाहिए। ताँबे का कलश सभी कर्मों के लिए प्रशस्त तथा सिद्धिदायक माना गया है।

कुण्ड-वर्णन - विद्वेषण-कर्म के लिए दो मेखला वाला कुण्ड बनाये, जो एक हाथ के बराबर का हो। उसका मुख नैर्ऋत्य कोण में रखना चाहिए। शत्रु-उच्चाटन के लिए नैर्ऋत्य कोण में, देवोच्चाटन के लिए मण्डप के वायव्य कोण में; अरितापन के लिए मण्डप के अग्नि कोण में योनि-कुण्ड तथा शत्रु-मारण के लिए मण्डप के दाँये भाग में अर्द्धचन्द्र कुण्ड का निर्माण करना चाहिए। शत्रु-पीड़ा-वृद्धि के लिए मण्डप के नैर्ऋत्य कोण में एवं विद्वेषण-कर्म के लिए अग्निकोण में पूर्णचन्द्राकार कुण्ड बनाना चाहिए। इस कार्य के लिए चतुष्कोण कुण्ड का निर्माण भी किया जा सकता है। वशीकरण-कर्म के लिए चतुष्कोण; स्तम्भन तथा उच्चाटन-कर्म के लिए त्रिकोण तथा मारण-कर्म के लिए षट्कोण कुण्ड का निर्माण करना चाहिए।

पुष्टि-कर्म-साधन के लिए मण्डप की पश्चिम दिशा में, उच्चाटन के लिए वायव्य कोण में, मारण-कर्म के लिए दक्षिण दिशा में कुण्ड बनाना चाहिए। अभिचार-कर्म में कुण्ड के परिमाण में न्यूनाधिकता होने से भी कोई दोष नहीं होता।

होम-व्यवस्था- विवाहादि कर्मों को 'शुभ' तथा स्तम्भन से मारण तक के कर्मों को 'क्रूर' कर्म कहा जाता है। शान्ति तथा पुष्टि आदि शुभ कर्मों में पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर मुँह करके हवन करना चाहिए। आकर्षण-कर्म में उत्तर की ओर मुँह करके वायुकोणस्थ कुण्ड में हवन करे। विद्वेषण-कर्म में नैर्ऋत्य कोण में मुँह करके वायुकोणस्थ कुण्ड में हवन करे। उच्चाटन-कर्म में अग्निकोण की ओर मुँह करके वायुकोणस्थ कुण्ड में हवन करे। मारण-कर्म में दक्षिण की ओर मुख करके दक्षिण दिग्वर्ती कुण्ड में हवन करे। ग्रह-भूतादि के निवारण कर्म में वायुकोण की ओर मुँह करके षट्कोण कुण्ड में हवन करे। वशीकरण-कर्म में वायव्य कोण की ओर मुँह करके त्रिकोण कुण्ड में हवन करे तथा स्तम्भन-कर्म में पूर्व दिशा की ओर मुँह करके षट्कोण-कुण्ड में हवन करना चाहिए।

शत, सहस्र, दस सहस्र, लक्ष तथा कोटि-होम की सर्वत्र यही व्यवस्था निरूपित है, शतादि की संख्या में आठ की संख्या अधिक कर देनी चाहिए। यथा-१०८, १००८, १०००८ आदि। मूल-देवता के मन्त्र का जितनी संख्या में जप करे, उसका दशांश हवन करना चाहिए। यज्ञीय-वस्तु के अभाव में केवल घृत से होम करना चाहिए तथा घृत के होम में असमर्थ होने पर, होम की संख्या से दूना मन्त्र-जप करना चाहिए-यह आपत्कालीन व्यवस्था है।

जहाँ होम तथा जप की संख्या निश्चित न हो, वहाँ आठ सहस्र जप तथा आठ सहस्र अथवा आठ सौ आहुति होम करना चाहिए। होम-कर्म तथा बलिदान-मन्त्र के पीछे 'स्वाहा' शब्द का प्रयोग करना चाहिए। जहाँ होम तथा जप की संख्या न बताई गई हो, वहाँ एक हजार की संख्या में मन्त्र-जप तथा इतनी ही संख्या में होम करने का भी विधान कहा गया है। पूजा-काल के अन्त में, मन्त्र के साथ 'नमः' शब्द तथा तर्पण के अन्त में देवता का नाम जोड़ देना चाहिए।

होमद्रव्य- शान्ति-कर्म में दूध, घी, पीपल आदि वृक्ष के पत्ते तथा गिलोय से हवन करना चाहिए, पुष्टि-कर्म में बिल्वपत्र, घृत, श्वेत सरसों, लवण तथा चमेली के पुष्पों से; कन्या की अभिलाषा से खीलों द्वारा; स्त्री की अभिलाषा से कमल पुष्प द्वारा; महासमृद्धि प्राप्त करने तथा दारिद्र्य दूर करने की इच्छा से दही तथा घृत द्वारा एवं महानिधि प्राप्त करने की आकांक्षा से घृत, बिल्व तथा तिल द्वारा हवन करना चाहिए।

आकर्षण-कर्म में प्रियंगु, बिल्व, चमेली-पुष्प, पलाश के फल तथा सेंधा नमक से; वशीकरण में चमेली के फूलों से एवं आकर्षण में कनेर के फूलों से भी हवन किया जा सकता है।

उच्चाटन-कर्म में उच्चाटनीय-मनुष्य के केश अथवा कपास के बीज तथा नीम के बीजों को मट्ठे में मिलाकर हवन करना चाहिए। मोहन-कर्म में कौए के पंखों से तथा मारण-कर्म में धतूरे के बीज, रक्तमिश्रित-विष, बकरी का दूध, घी, कपास के बीज, मनुष्य की हड्डी, मनुष्य का मांस, जिस मनुष्य को मारना चाहे उसके नख तथा रोमों को मिलाकर हवन करना चाहिए।

सरसों के तैल, कौआ-उल्लू आदि क्रूर पक्षियों के पंख, कुचला, मिलावा, मिर्च, सरसों, सिक्थ, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, कटु-तैल तथा आक और सेंहुड़ के दूध से भी मारण-कर्म में होम किया जाता है।

आयु-वृद्धिकारक-कर्म में घी, तिल, दूर्वा तथा आम के पत्तों से; ज्वर दूरीकरण हेतु आम के पत्तों से; मृत्यु-विजय हेतु अथवा घोड़ा-हाथी जैसी शक्ति-लाभ के हेतु गिलोय से; गायों की पीड़ा नष्ट करने के लिए श्वेत सरसों से, वर्षा की इच्छा से बेंत की समिधाओं तथा बेंत के पत्तों से; पुष्टि-लाभ के लिए जियापोता (जीवितपुत्रिका) की समिधाओं से; लाकुपति-त्व-लाभ के लिए घृत तथा गुग्गुल से; वर्षा रोकने के लिए दूध तथा लवण से एवं सरस्वती-सिद्धि के लिए मल्लिकापुष्प, जातीपुष्प, नागकेशर के फल तथा पुन्नागपुष्प द्वारा हवन करना चाहिए। परन्तु जिस मन्त्र के साथ होम की जिन वस्तुओं का उल्लेख किया गया हो, उसमें उन्हीं वस्तुओं का होम के लिए प्रयोग करना चाहिए।

मुद्रा- होम-कार्य में (१) मृगी, (२) हंसी तथा (३) शूकरी- इन तीन प्रकार की मुद्राओं का प्रयोग किया जाता है। हाथों को सिकोड़ने से 'शूकरी मुद्रा' बनती है। कनिष्ठा के अतिरिक्त अन्य अंगुलियों से 'हंसी मुद्रा' बनती है तथा कनिष्ठा एवं तर्जनी के योग से 'मृगी मुद्रा' बनती है। इस प्रकार तीन विधियों से मुद्रा बनाकर कुण्ड में आहुति डाली जाती है। मुद्रा के बिना आहुति देने से देवता उसे ग्रहण नहीं करते।

स्रुक और स्रुव- स्रुक ३६ अंगुल प्रमाण का तथा स्रुव २४ अंगुल प्रमाण का होना

चाहिए। उनका मुख 7 अंगुल प्रमाण, कंठ 1 अंगुल तथा वेदी 2 अंगुल की हो। दण्ड की चौड़ाई तथा लम्बाई के अनुसार 20 तथा 6 अंगुल का रखना चाहिए। स्रुक तथा स्रुव इन दोनों का कुण्डभाग 4 अथवा 3 अंगुल विस्तृत हो, उसमें 4 अंगुल का गड्ढा रहे। गड्ढा गोलाकार तथा 3 अंगुल प्रमाण का हो। गर्त के बाहर 2 अंगुल मेखला हो तथा उसके बाहर शोभा रहनी चाहिए।

स्रुक तथा स्रुव का निर्माण चाँदी, ताँबा, लोहा, कुचले की लकड़ी अथवा अन्य किसी काष्ठद्वारा करना चाहिए। छोटे कार्य में नागेन्दुलता द्वाराभी इसका निर्माण किया जा सकता है। काष्ठों में चन्दन, खैर, पीपल, पिलखन, आम, चम्पा, आँवला तथा ढाक प्रशस्त माने गये हैं।

जप तथा मन्त्र विधान- जप तीन प्रकार का होता है -(1) वाचिक, (2) उपांशु तथा (3) मानसिक। जप करते समय दूसरा व्यक्ति भी सुन सके, उसे 'वाचिक जप' कहा जाता है। जप करते समय मन्त्र स्वयं को सुनाई दे, अन्य को नहीं; उसे 'उपांशु जप' कहते हैं। जप के समय होठ तथा जीभ न चले, केवल मन से ही ध्यान करते हुए जप किया जाय, उसे 'मानसिक जप' कहा जाता है।

अभिचार (मारण आदि) कर्म में 'वाचिक', शान्ति-पुष्टि कर्म में 'उपांशु' तथा मोक्ष-साधन में 'मानसिक' जप करना चाहिए। वशीकरण-कर्म में पूर्व की ओर मुँह करके, अभिचारादि कर्म में दक्षिण की ओर, धनाभिलाषा में पश्चिम की ओर तथा आयु-रक्षा एवं शान्ति-पुष्टि कर्म में उत्तर की ओर मुँह करके जप करना चाहिए।

मारण-कर्म- वशीकरण से स्तम्भन, स्तम्भन से मोहन, मोहन से विद्वेषण, विद्वेषण से उच्चाटन तथा उच्चाटन से मारण कर्म को अधिक ऊँचा माना गया है। दिन के शेषांश

में शान्ति तथा पुष्टि-कर्म एवं सन्ध्याकाल में मारण-कर्म का अनुष्ठान किया जाता है, परन्तु मारण-
कर्म का अनुष्ठान तभी करना चाहिए, जब शत्रु-भय दूर होने का कोई अन्य उपाय हीन रहे।
शत्रु के घर की दीपाग्नि अथवा चूपाग्नि लाकर, उसके द्वारा अभिचार-कर्म करना
चाहिए। विद्वेषणादि अभिचारिक-कर्म में होम के समय कृष्णादेश का परित्याग नहीं किया जाता।
यथाविधि अग्नि स्थापित करके बार-तृण द्वारा अग्नि का परिस्तरण करे, फिर नीम के तेल में
सने हुए कौए के पंख तथा उल्लू के पंखों का हवन करे। तत्पश्चात् जिसके नाश की आकांक्षा से
कर्म करे, उसे लक्ष्य करके 'एवं दारय एवं मारय'—इस प्रकार के वाक्यों का उच्चारण करके
मानसिक-मन्त्र द्वारा १०८ बार हवन करना चाहिए। हवनोपरान्त अग्नि के समीप कृत्या देवी का
पूजन करके—'दूर अथवा समीप में मेरा जो अमुक शत्रु है, तुम उसके मांस का भक्षण करो'—
यह निवेदन करे। इस भाँति नियम पूर्वक अग्नि की रक्षा करता हुआ नौ रात्रियों तक जप,
होम आदि करके कर्म समाप्त करने पर शत्रु का नाश हो जाता है। मारण-कर्म में वस्त्र तथा
पगड़ी आदि लाल रंग के धारण करने चाहिए तथा जप-होमादि के पहले संकल्प करके कार्या-
रम्भ करना चाहिए।

मन्त्र-उत्कीलन विधि— मन्त्र-संस्कार के सम्बन्ध में पृष्ठ संख्या ५५ पर लिखा जा चुका
है। यहाँ मन्त्र-उत्कीलन विधियों के साथ मन्त्र के दस संस्कार करने का पुनः वर्णन किया जा रहा है,
परन्तु ये संस्कार मन्त्र-उत्कीलन के लिए किये जाते हैं तथा इनके नामों तथा क्रम में थोड़ा अन्तर है,
विधि में तो अन्तर है ही। कलियुग में तान्त्रिक-मन्त्रों को शिवजी द्वारा कील दिया गया है, अतः

वे निष्प्रभ हो गए हैं। नीचे लिखी विधियों द्वारा उत्कीलन कर देने पर वे प्रभावी हो जाते हैं। 'मूल डामरतन्त्र' में मन्त्र-उत्कीलन की तीन विधियों का उल्लेख है, उन्हें यहाँ दिया जा रहा है।

(१) पहली विधि- जिस मन्त्र का जप करना हो, उसे अष्टगंध के द्वारा भोजपत्र के ऊपर १०८ बार लिखकर धूप-दीप से पूजन करे, तत्पश्चात् ब्राह्मणों को भोजन कराये। फिर एक ताम्रपात्र में पानी भर कर, उसमें मन्त्र लिखित भोजपत्रों को एक-एक करके डाल दे अथवा उन्हें नदी की धारा में प्रवाहित कर दे तो मन्त्र का उत्कीलन हो जाता है।

(२) दूसरी विधि- मृत्तिका (मिट्टी) द्वारा इष्टदेवता की पुरुषाकार प्रतिमा बना कर, उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करे। फिर शुभ तिथि तथा शुभ घड़ी में भोजपत्र के ऊपर साध्य-मन्त्र को एक बार लिख कर, उसे प्रतिमा की छाती में लगा दे तथा एक मास तक धूप, दीप, नैवेद्य आदि से उसका पूजन करे। तदुपरान्त गुरु से आज्ञा लेकर, मन्त्र को जपते हुए, उस प्रतिमा को नदी में बहा दे। फिर ब्राह्मणों को भोजन कराये तो मन्त्र का उत्कीलन हो जाता है।

(३) तीसरी विधि- मन्त्र के १० संस्कार करे—(१) जनन, (२) जीवन, (३) ताड़न, (४) बोधन, (५) अभिषेक, (६) विमलीकरण, (७) आप्यायन, (८) तर्पण, (९) दीपन तथा (१०) गोपन। इन संस्कारों की विधि निम्नानुसार है—

(१) जनन- मात्रा-वर्ण का पुट लगाकर मन्त्र का १०८ बार जप करे। यथा- 'ॐ नमो नारायणाय' इसमें १६ स्वरों में ८ जोड़ हैं। 'अ आ' से 'अं अः' तक एक-एक जोड़ का पुट इस प्रकार लगाये- 'ॐ नमो नारायणाय अं' — इसी प्रकार आठों जोड़ का पुट लगा कर पढ़े।

मं० मं० ३.०३

भा० टी०

(२) जीवन - मन्त्र में 'प्रणव' का पुट देकर १०८ बार जप करे। (३) ताड़न - मन्त्र के अक्षरों को भोज
पत्र पर लिखकर चन्दन, घी में कपूर मिला कर पानी तय्यार करे। फिर पुष्प लेकर वायु-बीज 'हं' से जल
को मन्त्र के ऊपर १०८ बार छिड़के। (४) बोधन - ताम्रपत्र पर मन्त्र को लिखे। मन्त्र के जितने अक्षर हों, उतने
कनेर के पुष्प लेकर, 'ॐ फट्' - इस मन्त्र से १०८ बार हवन करे। फूलों को मन्त्र पर लगाये तो 'बोधन'
संस्कार हो जाएगा। (५) अभिषेक - मन्त्र के जितने अक्षर हों, उतने पीपल के पत्ते ले। मन्त्र को ताम्रपत्र
पर लिख कर, सब पत्तों को इकट्ठा करके उनसे जल लेकर, मूल मन्त्र द्वारा मन्त्र के ऊपर जल चढ़ाये।
(६) विमलीकरण - मन ही मन मन्त्र का ध्यान कर, १०८ बार 'हुं फट्' शब्द का उच्चारण करे। (७) आप्यायन -
प्रणव, आकाश बीज तथा अग्नि बीज - इन तीनों बीजों द्वारा ताम्रपत्र पर लिखे मन्त्र के प्रत्येक
अक्षर पर, कुशा से गरम जल चढ़ाये। (८) तर्पण - ताम्रपत्र पर मूल मन्त्र लिख कर १०८ बार मूलमंत्र
से तर्पण करे। (९) दीपन - प्रणव बीज, माया बीज तथा लक्ष्मी बीज - इन तीनों का सम्पुट लगा कर मन्त्र
का १०८ बार जप करे। (१०) गोपन - मन्त्र का इस प्रकार जप करे कि किसी को पता न चल सके।
इस विधि का १०८ बार प्रयोग करने से मन्त्र अत्यधिक चमत्कारी हो जाता है।

यन्त्र - विधान - अनेक मन्त्रों के साथ यन्त्र-लेखन का भी विधान है। ऐसे यन्त्र
युक्त मन्त्रों का वर्णन आगे एक अलग खण्ड में किया गया है। अतः यन्त्र-लेखन के विषय में आव-
श्यक ज्ञान प्राप्त कर लेना भी आवश्यक है।

यन्त्र - लेखन - यन्त्र-लेखन के लिए प्रायः भोजपत्र का प्रयोग किया जाता है। इसके
अतिरिक्त स्वर्ण-पत्र, रौप्य-पत्र, ताम्र-पत्र, कागज तथा अन्य पत्रों पर भी यन्त्र लिखे जाते हैं। प्रायः

प्रत्येक यन्त्र के साथ उसकी लेखन-विधि का भी वर्णन रहता है। जिस विधि से यन्त्र-लेखन का निर्देश किया गया हो, उसी विधि से यन्त्र को लिखना चाहिए। जहां किसी विशेष पत्र का उल्लेख न हो, वहाँ भोजपत्र के ऊपर ही यन्त्र लिखना चाहिए। यन्त्र लेखन कार्य के लिए गंध का निर्देश भी प्राय: प्रत्येक यन्त्र के साथ दिया गया होता है। जहाँ यन्त्र-लेखन की गंध का विधान न हो, वहाँ अष्टगन्ध अर्थात् (१) गोरोचन, (२) कपूर, (३) हाथी का मद, (४) अगर, (५) कस्तूरी, (६) केशर, (७) रक्त चंदन तथा (८) श्वेत चन्दन से अथवा इनमें से किसी भी एक वस्तु से यन्त्र-लेखन कार्य करना चाहिए।

यन्त्र-लेखन के लिए उपयुक्त लेखनी का वर्णन भी प्राय: प्रत्येक यन्त्र के साथ रहता है। जहाँ लेखनी का कोई निर्देश न हो, वहाँ सोने की सलाई से यन्त्र को लिखना चाहिए। जैसे - सब कार्यों की सिद्धि के लिए चमेली की कलम, आकर्षण-कर्म के लिए जामुन की कलम, स्तम्भन के लिए बरगद की कलम, वशीकरण के लिए कुश की कलम तथा शुभ कार्यों के लिए सोने अथवा चाँदी की कलम प्रशस्त मानी गई है।

यन्त्र-धारण- यन्त्र को किस प्रकार तथा किस वस्तु में भर कर धारण किया जाय, इसका उल्लेख भी प्राय: प्रत्येक यन्त्र के साथ रहता है। जहाँ ऐसा उल्लेख न हो, वहाँ यन्त्र को स्वर्ण अथवा त्रिलोह (सोना, चाँदी और ताँबा मिश्रित धातु) अथवा चाँदी या ताँबे के ताबीज में भर कर धारण करना चाहिए। यन्त्र को शरीर के किस अङ्ग में धारण करें, इस संबंध में कोई निर्देश न हो तो पुरुष को दाँई भुजा में और स्त्री को बाँई भुजा में अथवा दोनों को ही कण्ठ में धारण करना चाहिए।

विशेष कर्तव्य- यदि मैत्री-सम्पादन के लिए यन्त्र लिखना हो तो यन्त्र-लिखते समय मिश्री अथवा गाय के घृत को मुँह मे रख लेना चाहिए तथा अगर, तगर, चन्दन चूरा, गुग्गुल, मिश्री, गाय का घृत, शहद, कपूर, दालचीनी एवं जायफल सहित सूखी मेवाओं को एकत्र कर इनकी धूप देनी चाहिए।

यदि मारण-उच्चाटनादि के लिए यन्त्र लिखना हो तो मुँह में सेंधानमक तथा नीम का पत्ता रख लेना चाहिए तथा इन्हीं दोनों वस्तुओं की यन्त्र को धूप देनी चाहिए।

यदि जिह्वा-स्तम्भनादि के लिए यन्त्र लिखना हो तो मुँह में मोम रख लेना चाहिए तथा मोम की ही यन्त्र को धूनी देनी चाहिए।

यदि स्वप्न बन्द करने के लिए यन्त्र लिखना हो तो यन्त्र को लिखते समय मुँह में नमक रख लेना चाहिए तथा उसी की धूनी देनी चाहिए।

हवन-सामग्री- शान्ति-कर्म मे दूध, घृत, तिल, गूलर तथा पीपल की लकड़ी अथवा अमरबेल और खीर का प्रयोग हवन में करना चाहिए। पुष्टि कर्म में घी, बेलपत्र अथवा चमेली के फूलों का हवन करे। कन्याभिलाषी खीर का हवन करे। लक्ष्मी-प्राप्ति के लिए कमलगट्टा, दही अथवा घृतप्लुत अन्न का हवन करे। समृद्धि के लिए घी, बिल्वपत्र तथा तिल का हवन करे। आकर्षण के लिए चिरौंजी तथा बिल्वफल का हवन करे। उच्चाटन के लिए कौए के पंख का हवन करे। वशीकरण के लिए राई तथा लवण का हवन करे। मोहन के लिए धतूरे के बीजों का हवन करे तथा मारण के लिए विष तथा रुधिर का हवन करना चाहिए। यदि किसी मन्त्र के साथ हवन के लिए किसी विशिष्ट-सामग्री का निर्देश हो तो उसी का हवन करना उचित है।

यन्त्र सम्बन्धी अन्य सातत्य विषयों का विस्तृत उल्लेख हमारे द्वारा सम्पादित 'वृहद्
यन्त्र महार्णव' नामक ग्रंथ में किया गया है।

उपसंहार - 'वीराचार' तथा 'भैरवी चक्र' की विधियाँ जटिल हैं तथा उनमें गुरु के प्रत्यक्ष निर्देश
के बिना सफलता प्राप्त होना असंभव है, अतः इन विषयों का उल्लेख इस ग्रंथ में नहीं किया गया
है। केवल उन्हीं मन्त्रों को इसमें संकलित किया गया है, जो सुसाध्य हैं। फिर भी इतना अवश्य
स्मरण रखना चाहिए कि ग्रंथ उपलक्षण मात्र होते हैं, मन्त्र-साधन के लिए गुरु-निर्देश तथा गुरु
की कृपा अत्यन्त आवश्यक है। गुरु के आशीर्वाद से अज्ञानी शिष्य साधक भी मन्त्र-साधन में
सफल हो जाते हैं, इससे भिन्न स्थिति में कभी-कभी लाख प्रयत्न करने पर भी सफलता नहीं मिल
पाती। अतः मन्त्र-साधक को सद्गुरु की शरण प्राप्त करना आवश्यक है। यों, इस ग्रंथ में अनेक
ऐसे मन्त्र भी संकलित हैं, जो गुरु के प्रत्यक्ष निर्देश के बिना, केवल उनके स्मरण मात्र से ही,
सिद्धिदायक हो सकते हैं। लौकिक गुरु के अभाव में भगवान सदाशिव को ही गुरु स्वीकार
कर के मन्त्र-साधन किया जा सकता है।

॥ इति श्री वृहद् मन्त्र महार्णवे सामान्य ज्ञान निर्देश प्रथम खण्डस्समाप्तः ॥

ॐ

अथ वृहद् मन्त्र महार्णवम्

भाषा-टीका सहितम्

द्वितीय खण्ड :

[शास्त्रोक्त एवं तन्त्रोक्त सिद्ध मन्त्र प्रकरणम्]

अथ बृहद् मन्त्र महार्णव द्वितीय खण्डस्य विषयानुक्रमणिका

श्रीगणेश मन्त्र:– गणेशजी के अनेक मन्त्र हैं तथा प्रत्येक मन्त्र साधक की कामनाओं की पूर्ति करने वाला भी है। गणेशजी के विभिन्न स्वरूपों के अलग-अलग मन्त्र भी हैं। यहाँ उन सभी का उल्लेख किया जा रहा है। जिन मन्त्रों के साथ किसी विशिष्ट साधन-विधि का उल्लेख नहीं है, उन्हें प्रथम खण्ड में वर्णित नियमानुसार सिद्ध करना चाहिए।

गणेश गायत्री– "एक दन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।"– इस गायत्री का सवालाख की संख्या में जप करने से समस्त कामनाएँ पूर्ण होती हैं।

गणेश जी का वेद-मन्त्र– "ॐ गणानां त्वा गणपति ँ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति ँ हवामहे निधीनांत्वा निधिपति ँ हवामहे वसो मम आहमजानि गर्भधमात्वम जासि गर्भधम्। ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीगणपतये नमः।"– इस मन्त्र का प्रयोग गणपति-पूजन, ध्यान आदि में किया जाता है। सवा लक्ष संख्या में जपने से अभीप्सित फल दायक है।

तान्त्रिक मन्त्र– श्री गणेश के तान्त्रिक मन्त्र निम्न लिखित हैं:-

(१) "ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वर वरद सर्व्वजनम्मे वशमानय ठः ठः।"– इस मंत्र के साधन के लिए सर्वप्रथम भोजपत्र के ऊपर अष्टगंध द्वारा 'गणेश यन्त्र' को लिखे (गणेश यन्त्र का स्वरूप अगले पृष्ठ पर प्रदर्शित है), फिर पीठशक्तियों का न्यास करे। यन्त्रस्थ केशर में पीठशक्तियों का पूजन इन मन्त्रों का उच्चारण करते हुए करे– "ॐ तीव्रायै नमः। ॐ ज्वालिन्यै नमः। ॐ नन्दायै नमः। ॐ भोगदायै नमः। ॐ कामरूपिण्यै नमः। ॐ उग्रायै नमः। ॐ तेजोवत्यै नमः। ॐ सत्यायै नमः। ॐ विघ्न नाशिन्यै नमः।' मध्य में– 'ॐ सर्वशक्ति कमलासनायै नमः।' फिर इन मन्त्रों से 'ऋष्यादि न्यास' करे–

"शिरसि गणक ऋषये नमः। मुखे निचृद्गायत्री छन्दसे नमः। हृदि गणपतये देवतायै नमः।" फिर इस प्रकार से 'कराङ्गन्यास' करे—" ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गां अंगुष्ठाभ्यान्नमः। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गूं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गैं अनामिकाभ्यां हुम्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गौं कनिष्ठाभ्यांव्वषट्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गः करतलकर पृष्ठाभ्यां फट्।" इसी प्रकार 'हृदयादिन्यास' करके ध्यान, आवाहनोपरान्त षोडशोपचार पूजन करने के बाद आरती करे। अन्त में पंचम खण्ड में वर्णित स्तोत्रादि का पाठ करना चाहिए। गणेश जी का यह अष्टविंशत्याक्षरी मन्त्र सब लोगों का वशीकरण करने वाला तथा सर्व सिद्धि दायक है। इस मन्त्र का सवालाख की संख्या में जप करने से समस्त समस्त विघ्न दूर होकर, समस्त मनोभिलाषायें पूर्ण होती हैं। मतान्तर से इस मन्त्र के अन्त में 'ठः ठः' के स्थान पर 'स्वाहा' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

(२) " ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं गणेश्वराय ब्रह्मरूपाय चारवे सर्व सिद्धि प्रदेशाय विघ्नेशाय नमो नमः" यह गणेश जी का द्वित्रिंश्याक्षरी मन्त्र है। इसका साधन भी पूर्व मन्त्र की भाँति ही किया जाता है।

(३) " वक्रतुण्डाय हुं"— यह गणेशजी का षडाक्षरी मन्त्र है। साधन-विधि पूर्ववत् है। इस मन्त्र में जिन पीठशक्तियों का पूजन किया जाता है, उनके नाम इस प्रकार हैं—१. तीव्रा, २ चालिनी, ३ नन्दा, ४ भोगदा, ५ कामरूपिणी, ६ उग्रा, ७ तेजोवती, ८ सत्या और ९ विघ्ननाशिनी। इस मन्त्र का नित्य दो सहस्र की संख्या में नियमित जप करते रहने से ६ मास के भीतर ही दारिद्र्य दूर हो जाता है।

(४) " मेघोल्काय स्वाहा"—यह गणेशजी का दूसरा षडाक्षरी मन्त्र है। साधन-विधि पूर्ववत है। इसका एक लाख की संख्या में जप करने से मनोभिलाषाओं की पूर्ति होती है।

(५) "गं" -- यह गणेशजी का एकाक्षरी मन्त्र है। जप संख्या एक लाख। साधन-विधि पूर्ववत्।

(६) "हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा" — यह गणेशजी का नवाक्षरी मंत्र है। जपसंख्या एकलाख। विधि पूर्ववत्।

(७) "ॐ ह्रीं ग्रीं ह्रीं" -यह गणेशजी का चतुरक्षरी मन्त्र है। जपसंख्या एक लाख। साधन-विधि पूर्ववत्।

(८) "रायस्पोष स्य ददिता निधि दो रत्नधातुमान् क्षोहणो बलगहनो वक्रतुण्डाय हुं" — यह गणेश जी का एकत्रिंशदक्षरी मन्त्र है। जप संख्या, विधि पूर्ववत्।

महागणेश मन्त्र - श्रीमहागणेश के दो मन्त्र निम्न लिखित हैं। इनकी जप संख्या एक लाख तथा पूजा-विधि पूर्वोक्त प्रकार की ही है -

(१) "ॐ ह्रीं गं ह्रीं वशमानय स्वाहा।"

(२) "ॐ ह्रीं गं ह्रीं महागणपतये स्वाहा।"

इनमें पहला मन्त्र एकादशाक्षरी तथा दूसरा द्वादशाक्षरी है। पहला मन्त्र वशीकरण कारक भी है। दोनों ही मन्त्र सर्वार्थ सिद्धिदायक हैं।

श्री गणेश यन्त्रम्
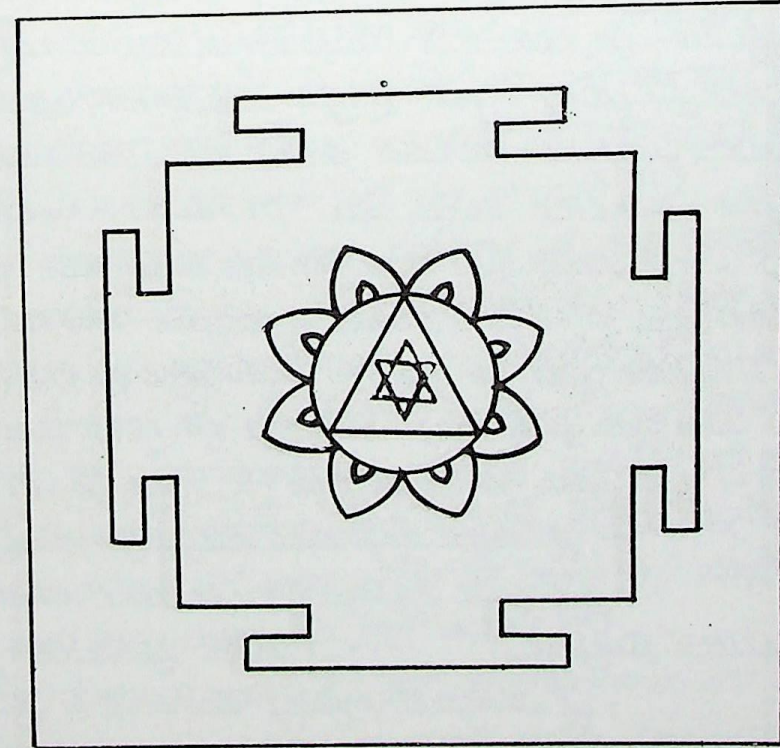
विनायक मन्त्र - "ॐ वक्रतुण्डाय हुं" — इस षडाक्षरी मन्त्र का ६ मास तक, ६ लाख की संख्या में जप करने से समस्त कामनाएँ पूर्ण होती हैं। साधन-विधि पूर्ववत् है।

हेरम्ब मन्त्र - (१) "ॐ गूं नमः" — यह चतुरक्षरी मन्त्र है। (२) "गं क्षिप्र प्रसादाय नमः" — यह नवाक्षरी मन्त्र है। दोनों मंत्रों की जप-संख्या १ लाख तथा साधन-विधि पूर्ववत् है।

हरिद्रा गणेश मन्त्र - हरिद्रा-गणेश के निम्न लिखित सत्ताईस मन्त्र हैं :—

(१) ग्लं, (२) ग्लौं, (३) श्रीं ग्लौं, (४) हूं ग्लौं, (५) ह्रीं ग्लौं, (६) क्लीं ग्लौं, (७) स्त्रीं ग्लौं, (८) ऐं ग्लौं, (९) ॐ ग्लौं, (१०) गं ग्लौं, (११) श्रीं ग्लौं फट्, (१२) हुं ग्लौं फट्, (१३) ह्रीं ग्लौं फट्, (१४) क्लीं ग्लौं फट्, (१५) स्त्रीं ग्लौं फट्, (१६) ऐं ग्लौं फट्, (१७) ॐ ग्लौं फट्, (१८) गं ग्लौं फट्, (१९) श्रीं ग्लौं स्वाहा, (२०) ह्रीं ग्लौं स्वाहा, (२१) हूं ग्लौं स्वाहा, (२२) क्लीं ग्लौं स्वाहा, (२३) स्त्रीं ग्लौं स्वाहा, (२४) ॐ ग्लौं स्वाहा, (२५) ऐं ग्लौं स्वाहा, (२६) गं ग्लौं स्वाहा, (२७) हरिद्रा-गणेश का एक अन्य प्रमुख मन्त्र इस प्रकार है — "ॐ हुं गं ग्लौं हरिद्रा गणपतये वरद सर्वजन हृदयं स्तंभय स्तंभय स्वाहा।" — यह मन्त्र स्तम्भन-कर्म में विशेष फल दायक है। पूर्वोक्त २६ मन्त्रों की जप-संख्या एक-एक लाख तथा साधन विधि पूर्ववत् है। अन्तिम विशिष्ट-मन्त्र की जप संख्या चार लाख है। इसमें जप के बाद हरिद्रा-चूर्ण (पिसी हुई हल्दी) मिश्रित दशांश चावलों का होम करना चाहिए तथा ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिए। शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को किसी क्वारी कन्या के हाथ से हल्दी पिसवा कर, उसका अपने शरीर पर लेप करें। फिर स्नानोपरान्त गणेश जी का पूजन-तर्पण कर, आठ सहस्र की संख्या में इस मन्त्र का जप करके, बाद में घृत मिश्रित पुष्पों का १०० की संख्या में हवन करें। फिर ब्रह्मचारियों तथा कुमारियों को भोजन करायें तथा उन्हें दक्षिणा

दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करें। इससे शत्रुओं का मुँह बन्द हो जाता है। अग्नि, जल, चोर तथा हिंसक जीवों का भय दूर होता है तथा मनोभिलाषा पूर्ण होती है। वन्ध्या-स्त्री रजःस्नान से निवृत्त होकर सर्वप्रथम गणेशजी का पूजन करे। फिर १ पल हल्दी को गोमूत्र में पीस कर, उसे इस मन्त्र द्वारा एक सहस्र की संख्या में अभिमन्त्रित करे, तदुपरान्त कुमारी कन्याओं तथा ब्रह्मचारियों को लड्डुओं का भोजन करा, पूर्वोक्त विधि से हल्दी द्वारा पूजन करे, साथ ही अभिमन्त्रित हल्दी का पान करे तो उसका वंध्यात्व दूर होकर, गुणवान पुत्र की प्राप्ति होती है। इस मंत्र के जप द्वारा दूसरे के हृदय की बात भी जा सकती है।

लक्ष्मी गणेश मन्त्र - "ॐ श्रीं गं सौम्याय गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वश मानय स्वाहा" — इस मन्त्र का चार लाख की संख्या में जप करके बिल्व की समिधाओं से दशांश होम करना चाहिए। इसमें (१) बलाका, (२) विमला, (३) कमला, (४) वनमालिका, (५) विभीषिका, (६) मालिका (७) शांकरी तथा (८) सुवालिका — इन आठ शक्तियों की अंगपूजा करनी चाहिए। दक्षिण तथा वामपार्श्व में शंख तथा पद्मनिधि की पूजा करके, बाह्यभाग में लोकपाल तथा उनके अस्त्रों की पूजा करनी चाहिए। पूजा की अन्य विधियां पूर्ववत् हैं। नाभिपर्यन्त जल में खड़े होकर, सूर्यमण्डल की ओर दृष्टि गड़ाये हुए इस मन्त्र का तीन लाख की संख्या में जप करने से धन की विशेष वृद्धि होती है। सिद्ध हो जाने पर यह मन्त्र साधक की समस्त कामनाओं को पूर्ण करता है।

त्रैलोक्य मोहन गणेश मन्त्र - "ॐ वक्रतुण्डैकदंष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं गं गणपते वर वरद सर्वजनं मे वश मानय स्वाहा" — इस मन्त्र की जप संख्या चार लाख है तथा पूजा-विधि पूर्वोक्त ही है। पीठों तथा दिक्पालों का उनके अस्त्र सहित पूजन कर, जप का दशांश अष्टद्रव्यों का

होम करना चाहिए। इस मन्त्र को सिद्ध करके तीनों लोकों को मोहित किया जा सकता है।

शक्ति विनायक मन्त्र - "ॐ ह्रीं ग्रीं ह्रीं" — इस मन्त्र का जप चार लाख की संख्या में करना चाहिए। पूजा-विधि पूर्ववत् है। इसके जप से शरीर में शक्ति प्राप्त होती है।

उच्छिष्ट विनायक मन्त्र - "ॐ नमः उच्छिष्ट गणेशाय हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा" — इस मन्त्र का तीन लाख की संख्या में जप करना चाहिए। पूजा-विधि पूर्ववत् है। समस्त कामनाएं पूर्ण होती हैं।

उच्छिष्ट गणेश मन्त्र - उच्छिष्ट गणेश के अनेक मन्त्र हैं। उन्हें निम्नानुसार समझें —

(१) "ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्ट महात्मने आं क्रों ह्रीं गं घे घे स्वाहा" — यह सप्तत्रिंशद्वर्ण मन्त्र है। गणपति की स्थापना कर, इस मन्त्र को कृष्णपक्ष की अष्टमी से प्रतिदिन चार हजार की संख्या में जपें तथा भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी की रात्रि को पूर्ण कर, नीम की समिधा से धतूरे के पुष्प तथा घृत द्वारा हवन करें। इससे इष्ट कार्य सिद्ध होता है।

(२) "ॐ नमः उच्छिष्ट गणेशाय हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा" — यह उन्नीस वर्णों का मन्त्र है। इस की साधन विधि आगे अन्त में लिखे उच्छिष्ट गणपति मन्त्र के अनुसार है।

(३) "ॐ हस्ति मुखाय लम्बोदराय उच्छिष्ट महात्मने आं क्रों ह्रीं क्लीं ह्रीं हूं घें घें उच्छिष्टाय स्वाहा" — इस मन्त्र की साधन-विधि भी अन्त में लिखे गए मंत्र के अनुसार है।

(४) "ॐ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लंबोदराय उच्छिष्ट महात्मने आं क्रों ह्रीं गं घें घें उच्छिष्टाय स्वाहा" — यह चत्वारिंशदक्षर मन्त्र है। साधन-विधि अन्तिम मन्त्र के अनुसार है।

(५) "ॐ नमो हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्ट महात्मने क्रां क्रीं ह्रीं घें घें उच्छिष्टाय

स्वाहा"— इस एकत्रिंशदक्षर मन्त्र की साधन-विधि भी अन्तिम मन्त्र के अनुसार है।

(६) "ऊँ ह्रीं गं हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा"— यह द्वादशाक्षर मन्त्र है।

उक्त मन्त्रों में से किसी का भी नित्य पाँच माला जप करें तथा नित्य भोजन के समय उसी मन्त्र से प्रत्येक ग्रास लें तो समस्त कामनायें पूर्ण होती हैं। पूजा-विधि अन्तिम मन्त्र के अनुसार है।

(७) "ऊँ हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।"

(८) "ऊँ हस्ति पिशाचि लिखे ठः ठः।"

(९) "ऊँ गं हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।"

साधन-विधि- पूर्वोक्त किसी भी मन्त्र के साधन की विधि इस प्रकार है— सर्वप्रथम लाल चन्दन अथवा सफेद आक की जड़ के काष्ठ द्वारा अंगुष्ठ प्रमाण गणेशजी की मूर्ति तय्यार करवा कर, उसका यथाविधि (आगे लिखे अनुसार) पूजन करे, तत्पश्चात् एक लाख की संख्या में मन्त्र का जप करे तो साधक की समस्त मनोकामनायें पूर्ण होती हैं।

'उच्छिष्ट गणेश' की आराधना में तिथि, वार आदि का कोई नियम नहीं है, किसी प्रकार के उपवास की भी आवश्यकता नहीं है। साधक जिस कामना से इस देवता की आराधना करता है, उसकी पूर्ति अवश्य होती है।

सर्वप्रथम सामान्य-विधि के अनुसार प्रातः कृत्यादि से निवृत्त होकर, प्राणायाम पर्यन्त सभी कृत्यों को सम्पन्न कर, नीचे लिखे अनुसार ऋष्यादि न्यास आदि करे। ऋष्यादि न्यास'

की विधि इस प्रकार है — 'शिरसि सुघोर ऋषये नमः। मुखे निवृद् गायत्री छन्दसे नमः। हृदि उच्छिष्ट गणपतये नमः।' इसके बाद 'करङ्गन्यास' करे, यथा — 'ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ अनामिकाभ्यां हुं। ॐ कनिष्ठाभ्यां वौषट्। इसी प्रकार 'हृदयादि न्यास' करे, यथा— ॐ हृदयाय नमः। ॐ शिरसे स्वाहा। ॐ शिखायै वषट्। ॐ कवचाय हुं। ॐ नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ करतल कर पृष्ठाभ्यां फट्।" इस प्रकार न्यास करके ध्यान करे। उच्छिष्ट गणेश के ध्यान का स्वरूप इस प्रकार है—

"रक्तमूर्तिं गणेशं च सर्वाभरण भूषितम्। रक्तवस्त्रं त्रिनेत्रं च रक्त पद्मासने स्थितम्॥
चतुर्भुजं महाकायं द्विदन्तं सस्मिताननम्। इष्टं च दक्षिणे हस्ते दन्तं च त्वदधः करे॥
पाशांकुशौ च हस्ताभ्यां जटामंडल वेष्टितम्। ललाटे चन्द्ररेखाढ्यं सर्वालङ्कार भूषितम्।"

ध्यानोपरान्त मूल-मन्त्र से अर्घ्य स्थापित कर, अर्घ्य के जल से पूजा के उपकरण द्रव्य तथा अपने शरीर पर छींटे देने चाहिए। फिर, दूसरी बार देवता का ध्यान कर, उन्हें अष्टदल पद्म में स्थापित करे। तत्पश्चात् पंचोपचार से देवता की पूजा कर, अष्टदल के पूर्वादि पत्र में क्रमशः इन मन्त्रों द्वारा देवताओं की पूजा करे — "ॐ वक्रतुण्डाय स्वाहा। ॐ एकदन्ताय स्वाहा। ॐ लम्बोदराय स्वाहा। ॐ विकटाय स्वाहा। ॐ विघ्नेशाय स्वाहा। ॐ गजवक्त्राय स्वाहा। ॐ विनायकाय स्वाहा। ॐ गणपतये स्वाहा।" मध्य में— "ॐ हस्तिमुखाय स्वाहा।" इसके बाद तीन बार मूलदेवता की पूजा करके यथाशक्ति मूल मन्त्र का जप करते हुए जप का समर्पण करे। तत्पश्चात् "ॐ उच्छिष्ट गणेशाय महाकालाय एष बलिर्नमः।" — इस मन्त्र से बलि देकर आचमनीय प्रदान करना चाहिए।

मं०
मं० ५२३

भा०
टी०

विशेष फल की इच्छा रखने वाले को "हां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह: फट् स्वाहा' — इस मन्त्र से पुनर्वार बलि प्रदान करनी चाहिए। फिर एक पुष्प दक्षिण दिशा में फेंक कर 'क्षमस्व' कहते हुए विसर्जन करना चाहिए।

इस मन्त्र के पुरश्चरण में सोलह सहस्र की संख्या में मन्त्र का जप करना आवश्यक है। अपनी पत्नी को साथ लेकर कृष्णपक्ष की चतुर्दशी से आरंभ करके शुक्लपक्ष की चतुर्थी तक नित्य एक सहस्र की संख्या में जप करना चाहिए। देवता को प्रतिदिन मधु (शहद) से स्नान करा कर, गुड़-पायस का नैवेद्य प्रदान करना उचित है। भोजनोपरान्त आचमन किए बिना ही उच्छिष्ट-मुख (जूठे मुँह) से मन्त्र का जप करना चाहिए। लाल चन्दन अथवा श्वेत आक की अंगुष्ठ प्रमाण उच्छिष्ट-गणेश की प्रतिमा बना कर, उसमें प्राण प्रतिष्ठापूर्वक ब्राह्मण, अग्नि अथवा गुरु के समीप सोलह सहस्र की संख्या में मन्त्र का जप करने से मन्त्र की सिद्धि होती है। कुछ तन्त्र-ग्रंथों के अनुसार इस देवता की आराधना में पूजा करने की आवश्यकता ही नहीं है, केवल मानसिक-जप ही करना चाहिए। कुछ अन्य तन्त्र-ग्रंथों के अनुसार 'कराङ्गन्यास' करने की आवश्यकता नहीं है तथा "मैं स्वयं ही गणेश स्वरूप हूँ" — इस प्रकार का चिन्तन करते हुए मन्त्र का जप करना चाहिए। इस सम्बन्ध में गर्ग मुनि का कहना है कि निर्जन-वन में बैठ कर, लाल चन्दन से लिप्त ताम्बूल (पान) को चबाते हुए मन्त्र का जप करना चाहिए। एक अन्य तन्त्र ग्रंथ के अनुसार साधक को एक प्रकार के आभूषण पहन कर, मन्त्र का जप करना चाहिए। एक अन्य ग्रंथ के अनुसार इस देवता की पूजा में लड्डू खाते हुए मन्त्र का जप करे। भृगु मुनि के मतानुसार उच्छिष्ट गणपति की आराधना में फल खाते हुए मन्त्र-जप करे तथा विभीषण के अनुसार नैवेद्य का भक्षण करते हुए जप करना चाहिए।

इस मन्त्र का एक लाख की संख्या में जप करके राजा, दोलाख की संख्या में जप करके राजकुल तथा दस लाख की संख्या में जप करके समस्त राज्यकर्मचारियों को वश में किया जा सकता है। इस मन्त्र द्वारा एक करोड़ की संख्या में होम करने से अणिमादिक अष्टसिद्धियां प्राप्त होती हैं। पांच सहस्र की संख्या में जप करने से स्त्री-लाभ होता है। दस सहस्र जपने से राजा को वशीभूत किया जाता है। मूलमन्त्र से अपामार्ग की समिधा द्वारा १०८ बार होम करने से सौभाग्य की प्राप्ति होती है। एक सहस्र की संख्या में जपने से साध्य-व्यक्ति वशीभूत होता है। मूलमंत्र द्वारा अभिमन्त्रित कील जिसके घर में गाड़ दी जाय, उसका उच्चाटन होता है। ऐसी कील को बाज़ार में गाड़ देने से वहाँ का क्रय-विक्रय अवरुद्ध हो जाता है, शराब-विक्रेता के घर में गाड़ने से उसके घर रक्खी हुई शराब बिगड़ जाती है। वेश्या के घर में गाड़ देने से उसे कोई नहीं चाहता तथा किसी क्वारी कन्या के घर में गाड़ देने से उसका विवाह नहीं होता। अभिमन्त्रित कील बन्दर की हड्डी द्वारा निर्मित होनी चाहिए। यदि मनुष्य की हड्डी की कील को इस मंत्र से अभिमन्त्रित कर किसी मनुष्य के घर में गाड़ दी जाय तो उसकी मृत्यु हो जाती है। परन्तु कील को उखाड़ लेने पर दोष की शान्ति हो जाती है। इस मन्त्र को भोजपत्र के ऊपर लालचन्दन से लिख कर, उसे कण्ठ अथवा मस्तक पर धारण करने से सर्वत्र रक्षा तथा सौभाग्य की वृद्धि होती है। सामान्यतः यह मन्त्र साधक की सभी कामनाओं को पूर्ण करता है।

गणेशजी के किसी भी मन्त्र का जप करते समय पवित्रता आवश्यक है तथा पूजन षोडशोपचार पद्धति से करना चाहिए।

श्री राम मन्त्राः- श्रीराम मन्त्रों का जप तथा साधन भुक्ति-मुक्ति प्राप्ति के हेतु किया जाता है। श्रीराम के निम्न लिखित मन्त्र हैं -

(१) "रां", (२) "रां रामाय नमः", (३) "क्लीं रामाय नमः", (४) "ह्रीं रामाय नमः", (५) "ऐं रामाय नमः", (६) "श्रीं रामाय नमः", (७) "ॐ रामाय नमः", (८) "हूं जानकी वल्लभाय स्वाहा", (९) "राम", (१०) "ॐ राम", (११) "श्रीं राम", (१२) "क्लीं राम", (१३) "ऐं राम", (१४) "रां राम", (१५) "श्रीं राम श्रीं", (१६) "श्रीं राम श्रीं हुं फट्", (१७) "श्रीं राम श्रीं नमः", (१८) "ह्रीं राम ह्रीं स्वाहा", (१९) "ह्रीं राम ह्रीं", (२०) "क्लीं राम क्लीं", (२१) "ह्रीं राम ह्रीं हुं फट्", (२२) "ह्रीं राम ह्रीं नमः", (२३) "क्लीं राम क्लीं स्वाहा", (२४) "क्लीं राम क्लीं हुं फट्", (२५) "श्रीं राम श्रीं स्वाहा", (२६) "क्लीं राम क्लीं नमः", (२७) ह्रीं राम", (२८) "रामचन्द्र", (२९) "रामभद्र", (३०) रामाय नमः, "(३१) "तेन ॐ रामाय नमः", (३२) "ॐ रामाय नमः", (३३) "श्रीं ॐ रामाय नमः", (३४) "ऐं ॐ रामाय नमः", (३५)

उक्त सभी मन्त्रों का जप करने से पूर्व बीज मन्त्र द्वारा षडन्यास कर, पीठन्यास आदि करके श्रीरामचन्द्र जी का इस प्रकार ध्यान करे -

"कालाम्भोधर कान्तं च वीरासन समास्थितम् ।
ज्ञानमुद्रां दक्षहस्ते दधतं जानुनीतरम् ॥
सरोरुह करां सीतां विद्युदाभां च पार्श्वगाम् ।
पश्यन्ती रामवक्त्राब्जं विविधाकल्प भूषितम् ॥"

इस प्रकार ध्यान करके मन्त्र का ६ लाख की संख्या में जप करना चाहिए। जप पूरा हो जाने पर प्रज्ज्वलित अग्नि में कमलों द्वारा जप का दशांश हवन करे। फिर ब्राह्मण-भोजन कराये। मूलमन्त्र द्वारा इष्टदेव के यन्त्र का निर्माण कर, उसमें भगवान् का आवाहन तथा प्रतिष्ठा करके विमला-दि शक्तियों से संयुक्त वैष्णव पीठ पर उनकी पूजा करे। (यन्त्र का स्वरूप दाँईं ओर प्रदर्शित है) फिर, 'श्री सीतायै स्वाहा"— इस मन्त्र से श्रीराम के वाम भाग में विराजित सीताजी की पूजा करे। श्रीराम के अग्रभाग में शार्ङ्ग-धनुष की पूजा करके दोनों पार्श्व भागों में बाणों की अर्चना करे। केसरों में ६ अंगों की पूजा कर, दलों में हनुमत् आदि की अर्चना करे। हनुमान्, सुग्रीव, भरत, विभीषण, लक्ष्मण, अङ्गद, शत्रुघ्न तथा जाम्बवान् - इनका क्रमशः पूजन करना चाहिए। श्रीराम के दोनों पार्श्व में भरत तथा शत्रुघ्न चँवर डुला

श्रीराम यन्त्रम्
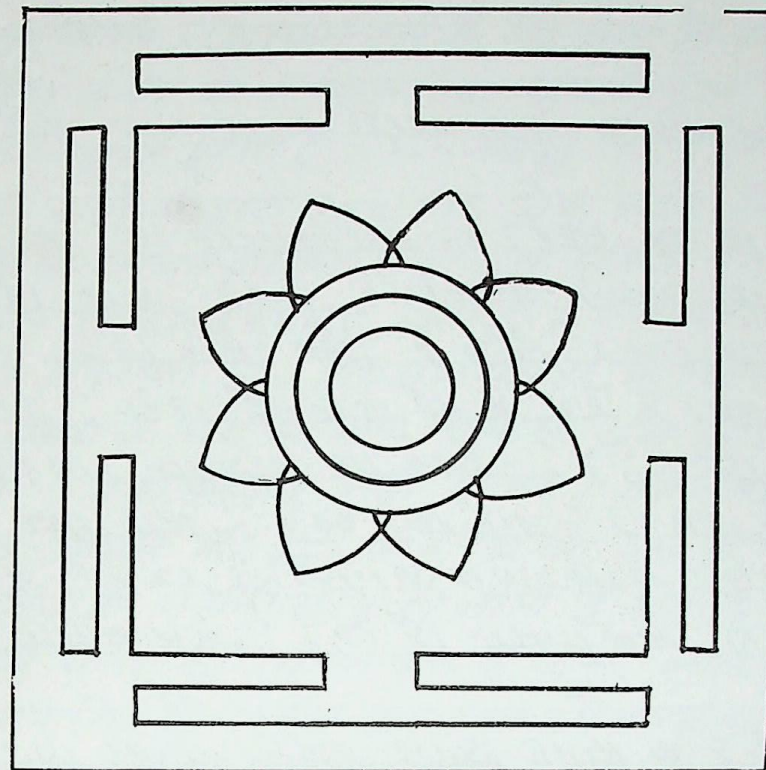
रहे हैं, हनुमान् उनके सम्मुख पुस्तक बाँच रहे हैं तथा लक्ष्मण पीछे खड़े हुए दोनों हाथों से उनके ऊपर छत्र लगाये हैं — इस प्रकार ध्यान पूर्वक सब की पूजा करे। फिर अष्टदलों के अग्रभागमें सृष्टि, जयन्त, विजय, सुराष्ट्र, राष्ट्रपाल, अकोप, धर्मपाल तथा सुमन्त्र की पूजा करके उनके बाह्यभाग में इन्द्र आदि देवताओं की आयुधों सहित पूजा करे। इस प्रकार आराधना करने वाला जीवन्मुक्त होजाता है। घृताक्त शतपत्रों से आहुति देने वाला दीर्घायु तथा नीरोगी होता है। लाल कमलों से हवन करने पर इच्छित धन प्राप्त होता है। पलाश के पुष्पों से हवन करने वाला मेधावी होता है तथा इस मंत्र द्वारा अभिमंत्रित जल को नित्य प्रातः पीने वाला कवि-सम्राट् होता है। इस प्रकार इस मंत्र के अनेक प्रयोग हैं। जप एवं पूजनोपरान्त पंचम खण्ड में लिखे गए स्तोत्रादि का पाठ करना चाहिए।

श्रीकृष्ण मन्त्राः- भगवान् श्रीकृष्ण के प्रमुख मन्त्र इस प्रकार हैं:-

(१) "गोपीजन वल्लभाय स्वाहा", (२) "श्रीं ह्रीं क्लीं गोपीजन वल्लभाय स्वाहा", (३) "ह्रीं श्रीं क्लीं गोपीजन वल्लभाय स्वाहा", (४) क्लीं ह्रीं श्रीं गोपीजन वल्लभाय स्वाहा", (५) "क्लीं कृष्णाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा", (६) "ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजन वल्लभाय स्वाहा", (७) "ॐ क्लीं कृष्णाय ह्रीं गोविन्दाय श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा सौः", (८) ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं गोपीजन वल्लभाय स्वाहा", (९) "ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा", (१०) "क्लीं", (११) "क्लीं हृषीकेशाय नमः", (१२) "श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा", (१३) "श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय"

गोविन्दाय स्वाहा" (१४)" ॐ नमो भगवते रुक्मिणी वल्लभाय स्वाहा", (१५)" ह्रीं श्रीं क्लीं गोपीजन वल्लभाय स्वाहा क्लीं ह्रीं श्रीं", (१६)" ह्रीं श्रीं गोपीजन वल्लभाय स्वाहा", (१७) "ॐ नमः श्री कृष्णाय गोविन्दाय हूं फट् स्वाहा" (१८) " ऐं क्लीं कृष्णाय ह्रीं गोविन्दाय श्रीं गोपीजन वल्लभाय स्वाहा।"

श्रीकृष्ण के बाल स्वरूप का ध्यान करते हुए निम्न लिखित मन्त्रों का जप किया जाता है। इन्हें **'बाल गोपाल मन्त्र'** कहते हैं-

(१)" कृः", (२) "क्लीं कृष्णाय", (३) "कृष्ण", (४) "क्लीं कृष्ण", (५) "कृष्णाय नमः" (६) "क्लीं कृष्णाय नमः", (७) "क्लीं कृष्णाय क्लीं", (८) "गोपालाय स्वाहा," (९) "क्लीं कृष्णाय स्वाहा," (१०) "कृष्णाय गोविन्दाय", (११) "क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय", (१२) "क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय क्लीं", (१३) "दधिभक्षणाय स्वाहा", (१४) "सुप्रसन्नात्मने नमः", (१५) "क्लीं ग्लौं श्याम लाङ्गाय नमः", (१६) "बालवपुषे कृष्णाय स्वाहा", (१७) "श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय क्लीं", (१८) "बालवपुषे क्लीं कृष्णाय स्वाहा", (१९) "गोकुलनाथाय नमः", (२०) "क्लीं कृष्ण क्लीं", (२१) "क्लीं कृष्ण क्लीं नमः" (२२) "ॐ नमो भगवते नन्दपुत्राय आनन्द वपुषे कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजन वल्लभाय स्वाहा।" भगवान् कृष्ण के किशोर स्वरूप का ध्यान करते हुए, निम्न लिखित मन्त्रों का जप किया जाता है, इन्हें **'वासुदेव मन्त्र'** कहते हैं-

(१) "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय", (२) " ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं लक्ष्मी वासुदेवाय नमः।" (३) "लीलादण्ड गोपीजन संसक्तदोर्दण्ड बालरूप मेघश्याम भगवान् विष्णो स्वाहा", (४) "गोकुलनाथाय नमः" (५) ॐ नमो भगवते श्रीगोविन्दाय गोपीजन वल्लभाय श्रीं श्रीं श्रीं, (६) कृष्णाय गोविन्दाय नमः" (७) ॐ नमो भगवते श्रीगोविन्दाय", (८) "क्लीं ग्लौं क्लीं श्यामलाङ्गाय नमः।" (९) ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय स्वाहा"— इन मंत्रों की जपसंख्या ६ लाख है तथा दशांश हवन करना चाहिए।

किसीभी श्रीकृष्ण-मन्त्र का साधन करनेसे पूर्व 'श्रीकृष्णयन्त्र' का निर्माण करना चाहिए (यह यन्त्र दाँई ओर प्रदर्शित है

मन्त्र-जप से पूर्व षोडशोपचार पूजन कर, श्रीकृष्ण के बाल, किशोर अथवा वयस्क स्वरूप (जिस स्वरूप का मन्त्र जपना हो) का ध्यान करना चाहिए।

श्रीकृष्ण मन्त्र जप की संख्या ६ लाख कही गई है। प्रतिदिन नियमित रूप से न्यूनतम एक हजार की संख्या में मन्त्र-जप करना चाहिए तथा जप की समाप्ति पर दशांश हवन तथा ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिए।

भगवान श्री कृष्ण के सभी मन्त्र भुक्ति-मुक्ति दायक हैं। निष्काम-जप करने से साधक जीवन्मुक्त होता है तथा सकाम जप करने से, जो भी मनोभिलाषा हो उसकी पूर्ति होती है। इसमंत्र के जप के लिए विशेष आडम्बर नहीं करना पड़ता।

श्री कृष्ण यन्त्रम्
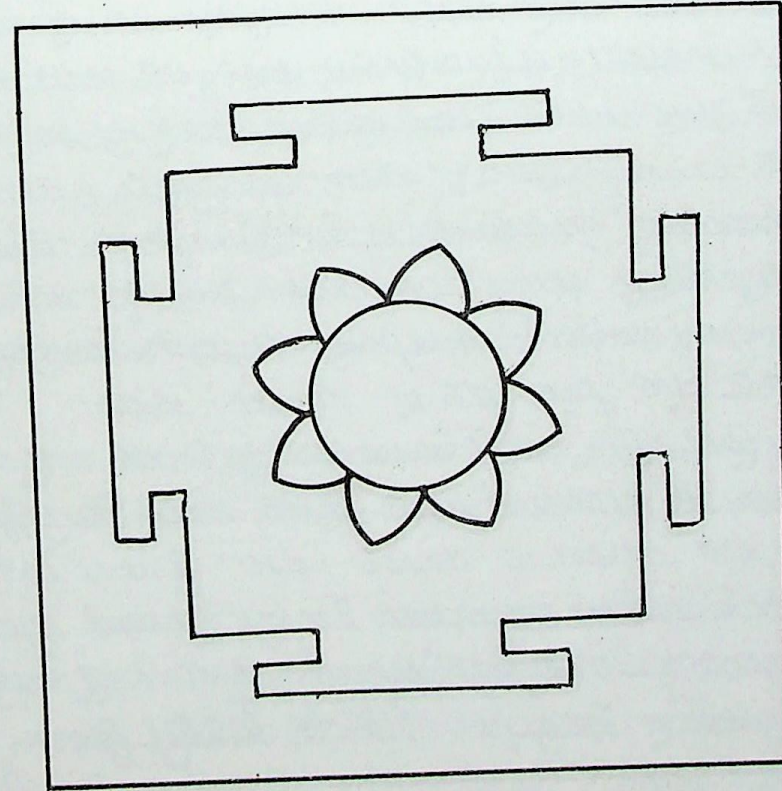
श्री विष्णु यन्त्रम्
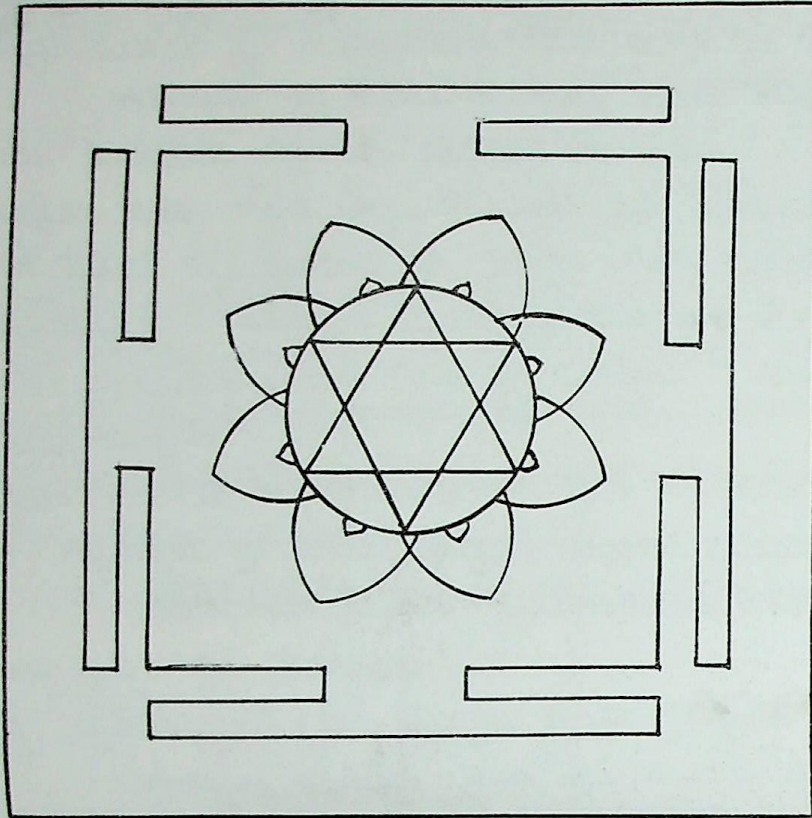
श्री विष्णु मन्त्रः- श्रीविष्णु के मन्त्र भी अनेक हैं। उनकी साधन-विधि आदि का विस्तृत वर्णन हमारी 'विष्णु उपासना' नामक पुस्तक में किया गया है, अतः उसका अध्ययन करें। यहाँ श्रीविष्णु तथा उनके अन्य अवतारों के साधन-मन्त्रों का उल्लेख मात्र किया जा रहा है।

मन्त्र-साधन से पूर्व बाँई ओर प्रदर्शित 'श्री विष्णु यन्त्र' का निर्माण कर, इसका विधिवत् पूजन, ऋष्यादि न्यास, कराङ्गन्यास, केशवकीर्त्यादि न्यास, श्रीबीजादि न्यास, तत्त्वन्यास, अङ्गन्यास, मन्त्र न्यास, मूर्तिपञ्जर न्यास, ध्यान, आवरण-पूजा, नैवेद्य निवेदन, षोडशोपचार पूजन आदि कृत्य करके तब मन्त्र का जप करना चाहिए। मन्त्र-जप पूर्ण हो जाने पर विधिवत् दशांश होम तथा ब्राह्मण-भोजनादि करना आवश्यक है। पूजा के अन्त में पंचम खण्ड में वर्णित स्तोत्रादि का पाठ करना चाहिए। ये मन्त्र साधक की सभी कामनाओं के पूरक हैं।

(१) "ॐ नमो नारायणाय" — श्री विष्णु का यह अष्टाक्षर मन्त्र समस्त सिद्धियों को देने वाला है। इसका पुरश्चरण सोलह लाख की संख्या में जप करने से होता है। जप का दशांश घृत, मधु तथा शर्करायुक्त पद्मपुष्पों द्वारा होम करना चाहिए। "श्री विष्णवे नमः" यह मन्त्र भी शुभकारी कहा गया है।

(२) "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय" — इस मन्त्र के पुरश्चरण में बारह लाख की संख्या में मन्त्र जप तथा घृतयुक्त तिलों द्वारा जप का दशांश हवन करना चाहिए। अन्य विधियां पूर्ववत् हैं।

(३) "गोविन्दाय नमः", (४) "अनन्ताय नमः", (५) "अच्युताय नमः", (६) "अच्युतानन्द गोविन्दाय नमः" — इन मन्त्रों को बिल्व वृक्ष के नीचे, जड़ के समीप बैठकर दस हजार बार जप करके जिस रोगी व्यक्ति का स्पर्श किया जायेगा, वह रोग-मुक्त हो जायेगा। परन्तु पहले इनमें से जिस मन्त्र को भी सिद्ध करना चाहे, उसका एक लाख की संख्या में यथाविधि (पूर्ववत्) जप अवश्य कर लेना चाहिए।

(७) "क्लीं हृषीकेशाय नमः" — इस मन्त्र का एक लाख की संख्या में जप करके, जप का दशांश होम घृत द्वारा करना चाहिए। यदि सम्मोहिनी-कुसुमों से तर्पण किया जाय तो समस्त कामनाओं की पूर्ति होती है। ऐसा कहा गया है।

(८) "श्रीं श्रीधराय त्रैलोक्य मोहनाय नमः" — इस मन्त्र का एक लाख की संख्या में जप तथा जप का दशांश घृत से होम करना चाहिए। पूजा सुगंधित श्वेत पुष्पों से करनी चाहिए।

(९) "ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं लक्ष्मी वासुदेवाय नमः" — यह 'लक्ष्मी-नारायण मन्त्र' चौदह लाख की संख्या में जपना चाहिए। फिर घृत-मधु-शर्करायुक्त विकसित पद्मों से दशांश हवन करे। अन्य बातें पूर्ववत् हैं।

(१०) "ॐ नमः विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा" — यह अष्टादशाक्षर 'दधि वामन मन्त्र' है। इसके पुरश्चरण में तीन लाख की संख्या में जप तथा जप का दशांश होम घृतयुक्त पायसान्न अथवा दध्यन्न द्वारा करना चाहिए।

हयग्रीव साधन मन्त्र - 'हयग्रीव-मन्त्र' भी अनेक हैं, उन्हें नीचे लिखा जा रहा है। इन मन्त्रों के पुरश्चरण में चार लाख की संख्या में जप करके, घृत द्वारा जप का दशांश होम करें।

(१) "ॐ उद्गिरत् प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय।" (२) "ह्सूं"। (३) "ह्सूं हयशिरसे नमः"। (४) ह्सूं ॐ उद्गिरत् प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय स्वाहा ॐ ह्सूं।" (५) "हंसः विश्वोत्तीर्णस्वरूपाय चिन्मयाचिन्त्य रूपिणे तुभ्यं नमो हयग्रीव विद्याराजाय विष्णवे स्वाहा हंसः।" (६) "विश्वोत्तीर्णस्वरूपाय चिन्मयानन्द रूपिणे तुभ्यं नमो हयग्रीव विद्याराजाय विष्णवे।" — ये सभी मन्त्र चतुर्वर्ग का फल देने वाले हैं।

नृसिंह मन्त्र - नृसिंह साधन मन्त्र तथा उनकी जप संख्या निम्नानुसार है -

(१) "उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतो मुखं, नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्।" (२) ह्रीं उग्रवीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखं, नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहं ह्रीं।" — इन दोनों मन्त्रों के पुरश्चरण में बत्तीस लाख जप तथा घृतयुक्त पायस से दशांश होम करना चाहिए।

(३) "ओं ह्रीं क्ष्रौं क्रों हुं फट्" — इस मन्त्र के पुरश्चरण में ६ लाख जप तथा घृत द्वारा दशांश होम करके, अन्त में गुरु को दक्षिणा देकर प्रसन्न करे।

(४) "क्ष्रौं" — इस एकाक्षरी मंत्र का आठ लाख जप तथा घृत से दशांश होम करना चाहिए।

(५) "ॐ नृं नृं नृं नृसिंहाय नमः" — यह 'विघ्न निवारण नृसिंह मन्त्र' है। इस मन्त्र का नित्य १००० की संख्या में जप करने से सब प्रकार के विघ्न दूर होकर धन-धान्य की वृद्धि होती है।

(६) "ॐ नरसिंह हिरण्यकशिपु वक्षःस्थल विदारणाय त्रिभुवन व्यापकाय भूत प्रेत पिशाच डाकिनी कुलोन्मूलनाय स्तंभोद्भवाय समस्त दोषान् हर हर, विसर विसर, पच पच, हन हन, कंपय कंपय, मथ मथ, ह्रीं ह्रीं ह्रीं, फट् फट् ठः ठः ठः, एहि एहि, रुद्राज्ञापति, स्वाहा:) ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रूं ह्रूं फट् स्वाहा" — यह 'बाल-रक्षक तथा गर्भ-रक्षक नृसिंह मन्त्र' है। इस मन्त्र को नवरात्रि में १०८ बार पढ़ कर ही सिद्ध किया जा सकता है। किसी अन्य उपक्रम की आवश्यकता नहीं है। सिद्ध हो जाने पर इस मन्त्र से सरसों को अभिमंत्रित कर, उसे ताली बजा कर जिस जगह रख दिया जाएगा, वहाँ के सब विघ्न दूर हो जाएँगे। गर्भिणी के पास रखने से गर्भ-रक्षा तथा बाल-रक्षा होगी। इससे राजभय भी दूर होता है।

(७) "ॐ जय जय श्री नृसिंह:" — इस मन्त्र को पहले सवा लाख जप कर सिद्ध कर ले। फिर नित्य केवल एक माला जप करने से ही साधक को सर्वत्र विजय तथा सफलता प्राप्त होती है। यह 'जयप्रद नृसिंह मन्त्र' है।

(८) "ॐ क्ष्रौं नमो भगवते नरसिंहाय, ॐ क्ष्रौं मत्स्यरूपाय, ॐ क्ष्रौं कूर्मरूपाय, ॐ क्ष्रौं वराहरूपाय, ॐ क्ष्रौं नृसिंहरूपाय, ॐ क्ष्रौं वामनरूपाय, ॐ क्ष्रौं ॐ क्ष्रौं ॐ क्ष्रौं रामाय ॐ क्ष्रौं कृष्णाय, ॐ क्ष्रौं कल्किने जय जय शालग्राम निवासिने दिव्यसिंहाय स्वयंभुवे पुरुषाय नमः ॐ क्ष्रौं" — इस मन्त्र को इक्कीस हजार की संख्या में जपने से गृह-कलह दूर होती है तथा अभय की प्राप्ति होती है। यह 'अभयप्रद नृसिंह मन्त्र' है।

वराह मन्त्र - वराह मन्त्र-साधन में सामान्य पूजा, पीठन्यासादि विष्णु-मन्त्र के विधान से ही करें। हमारी पुस्तक 'विष्णु उपासना' में इस मन्त्र की तथा पूर्वोक्त सभी विष्णु मन्त्रों की न्यास, पूजा आदि की विधि का विस्तृत वर्णन है, अतः उसका अध्ययन करें। वराह मन्त्र निम्न लिखित है—

"ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवः स्वः पतये भूपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा।"—
इस मन्त्र के पुरश्चरण में एक लाख की संख्या में मन्त्र-जप तथा घृत-मधु-शर्करा युक्त कमलों से जप का दशांश हवन करना चाहिए। यह मन्त्र भी सभी कामनाओं का पूरक है।

हरि हर मन्त्र - श्रीविष्णु तथा श्री शिव का संयुक्त मन्त्र इस प्रकार है—

"ॐ ह्रीं हौं शङ्करनारायणाय नमः। हौं ह्रीं ॐ।"— इस मन्त्र की जप संख्या ६ लाख है तथा जप का दशांश घृत द्वारा हवन करना चाहिए।

टिप्पणी- 'वैशम्पायन संहिता' के अनुसार विष्णु-मन्त्रों का जप दिन में ही करना चाहिए, रात्रि में नहीं। श्रीविष्णु तथा उनके अवतारों के सभी मन्त्र भुक्ति-मुक्ति एवं चतुर्वर्ग फल दायक हैं।

विष्णु गायत्री- विष्णु के विभिन्न अवतारों के गायत्री मन्त्र निम्न लिखित हैं। इन मन्त्रों का १०८ अथवा ११० बार जप करने से महापापी भी पापमुक्त हो जाता है। मतान्तर से - इन गायत्री मंत्रों के जप के बाद तर्पण भी करना चाहिए। इस हेतु सूर्यमण्डलस्थ देवता को उद्दिष्ट करके, गायत्री का पाठ करते हुए तीन बार अर्घ्य प्रदान करना चाहिए, तदुपरान्त यथाशक्ति गायत्री-मन्त्र का जप करके आचमन, प्राणायाम तथा ध्यान करके जलाञ्जलि पूर्वक इष्ट देवता के निमित्त तर्पण करना चाहिए तथा प्रातः, मध्याह्न एवं सायंकाल में इष्टदेव का अलग-अलग रूपों में ध्यान करना चाहिए।

विष्णु गायत्री - "ॐ त्रैलोक्य मोहनाय विद्महे कामदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।"
नारायण गायत्री - "ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।"
नृसिंह गायत्री - "ॐ वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्णदंष्ट्राय धीमहि तन्नो नृसिंहः प्रचोदयात्।"
हयग्रीव गायत्री - "ॐ वागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि तन्नो हंसः प्रचोदयात्।"
गोपाल गायत्री - "ॐ कृष्णाय विद्महे दामोदराय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।"
राम गायत्री - "ॐ दाशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्।"

श्री शिव मन्त्र:— श्री शिव तथा उनके विविध स्वरूपों एवं अवतारों के मन्त्र निम्नानुसार हैं। इन मन्त्रों का जप करने से पूर्व 'शिव यन्त्र' (जिसे अगले पृष्ठ पर दाँई ओर प्रकाशित किया गया है) का निर्माण कर, उसका यथाविधि पूजन, न्यास आदि करें (विस्तृत विधि की जानकारी के लिए हमारी 'शिव उपासना' नामक पुस्तक का अध्ययन करें। तदुपरान्त मन्त्र-जप, होम आदि तथा पंचमखण्ड में उल्लिखित स्तोत्रादि का पाठ करें। शिवजी के मुख्य मन्त्र यह हैं—

(१) "ह्रौं" — यह एकाक्षर मन्त्र है। जप संख्या १२ लाख है तथा दशांश होम करें।

(२) "ॐ नमः शिवाय" — यह षडक्षर मन्त्र है तथा (३) "नमः शिवाय" — यह पंचाक्षरी मंत्र है। इन दोनों मन्त्रों की जप-संख्या ६ लाख है। यथाशक्ति नित्य जप करते रहने से भी यह दोनों मंत्र साधक की समस्त कामनाओं को पूर्ण करते हैं; परन्तु एक बार में १०८ से कम की संख्या में जप नहीं करना चाहिए। ये दोनों शिव के सर्वोपरि मन्त्र माने गये हैं।

(४) "ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं", (५) "ॐ ह्रीं ह्रौं नमः शिवाय" — इन दोनों मन्त्रों की जपसंख्या भी ६ लाख है।

महामृत्युंजय मन्त्र – "त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्" — इस मृतसंजीवनी मन्त्र न्यूनतम सवा लाख है। इससे जितनी अधिक संख्या में जप किया जाए, उतना ही अधिक फलप्रद है। जप संख्या का दशांश हवन करे, उसमें बिल्व फल, तिल, खीर, पीली सरसों, दूध, दही, दूर्वा; बरगद, पलास तथा खैर की लकड़ी - इन्हें मधु में डुबो-डुबो कर क्रमशः हवन करना चाहिए। इस के पुरश्चरण एवं जपादि के विस्तृत विधान की जानकारी के लिए हमारी 'शिवउपासना' पुस्तक का अध्ययन करें।

मृत्युञ्जयमन्त्र - मृत्युंजय मन्त्र निम्नलिखित हैं। इन सबकी जप-संख्या ६ लाख है।

(१) "ॐ जूं सः", (२) "ॐ जूं सः पालय पालय सः जूं ॐ", (३) "ॐ नमो भगवते दक्षिणामूर्तये

श्रीशिव यन्त्रम्
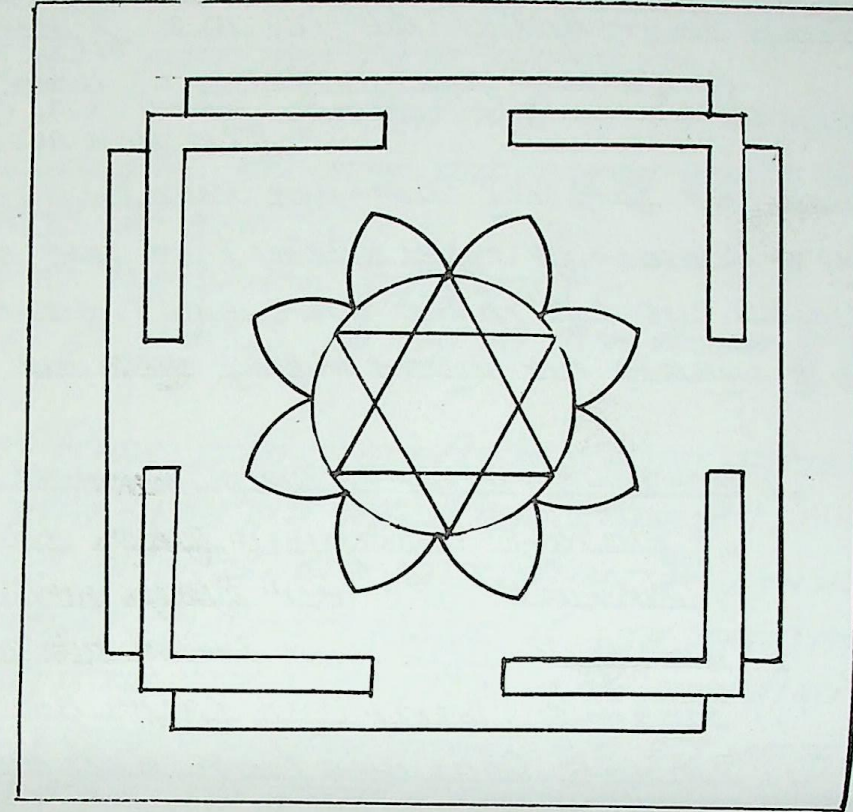
मलं मेधां प्रयच्छ स्वाहा"; (४) "रक्षमवच ॐ उं"।

नीलकण्ठ मन्त्र - भगवान् नीलकण्ठ शिव के मन्त्र निम्न लिखित हैं। साधन-विधि तथा जप-संख्यादि के विषय में पूर्ववत् समझें।

(१) "प्रों नृं ठः", (२) "नमः शिवाय", (३) "ॐ नमः शिवाय", (४) "ॐ नमो नील कण्ठाय।

चण्डोग्र शूलपाणि मन्त्र - (१) "अघीशो वह्नि शिखरो नान्तस्थो दन्त ईरितः। फडन्त प्रचण्ड मन्त्रो ऽयं त्रिवर्णात्मा समीरितः ऊर्ध्व फट्।" (२) "ॐ ह्रीं हूं शिवाय फट्।"

क्षेत्रपाल मन्त्र - (१) "क्षौं क्षेत्रपालाय नमः", (२) "ॐ क्षौं क्षेत्रपालाय नमः" (३) ॐ क्षां क्षीं क्षुं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्रपालाय नमः" — इन मन्त्रों की जपसंख्या १२५०० है। फिर नित्य एक माला का जप करते रहें।

भैरव मन्त्र:- श्रीभैरव के अनेक स्वरूप हैं — बटुक भैरव, महाकाल भैरव, चण्ड भैरव, स्वर्णाकर्षण भैरव आदि। इनमें श्री बटुक भैरव की उपासना ही अधिक प्रचलित है। भैरव उपासना की विस्तृत जानकारी के लिए हमारी 'भैरव उपासना' नामक पुस्तक का अध्ययन करना चाहिए। यहाँ भैरवोपासना के मन्त्र तथा उनकी जपसंख्या मात्र का ही उल्लेख किया जा रहा है। भैरव पूजन यन्त्र पंचम खण्ड में दिया गया है, उसे वहाँ देखलें। अगले पृष्ठ पर 'स्वर्णाकर्षण भैरव यन्त्र' प्रदर्शित किया गया है। भैरव के पूजन एवं जप के बाद पंचम खण्ड में उल्लिखित स्तोत्रादि का पाठ करना चाहिए।

(१) "ह्रीं बटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं"; (२) "ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं" — इन दोनों में से किसी भी एक मन्त्र द्वारा उपासना करें। एक मंत्र प्रणव-रहित

तथा दूसरा प्रणव-सहित है। इस मन्त्र के पुरश्चरण में हविष्याशी तथा जितेन्द्रिय होकर इक्कीस लाख की संख्या में जप करना चाहिए तथा जप का दशांश घृत. मधु. शर्करा मिश्रित तिल से होम करना चाहिए।

पूर्वोक्त मन्त्र के ही दो थोड़े परिवर्तितरूप इसप्रकार उपलब्ध होते हैं-

(१) "ॐ ह्रीं बटुकाय कष्टदुद्धारणं कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं स्वाहा", (२) ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणं कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं "। - इन मन्त्रों की जपसंख्यादि पूर्व मन्त्रो की भाँतिही है।

"ॐ नमो भैरवाय स्वाहा" - यह नवाक्षर मन्त्र चालीस हजार की संख्या में जपकर, गोधूम का दशांश हवन करें। इस प्रकार अठारह दिनतक जप तथा हवन करते रहने से भैरव प्रसन्न होकर मनोकामनाओं की पूर्ति करते हैं।

श्रीभैरव शिवजी के ही प्रतिरूप अथवा अवतार माने गये हैं।

स्वर्णाकर्षण भैरव यन्त्रम्
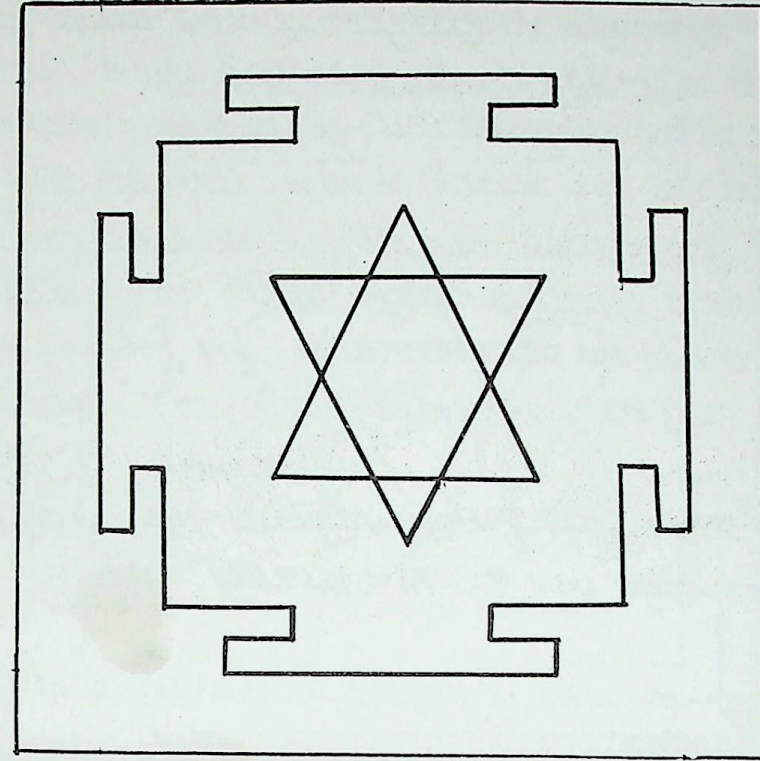
श्री बटुक भैरव का एक अन्य मन्त्र इस प्रकार है— " ॐ अं क्लीं वीं रं घुं घ्रीं ह्रीं बटुक भैरवाय नमः स्वाहा "— यह मन्त्र ६ लाख की संख्या में जपना चाहिए । अन्य विधियाँ पूर्ववत् हैं । यह समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण करता है ।

महाकाल भैरव मन्त्र — " ॐ हं षं नं गं कं सं खं महाकाल भैरवाय नमः "— इस मन्त्र का इक्कीस हजार की संख्या में जप करने से अरिष्ट निवारण होता है । ६ लाख की संख्या में मन्त्र जपने से पुरश्चरण होता है । जप का दशांश हवन करना चाहिए ।

कालाग्नि रुद्र मन्त्र - " ॐ श्रीं ह्रीं ऐं क्लीं ह्रौं सौं क्रौं क्रीं क्रौं क्लीं क्रौं क्लीं क्रौं क्रीं क्रीं क्रीं ॐ भूर्भुवः स्वः श्री कालाग्नि रुद्राय नमः "— इस मन्त्र को नवरात्रि के दिनों में नित्य एक हजार की संख्या में जपते रहने से सब प्रकार के अरिष्ट दूर होते हैं तथा रोगी व्यक्ति को स्वास्थ्य लाभ होता है। इस मन्त्र के लिए किसी प्रकार का पुरश्चरण अथवा विशेष पूजन आदि करने की आवश्यकता भी नहीं है। केवल नवरात्रि के नौ दिनों तक जप करना ही पर्याप्त है।

इन्द्र मन्त्रः- " ईं इन्द्राय नमः " — यह देवराज इन्द्र का मन्त्र है। यह मन्त्र ६ लाख की संख्या में जपने से सिद्ध होता है । इस मन्त्र के पुरश्चरण में किसी विशेष पूजन, हवन आदि की आवश्यकता नहीं होती । इस मन्त्र का नित्य एक हजार की संख्या में जप करना आवश्यक है। इस मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर देवराज इन्द्र साधक पर प्रसन्न होकर उसकी विविध प्रकार की भौतिक आकांक्षाओं की पूर्ति करते हैं । अनावृष्टि के समय इसके प्रयोग से वर्षा भी होती है।

हनुमत मन्त्राः- हनुमान् जी को भी शिवजी का ही अवतार माना जाता है। हनुमत मन्त्र जप की विस्तृत जानकारी के लिए हमारी 'हनुमत उपासना' पुस्तक का अध्ययन करें। यहाँ हनुमान् जी के मन्त्र तथा उनकी जप-संख्या का उल्लेख किया जा रहा है। अगले पृष्ठ पर श्री हनुमान् जी के पूजन का यन्त्र दिया गया है। उसका निर्माण कर यथा विधि पूजन करना चाहिए। हनुमत-उपासना के मुख्य मन्त्र निम्न लिखित हैं। मंत्र-जप के बाद पंचम खंड में उल्लिखित स्तोत्रादि का पाठ करना चाहिए।

(१) "ॐ वज्रकाय वज्रतुण्ड कपिल पिङ्गल ऊर्ध्वकेश महाबल रक्तमुख तडिज्जिह्व महारौद्र दंष्ट्रोत्कट कहहकरालिने महादृढ प्रहारिन् लंकेश्वरवधाय महासेतुबंध महाशैलप्रवाह गगनचर एह्येहि भगवन्महाबलपराक्रम भैरवाज्ञापय एह्येहि महारौद्र दीर्घपुच्छेन वेष्टय वैरिणं भंजय भंजय हुं फट्" इस मन्त्र का ५१ बार हनुमान् जी के सम्मुख बैठकर जप करें। फिर इस मन्त्र को भोजपत्र पर लिख कर अपने पास रक्खें तो साधक के सभी कार्य सिद्ध होते हैं। इसे **'हनुमन्माला मंत्र'** कहा जाता है।

(२) "ॐ यो यो हनुमंत फल फलित धगधगित आयुराषः परुडाह" — यह मन्त्र ११०० की संख्या में जपने पर सिद्ध हो जाता है। सिद्ध हो जाने पर इसे ११ बार पढ़ कर फूंक मारने से उदर-रोग दूर होते हैं।

(३) "ॐ ऐं ह्रीं हनुमते रामदूताय लंका विध्वंसनायांजनीगर्भ संभूताय शाकिनी डाकिनी विध्वंसनाय किलि किलि बुबुकारेण विभीषणाय हनुमद्देवाय ॐ ह्रीं श्रीं ह्रौं ह्रां फट् स्वाहा" — इस मन्त्र का नित्य १०८ बार, ६ मास तक जप करने से सिद्धि मिलती है तथा सभी शोक-भय दूर होकर मनोभिलाषाओं की पूर्ति होती है।

(४) "ॐ ऐं श्रीं ह्रीं ह्रीं हुं ह्रैं ह्रौं ह्रः स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्त्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं ॐ नमो हनुमते

प्रकट पराक्रम आक्रांत दिङ्मंडल यशोवितान धवलीकृत जगत्त्रितय वज्रदेह ज्वलदग्नि सूर्यकोटिसमप्रभ तनुरुह रुद्रावतार लंकापुरीदहनोदधिलंघन दशग्रीव शिरःकृतांतक सीताश्वासन वायुसुतांजनागर्भसंभूत श्रीराम लक्ष्मणानंदकर कपिसैन्य प्राकार सुग्रीव सख्य कारण बालि निर्वहण कारण द्रोणपर्वतोत्पाटनाशोकवन विदारण अक्षकुमारकच्छेदन वनरक्षाकरसमूहविभंजन ब्रह्मास्त्र-ब्रह्मशक्ति ग्रसन लक्ष्मण शक्तिभेद निवारण विशल्यौषधि समानयन बालोदित भानुमण्डल ग्रसन् मेघनादहोम विध्वंसन् इन्द्रजिद्वधकारण सीतारक्षक राक्षसीसंघविहारण कुंभकर्णादिवधपरायण श्रीरामभक्तितत्पर समुद्रव्योमद्रुमलंघन महासामर्थ्य महातेजपुंजः विराजमान स्वामीवचन संपादितार्जुन संयुग सहाय कुमार ब्रह्मचारिन् गंभीर शब्दोदय दक्षिणाशामार्तंड मेरुपर्वत पीठिकार्चन सकल मंत्रागमाचार्य मम सर्वग्रहविनाशन सर्वज्वरोच्चाटन सर्वविषविनाशन सर्वापत्ति निवारण सर्वशत्रुच्छेदन मम परस्य च त्रिभुवन पुंस्त्रीनपुंसकात्मक सर्वजीवजातं वशय वशय ममाज्ञाकारकं संपादय संपादय नाना नामधेयान्सर्वान् राज्ञः सपरिवारान् मम सेवकान् कुरु कुरु सर्वशस्त्रास्त्रविषाणि विध्वंसय विध्वंसय ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रां ह्रां ह्रां एह्येहि ह्सौं ह्स्ख्फ्रें ह्स्रौं ख्फ्रें ह्स्फ्रें ह सर्वशत्रून् हन हन परदलानि परसैन्यानि क्षोभय क्षोभय मम सर्वकार्यजातं साधय साधय सर्वदुष्टदुर्जनमुखानि कीलय कीलय घे घे घे हा हा हा हुं हुं हुं फट् फट् फट् स्वाहा" — यह श्रीहनुमत्मालामन्त्र है। यह मन्त्र १०००८ बार जपने से सिद्ध होता है। सिद्ध हो जाने पर, इस मन्त्र का श्रीहनुमानजी की मूर्ति के सम्मुख १०८ बार जप करने से साधक की सभी मनोभिलाषाऐं पूर्ण होती हैं तथा हर प्रकार का भय दूर होता है। यह माला-मन्त्र अत्यन्त प्रभावकारी माना जाता है।

(५) " ॐ ह्रौं हस्फ्रें ख्फ्रें हस्त्रौं हस्ख्फ्रें हसौं हनुमते नमः" — इस मन्त्र का दस हजार की संख्या में जप करके केले तथा आम के फलों का हवन कर ब्रह्मचारियों को भोजन करायें । इससे सभी कार्य सिद्ध होते हैं ।

(६) " ॐ नमो हनुमंताय आवेशय आवेशय स्वाहा" — पवित्र होकर, लालरंग के आसन पर बैठकर, लालचंदन से हनुमानजी की प्रतिमा बनाकर, उसमें प्राण प्रतिष्ठा कर, पंचोपचार से पूजन करे तथा सिन्दूर चढ़ा कर, गुड़के चूरमे का नैवेद्य लगाये। नैवेद्य को आठ प्रहर तक मूर्ति के सामने रखवा रहने दे। जब दूसरे दिन नैवेद्य लगाये, तब पहले दिन के नैवेद्य को उठा कर किसी पात्र में इकट्ठा करता चले। अनुष्ठान के पूरा होजाने पर उसे किसी गरीब ब्राह्मण को दे दे अथवा पृथ्वी में गाड़ दे। फिर घृत का दीपक जला कर, निर्जन स्थान में रात के समय ११०० की संख्या में

श्री हनुमत यन्त्रम्
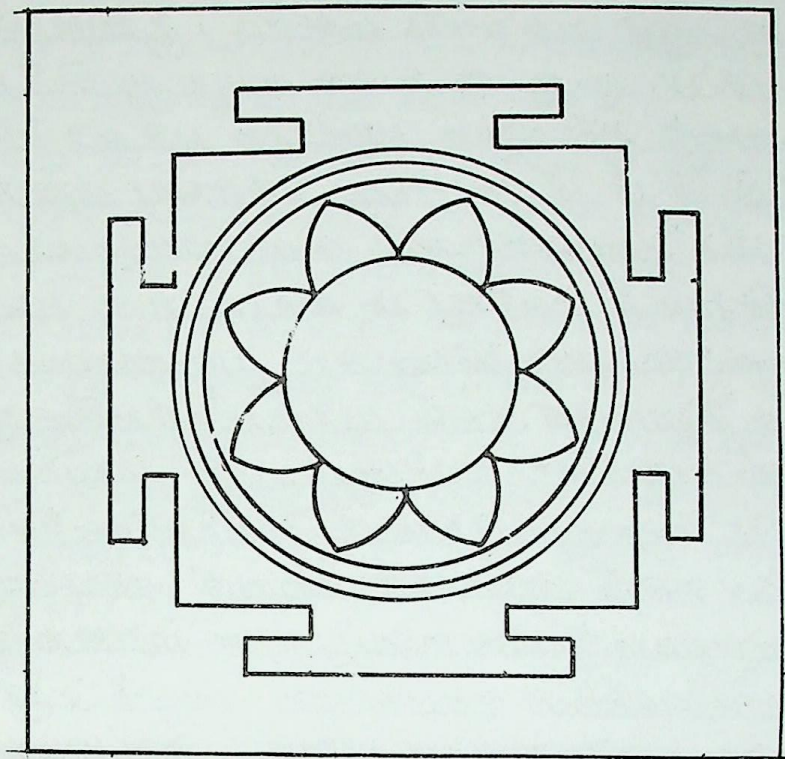
मन्त्र का जप करे तथा किसी से बोले नहीं। उसी पूजा-स्थान पर, लाल रंग के वस्त्र के ऊपर सो जाय। ११ दिनों तक नित्य यही नियम बनाये रखने से श्रीहनुमान् जी रात्रि के समय ब्रह्मचारी के स्वरूप में साधक को स्वप्न में दर्शन देते हैं तथा उसके प्रश्न का यथोचित उत्तर देकर, उसे अभिलषित वार्ता बताते हैं तथा मनोकामना पूर्ण करते हैं।

(७) "हौं हस्फ्रें हस्ख्फ्रें हस्त्रौं हस्ख्फ्रें हसौं हनुमते नमः।"

(८) "हस्फ्रें हस्ख्फ्रें हस्रौं हस्ख्फ्रें हसौं।"

(९) "ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं हस्फ्रें हस्ख्फ्रें हस्रौं हस्ख्फ्रें हसौं।"

(१०) "ॐ नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा।"

(११) "हं हनुमते रुद्रात्मकाय हुं फट्।"

(१२) "हं पवननन्दनाय स्वाहा।"

(१३) "ॐ नमो भगवते आञ्जनेयाय अमुकस्य श्रृंखलां त्रोटय-त्रोटय बन्धमोक्षं कुरु कुरु स्वाहा।"

(१४) "हरि मर्कट मर्कट वामकरे परिमुञ्चति मुञ्चति श्रृङ्खलिकाम्।"

(१५) "ॐ दक्षिणमुखाय पञ्चमुख हनुमते करालवदनाय नारसिंहाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः सकल भूत प्रेत दमनाय स्वाहा।"

(१६) "ॐ पश्चिम मुखाय गरुडासनाय पञ्चमुखे मं मं मं मं मं सकल विघ्नहराय स्वाहा।"

(१७) "ॐ पूर्व कपि मुखाय पञ्चमुख हनुमते टं टं टं टं टं सकलशत्रु संहारणाय स्वाहा।"

(१८) "ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः, ॐ नमो भगवते महाबल पराक्रमाय भूत प्रेत

पिशाच ब्रह्मराक्षस शाकिनी डाकिनी यक्षिणी पूतना मारी महामारी राक्षस भैरव बेताल ग्रह राक्षसादिकान् क्षणेन हन हन भञ्जय भञ्जय मारय मारय शिक्षय शिक्षय महामाहेश्वर रुद्रावतार ॐ हूं फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते हनुमदाख्याय रुद्राय सर्वदुष्टजनमुखस्तंभनं कुरु कुरु स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ठं ठं ठं फट् स्वाहा।"

उक्त सभी मन्त्र श्रीहनुमान्‌जी के हैं तथा अत्यधिक फलदायक हैं। ये मन्त्र दस हजार की संख्या में जपने से सिद्ध होते हैं। मन्त्र जप के बाद अष्टगंध से हवन करना चाहिए। मन्त्र संख्या १७ का जप पन्द्रह हजार की संख्या में करना चाहिए। संख्या १८ का सात हजार जप करें।

इनमें मन्त्र संख्या १३ तथा १४ बन्धन-मुक्ति के लिए हैं। मन्त्र संख्या १३ में जहाँ 'अमुकस्य' शब्द आया है, वहाँ जिस व्यक्ति को बन्धन-मुक्त कराना हो, उसके नाम का उच्चारण करना चाहिए।

संख्या १५ का मन्त्र प्रेत-बाधा दूर करने के लिए अद्भुत है। संख्या १६ का मन्त्र विष उतारने के लिए श्रेष्ठ है। इसे सिद्ध करने के लिए दीपावली की रात्रि में घृत का दीपक जलाकर हनुमान्‌जी को साक्षी करके, दस हजार की संख्या में जप करना चाहिए। इससे मंत्र सिद्ध हो जायेगा। बाद में बर्र, बिच्छू आदि विषैले जानवरों के दंशित-स्थान का स्पर्श करके इस मन्त्र का उच्चस्वर में २१ बार पाठ करने से विष उतर जाता है। संख्या १७ का मन्त्र शत्रु-भय-नाशक है। संख्या १८ का मंत्र मंगलवार को दिन भर व्रत रखकर, अर्द्धरात्रि के समय हनुमान्‌जी के मंदिर में जाकर ७००० की संख्या में जप करने से सिद्ध होता है। मन्त्र जप पूर्ण हो जाने पर हनुमान जी के समक्ष दशांश हवन करना चाहिए

(९६) "ॐ ह्रीं पवननन्दनाय स्वाहा" — यह श्री हनुमानजी का विशिष्ट-मन्त्र है। सूर्योदय से पूर्व उठ कर नदी-तट पर जाकर, पहले नदी में स्नान करे, फिर खड़े होकर इस मन्त्र को पढ़े — "ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती। नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु" — इस मन्त्रोच्चारण के बाद अंकुश-मुद्रा से तीर्थों का जल में आवाहन करके ८ बार मूल-मन्त्र का पाठ करे, फिर १२ बार अपने सिर पर जल से मार्जन करे। फिर वस्त्र बदल कर, गंगा-तट पर अथवा पर्वत पर बैठ कर प्रथम इस विधि से अङ्गन्यास करे — "ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः, ह्रूं शिखायै वषट्, ह्रैं कवचाय हुम्, ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्रः अस्त्राय फट्" — तत्पश्चात् मूल-मन्त्र का ६ हजार की संख्या में जप करे। इस प्रकार ६ दिनों तक नियमित रूप से मन्त्र-जप करते रह कर, सातवें दिन सूर्योदय से सूर्यास्त तक मन्त्र-जप करे। ऐसा करने पर रात्रि के समय श्री हनुमानजी अपना भयानक स्वरूप में प्रकट होंगे, परन्तु उससे भयभीत नहीं होना चाहिए। यदि साधक भयभीत न हो तो श्री हनुमान् पुनः सौम्यरूप धारण कर, उसे इच्छित वर प्रदान करते हैं।

घण्टाकर्ण मन्त्रः- "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं क्रौं ॐ घण्टाकर्ण महावीर लक्ष्मी पूरय पूरय सुख सौभाग्यं कुरु कुरु स्वाहा" - यह घण्टाकर्ण का मन्त्र है। इसका धनतेरस के दिन ४० माला, रूप चतुर्दशी के दिन ४२ माला तथा दीपावली की रात्रि में तेतालीस माला जप करना चाहिए। जिस वर्ष की दीपावली के अवसर पर इस मन्त्र का साधन किया जाएगा, वह वर्ष साधक के लिए धन-प्राप्ति की दृष्टि से अत्युत्तम रहेगा। जप के समय श्वेत वस्त्र, श्वेत ऊनी आसन तथा लाल रंग की माला का प्रयोग करना चाहिए।

सूर्य मन्त्राः श्री सूर्यदेव के मन्त्रों का उल्लेख नीचे किया जा रहा है। इनके पूजन का यन्त्र तथा स्तोत्रादि पंचम खण्ड में दिए गए हैं। सविधि पूजन करने के बाद इन मन्त्रों का यथोचित परिमाण में जप करना चाहिए तथा अन्त में स्तोत्रादि का पाठ करना चाहिए।

(१) "ॐ नमो नारायणाय"— इस मन्त्र का जप एक लाख साठ हजार की संख्या में करना चाहिए। शुभ दिन तथा शुभ योग में मन्त्र-जप आरंभ करना चाहिए। यह मन्त्र अत्यन्त प्रभावशाली है तथा साधक की समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण करता है।

(२) "ओं नमः सूर्याय एक-चक्र रथारूढाय, सप्ताश्व वाहनाय, चक्र हस्ताय, ओं क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः कलश हस्ताय आदित्याय नमः"— यह मन्त्र १६,००० जप करने से सिद्ध होता है। यह आँखों के रोगों को दूर करता है।

(३) "ॐ घृणिः सूर्य आदित्यः", (४) "ह्रीं सः", (५) "ह्रें हवव ओं उं ह्रें", (६) "हंसः"— ये सभी मन्त्र ६ लाख की संख्या में जपने चाहिए। ये रोग-नाशक, दृष्टि शक्ति वर्द्धक तथा शक्तिप्रद हैं।

सुग्रीव मन्त्र- "ॐ ह्रीं ऐं क्लीं सौं सुग्रीवदेवाय क्रौं ठः क्रूं ठः ह्रीं ठः स्वाहा"— इस मन्त्र का ५ हजार की संख्या में जप करना चाहिए। आवश्यकता के समय १०८ बार जपने से कामना सिद्ध होती है।

वेदव्यास मन्त्र- "ॐ व्यां वेदव्यासाय नमः"— इस मन्त्र का ६ मास तक नित्य एक हजार की संख्या में जप करते रहने से वक्तृत्व-शक्ति एवं पुराणादि-वाचन में सफलता प्राप्त होती है।

कार्तवीर्यार्जुन मन्त्राः कार्तवीर्य अर्जुन के निम्नलिखित मन्त्र खोई हुई वस्तु को प्राप्त कराने, आकर्षण तथा अभीष्ट-सिद्धि में फलदायक हैं। मन्त्र आगे लिखे अनुसार हैं:-

(१) "ॐ ड्रौं फ्रीं क्लीं भ्रों जो श्रीं क्रौं ऐं ह्रौं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनाय स्वाहा।" (२) "ॐ फ्रों ब्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रौं श्रीं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनाय नमः।"

उक्त दोनों मंत्रों की जप संख्या एक-एक लाख है। इनके सिद्ध हो जाने पर खोई हुई वस्तु प्राप्त हो जाती है तथा अभीष्ट-सिद्धि होती है।

(३) "ॐ नमो भगवते श्री कार्तवीर्यार्जुनाय सर्वदुष्टांतकाय तपोबल पराक्रम परिपालित सप्तद्वीपाय सर्वराजन्य-चूडामणये महाशक्तिमते सहस्रबाहवे हुं फट्"— इस मन्त्र को १० हजार की संख्या में जपें।

(४) "ॐ क्रां क्रां क्रां ह्रां ह्रां ह्रां ह्रैं ह्रैं स्वाहा"— इस मन्त्र का एक हजार की संख्या में जप करें।

उक्त दोनों मन्त्रों के साधन से वस्तु अथवा मनुष्य का आकर्षण होता है। जब तक कार्य सिद्ध न हो, तब तक इनमें से किसी भी एक मंत्र का नित्य १ हजार की संख्या में जप करते रहना चाहिए।

कार्तवीर्य अर्जुन के ध्यान का मन्त्र इस प्रकार है-

"सहस्रभुज मण्डलीजित तमीचरेणाधिपं, हिमांशु सहस्राननं धृत सहस्रतूणीकरम्।
सिताम्बरधरं सदा तुरगराजमध्य स्थितं, स्मरामि भुवनाधिपं हृदि तु कार्तवीर्यार्जुनम्।।"

नारायणास्त्र मन्त्रः- 'नारायणास्त्र मन्त्र' के जप से शरीर-रक्षा होती है तथा ज्वरादि की पीड़ा दूर होती है। इस मन्त्र का जप करने से पूर्व १०८ की संख्या में 'नारायण गायत्री' का जप करना चाहिए तत्पश्चात् १०८ की संख्या में नारायणास्त्र मन्त्र का जप करना चाहिए। जब तक लाभ न हो, तब तक नित्य इस मन्त्र का इसी संख्या में जप करते रहना चाहिए।

नारायण गायत्री- "ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।"

नारायणास्त्र मन्त्र - " हरिः ऊँ नमो भगवते श्रीनारायणाय नमो नारायणाय विश्वमूर्तये नमः श्रीपुरुषोत्तमाय दुष्ट दृष्टि प्रत्यक्षं वा परोक्षं अजीर्ण पंच विशूचिकां हन हन एकाहिकं द्वयाहिकं त्र्याहिकं चातुर्थिकं ज्वरं नाशय नाशय शोषय शोषय आकर्षय आकर्षय शत्रून् मारय मारय उच्चाटयोच्चाटय विद्वेषय विद्वेषय स्तंभय स्तंभय निवारय निवारय विघ्नैर्हनिहन दह दह मथ मथ विध्वंसय विध्वंसय चक्रं गृहीत्वा शीघ्रमागच्छागच्छ चक्रेण हत्वा परविद्यां छेदय छेदय भेदय भेदय चतुः शीतानि विस्फोटय विस्फोटय अर्श वातशूल दृष्टि सर्प सिंह व्याघ्र द्विपद चतुष्पद पद-बाह्यान्दिवि भुव्यन्तरिक्षे अन्ये ऽपि केचित् तान्द्वेषकान्सर्वान् हन हन विद्युन्मेघनदी पर्वताटवी सर्व स्थान रात्रि दिवसपथ चौरान् वशं कुरु कुरु हरिः ऊँ नमो भगवते ह्रीं हुं फट् स्वाहा ठः ठं ठं ठः नमः

- इस मन्त्र का प्रयोग दीपक तथा अगरबत्ती के साथ करना चाहिए।

आत्मोन्नति कारक मृत्युञ्जय मन्त्रः- मृत्युञ्जय तथा महामृत्युञ्जय मन्त्रों का उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। यहाँ आत्मोन्नति कारक मृत्युञ्जय मन्त्र का उल्लेख किया जा रहा है, जिस का नित्य 1000 की संख्या में जप करते रहने से अरिष्ट एवं रोगादि की निवृत्ति होती है, शरीर स्वस्थ बना रहता है तथा आत्मोन्नति के साधनों में वृद्धि होती है। मन्त्र इस प्रकार है—

"ऊँ जूं सः हंसः मां पालय पालय सोऽहं सः जूं ऊँ "।

भय नाशन नृसिंह मन्त्रः- नृसिंह मन्त्रों का उल्लेख पहले किया जा चुका है, यहाँ एक भय-नाशक नृसिंह मन्त्र लिखा जा रहा है, जिसका 11 हजार की संख्या में जप करने से भूत-प्रेतादि का भय दूर हो कर साधक की मनोकामना पूर्ण होती है। मन्त्र आगे लिखे अनुसार है—

"ॐ नमो भगवते नृसिंहाय नमस्ते नमस्ते जस्ते जस्ते आविश: विश्व वज्रनख वज्रदंष्ट्र कर्माशया बन्धाय बन्धाय नमो ग्रस ग्रस स्वाहा अभय निभूयिष्ठा ॐ क्षौं।"

श्रीलक्ष्मीनृसिंह मन्त्र:- निम्न लिखित मन्त्र का सवालाख की संख्या में जप करने से धन-लाभ होता है। मन्त्र-साधन के हेतु जप के अतिरिक्त और कुछ करना आवश्यक नहीं कहा गया है।

"ॐ ह्रीं क्षौं श्रीं श्रीं लक्ष्मी नृसिंहाय नम:।"

गरुड़ मन्त्र:- निम्न लिखित गरुड़ मन्त्रों को नवरात्रि में १००० की संख्या में जपकर सिद्ध कर लेना चाहिए। तदुपरान्त जब किसी का विष उतारना हो तब इस मन्त्र को १०८ बार जपना चाहिए। इस मन्त्र के प्रभाव से विष-दंश का विष उतर जाता है। मन्त्र इस प्रकार है--

(१) "ॐ क्षिप्र ॐ कृशानु भार्या स्वाहा।"

(२) "ॐ गरुड़ प्रभंजय प्रभंजय प्रभेदय प्रभेदय वित्रासय वित्रासय विमर्दय विमर्दय स्वाहा हुं उग्ररूप धर सर्वविषहर भीषय भीषय सर्व दह दह भस्मी कुरु कुरु स्वाहा।"

कुमार मन्त्र:- "ॐ ह्रीं कुमाराय नम: स्वाहा"— इस मन्त्र का यदि कोई कुमारी कन्या १० हजार की संख्या में जप करे तो उसे शीघ्र ही वर की प्राप्ति होती है।

गन्धर्वराज मन्त्र:- इस मन्त्र का प्रयोग वर अथवा वधू प्राप्ति के लिए किया जाता है। यह अचूक मन्त्र है। इस मन्त्र का १० हजार की संख्या में जप करके गुग्गुल, बिल्वपत्र तथा घृत से दशांश हवन, उसका दशांश तर्पण, उसका दशांश मार्जन तथा ब्राह्मण भोजन कराना चाहिए। हवन में चावल, दूध, शक्कर तथा घृत का भी प्रयोग किया जा सकता है। पूजन में लाल पुष्प तथा लाल चंदन का प्रयोग करना चाहिए।

सर्वप्रथम– "ॐ अस्य श्रीगंधर्वराजमन्त्रस्य कामदेव ऋषिः विराट् छन्दः कन्या आदः श्रीगंधर्वराज देवता क्लीं बीजं स्वाहा शक्तिः अभिलषित कन्याप्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः"– यह कहकर निम्नानुसार अङ्गन्यास करें–

"ॐ क्लीं विश्वावसु नाम गंधर्व हृदयाय नमः। ॐ क्लीं कन्यानामधिपतिः शिरसे स्वाहा। ॐ क्लीं लभामि देवदत्ता शिखायै वषट्। ॐ क्लीं कन्यां सुरूपां कवचाय हुं। ॐ क्लीं सालङ्कारां नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ क्लीं तस्मै विश्वावसवे स्वाहा अस्त्राय फट्।"

इसके बाद निम्नानुसार अङ्गुल्यादि न्यास करें–

"ॐ क्लीं विश्वावसु नाम गंधर्वः अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्लीं कन्यानामधिपतिः तर्जनीभ्यां नमः। ॐ क्लीं लभामि देवदत्तां मध्यमाभ्यां नमः। ॐ क्लीं कन्यां सुरूपां अनामिकाभ्यां नमः। ॐ क्लीं सालंकारां कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ क्लीं विश्वावसवे स्वाहा करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।"

ध्यान का मन्त्र इस प्रकार है–

"कल्पवृक्ष समासीनं उद्यदादित्यसन्निभम्। अंकस्थकन्या गंधर्वं विश्वावसु प्रभुं स्मरेत्॥"

मूल मन्त्र इस प्रकार है–

"ॐ क्लीं विश्वावसु नाम गंधर्वः कन्यानामधिपतिः लभामि देवदत्तां कन्यां सुरूपां सालंकारां तस्मै विश्वावसवे स्वाहा।"

॥इति देव मन्त्राः॥– देवताओं के मुख्य मन्त्रों का वर्णन करने के बाद अब देवी सम्बन्धी मन्त्रों को लिखा जाता है।

देवी मन्त्र: - विभिन्न देवियों के विविध मन्त्रों का ही यहाँ उल्लेख किया जा रहा है। जिन मन्त्रों की कोई विशेष साधन-विधि है, उसका वर्णन उस मन्त्र के साथ ही कर दिया गया है । इसी प्रकार जिनकी जप-संख्या निश्चित है, उसका भी साथ ही उल्लेख कर दिया गया है । सभी मन्त्रों के साधन के लिए प्रथम खण्ड में वर्णित नियमों का पालन करना चाहिए। कुछ देवी-मन्त्रों के साथ पूजन-यन्त्र भी दिए गए हैं । सामान्यत: एक वर्ग की देवियों के पूजन-यन्त्र भी एक जैसे ही होते हैं । देवी-देवताओं के पूजन के अनेक यन्त्र पंचम खण्ड में दिए गये हैं, अत: उन्हें वहाँ देख लेना चाहिए। पूजन एवं जप के बाद पंचम खण्ड में उल्लिखित स्तोत्र-कवचादि का पाठ भी करना चाहिए ।

लक्ष्मी मन्त्र:- लक्ष्मी धन-सम्पत्ति तथा ऐश्वर्य की अधिष्ठातृ-देवी हैं । धन-लाभ एवं दारिद्र्य-नाश के लिए ही प्राय: इनके मन्त्रादि का जप किया जाता है, परन्तु निष्काम भाव से जप करने पर ये भुक्ति-मुक्ति को भी देती हैं । साथ ही, साधक की समस्त मनोभिलाषाओं की पूर्ति करती हैं । इनके पूजन का यन्त्र अगले पृष्ठ पर प्रदर्शित है । इनकी उपासना सम्बन्धी विविध मन्त्र निम्नानुसार हैं:--

लक्ष्मी गायत्री- किसी भी लक्ष्मी-मन्त्र का साधन करने से पूर्व 'लक्ष्मी गायत्री' का १००० की संख्या में जप करना आवश्यक है। लक्ष्मी-गायत्री मन्त्र इस प्रकार है -

"ॐ महालक्ष्म्यै च विद्महे महाश्रियै च धीमहि तन्नो श्री: प्रचोदयात् ।।"

'ज्येष्ठा लक्ष्मी गायत्री' इस प्रकार है - "ॐ रक्त ज्येष्ठायै च विद्महे नील ज्येष्ठायै च धीमहि तन्नो लक्ष्मी: प्रचोदयात् ।"

श्री लक्ष्मी-पूजन यन्त्रम्
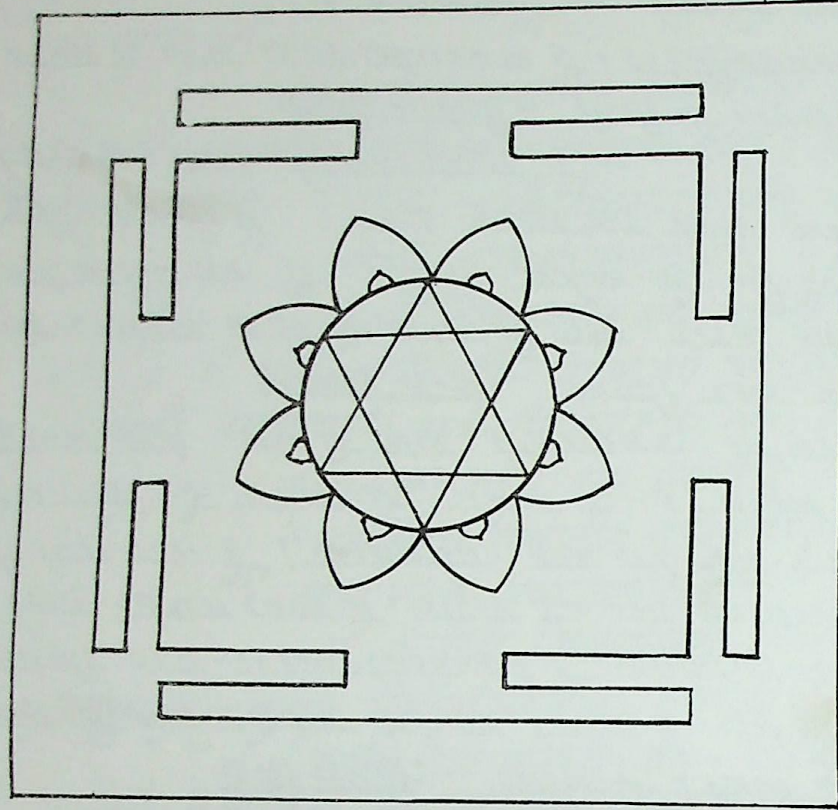
श्रीसूक्त का मन्त्र - धन-प्राप्ति के लिए श्रीसूक्त की निम्नलिखित ऋचा का वर्णित विधि से साधन करने से दारिद्रय दूर होकर धन का लाभ होता है-

ऋचा-

"श्रीं ह्रीं क्लीं हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजां।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥"

विधि- श्रीलक्ष्मी की स्वर्ण-मूर्ति बनवा कर, उसका हल्दी तथा स्वर्ण एवं चाँदी के कमलों से पूजन करें। फिर सधवा स्त्री तथा गाय का पूजन कर, पूर्णमासी के चन्द्र में अथवा पानी से भरे हुए कुंभ में श्रीपरा नारायणी का ध्यान कर, सोने की माला से, कमलपुष्प के आसन पर बैठ कर, पूर्वोक्त ऋचा में बीजत्रय (ऐं ह्रीं श्रीं) जोड़ कर, प्रातः, मध्याह्न तथा सांय काल में दस-दस माला अर्थात् 1000 से कुछ अधिक (1020) जप करे। इस प्रकार एक लाख पच्चीस हजार मन्त्र जपकर मधु तथा कमलपुष्प से दशांश होम करे। फिर तर्पण, मार्जन तथा ब्राह्मण

-ण भोजन विधिपूर्वक करें। जप से पूर्व सङ्कल्प करें तथा करन्यास, हृदयादि न्यास तथा ध्यान करें। यथा— 'करन्यास'— "ॐ नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै हिरण्यवर्णायै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै हरिण्यै तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै सुवर्णरजतस्रजायै मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै चन्द्रायै अनामिकाभ्यां हुम्। ॐ नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै हिरण्मयै कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ नमो भगवत्यै महालक्ष्म्यै लक्ष्म्यै करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।" इसी प्रकार 'हृदयादि न्यास' करना चाहिए। ध्यान निम्नानुसार करें—

"विष्णुधाम समप्रभां हिमगिरि प्रख्यैश्चतुर्भिर्गजैः। शुण्डादण्ड समुद्धृतामृतघटै रासिच्यमानां रमां।
बिभ्राणां करपङ्कजैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकम्। आस्वद्ग्लन समुज्ज्वलां कुचनतां ध्यायेज्जगत्स्वामिनीम्।

पहला सवा लाख जप, होमादि पूरा हो जाने पर, दूसरे सवा लाख का प्रयोग आरंभ करदें। इस प्रकार यह सम्पूर्ण प्रयोग ३.२ लाख मन्त्र-जप का है। इसके पहले प्रयोग से ही लाभ प्रकट होने लगेंगे।

(२) "ॐ ऐं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै कमलधारिण्यै गरुड़वाहिन्यै श्रीं ह्रीं ऐं स्वाहा।"— इस मन्त्र का नित्य १०८ बार जप करें। शुक्रवार को व्रत रक्खें। लक्ष्मी यन्त्र का पूजन करें। चाँदी अथवा काँसे की थाली में सवा पाव चावल श्वेत वस्त्र बिछाकर रक्खें तथा उस पर एक गरी गोला पानी से धोकर रख दें। उस गरी गोले के ऊपर श्वेत चन्दन से 'श्रीं' बीज लिख कर, गोले का पंचोपचार से पूजन कर, श्वेत पुष्प चढ़ायें तथा श्वेत पदार्थ एवं ऋतुफल का भोग लगायें। नमक न खायें। 'महालक्ष्मी स्तोत्र' (पञ्चम खण्ड में वर्णित) का नित्य ६ अथवा ८ बार पाठ करें। शुक्लपक्ष में शुभ चन्द्रमा, श्रेष्ठ मुहूर्त में शुक्रवार को पुष्य, हस्त, अश्विनी, रेवती, आर्द्रा आदि शुभ नक्षत्र में

श्री गुरु से आज्ञा लेकर प्रयोग प्रारंभ करें। लक्ष्मी की चतुर्भुजी मूर्ति का तथा यन्त्र में विधिपूर्वक मन्त्र से पूजन करें। सर्वप्रथम 'श्रीसूक्त', 'लक्ष्मी सूक्त' के तीन पाठ करें। इससे भाग्य शुद्धि होगी। जब तक पाठ करें, तब तक घृत का दीपक अवश्य जलता रहे। श्वेत वस्त्र धारण कर, श्वेत आसन पर बैठ कर, श्वेत रेशम की माला अथवा कमलया तुलसी की माला से जप करें। अन्त में पूजन की समस्त सामग्री तथा चावल आदि वस्त्र सहित, किसी शुभ मुहूर्त में ब्राह्मण को दान करदें। इस विधि से निरन्तर एक वर्ष तक पूजा-जप करते रहने से मनोवांछित धन का लाभ होता है।

(३) "ॐ नमो धनदायै स्वाहा"— इस मन्त्र का १ लाख की संख्या में जप करने से धनलाभ होता है।

(४) "ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ज्येष्ठालक्ष्मी स्वयंभुवे ह्रीं ज्येष्ठायै नमः"— यह मन्त्र सवा लाख जपने से सिद्ध होता है। यह ज्येष्ठालक्ष्मी का मन्त्र है। इससे पूर्व 'ज्येष्ठा लक्ष्मी गायत्री' का जप करना चाहिए।

(५) "ॐ ऐं क्लीं सौं ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नमो भगवति मातंगीश्वरि सर्वजनमनोहारिणि सर्व राजवशंकरि सर्वमुख रञ्जिनी सर्व स्त्री पुरुष वशंकारि सर्वदुष्ट मृग वशंकारि सर्वलोक वशंकारि ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं ॐ"— यह 'सिद्ध लक्ष्मी मन्त्र है'। यह १० हजार जप करने से सिद्ध होता है।

(६) "ॐ श्रीं ह्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं ॐ महालक्ष्म्यै नमः"— इस मन्त्र को कार्तिक मास में सवा लाख जप कर सिद्ध करना चाहिए। यह 'महालक्ष्मी मन्त्र' है।

(७) "ॐ श्रीं ह्रीं जयलक्ष्मी प्रियाय नित्य प्रमुदित चेतसे लक्ष्मी श्रितार्धदेहाय श्रीं ह्रीं नमः" — यह मन्त्र सवा लाख जपने से सिद्ध होता है। यह 'लक्ष्मीनृसिंह मन्त्र' है।

(८) "ॐ ह्रीं श्रीं लक्ष्मीं महालक्ष्मी सर्वकाम प्रदे सर्व सौभाग्यदायिनि अभिमतं प्रयच्छ

सर्व सर्वगते सुरूपे सर्व दुर्जय विमोचिनी ह्रीं सः स्वाहा"- यह लक्ष्मी मन्त्र है। जपसंख्या सवालाख है।

(९) "श्रीं"— यह भगवती लक्ष्मी का एकाक्षरी मन्त्र है। जप संख्या सवालाख है।

(१०) "ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं"— इस मन्त्र की जपसंख्या भी सवालाख है।

(११) "नमः कमल वासिन्यै स्वाहा"— इसकी जप संख्या भी सवा लाख है।

उक्त तीनों शास्त्रीय मन्त्र भगवती लक्ष्मी के हैं। नीचे भगवती महालक्ष्मी के दो शास्त्रीय मन्त्र और दिए जा रहे हैं। इन दोनों की जप संख्या भी सवा-सवा लाख है। सभी धनदायक हैं।

(१२) "ऐं ह्रीं क्लीं ह्सौः जगत्प्रसूत्यै नमः।

(१३) "ॐ ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः।

कालीमन्त्र:- 'मार्कण्डेय पुराण' की दुर्गा सप्तशती में जिन महाकाली का वर्णन है और- जिनका जन्म भगवती अम्बिका के ललाट से हुआ है, वे 'काली' अथवा 'महाकाली' दुर्गा की त्रिमूर्तियों में से एक हैं तथा 'आद्या महाविद्या काली' से सर्वथा भिन्न हैं। पौराणिक काली तमोगुण की स्वामिनी हैं, जबकि भगवती दक्षिण काली जगद्धात्री आदि शक्ति स्वरूपा हैं। काली-उपासकों को यह अन्तर ध्यान में रखना चाहिए। दश महाविद्याओं में 'काली' सर्वप्रधान हैं। इन्हें 'आद्या', 'महाविद्या' भी कहा जाता है। श्मशान काली, भद्रकाली, सिद्धि काली, कामकलाकाली, हंस काली, गुह्यकाली आदि इन्हीं भगवती के भेद हैं। इनमें 'दक्षिणा काली' अथवा 'दक्षिण कालिका' का स्थान मुख्य है। इस संबंध में विस्तृत जानकारी के लिए हमारी 'काली उपासना' पुस्तक का अध्ययन करना चाहिए।

यहाँ हम काली के विभिन्न स्वरूपों से संबंधित विभिन्न मन्त्रों का उल्लेख मात्र कर रहे हैं। पुरश्चरण आदि की विस्तृत विधि जानने के लिए 'काली उपासना' पुस्तक का अध्ययन करें। 'काली पूजन' तथा 'महाकाली पूजन' यन्त्रों को क्रमशः इसी तथा अगले पृष्ठ पर प्रदर्शित किया गया है।

दक्षिण कालिका (श्यामा) मन्त्राः

(१) "क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

(२) "क्रीं"।

(३) "क्रीं क्रीं क्रीं"।

(४) "ॐ ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं।"

(५) "ॐ ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

(६) "ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं।"

काली पूजन यन्त्रम्

महाकाली पूजन यन्त्रम्

(७) "क्रीं क्रीं हूँ।"

(८) "ॐ ह्रीं क्रीं मे स्वाहा।"

(९) "क्रीं हूं ह्रीं।"

(१०) "क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा।"

(११) "क्रीं क्रीं क्रीं फट् स्वाहा।"

(१२) "क्रीं क्रीं क्रीं हूं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।"

(१३) "ऐं नमः क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।"

(१४) "क्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा।"

(१५) "क्रीं हूं ह्रीं दक्षिणे कालिके फट्।"

(१६) "क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

(१७) "क्रीं स्वाहा।"

(१८) "क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

(१९) "क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।"

(२०) "क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।"

(२१) "क्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा।"

(२२) "क्रीं हूं ह्रीं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।"

(२३) " क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।" (२४) " क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हुं हुं स्वाहा।" (२५) "नमः ऐं क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।" (२६) "नमः ओं आं क्रों क्रों फट् स्वाहा कालिके हूं।"

गुह्य काली मन्त्राः- भगवती 'गुह्य काली' के मन्त्र निम्न लिखित हैं:-

(१) " क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।" (२) " क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं हुं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हुं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।" (३) " क्रों हुं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।" (४) " क्रीं हूं ह्रीं गुह्ये कालिके हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।" (५) " क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके स्वाहा।" (६) " क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे स्वाहा।" (७ हुं हुं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।" (८) "क्रीं गुह्यकालिके क्रीं स्वाहा।" (९) "क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं स्वाहा।"

भद्रकाली मन्त्राः- भगवती 'भद्रकाली' के मन्त्र निम्न लिखित हैं:-

(१) क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं भद्रकाल्यै क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।" (२) "महाकालि किलि किलि फट् स्वाहा।"

श्मशान काली मन्त्राः- भगवती 'श्मशान काली' के मन्त्र निम्न लिखित हैं:-

(१) " क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं श्मशान कालि क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।" (२) " ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं कालिके क्लीं श्रीं ह्रीं ऐं।" (३) "क्लीं कालिकायै नमः।"

महाकाली मन्त्राः- भगवती 'महाकाली' के मन्त्र निम्न लिखित हैं:-

(१) " क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं महाकालि क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।" (२) " फ्रें फ्रें क्रों क्रों पशून् गृहाण हुं फट् स्वाहा।"

तारा मन्त्राः – भगवती तारा के मन्त्र निम्नलिखित हैं। तारा पूजन यन्त्र दाँई ओर प्रदर्शित है।

(१) "ह्रीं स्त्रीं हूँ फट्", (२) "ॐ ह्रीं स्त्रीं हूँ फट् स्वाहा।" (३) श्रीं ह्रीं स्त्रीं हूँ फट्", (४) "ह्रीं स्त्रीं श्रीं हूँ फट्", (५) "ऐं ह्रीं स्त्रीं हूँ फट्", (६) "रवं हूं ह्रौं ॐ ऐं श्रीं ह्रीं," (७) "ॐ ह्रीं हां हूं नमस्ताराये सकल दुस्तरं तारय तारय ॐ ॐ स्वाहा।"

तारिणी मन्त्राः – "ह्रीं स्त्रीं हूं फट्।"

उग्रतारा मन्त्र – "ह्रीं स्त्रीं फट्"। **महोग्रा तारा मन्त्र** – हूं स्त्रीं ह्रीं फट्। **नीला**- "ह्रीं स्त्रीं फट् हूं।" **सरस्वती**- "स्त्रीं ह्रीं फट् हूं।" **कामेश्वरी**- "ह्रीं हूं स्त्रीं फट्।" **भद्रकाली** - "स्त्रीं हूं ह्रीं फट्।" **वज्रा**- हूं ह्रीं स्त्रीं। **नीला-तारा**- "ह्रीं स्त्रीं हूं"। **कामेश्वरी**- "ह्रीं स्त्रीं हूं।" **सरस्वती**- 'स्त्रीं ह्रीं हूं।" **भद्रकाली** - "स्त्रीं हूं ह्रीं।" **अन्य**- 'ह्रीं हूं स्त्रीं।"

(१) "ॐ तारे तारे तत्तारे स्वाहा', (२) "ऐं ह्रीं ॐ फट् स्वाहा", (३) "ॐ पद्मे पद्मे महापद्मे पद्मावती मायेस्वाहा।"
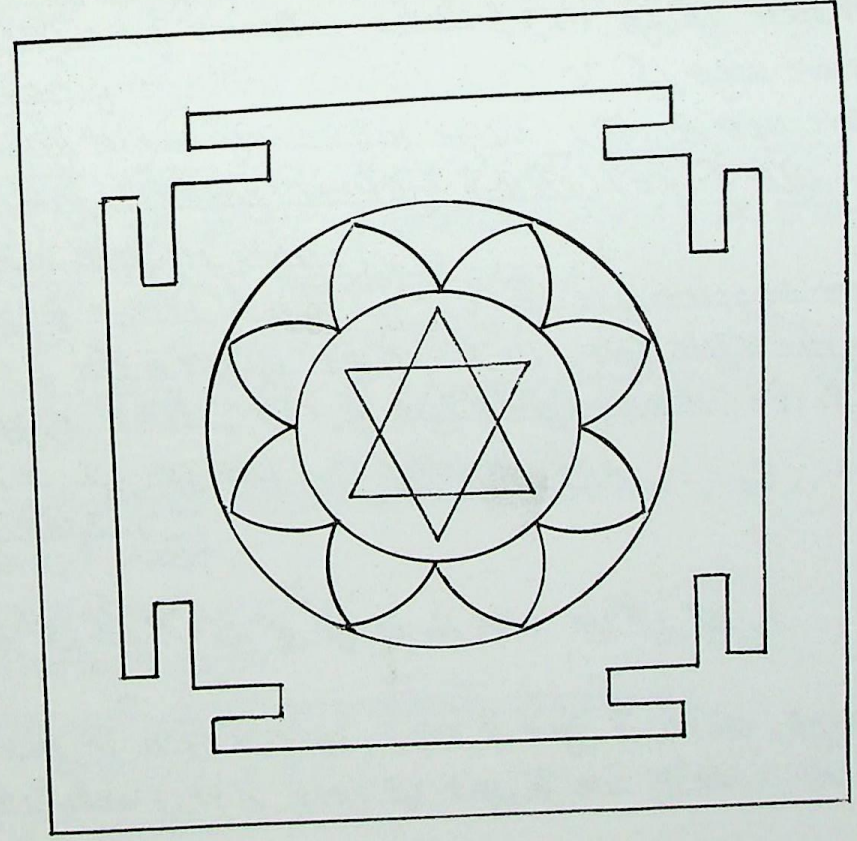
(४) "हंसः ॐ ह्रीं स्त्रीं हुं हंसः।" (५) "हंसः ह्रीं स्त्रीं हुं फट् हंसः।" (६) "हंसः हां स्त्रीं हुं फट् हंसः।" (७) ह्रीं ह्रीं स्त्रीं हुं"। (८) "ह्रीं ह्रीं स्त्रीं हुं फट्"। (९) "ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् स्वाहा।" (१०) "हूं स्त्रीं हूं"। (११) "क्रीं क्लीं कृष्णदेवि ह्रीं क्रीं ऐं।"

भुवनेश्वरी मन्त्राः - (१) "ह्रीं"। (२) "ऐं ह्रीं श्रीं"। (३) "ऐं ह्रीं ऐं"। (४) "आं ह्रीं क्रों"।

दुर्गा मन्त्रः - "ॐ ह्रीं दुर्गायै नमः।"

जयदुर्गा मन्त्रः - "ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि स्वाहा।"

त्रिपुरा मन्त्राः - (१) "श्रीं ह्रीं क्लीं", (२) "ह्रीं श्रीं क्लीं", (३) "क्लीं श्रीं ह्रीं।"

महिष मर्दिनी मन्त्राः - (१) "महिष मर्दिनि स्वाहा", (२) "ॐ महिषमर्दिनि स्वाहा," (३) "ह्रीं महिष मर्दिनि स्वाहा." (४) "स्त्रीं महिष मर्दिनि स्वाहा" (५) "हुं महिष मर्दिनि स्वाहा." (६) "क्लीं महिष मर्दिनि स्वाहा"; (७) "ऐं महिष मर्दिनि स्वाहा," (८) "ॐ महिष मर्दिनि स्वाहा ह्रीं"; (९) "ॐ ह्रीं महिषमर्दिनि स्वाहा." (१०) "क्लीं ॐ महिष मर्दिनि स्वाहा." (११) "ॐ क्लीं महिष मर्दिनि स्वाहा।"

अन्नपूर्णा मन्त्राः - (१) "ह्रीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा." (२) "ॐ नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा." (३) "श्रीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा. (४) "ऐं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा." (५) "क्लीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा।" (६) "ॐ ह्रीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा"; (७) "ह्रीं श्रीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा"; (८) "श्रीं ह्रीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा। (९) "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा।"

त्वरिता मन्त्रः - "ॐ ह्रीं हुं खेच छे क्ष स्त्रीं हूं क्षे ह्रीं फट्।"

नित्या मन्त्रः - "ऐं क्लीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा।"

वज्रप्रस्तारिणीमन्त्र - "ऐं ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा।"

शूलिनी मन्त्रः - "ज्वल ज्वल शूलिनि दुष्ट ग्रह हुं फट् स्वाहा।"

सरस्वती मन्त्राः - (१) "वद वद वाग्वादिनि स्वाहा।" (२) ह्रीं वद वद वाग्वादिनि स्वाहा।" (३) "ऐं नमो भगवति वद वद वाग्देवि स्वाहा।" (४) "ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः।" (५) ऐं रूं स्वों

पारिजात सरस्वती मन्त्रः - "ॐ ह्रीं हसौः ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः।"

सम्पत्प्रदासरस्वती मन्त्र :- "ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः।।"

भैरवी मन्त्राः- (१) "ऐं क्लीं सौः"। (२) "ऐं क्रूँ ओं", (३) सैं हसकलरीं हौं सः," (४) सहैं सहकलरीं सहरौं।"

भैरवी मन्त्रों की दीपनी - "वरदवरद वाग्वादिनि क्लिन्ने क्लेदिनि महामोक्षं हेसौः।"

त्रिपुरा भैरवी मन्त्रः- "हसैं हसलकरीं हसरौं।"

कौलेश भैरवी मन्त्रः - "हसैं हसकलरीं सहरौं।"

सकलसिद्धिदा भैरवीमन्त्रः - "सहैं सहकलरीं सहौं।"

कामेश्वरी भैरवी मन्त्रः - "सहैं सकलह्रीं सहरौं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे।।"

सम्पत्प्रदा भैरवी मन्त्रः - "हसैं हसकलरीं हसरौं।"

भयविध्वंसिनी भैरवी मन्त्रः - "हसैं हसकलरीं हसौः।"

चैतन्य भैरवी मन्त्रः - "सैं हसकलरीं सहरौं।"

षट् कूटा भैरवी मन्त्रः - "डरलकसहैं डरलकसहीं डरलकसहौं।"

नित्या भैरवी मन्त्रः - "हसकलड़ें हह सकलरह्रीं हसकलरडौं।"

भुवनेश्वरी भैरवी मन्त्रः - हैं सँ हसकलरीं हसौं:।"

त्रिपुरबाला भैरवी मन्त्रः - "ऐं क्लीं सौः" (इयमभिशप्ता) शापोद्धार कृते- "हैंसः हसं क्लीं हसौं।"

भय विध्वंसनि भैरवी मन्त्रः - "ओं सहरैं ह्रीं सहकलरीं क्रौं क्रौं सहरौं।"

रुद्र भैरवी मन्त्रः - "हसरवक्रें हसकलरीं हसौः।"

सकलेश्वरी भैरवी मन्त्राः - (१) "सहें सहकलह्रीं सहौं।" (२) "ऐं क्लीं सौः सौः क्लीं"। (३) हंसः ऐं क्लीं सौः, (४) ऐं क्लीं सौः हंसः, (५) ओं सहरैं ह्रीं सहकलरीं क्रौं सरौं सहः।"

नवकूटा भैरवी मन्त्राः - (१) "ऐं हसें क्लीं हसकलरीं सौः हसौं हहह।" (२) हैं सहरवालरीं हौं स।"

अन्नपूर्णेश्वरी भैरवी मन्त्राः - (१) "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा।" (२) "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा।"

प्रचण्ड चण्डिका मन्त्राः - अब भगवती प्रचण्ड चण्डिका के मन्त्रों को लिखा जाता है। चण्डी पूजन यन्त्र अगले पृष्ठ पर प्रदर्शित है। भगवती दुर्गा एवं उनके विविध स्वरूपों की पूजन, यन्त्र एवं मन्त्र-जप सम्बन्धी विधियाँ प्रायः एक समान ही हैं-यह स्मरण रखना चाहिए। विशिष्ट उपासना विधियों की जानकारी के लिए अलग-अलग ग्रंथों का अध्ययन करना आवश्यक है। मन्त्र इस प्रकार हैं-

(१) "श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं वज्र वैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट्
स्वाहा।" (२) "क्लीं ह्रीं श्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं
फट् स्वाहा"/(३) "ऐं श्रीं क्लीं ह्रीं वज्रवैरोचनीये ह्रीं
ह्रीं फट् स्वाहा"।(४) "ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं वज्रवैरोचनीये
ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा"। (५) "श्रीं ह्रीं हुं ऐं वज्रवैरोचनीये
हुं हुं फट् स्वाहा"। (६) "ह्रीं क्लीं श्रीं ऐं हुं फट् स्वाहा
(७)" ह्रीं क्लीं हूं ऐं ह्रीं वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा
(८)" ॐ ह्रीं श्रीं वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा।" (९)
(९) ॐ ह्रीं ह्रीं वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा।" (१०) "हूँ"।
(११) "हूं स्वाहा", (१२) "ॐ हूं ॐ", (१३) ॐ वज्रवैरोच-
नीये हुं हुं फट् स्वाहा," (१३) "श्रीं ह्रीं हुं ऐं वज्र
वैरोचनीये श्रीं ह्रीं हूं श्रीं फट् स्वाहा," (१४) "ह्रीं हूं ऐं
वज्रवैरोचनीये ह्रीं फट् स्वाहा," (१५) "ह्रीं हूं ॐ
वज्रवैरोचनीये फट् स्वाहा।" (१६) "ऐं क्लीं ह्रीं ऐं
वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।"

मातङ्गी मन्त्र: - "ॐ ह्रां क्लीं हूं मातंग्यै
फट् स्वाहा।"

चण्डी पूजन यन्त्रम्
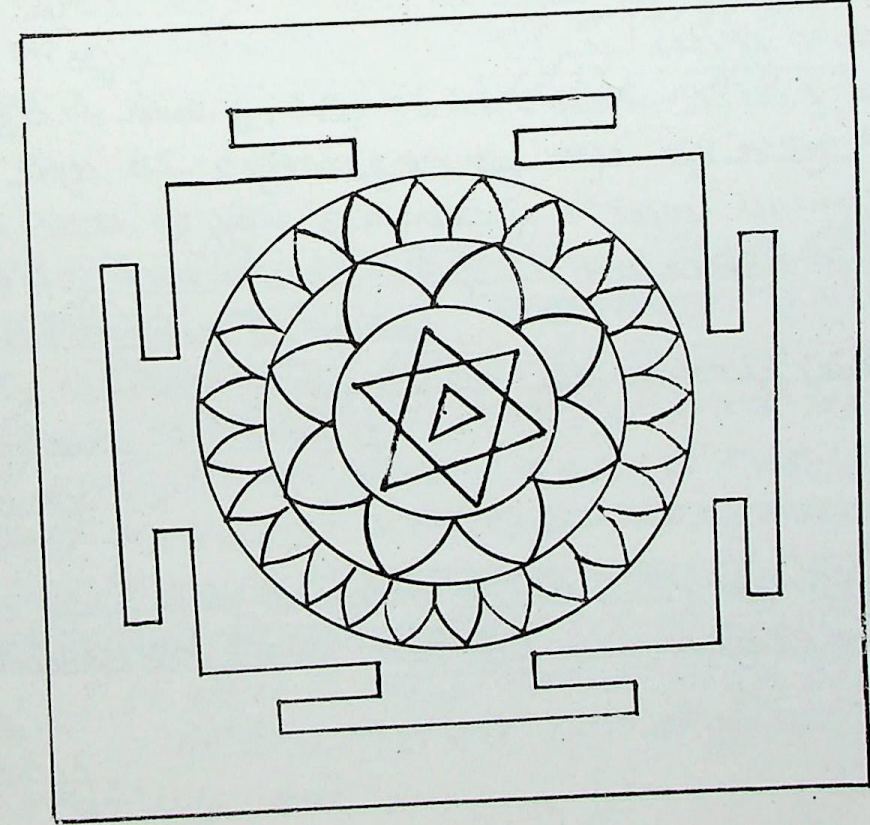
धूमावती मन्त्र :- "धूं धूं धूमावती स्वाहा।"

धनदा मन्त्रः - "रं ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा।"

बगलामुखी मन्त्र :- (१) "ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं नाशय ह्रीं ॐ स्वाहा।" (२) "ॐ ह्रीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं स्तंभय जिह्वां कीलय बुद्धिं नाशय ह्रीं ॐ स्वाहा।"

विशालाक्षी मन्त्र :- "ॐ ह्रीं विशालाक्ष्यै नमः।"

गौरी मन्त्र :- "ह्रीं गौरि रुद्रदयिते योगेश्वरि हुं फट् स्वाहा।"

ब्रह्मश्री मन्त्रः - "ह्रीं नमो ब्रह्मश्री राजिते राजपूजिते जये विजये गौरि गान्धारि त्रिभुवन वशङ्करि सर्वलोक वशङ्करि सर्व स्त्री पुरुष वशङ्करि सुदुघोरिरावे ह्रीं स्वाहा।"

आर्द्रपटी मन्त्रः - "ॐ नमो भगवति चामुण्डे रक्तवाससे अप्रतिहत रूप पराक्रमे अमुक नाशय जिघांससे स्वाहा" — इस मन्त्र का जप शत्रु-नाश के लिए किया जाता है। गीले लाल रंग के वस्त्र पहिन, समुद्रगामिनी नदी के तट पर, उत्तरी भूमि पर दक्षिण दिशा की ओर मुँह करके तथा बाहु ऊपर उठाकर इस मन्त्र का जप करना चाहिए। मन्त्र में जहाँ 'अमुक' शब्द आया है, वहाँ साध्य-व्यक्ति के नाम का उच्चारण करना चाहिए। गीले वस्त्र जब तक सूखेंगे, उतनी अवधि में ही यह मन्त्र शत्रु के प्राणों को सुखा देगा। प्रयोग करने से पूर्व इस मन्त्र को विधिपूर्वक जप कर सिद्ध कर लेना चाहिए। उससे मन्त्र सिद्ध हो जाएगा। मन्त्र को पहले से सिद्ध किये बिना प्रयोग करने से मन्त्र प्रभावकारी नहीं होता।

ज्वाला मालिनी मन्त्रः- "ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनि गृध्रगणपरिवृते हुं फट् स्वाहा।"

क्रूरकर्म श्मशान भैरवी मन्त्रः- "श्मशान भैरवि नररुधिरास्थिवसाभक्षिणि सिद्धिं मे देहि मम मनोरथान् पूरय पूरय हुं फट् स्वाहा।"-- इस मन्त्र का प्रयोग क्रूर कर्मों के लिए किया जाता है।

मृतसञ्जीवनी मन्त्र- "ॐ हौं ॐ जूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ त्र्यम्बकं .... मामृतात्। ॐ हौं ॐ जूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः॥"

श्री विद्या मन्त्राः- "कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं।" लोपामुद्रा मन्त्र- "हसकल ह्रीं हस-कलह्रीं सकलह्रीं।" चन्द्राराधिता- "हसकएई-कलह्रीं सकलह्रीं।" मनुपूजिता- "कहएईलह्रीं हकएईलह्रीं सकएईलह्रीं। कुबेर पूजिता - "हसकएईलह्रीं हसकहएईलह्रीं हसकएईलह्रीं। लह्रीं सहकहएईलह्रीं सहकएईलह्रीं।" नन्दपूजिता- "सएईहह्रीं सहकहलह्रीं। द्वितीया लोपा मुद्रा- "कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सहसकलह्रीं।" सूर्य पूजिता-" कएईलह्रीं हकहलह्रीं सकलह्रीं।" इन्द्रोपासिता-- "कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सलकह्रीं। शङ्करोपासिता- "कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सहसकलह्रीं कएईलहसकलसहसकलह्रीं। सहकसलह्रीं।" दुर्वासा पूजिता-" कएईलह्रीं हसकहसलह्रीं सहसकलह्रीं सएईलह्रीं सहसकलह्रीं सकलह्रीं।" षट्कूटा वैष्णवी- "कएईलहरीं हसकहलहरीं सकलहरीं।" पारिभाषिकी षोडशी-(१)"ह्रीं श्रीं," (२)" श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः मध्ये षट्कूटा वैष्णवी सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं।" (३) "ॐ ह्रीं श्रीं।" (४) श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं।" (५) 'सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं।" (६) "श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं मध्ये षट्कूटा वैष्णवी सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं॥ (७) 'क्लीं'"।

वार्तालीपूजन यन्त्रम्

उच्छिष्ट चाण्डालिनी मन्त्रा:— (१) " उच्छिष्ट चाण्डालिनी सुमुखी देवि महापिशाचिनी ह्रीं ठं ठं ठं ठं ।" (२) " उच्छिष्ट चाण्डालि मातङ्गि सर्वशङ्करि नम: स्वाहा । (३) " ऐं ह्रीं क्लीं सौ: ऐं ज्येष्ठ मातङ्गि नामासि उच्छिष्ट चाण्डालि त्रैलोक्यशङ्करि स्वाहा ।"

कर्ण पिशाचि मन्त्र:- " ॐ कर्णपिशाचि वदातीतानागतं ह्रीं स्वाहा ।"

जगद्धात्री दुर्गा मन्त्रा: -(१) " दुं "; (२) " दुं दुं स्वाहा ।" (३) " ह्रीं दुं फट् ", (४) स्त्रीं दुं स्वाहा ." (५) " श्रीं दुं फट् ।" (६) " ऐं दुं फट् ", (७) " ॐ दुं फट् ." (८) " क्लीं दुं फट् ।"

कामकल्प मन्त्रा: - (१) " ऐं ह्रीं श्रीं ठें चण्डिकायै नम: ", (२) ह्रीं श्रीं कात्यायन्यै स्वाहा ।"

सारस्वत कल्प मन्त्र: - " ऐं " ।

मञ्जुघोषा मन्त्रा: -(१) " क्रौं ह्रीं श्रीं ।" (२) " ह्रीं श्रीं क्लीं ।" (३) " ह्रीं ।"

भवानी मन्त्र: - " ॐ श्रीं श्रीं ॐ ॐ ह्रीं श्रीं श्रीं हुं फट् स्वाहा "— नित्य एक हजार जप करे ।

नवग्रहों के मन्त्र

इन मन्त्रों का प्रयोग ग्रहपीड़ा निवारणार्थ किया जाता है। जपसंख्या अलग-अलग है। विशेष कार्यों की सिद्धि के लिए विभिन्न ग्रहों के मन्त्र अलग-अलग दिए गये हैं। "ॐ आकृष्णेन रजसा॰" आदि सूर्यादि ग्रहों के पूजन मन्त्र सर्व-प्रसिद्ध हैं। वे इनसे भिन्न हैं। पूजनादि में उनका प्रयोग करना चाहिए।

सूर्य मन्त्राः—(१) "ॐ ह्रीं ह्रीं सूर्याय नमः।" (२) "ॐ ह्रौं श्रीं आं ग्रहाधिराजाय आदित्याय स्वाहा।"—जप संख्या २४ हजार। यह अरिष्ट-नाशक है। (३) "ॐ ह्रीं घृणि सूर्य आदित्य श्रीं ॐ"—जप संख्या १ लाख। यह दारिद्र्य नाशक है।

चन्द्र मन्त्राः—(१) "ॐ श्रीं क्लीं चं चन्द्राय नमः।" "ॐ सौं सोमाय नमः।"—जप संख्या ४० हजार।

भौम मन्त्राः—(१) "ॐ ऐं ह्रौं श्रीं प्रां कं ग्रहाधिपतये भौमाय स्वाहा"—जप संख्या २८ हजार। (२) "ॐ हां हंसः खं खः।"—जप संख्या ६ लाख। यह धन-संतान दायक है। (३) "ॐ पवित्र वज्रभूमे हुं स्वाहा

भौम यन्त्रम्
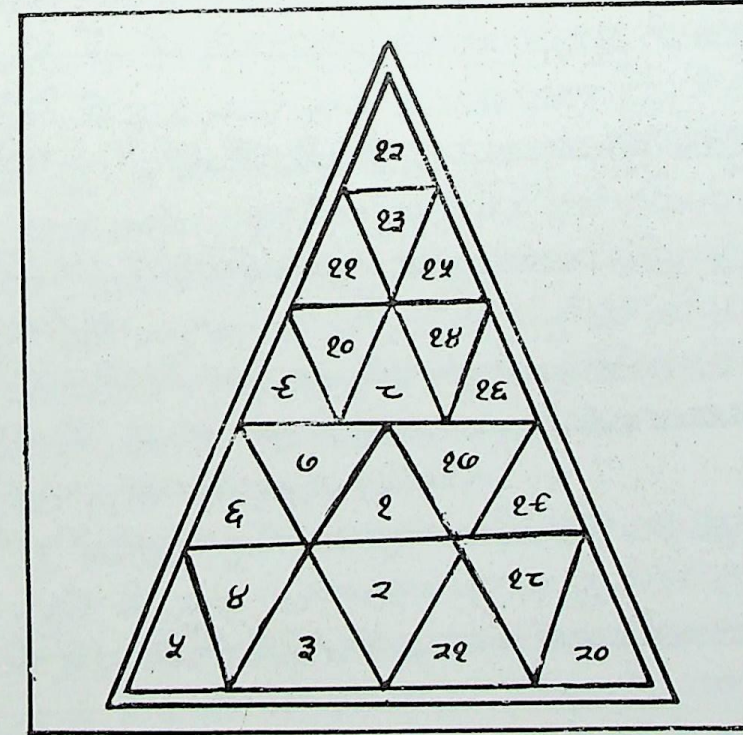
(४) "ॐ रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा" — इन दोनों मन्त्रों के जप से भूमि-विवाद में विजय मिलती है। जप संख्या ३ लाख।

बुध मन्त्राः- (१) "ॐ ऐं स्त्रीं श्रीं बुधाय नमः।"; (२) "ॐ ह्रां क्रौं डं ग्रहनाथाय बुधाय स्वाहा" - जप संख्या ६८ हजार।

गुरु मन्त्राः- (१) "ॐ बृं बृहस्पतये नमः।" (२) "ॐ ऐं क्लीं बृहस्पतये नमः;" (३) "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं ग्लौं ग्रहाधिपतये बृहस्पतये वीं ठः श्रीं ठः ऐं ठः स्वाहा।" - जप संख्या ४८ हजार।

शुक्र मन्त्राः- (१) "ॐ ह्रीं श्रीं शुक्राय नमः। (२) "ॐ ऐं जं गीं ग्रहेश्वराय शुक्राय नमः" - जप-संख्या ८० हजार। (३) "ॐ वस्त्रं मे देहि शुक्राय नमः" — इसे ८ हजार जप कर दूध से हवन करने पर धातु-विकार आदि दूर होते हैं तथा वस्त्रादि का लाभ होता है।

शनि मन्त्राः- (१) "ॐ शं शनये नमः;" (२) "ॐ ह्रीं श्रीं ग्रहचक्रवर्तिने शनैश्चराय क्लीं ऐं सः स्वाहा" — जप संख्या ७६ हजार।

राहु मन्त्राः- (१) "ॐ ऐं ह्रीं राहवे नमः।" (२) "ॐ क्रौं क्रीं हुं हुं टं टंकधारिणे राहवे रं ह्रीं श्रीं मे स्वाहा" — जप संख्या ७२ हजार।

केतु मन्त्राः- (१) "ॐ ह्रीं केतवे नमः, (२) "ॐ ह्रीं क्रूं क्रूररूपिणे केतवे ऐं सौं स्वाहा।" - जप संख्या २८ हजार।

गौरी मन्त्रः- "ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ग्लौं गं गौरी गीं स्वाहा" — इसे मध्याह्न काल में नित्य १ माला जपते रहने से स्त्री-पुत्रादि का लाभ होता है।

काली मन्त्र :-" ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं कालीश्वरी सर्वजन मनोहारिणि सर्वमुख स्तंभिनि सर्वराज
वशंकारी सर्व दुष्ट निर्दलनि सर्वस्त्री पुरुष कर्षिणि बन्दी श्रृंखलास्त्रोटय त्रोटय सर्वशत्रून् भंजय भंजय द्वेषीन्
निर्दलय निर्दलय सर्वान् स्तंभय स्तंभय मोहनास्त्रेण द्वेषिणमुच्चाटय उच्चाटय सर्व वशं कुरु कुरु स्वाहा,
देहि देहि सर्व कालरात्रि कामिनि गणेश्वर्यै नमः"--- इस मन्त्र को रात्रि १२ बजे शुद्ध चित्त से ५० बार जपने
से शत्रु अनुकूल हो जाते हैं तथा विघ्न दूर होकर सब कार्यों में सफलता एवं शान्ति प्राप्त होती है।

श्यामा मन्त्र:-" ॐ श्रीं ह्रीं क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः सुधारसे श्यामे कृपाण शापं विमोचयामृतं स्राव-
-य स्वाहा"—इस मंत्र का नित्य ५ माला जप करने से सब अरिष्ट तथा रोग दूर होते हैं एवं विजय मिलती है।

शक्तिमन्त्र:-" ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं चामुण्डा देव्यै नमः!"— इस मंत्र का सवा लाख जप करने से अरिष्ट दूर होते हैं।

भद्रकालीमन्त्र:-" ॐ क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रौं ह्रीं भैं भद्रकाली भैं ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा"
इस मन्त्र का १० हजार जप करने से बन्धन से छुटकारा मिलता है, शत्रु नष्ट होते हैं तथा कृषि-कर्म में लाभ होता है।

भुवनेश्वरी मन्त्र:-" ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः"— इस मन्त्र का सवा लाख जप करने से
राजकार्य तथा भूमि-विवाद में विजय प्राप्त होती है तथा कृषि में वृद्धि होती है।

प्रसन्न पारिजाता वरदान्नपूर्णा मन्त्र:-"ॐ श्रीं ह्रीं नमो भगवति माहेश्वरि प्रसन्न वरदे अन्न-
पूर्णे स्वाहा"— इस मन्त्र का नित्य एक माला जप करते रहने से धन-धान्य एवं कुटुम्ब-सुख की वृद्धि होती है।

त्रैलोक्य मोहन गौरी मन्त्र:-" ॐ ह्रीं नमो ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते जय विजय गौरि गांधा-
-रि त्रिभुवन शंकरि सर्व वशंकारि सर्वस्त्री पुरुष वशंकरि सु सु दु दु घे घे वा वा ह्रीं स्वाहा"- इस मन्त्र का
६ मास तक नित्य १ माला जप करने से मोहिनी-सिद्धि प्राप्त होती है।

त्रिपुर सुन्दरी मन्त्रः - "ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं रुं क्रीं स्क्लीं सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं" - इस मन्त्र का सवालाख जप करने से राजपक्ष सम्बन्धी सभी कार्यों में सफलता मिलती है।

छिन्नमस्ता मन्त्रः - "ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं छिन्नमस्तके फट् स्वाहा" - पुनश्च - "ॐ श्रीं ह्रीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा" - इस मन्त्र का सवालाख जप करने से बंधन छूटता है तथा राज्य सम्बन्धी कार्यों में सफलता मिलती है।

वज्र योगिनी मन्त्रः - "ॐ ह्रीं वज्रयोगिन्यै स्वाहा" - इस मन्त्र का तीनों समय एक-एक माला जप करते रहने से शरीर पुष्ट होता है तथा रोग-मुक्ति होती है।

स्वप्न वाराही मन्त्रः - "ॐ ऐं ग्लौं लं ऐं नमो भगवति वार्तालि वाराहि देवते वराहमुखि ऐं ग्लौं ठः ठः स्वाहा" - इस मन्त्र को नित्य मध्यरात्रि में एक माला जपें। मन्त्र जपकर सो जाँय तथा सिरहाने दीपक जला कर कुंभ पर रखदें। उससे सब अरिष्ट दूर होते हैं तथा देवी स्वप्न में आकर गुप्त-वार्ता कह जाती है।

कामेश्वरी मन्त्रः - "ॐ ह्रीं श्रीं डां ड्रीं क्लीं क्लुं जं जं जनाख्ये कामेश्वरि बाणदेवते स्वाहा" - इस मन्त्र का नित्य अर्द्धरात्रि के समय १ माला जप करने से पुरुषत्व प्राप्ति, विवाह-सिद्धि एवं सुख का लाभ आदि फल प्राप्त होते हैं।

कुलवागीश्वरी मन्त्रः - "ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं हुं क्रं उपहस्ते कुल वागीश्वरी ऐं ठः क्रं ठः स्त्रीं ठः स्वाहा" - इस मंत्र को नित्य तीनों समय १ माला जपते रहने से धन, ऐश्वर्य, यश तथा कुल की वृद्धि एवं समस्त कार्यों की सिद्धि होती है।

मं० मं० ३७८

भा० दी०

आकर्षणी त्रिपुरा मन्त्रः- "श्रीं क्लीं ह्रीं ॐ त्रिपुरा देवि अमुकीमाकर्षय आकर्षय स्वाहा"—इस मन्त्र में जहाँ 'अमुकी' शब्द है, वहाँ जिस स्त्री को आकर्षित करना हो, उसके नाम का उच्चारण करना चाहिए। इस मन्त्र को ३ लाख की संख्या में जपने से साध्य-स्त्री आकर्षित होती है।

विद्वेषण भैरव मन्त्रः- "ॐ महाभैरवाय श्मशान वासिने अमुकामुकयोर्विद्वेषणं कुरु कुरु हुं फट् स्वाहा।"—इस मन्त्र में जहाँ 'अमुकामुक' शब्द आया है, वहाँ जिनमें परस्पर विद्वेष कराना हो, उन दोनों व्यक्तियों के नाम का उच्चारण करना चाहिए। इस मन्त्र को ३ लाख की संख्या में जपने से साध्य-व्यक्तियों में परस्पर द्वेष हो जाता है।

काकतुण्डि उच्चाटन मन्त्रः- "ॐ नमः काकतुण्डि धवलामुखि अमुकमुच्चाटय उच्चाटय हुं फट्"— इस मन्त्र में जहाँ 'अमुक' शब्द आया है, वहाँ जिस व्यक्ति का उच्चाटन करना हो, उसके नाम का उच्चारण करना चाहिए। इसे तीन लाख जपने पर कार्य सिद्ध होता है।

स्वप्नवती मन्त्रः- "ॐ ह्रीं स्वपुरावाहितकालि स्वप्ने कथयामुकस्यामुकं देहि क्रीं स्वाहा"— इस मंत्र में जहाँ 'अमुकस्यामुकं' शब्द आया है, वहाँ जिस व्यक्ति अथवा कार्य के विषय में जानना हो, उसके नाम का उच्चारण करना चाहिए। इस मन्त्र का चार वर्ष तक नित्य एक माला जप करते रहने से स्वप्न में कार्य-सिद्धि सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त होता रहता है। यह परम चमत्कारी मन्त्र है।

हैमवतीश्वरी मन्त्रः- "ॐ ह्रीं श्रीं हैमवतीश्वरी ह्रीं स्वाहा"--- इस मन्त्र का सवा लाख की संख्या में जप करने से स्वर्णाभूषणों का लाभ होता है।

इन्द्राक्षी मन्त्रः- "ॐ क्रीं क्रीं हुं हुं ग्लौं ह्रीं श्रीं ऐं इन्द्राक्षि वज्रहस्ते सौं ह्रीं ग्लौं हं हं

क्रीं क्रीं ॐ ऐं फट् स्वाहा" — इस मन्त्र का सवालाख की संख्या में जप करने से ऐश्वर्य तथा यश का लाभ होता है।

रक्तादेवी मन्त्र: — "ॐ रक्त कोमल धारिणि महामृत वासिनी जदो भवतु कल्पै कपं शीघ्रं शुद्ध कुरु नम:" — इस मन्त्र का नवरात्रि में १ हजार की संख्या में जप करने से तथा जप के बाद पंचमेवा एवं गुग्गुल का हवन कर, नौ कन्याओं को भोजन कराने से समस्त शुभाशुभफल प्रत्यक्ष प्राप्त होता है।

खेचरी मन्त्र: — "ॐ म्ली खेचर्यै नम:" — इस मंत्र का ६ लाख जप करने से वाक् सिद्धि प्राप्त होती है।

ज्वालामुखी मन्त्र: — "ॐ ह्रीं श्रीं ज्वाला मुखी मम सर्व शत्रून् भक्षय भक्षय हुं फट् स्वाहा" — इस मंत्र का नित्य एक माला जप, तीन मास तक करते रहने पर शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है।

शाम्भरी मन्त्र: — "ॐ प्रीं देवि शाम्भरि क्रीं ठ: स्वाहा" — इस मन्त्र का सवालाख की संख्या में जप करने से शत्रु नष्ट होते हैं।

॥ इति श्री बृहद् मन्त्र महार्णवे शास्त्रीय एवं तन्त्रोक्त मन्त्रा: द्वितीय खण्ड: ॥

ॐ

अथ बृहद् मन्त्र महार्णवम्

भाषा-टीका सहितम्

तृतीय खण्डः

[यन्त्र सहितं मन्त्र-साधन प्रकरणम्]

अथ बृहद् मन्त्र महार्णव तृतीय खण्डस्य विषयानुक्रमणिका

कारणं सर्वभूतानां स एकः परमेश्वरः।
लोकेषु सृष्टिकरणात्स्रष्टा ब्रह्मेति गीयते॥
स एक एव सद्रूपः सत्योऽद्वैतः परात्परः।
स्वप्रकाशः सदापूर्णः सच्चिदानन्द लक्षणः॥
यो यो यान्यान्यजेद्देवाञ्छ्रद्धया यस्य दाप्तये।
तत्तद्ददाति सोऽध्यक्षस्तैस्तैर्देवगणैः शिवे॥

॥ श्रीगणेशाय नमः॥

तन्त्रशास्त्र के मुख्यतः तीन विभाग हैं – (१) मन्त्र, (२) यन्त्र और (३) तन्त्र। प्रस्तुत 'बृहद् मन्त्र महार्णव' में विभिन्न प्रकार के मन्त्रों को संकलित किया गया है। यन्त्र तथा तन्त्र के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी के लिए क्रमशः 'बृहद् यन्त्र महार्णव' तथा 'बृहद् तन्त्र महार्णव' का अध्ययन करना चाहिए। प्रस्तुत प्रकरण में परिचयात्मक रूप में कुछ ऐसे यन्त्रों का उल्लेख किया जा रहा है, जिनके साथ मन्त्र-जप करना भी आवश्यक होता है। ये सभी यन्त्र तन्त्र शास्त्रोक्त हैं तथा इनका सविधि साधन साधक की वांछित कामनाओं को पूर्ण करता है। इनमें से किसी भी यन्त्र का साधन करते समय प्रथम खण्ड में वर्णित नियमों तथा निर्देशों का पालन करना आवश्यक है।

'राजा वशीकरण बीज सम्पुट यन्त्रम्' – दाँई ओर प्रदर्शित यन्त्र के अनुसार गोरोचन, केशर, लाल चन्दन तथा अनामिका अँगुली के रक्त से भोजपत्र के ऊपर यन्त्र को इस प्रकार लिखे कि मध्य में जहाँ प्रदर्शित यन्त्र में 'देवदत्तः' शब्द लिखा है, वहाँ साध्य-व्यक्ति के नाम को लिखा जाय। यन्त्र लिखने परान्त उसका पुष्प-नैवेद्य आदि से पूजन करे, फिर – "ॐ नमो भास्कराय त्रिलोकात्मने अमुकं महीपतिं मे वश्यं कुरु कुरु स्वाहा" – इस मन्त्र का १००८ बार जप करे। मन्त्र में "जहाँ अमुक" शब्द आया है, वहाँ साध्य-व्यक्ति के नाम का उच्चारण करे। तत्पश्चात् ब्राह्मणी, योगिनी एवं सुवासिनी को सम्मान पूर्वक नमस्कार करके भोजन कराये। फिर

ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं
ह्रीं	देवदत्तः		ह्रीं
ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं	ह्रीं

यन्त्र को मुट्ठी में दबाकर राजदरबार में पहुँचे तो राजा (अथवा राज्याधिकारी) वशीभूत होकर प्रसन्न हो तथा उसके द्वारा वांछित-कार्य में सफलता प्राप्त हो।

राजा मोहन दुष्ट मुख स्तम्भन यन्त्रम्

दाँई ओर प्रदर्शित यन्त्र को गोरोचन तथा कुंकुम से भोजपत्र के ऊपर लिखें तथा मध्य में जहाँ देवदत्तः लिखा हुआ है, वहाँ साध्य-व्यक्ति (राजा अथवा राज्याधिकारी) के नाम को लिखें। यन्त्र के बन जाने पर उसे शराव-सम्पुट (मिट्टी के दो सकोरों के बीच) में रख कर सात दिन तक पूजन करें तथा पूर्वोक्त मन्त्र का नित्य १००८ बार जप करते रहें। अन्य सब विधियां पूर्वोक्त यन्त्र की भाँति ही हैं।

आठवें दिन इस यन्त्र को मुट्ठी में दबा कर राजा अथवा राज्याधिकारी के सम्मुख पहुँचें तो वह वशीभूत होकर इच्छानुकूल कार्य करेगा तथा दुष्ट अनुयायी राजपुरुषों (चुगलखोर सरकारी नौकर आदि) का मुँह बन्द होजायगा।

राजा-मोहन दुष्टमुखस्तम्भन यन्त्रम्
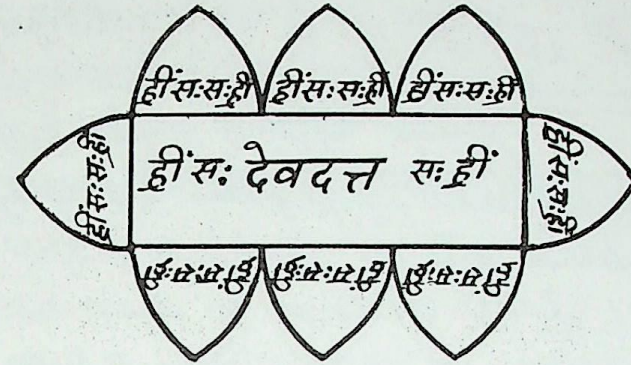
स्त्री सौभाग्यकर ललिता यन्त्रम्

बाँई ओर प्रदर्शित यन्त्र को गोरोचन, कुंकुम, कस्तूरी तथा लालचन्दन – इन चारों के मिश्रण से भोजपत्र पर लिखें। मध्य में जहां 'देवदत्तः' शब्द लिखा है, वहां अपने पति का नाम लिखें। फिर कृष्णपक्ष की त्रयोदशी की रात्रि में उत्तर दिशा की ओर मुँह करके, सात रात्रियों तक अनेक प्रकार की गंध, भोग आदि से यन्त्र का पूजन करें। अन्त में सात सुहागिन स्त्रियों को भोजन करावें, फिर निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करते हुए विसर्जन करें –

'शंकरस्य प्रिये देवि ललिते प्रीयता मिति।
रूपं देहि यशो देहि सौभाग्यं देहि मे प्रियम्।
भगवति वाञ्छितं देहि प्रियमायुष्य वर्धनम्॥"

फिर यन्त्र को धातु-निर्मित ताबीज में भर कर, कंठ में धारण करलें। इस यन्त्र का प्रयोग विवाहिता स्त्रियों को ही करना चाहिए यह दौर्भाग्यनाशक एवं सौभाग्यवर्द्धक है। इस यन्त्र को धारण करने वाली स्त्री रूप-सौभाग्यादि से युक्त होकर अपने पति की अत्यन्त प्रिय हो जाती है

स्त्री सौभाग्य वर्द्धक यन्त्रम्

दाँईं ओर प्रदर्शित यन्त्र को गोरोचन से भोजपत्र के ऊपर लिखें। यन्त्र के मध्य में जहाँ 'देवदत्त' लिखा हुआ है, वहाँ साध्य-व्यक्ति के नाम को लिखें। यन्त्र लेखनोपरान्त तीन रात्रि तक गंधादि से पूजन करें। चौथे दिन तीन सौभाग्यवती स्त्रियों का पूजन कर, उन्हें भोजन करायें तथा उनसे आशीर्वाद प्राप्त करें। सुहागिनों का पूजन करते समय निम्नलिखित वक्ष्यमाण मन्त्र का उच्चारण करें—

"अनङ्गवल्लभे देवि त्वं च मे प्रीयतामिति।
एनं प्रियं महादर्पं कुरु त्वं स्मरवल्लभे॥"

फिर यन्त्र का विधिपूर्वक पूजन करके, इसे किसी धातु के ताबीज में भर कर कंठ में धारण करलें। इससे सौभाग्य की वृद्धि होती है। यह प्रयोग विवाहिता स्त्रियों के लिए है। यदि इतने पर भी पति प्रसन्न न हो तो प्रत्येक शुक्लपक्ष की चतुर्दशी की रात्रि में एक सौभाग्यवती स्त्री को भोजन कराके पुनः यन्त्र का पूजन करें तो पति का गर्व नष्ट हो जाएगा और वह अपनी स्त्री के वशीभूत बना रहेगा।

स्त्री सौभाग्य वर्द्धक यन्त्रम्
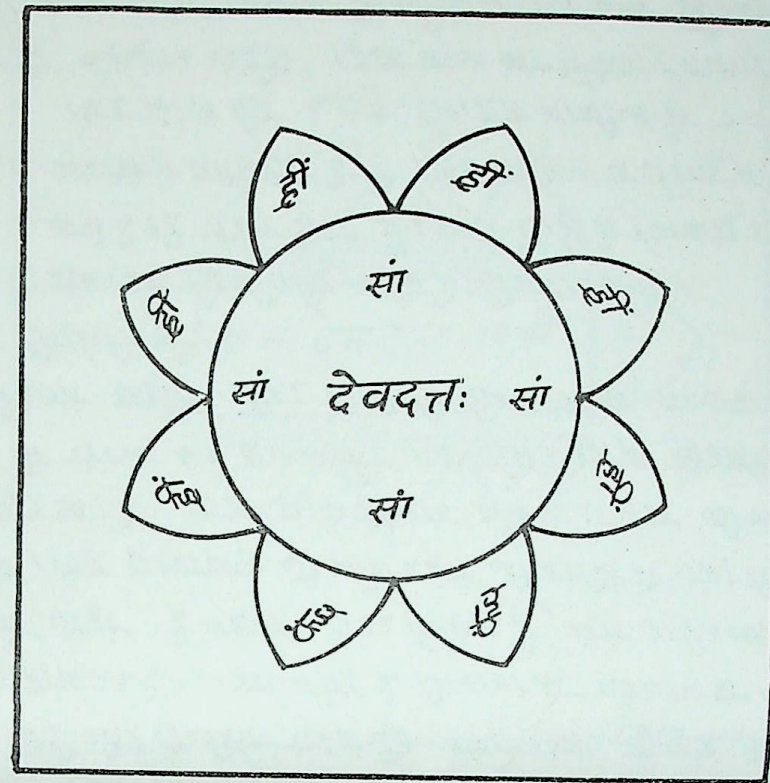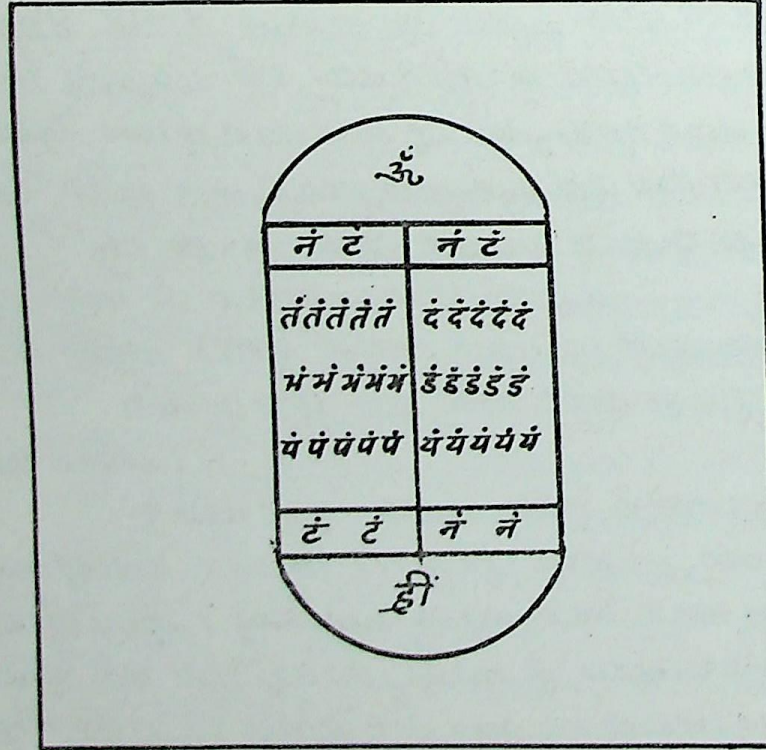
वशीकरण यन्त्रम्

वशीकरण यन्त्रम्

बाँई ओर प्रदर्शित यन्त्र को अष्टगंध से भोजपत्र के ऊपर लिख कर विधिवत् पूजन करें। पूजन करने के बाद निम्न लिखित मन्त्र का १००८ की संख्या में जप करना चाहिए -

" ॐ सर्वलोक वशीकराय कुरु कुरु स्वाहा।"

मन्त्र जप के बाद यन्त्र को किसी धातु के ताबीज में भर कर धूप दें, फिर पुरुष अपनी दाँई भुजा में तथा स्त्री बाँई भुजा में धारण करे।

जो व्यक्ति इस यन्त्र को अपनी भुजा में बाँधता है, उसे देखने वाले सभी लोग उसके वशीभूत हो जाते हैं अर्थात् उसकी इच्छानुसार ही कार्य करते हैं।

नर-नारी आकर्षण देवमातृक यन्त्रम्

अगले पृष्ठ पर दाँई ओर प्रदर्शित यन्त्र को लाख का

रस, हल्दी तथा मजीठ द्वारा भोजपत्र के ऊपर लिखें। यन्त्र के भीतर जहाँ 'देवदत्त' लिखा है, वहाँ साध्य-व्यक्ति के नाम को लिखें। फिर यन्त्र का विधिवत् पूजन करें तथा निम्नलिखित मन्त्र का १००८ की संख्या में जप करें -

"ॐ नमो आदि रूपाय अमुकं आकर्षणं कुरु कुरु स्वाहा।"

उक्त मन्त्र में जहाँ 'अमुक' शब्द आया है, वहाँ जिस व्यक्ति (पुरुष अथवा स्त्री) को आकर्षित करना हो, उसके नाम का उच्चारण करना चाहिए।

फिर साध्य-व्यक्ति के पाँवों के नीचे की धूलि लाकर, उससे एक पुतली का निर्माण करें तथा उस पुतली के योनि-भाग में उक्त यन्त्र को विधिपूर्वक पूजन करने के उपरान्त प्रतिष्ठित करें। इससे साध्य-व्यक्ति स्वयं ही आकर्षित होकर साधक के समीप चला आता है।

इस यन्त्र के द्वारा पुरुष वांछित स्त्री को तथा स्त्री वांछित पुरुष को आकर्षित कर, उसे प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं।

देवमातृक यन्त्रम्
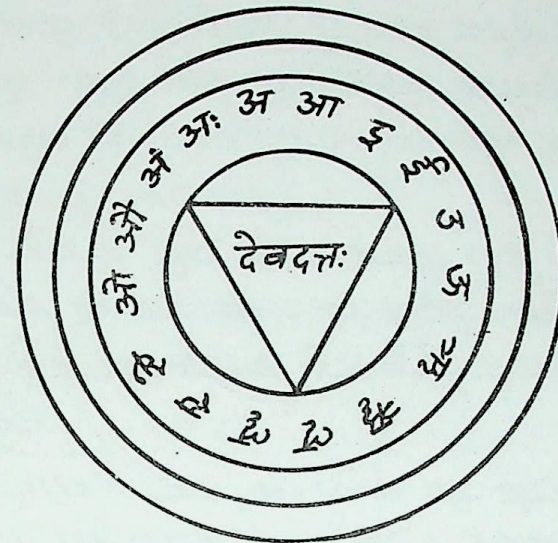
स्त्री-वशीकरण कामराज यन्त्रम्

दांई ओर प्रदर्शित यन्त्र को गोरोचन, कुंकुम, लालचंदन तथा कस्तूरी- इन के मिश्रण से भोजपत्र के ऊपर चमेली की कलम से लिखें तथा मध्यमें जहाँ 'देवदत्त' लिखा है, वहाँ साध्य व्यक्ति (स्त्री) का नाम लिखें। फिर लकड़ी के तख्ते के ऊपर राई से कामदेव की प्रतिमा बना कर, यन्त्र को उसके हृदय भाग में स्थापित करें तथा गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से सांयकाल के समय नित्य कामदेव का पूजन करें। पूजन के समय निम्न लिखित मन्त्र का उच्चारण करें-

"कामोऽनङ्गः पुष्पशरः कन्दर्पो मीन केतनः।
श्री विष्णु तनयो देवः प्रसन्नो भव मे प्रभो॥"

इस मन्त्र का पाठ करते हुए राई निर्मित प्रतिमा के हृदय में कामदेव का पूजन करें। जब तक कार्य सिद्ध न हो, तब तक नित्य इस क्रिया को करते रहें तथा 'ॐ भगवती भगभाग दायिनी अमु की मम वश्यं कुरु कुरु स्वाहा'- इस मंत्र का 10 हजार की संख्या में जप करें तो साध्य-स्त्री वशीभूत हो।

कामराज यन्त्रम्
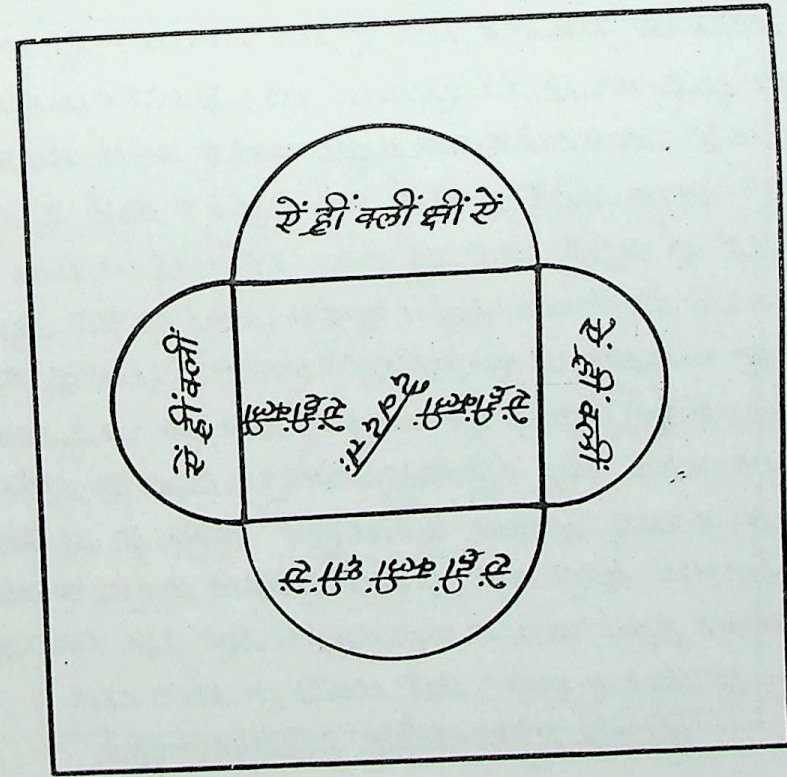
मदन मर्दन यन्त्रम्
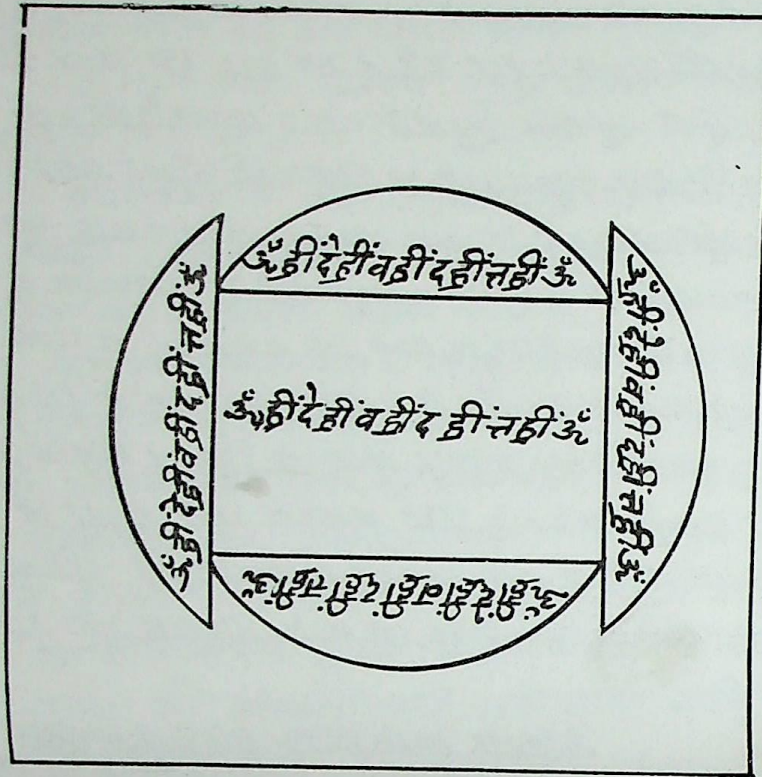
स्त्री-वशीकरण मदन-मर्दन यन्त्रम्

मदन काष्ठ की कलम द्वारा, लोहे के रक्त से भोजपत्र के ऊपर बांई ओर प्रदर्शित यन्त्र बनाकर उसमें साध्य-स्त्री के नाम के प्रत्येक अक्षर के बाद 'ह्रीं' बीज लिखे तथा प्रारंभ में एवं अन्त में 'ॐ' लिखे, (जैसा कि यन्त्र में 'देवदत्त' नाम के अक्षरों के साथ दिखाया गया है। फिर मदन-काष्ठ से ही कामदेव की एक प्रतिमा का निर्माण करें व उसके हृदय में एक ऐसा छिद्र बनावे, जिसमें कि पूर्वोक्त यन्त्र को सुविधा पूर्वक प्रविष्ट किया जा सके। फिर लाल चन्दन, पुष्पमाला आदि से यन्त्र का पूजन कर, यन्त्र को उक्त प्रतिमा के हृदय में स्थापित करदे तथा २१ दिन तक यन्त्र का पूजन करता रहे तथा 'कामराज यन्त्र' के साथ वर्णित वशीकरण मन्त्र' ॐ भगवती भगभाग० इत्यादि" का जप करते हुए साध्य-स्त्री का ध्यान करता रहे। साधन-काल में पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन, पृथ्वी पर शयन, हल्का भोजन तथा पवित्रता का पालन करे एवं अशुभ कार्यों से बचा रहे। इसके प्रभाव से अभिलषित-स्त्री साधक के वशीभूत हो जाती है।

स्त्री-वशीकरण कामाक्ष यन्त्रम्

गोरोचन, कुंकुम तथा कपूर से, चमेली की कलम द्वारा भोजपत्र के ऊपर दाईं ओर प्रदर्शित यन्त्र का निर्माण करें। यन्त्र के मध्य में जहाँ 'देवदत्त' लिखा है, वहाँ साध्य-स्त्री के नाम को लिखना चाहिए। यन्त्र लेखनोपरान्त उसका गंध, पुष्प, नैवेद्य आदि पदार्थों से पूजन करें तथा श्वेत वस्त्र धारण कर, यन्त्र को सामने रखकर; रात्रि के समय पूर्वोक्त 'ॐ भगवती भग भाग०' इत्यादि मन्त्र का जप करें १००८ संख्या में। जप के समय साध्य-स्त्री का चिन्तन-स्मरण भी करते रहें। इस प्रकार सात दिनों तक पूजन, जप आदि क्रियायें करके आठवें दिन अपनी सामर्थ्यानुसार ब्राह्मणों की स्त्रियों को विविध प्रकार के व्यंजनों का भोजन कराये तथा यथाशक्ति दक्षिणा देकर 'कामाक्षीप्रीयताम्' वाक्य का उच्चारण करें। फिर यन्त्र को त्रिलोह के ताबीज में भर कर दाईं भुजा में धारण करलें। इस यन्त्र के प्रभाव से साध्य-स्त्री काम-पीड़िता हो वशीभूत हो जाती है।

कामाक्ष यन्त्रम्

माणिभद्र यन्त्रम्
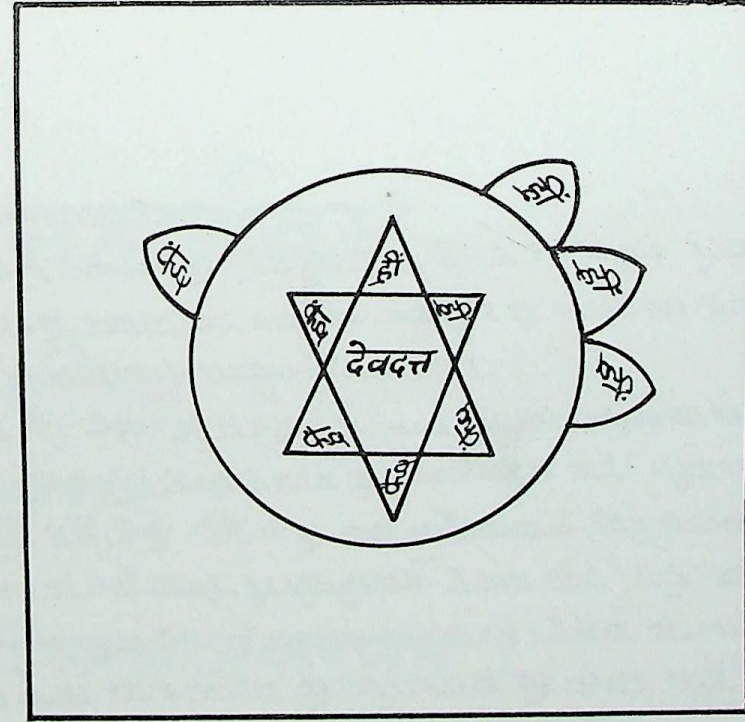
देशान्तरस्थ-पुरुष आकर्षक माणिभद्रयन्त्रम्

गोरोचन, कुंकुम तथा लालचन्दन से भोजपत्र के ऊपर बाँई ओर प्रदर्शित यन्त्र बनाकर, मध्यमें 'देवदत्त' के स्थान पर साध्य-पुरुष का नाम लिखें। यन्त्र लेखनोपरान्त उसका गन्धपुष्पादि से विधिवत् पूजन कर, उसे लालरंग के सूत से बाँधें। फिर अपने शरीर के उबटन से एक मनुष्याकार मूर्ति बनाकर, उस मूर्ति के हृदय में यन्त्र को रखें तथा उबटन से आच्छादित कर, तीन दिन तक, तीनों संध्याकाल में खैर की अग्नि में तपते हुए निम्न लिखित मन्त्र का जप करें—

'ॐ देवदत्तं वेगेन आकर्षय माणिभद्र स्वाहा।'

मन्त्र में 'देवदत्त' के स्थान पर साध्य-व्यक्ति के नाम का उच्चारण करना चाहिए। इस मन्त्र के प्रभाव से देशान्तरस्थ पुरुष आकर्षित होकर, मंत्र-साधक के समीप चला आता है।

॥ इति श्री बृहद् मन्त्रमहार्णवे यन्त्र सह मन्त्र प्रकरणं नाम तृतीय खण्डः ॥

ॐ

अथ वृहद् मन्त्र महार्णवम्

भाषा-टीका सहितम्

चतुर्थ खण्डः

[जैन एवं इस्लामी, शाबरादि मन्त्र प्रकरणम्]

अथ बृहद् मन्त्र महार्णव चतुर्थ खण्डस्य विषयानुक्रमणिका

पुस्तके लिखिता विद्या येन सुन्दरि जाप्यते ।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटि शतैरपि ॥

सुसाध्यं प्रत्ययोपेतं साधकानां हितं प्रियम् ।
सर्वशास्त्रात्समाकृष्य प्रकटी क्रियते मया ॥

तन्त्रायमागमोक्तं च वक्त्रा द्वक्त्रेण यच्छ्रुतम् ।
एतत्सर्वं समुद्धृत्य दध्नो घृतमिवादरात् ॥
साधकानां हितार्थाय तन्त्रसिद्धिरिहोच्यते ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

प्रस्तुत खण्ड में हिन्दू, जैन, इस्लामी तथा शाबरादि लोक-प्रचलित मन्त्र एवं यन्त्रों का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है। इनकी साधन-विधियां साथ ही दी जा रही हैं। इनके लिए पूर्व खण्ड में वर्णित मन्त्र-यन्त्र साधन की विशिष्ट क्रियाएं आवश्यक नहीं मानी गई हैं।
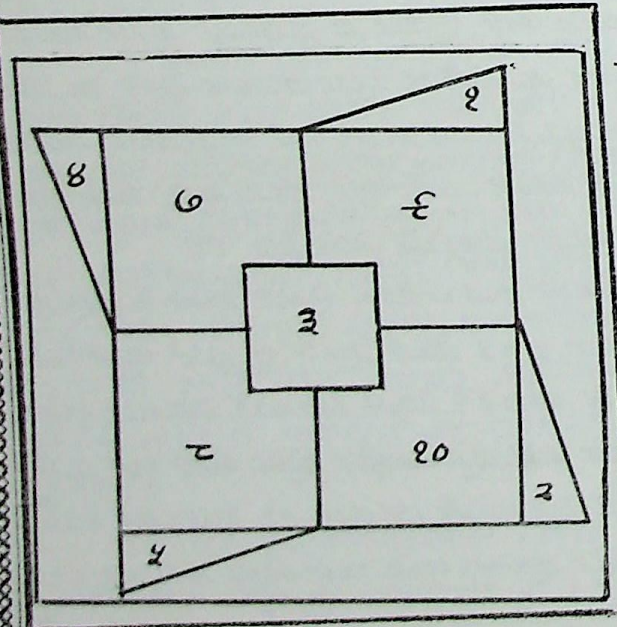
बीसा यन्त्र- बीसा यन्त्र अनेक प्रकार के उपलब्ध होते हैं। यहाँ ४ प्रकार के विशिष्ट बीसा यन्त्रों का उल्लेख किया जा रहा है। इनके विषय में निम्नानुसार वर्णन पाया जाता है-

		१
४	७	६
	३	
८	१०	२
५		

(१) बांई ओर प्रदर्शित बीसा यन्त्र वशीकरण कारक कहा गया है। इसे अष्टगंध द्वारा, अनार की कलम से, भोजपत्र पर लिख कर यथाविधि पूजन करें। प्रतिदिन २०-२० यन्त्र २० दिन तक लिखते रहने पर साध्य-व्यक्ति का मोहन होता है। ४० दिन तक लिखते रहने पर देव उपस्थित होकर आदेश का पालन करता है- ऐसी अनुश्रुति है। इसके साधन-काल में दूध, चावल तथा श्वेत पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

महालक्ष्म्यै	५		नमः
६	श्रीं		६
ॐ	१ ७	४ ८	ह्रीं
३	क्लीं		२

(२) दाईं ओर प्रदर्शित बीसा यन्त्र को रविवार वाले पुष्य नक्षत्र में अष्टगंध द्वारा भोजपत्र पर लिखें

६२ दिनों तक नित्य एक यन्त्र लिखते रहें। आसन, वस्त्र तथा माला सब पीले रंग के हों। मुँह पूर्व दिशा की ओर रहे। धूप, दीप, फल, पुष्प, नैवेद्यादि से यन्त्र का पूजन करें तथा 'ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं महालक्ष्म्यै नमः' — इस मन्त्र की एक माला नित्य जपें। इस क्रम को ६२ दिनों तक चालू रखें। तिरेसठवें दिन एक चाँदी के पत्र पर यन्त्र को खुदवा कर, पहले के भोजपत्र वाले ६२ यंत्रों को चांदी वाले यन्त्र के नीचे रख कर पूजा करें। फिर ६२ यंत्रों में से एक यन्त्र को अपने पास रख कर शेष सब यन्त्रों को आटे की गोलियों में अलग-अलग बन्द करके नदी में बहादें तथा ६२ वें यन्त्र को चांदी या सोने के ताबीज में भर कर कंठ या दांई भुजा में बांध लें तथा चांदी के यन्त्र को तिजोरी में रखें, इससे धन-धान्य, सौभाग्य की वृद्धि होती है।—

(३) दांई ओर प्रदर्शित बीसा यन्त्र सर्वकार्य सिद्धिप्रद है। इसे रवि-पुष्य, रवि-हस्त, रवि-मूल नक्षत्र अथवा अपने चन्द्र स्वर के चलते समय अष्टगंध द्वारा भोजपत्र पर लिखें अथवा सोने, चाँदी या ताँबे के पत्र पर उभरे अथवा गहरे अक्षरों में खुदवा कर, प्रतिष्ठा, अभिषेक तथा पूजन करके तिजोरी में रखलें तथा यन्त्र के चारों ओर जो मंत्र लिखा हुआ है, उसका १२५०० की संख्या में जप करें तथा इतने ही यन्त्र भोजपत्र के ऊपर भी लिखें। अन्त में, एक यन्त्र को अपने पास रख कर, शेष सब यन्त्रों को गेहूं के आटे की गोलियों में बन्द करके नदी में प्रवाहित कर दें। शेष बचे यन्त्र को ताबीज में भर कर भुजा अथवा कंठ में बाँधें, अथवा तिजोरी में रखदें तो धन-धान्य, यश, सौभाग्य आदि की वृद्धि होती है। यह यन्त्र अत्यन्त लाभप्रद कहा गया है।

ॐ अर्हं नमः

४		७
२		७

कुरु कुरु स्वाहा

मम वांछितं पूरय पूरय
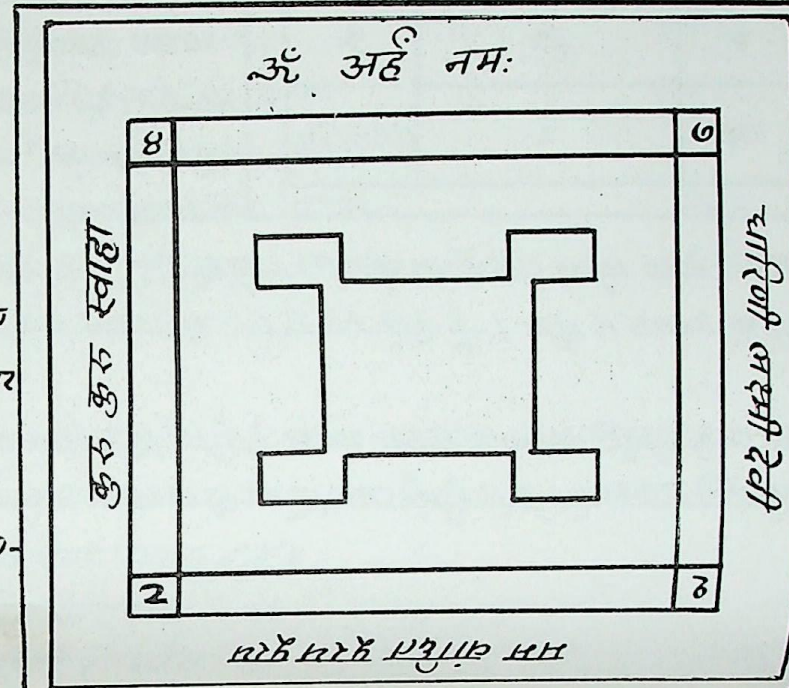
(४) दाईं ओर प्रदर्शित बीसा यन्त्र को शुभ दिन तथा शुभ मुहूर्त में पूर्व दिशा की ओर मुँह करके बैठकर, धवल भोजपत्र पर, अष्ट गंध द्वारा, अनार की कलम से लिखें। नित्य एक यन्त्र ८८ दिनों तक लिखते रहें। नित्य ही यन्त्र का चन्दन, अगर, कस्तूरी, पुष्प, कुंकुम आदि से पूजन करते रहें। साथ ही, निम्न लिखित मन्त्र का ८८ दिन में, १०००० की संख्या में जप भी पूरा करें। मन्त्र यह है—"ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं मम वांछितं देहि देहि स्वाहा"

अन्तिम दिन वट वृक्ष के नीचे अथवा नदी-तट पर बैठ कर २१ यन्त्र लिखें तथा दशांश हवन करें। खीर, खांड, मधु, पंचामृत तथा पंचगव्य से हवन करना चाहिए। फिर अर्द्धरात्रि के समय पार्वतीजी को पूर्ण श्रद्धा के साथ तर्पण करायें तथा भोग लगायें। ऐसे से सब प्रकार की सिद्धियां प्राप्त होती हैं। यह मोहन, वशीकरण, आकर्षण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन, मारण, शान्ति कर्म आदि सभी में फल दायक है। एक यन्त्र को अपने पास रखकर, अन्य सभी यन्त्रों को आटे की गोलियों में बंद करके नदी में प्रवाहित कर देना चाहिए तथा घृत का दीपक जलाना चाहिए।

इस यन्त्र का साधन जिस कामना से भी किया जाता है, वही पूरी होती है—ऐसी मान्यता है।

बीसा यन्त्रम्

२
२ ८ १०
३
७ ६ ४
५
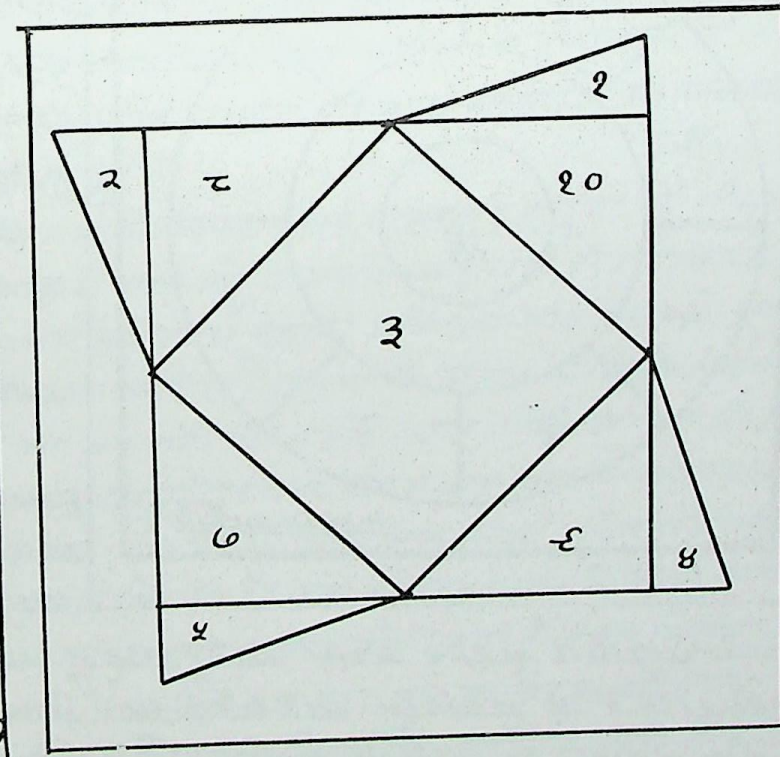
लक्ष्मी वृद्धिकर यन्त्र- नीचे प्रदर्शित यन्त्र को कुंकुम तथा गोरोचन से लिखकर कुमारी कन्या के हाथ से काते सूत में लपेटकर बांई भुजा में धारण करें। परन्तु इससे पूर्व तीन दिनों तक प्रात: सांय भगवान् पार्श्वनाथकी मूर्ति के समक्ष निम्न लिखित मंत्र की एक माला अवश्य जपें-
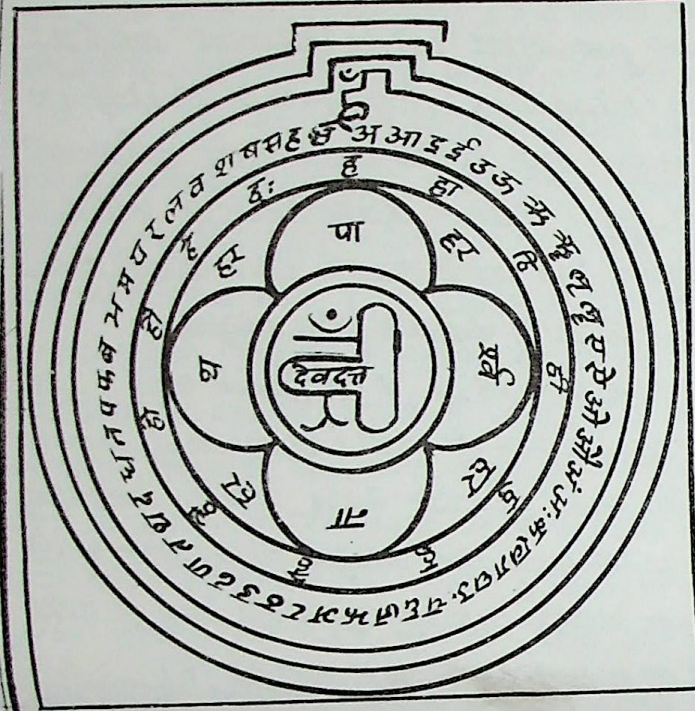
"ओं ह्रीं श्रीं हर हर स्वाहा।"

यन्त्र के मध्य में जहाँ 'देवदत्त' लिखा है, वहाँ अपना नाम लिखना चाहिए

यह यन्त्र धन, धान्य तथा सौभाग्य की वृद्धि करने वाला है।

अकाल मृत्यु निवारण यन्त्र-नीचे प्रदर्शित यन्त्र को गोरोचन तथा कुंकुम द्वारा भोजपत्र के ऊपर लिखकर धूप, दीप, नैवेद्य, पुष्प, चंदन आदि से यथाविधि पूजन करे तथा निम्न लिखित मन्त्रका १०८ की संख्या में जप करे-

"ॐ मृत्युञ्जयाय नमः।"

फिर यन्त्र को सोने, चाँदी अथवा ताँबे के ताबीज में भर कर अपनी दाँईं भुजा में बाँध ले तो अकाल-मृत्यु का भय नहीं रहता।
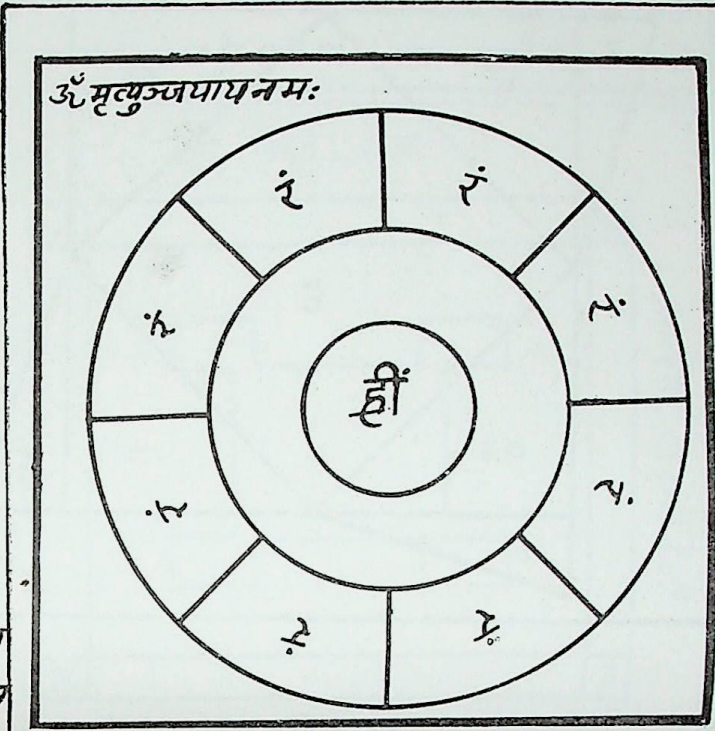
मुसलमानी मन्त्र और यन्त्र - अन्य धर्मों की भाँति मुसलमानी मज़हब में भी यन्त्र-मन्त्रों का प्रयोग पाया जाता है। यहां उसका संक्षिप्त-परिचय प्रस्तुत किया जारहा है।

मुसलमानी मज़हब में भी अनेक प्रकार के बीसा यन्त्रों का प्रचलन है। उनमें से कुछ के स्वरूप यहां प्रदर्शित हैं।
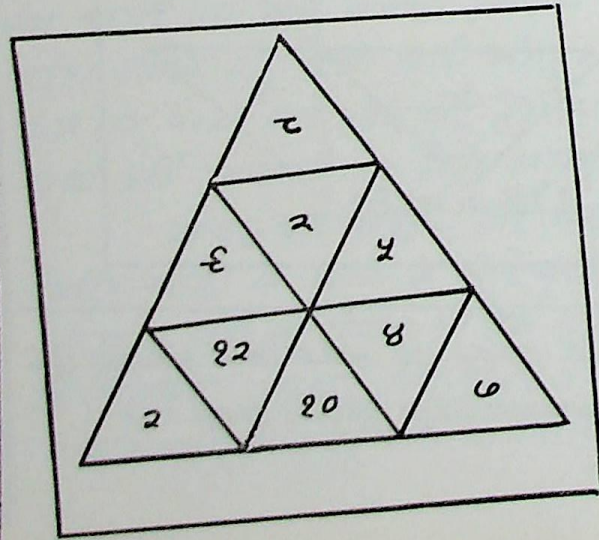
बीसा यन्त्र - बाँई ओर है: जो बीसा यन्त्र का स्वरूप प्रदर्शित है। इसे कागज पर काली स्याही से लिखें तथा लिखते समय शाह फ़रीद जालंधर का हुक्म अपने हृदय में जपें। इसे ४० दिनों तक नित्य २० की संख्या में लिखना

८
२
६ ५
१२ ४
२ १० ७

चाहिए। दीपक जलाकर लोबान की धूनी देनी चाहिए तथा मंत्र का पूजन करने चाहिए। सर्व प्रथम एक बार पूरी बिस्मिल्लाह पढ़कर, ४० बार बड़ा मंत्र पढ़ना चाहिए, जो इस प्रकार है -

"या जिब्राईल या दर दाईल या रफ्काईल या तन्काफ़ील बहक़्क़ या बुद्दूह।"

इस मंत्र को पढ़कर छोटा मन्त्र 'या बुद्दूह' पढ़ें। फिर ४० बार पहला मन्त्र पढ़ें तथा जब चार घड़ी दिन शेष रहे, तब ४०० बार बड़ा मन्त्र पढ़ लें। मन्त्रों का पाठ यन्त्र को सामने रखकर ही करना चाहिए। संध्या के समय यन्त्रों को आटे की गोली में भर कर नदी में बहादें। इस विधि से यन्त्र सिद्ध हो जायेगा। सिद्ध हो जाने पर नित्य एक बार यन्त्र लिखकर १०१ बार बड़ा मन्त्र पढ़ें। फिर जब किसी मनोरथ की सिद्धि के लिए यन्त्र लिखना हो, तब पूर्वोक्त विधि से पूजन करके २०००० बार 'या बुद्दूह' मन्त्र पढ़ें। आदि में १ बार बिस्मिल्लाह तथा अन्त में ४०-४० बार बड़ा मंत्र मुवक्किल सहित पढ़ें। मनोरथ को यन्त्र के नीचे लिख देना चाहिए। बाद में यन्त्र को चूल्हे में गाड़ दें अथवा सिल के नीचे दबादें। सब इच्छायें पूर्ण हों।

(२) नीचे ४ जर्बी बीसा यन्त्र का स्वरूप प्रदर्शित है। इसे लिखने तथा पढ़ने की विधि पूर्ववत् ही है।
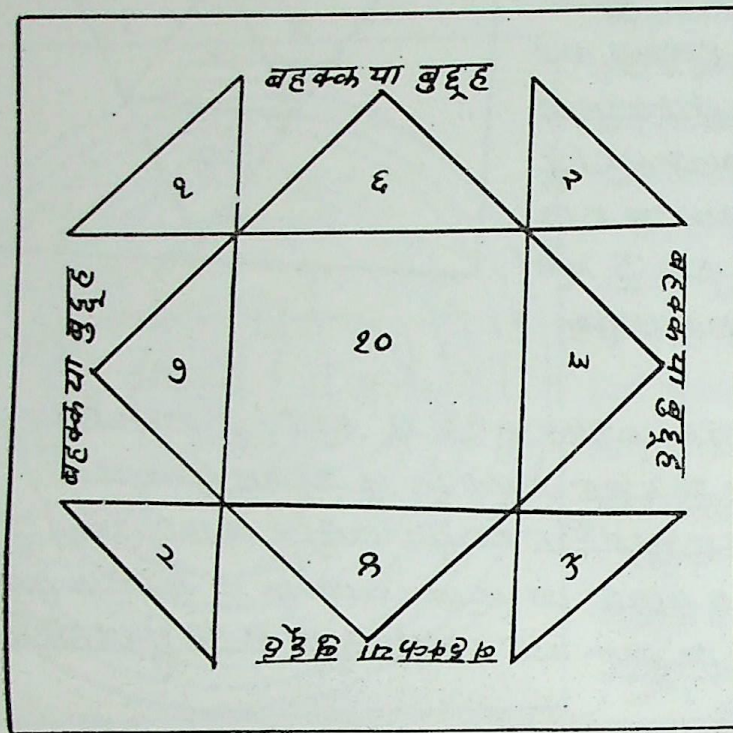
या बुद्दूह यन्त्र - इस यन्त्र को किसी खास महीने के पहले गुरुवार, ग्रहण अथवा दिवाली की रात में लिखना चाहिए।

विधि - चमेली के तैल का दीपक जलाकर, सवा पाव मिठाई तथा सुगंधित इत्र रखलें और लोबान की धूनी दें। फिर दाईं ओर प्रदर्शित यंत्र को अंगुली द्वारा पृथ्वी पर १९ बार लिखें। एक-एक यंत्र लिख कर, उस पर एक-एक बताशा तथा फूल चढ़ाकर मिटाते रहें। जब बीसवां यंत्र कागज पर लिखें, तब बची हुई मिठाई तथा फूल सब उस पर चढ़ा दें तथा यन्त्र को दीपक की लौ पर रख कर दीपक के

या बुद्दूह	या बुद्दूह	या बुद्दूह	या बुद्दूह
या बुद्दूह	६२ ल	६४ ल	या बुद्दूह
या बुद्दूह	६४ ल	६२ ल	या बुद्दूह
या बुद्दूह	या बुद्दूह	या बुद्दूह	या बुद्दूह

आगे अग्नि पर लोबान की धूनी दें। फिर एक बार पूरी बिस्मिल्लाह पढ़कर, २१ बार दरूद तथा ४ बार पूर्वोक्त बड़ा मन्त्र पढ़ें। फिर २० हजार बार छोटा मन्त्र पढ़कर ४० बार बड़ा मन्त्र पढ़ें। फिर २१ बार दरूद पढ़कर यन्त्र को सोने अथवा चाँदी के ताबीज़ में भरकर दाँये हाथ में बाँध लें तथा प्रतिदिन ताबीज को लोबान की धूनी देकर २००० बार 'या कुद्दूस' पढ़ लिया करें तो बिना किसी सन्देह के रोज़ी प्राप्त होती रहेगी।

उदरपूर्ति के लिए इस यन्त्र को नित्य एक बार लिख कर धूप, दीप, फूल, बताशे आदि से पूजन करके उस पर दृष्टि जमाये रहें तथा पानी भरे हुए घड़े के सामने पूर्वोक्त मन्त्र का १००१ बार जप करें तो रोज़ी खुल जाती है तथा उदर-पूर्ति आसानी से होने लगती है।

७८६ का यन्त्र- दाँई ओर प्रदर्शित यन्त्र को 'बिस्मिल्लाह' के यन्त्र के सिरे पर लिखा जाता है। इस यन्त्र की पूजन आदि की विधि भी पूर्ववत् है। पहले एक बार 'बिस्मिल्लाह' पढ़कर, फिर १००१ बार इस मन्त्र को पढ़ें --

"या अल्लाहो या रहमानो या रहीमो या हैयो या कैयूमो।"

मन्त्र के आदि तथा अन्त में ग्यारह-ग्यारह दरूद पढ़नी चाहिए।

हाजिरात का मन्त्र- हाजिरात का एक मन्त्र इस प्रकार है-

"बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम खुदाई बड़ी तू बड़ा जैनुद्दीन पैगंबर दुनी तेरा सादात फुरो बाद नामुरादी ने बुनियादी तुर्क मापीर ताइफा सिलार देखूं तेरी शक्ति बेगी बांध ल्याव नौ नाहर सिंह चौरासी कलवा बारा ब्रह्मा अठारा सौ शाकिनी काम दुरामन दल दिउ भूत प्रेत चोर-चारव अगिया बेताल बेगी बांधि ल्याव जो न बांधि ल्यावे तो दुहाई सुलेमान पैगम्बर की।"

यह लोकप्रचलित शाबर-मन्त्र जैसा मन्त्र है।

७८६ का यन्त्र

१९८	२०२	२०५	१९१
२०४	१९२	१९७	२०३
१९३	२०७	२००	१९६
२०१	१९५	२९४	२०६

विधि- हर शुक्रवार को तेल, फुलेल, लौंग, धूप दिखाई से नीचे प्रदर्शित यन्त्र को कागज पर लिखकर पूजें तथा नित्य १२ बार पूर्वोक्त मंत्र को जपें तो ४० दिन में मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

हाजिरी करते समय पीली मिट्टी से जमीन को लीपकर चावल की मस्जिद बनायें तथा कपास की बत्ती बनायें। पट्टे पर एक त्रिशूल रखकर क्वारी कन्या को स्वच्छ वस्त्र पहनाकर बैठायें तथा चावलों को अभिमंत्रित करके कन्या के ऊपर मारें। फिर उसके मस्तक पर दीपक रखकर जो कुछ पूछना हो, पूछें, वह सच-सच बताती चली जायगी। उससे पूर्व

१	८	३	८	त
५	६	३	६	र
७	२	९	२	क
७	४	५	४	ला

रुई में मेंढक की राख मिलाकर बत्ती बनायें। फिर उसे दीपक में डालकर जलायें तदुपरान्त उस दीपक के सामने आठ-दस वर्ष की आयु वाले बालक अथवा क्वारी कन्या को जो उच्चवंश तथा देवता वर्ण का हो, बैठायें। दीपक के आगे यन्त्र को रख कर पूजें तथा बालक अथवा कन्या की दृष्टि यन्त्र पर गढ़ा दें और उसकी हथेली पर मेंढक की राख को तेल में सान कर लगा दें। इसके बाद प्रश्न करें तो वह ठीक-ठीक उत्तर देगा।

फारसी अक्षरों के

मंत्र - फारसी अक्षरों के कुल २८ मन्त्र होते हैं, उन्हें सिद्ध करने के लिए पहले जिस यन्त्र को सामने रख कर पूजा जाता है, उसका स्वरूप दाँई ओर प्रदर्शित किया गया है।

७८६

८ २००२	१ १९९४	६ १९९५
३ १९९६	५ १९९८	७ २००१
४ १९९७	९ २००३	२ १९९५

फारसी अक्षरों के मन्त्र का जप करते समय नीचे प्रदर्शित यन्त्र का पूजन किया जाता है तथा इसी पर अपनी दृष्टि रखी जाती है।

नीचे बीच में '७२ का इस्लामी यन्त्र' तथा दाईं ओर '२५ का इस्लामी यन्त्र' प्रदर्शित हैं।

या जिब्राईल	या अल्लाह	या अल्लाह	या अल्लाह	या बुद्दूह
या जिब्राईल	६ २७	१ ५	८ ३४	या इस्राफ़ील
या जिब्राईल	७ २९	५ २२	३ १५	या इस्राफ़ील
या जिब्राईल	२ १०	९ ३९	४ २६	या इस्राफ़ील
या बुद्दूह	या अलिमुं	या अलिमुं	या अलिमुं	या बुद्दूह

६	४८	१८
३६	२४	१२
३०		४२

या बुद्दूह ६	या रज्ज़ाको ७	या बुद्दूह २
या अल्लाह १	या हादियो ५	या ताहिरो ९
या हलीमो ८	या जामिओ ३	या दाइमो ४

मार्ग-भय-निवारण मन्त्र- "ॐ नमो वज्रे वज्रमयी कायाकोट अवर की ओट. कदे न लागे पिंडकूं चोट ॐ ह्रीं फुट स्वाहा।"

पहले इस मन्त्र को १०००० जप कर सिद्ध करले। फिर यात्रा पर चलते समय ३ बार जपे तो यात्रा में कोई भय उपस्थित न हो।

हाजिरात का अन्य यन्त्र

१६	१९	२२	१०
२१	१०	१५	२०
११		१७	४
१८	१३	१२	२३

सुख-प्रसव का मन्त्र - "मुक्ता पाशा: विमुक्ताशा: मुक्ता सूर्येण रश्मय, मुक्ता सर्व भयाद् गर्भ एहि मां चिर मां चिर स्वाहा।"

विधि- इस मन्त्र को पहले किसी शुभ मुहूर्त में ११००० जप कर सिद्ध करलें। फिर आवश्यकता के समय इस मन्त्र से जल को ८ बार अभिमंत्रित कर गर्भिणी को पिलायें तो प्रसव सुख पूर्वक हो जाएगा।

सर्व भय निवारण मन्त्र - "ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ग्लूं एं नमः स्वाहा।"

विधि- पहले किसी शुभ मुहूर्त में पूर्व की ओर मुँह करके इस मन्त्र का १२५०० की संख्या में जप करें। इससे मन्त्र सिद्ध हो जाएगा। फिर इस प्रकार प्रयोग में लाऐं - (१) मन्त्र को ७ बार जप कर अपने मुँह पर हाथ फेरने से शत्रु वशीभूत हो जाता है। हाथ फेरने से पूर्व शत्रु के नाम का उच्चारण अवश्य करना चाहिए। (२) किसी विवाद अथवा मुकद्दमे में जाते समय २१ बार मंत्र पढ़ कर जायें तो उसमें सफलता प्राप्त होगी। (३) इस मन्त्र को एक माला जप कर जो भी कार्य आरंभ किया जाएगा, उसमें सफलता प्राप्त होगी। (४) व्यवसाय के संबंध में जिस नगर अथवा ग्राम में जाय, वहाँ की नदी अथवा तालाब पर पहले एक माला मन्त्र जप लें, फिर नगर-ग्राम आदि में प्रवेश करें तो वहाँ पूर्ण सफलता मिलेगी।

॥ इति श्री बृहद् मन्त्र महार्णवे चतुर्थ खण्डस्समाप्तः ॥

ॐ

अथ वृहद् मन्त्र महार्णवम्

भाषा टीका सहितम्

पञ्चम खण्डः

[कवच, हृदय, स्तोत्रादि प्रकरणम्]

अथ बृहद् मन्त्र महार्णव पञ्चम खण्डस्य विषयानुक्रमणिका:

क्रमाङ्क: पृष्ठाङ्क

क्रमाङ्क: पृष्ठाङ्क

क्रमाङ्क	पृष्ठाङ्क

टिप्पणी: विभिन्न देवी-देवताओं से सम्बन्धित अन्य प्रमुख स्तोत्रादि 'द्वितीय खण्ड' में मन्त्रों के साथ दिए गए हैं।

॥ॐ॥

बृहद् मन्त्र महार्णव (पञ्चम खण्डः)

श्रीगणेशाय नमः॥ किसी भी देवी-देवता की पूजा-उपासना, मन्त्र-जप, होम व्रत आदि के अन्त में देवता की प्रसन्नता तथा स्व-अभिलाषाओं की पूर्ति के हेतु उससे सम्बन्धित स्तोत्र तथा आत्मरक्षार्थ कवच आदि का पाठ करना आवश्यक है। मन्त्र-जप अथवा पूजा-अर्चना के बिना भी स्तोत्रादि का पाठ आकांक्षापूर्ति में सहायक सिद्ध होता है। जिन लोगों को मन्त्र-जप, पूजा-विधानादि का ज्ञान न हो अथवा समयाभाव हो, वे केवल स्तोत्रादि के पाठ से भी मनोभिलाषाओं की पूर्ति का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं; क्योंकि स्तोत्रादि भी एक प्रकार के मन्त्र ही हैं और ये भी मन्त्र-जप की भाँति ही अपना प्रभाव प्रदर्शित करते हैं।

मन्त्र महार्णव के प्रस्तुत खण्ड में विभिन्न देवी-देवताओं के स्तोत्र, कवच आदि को संकलित किया गया है। ये सभी स्तोत्रादि प्राचीन तथा अनुभवसिद्ध प्रामाणिक ग्रंथों तथा महात्माओं के माध्यम से संगृहीत किए गए हैं। प्रत्येक देवी-देवता से सम्बन्धित स्तोत्रादि को पृथक्-पृथक् तथा एकत्र संकलित किया गया है। इससे पाठकों को पुस्तक के पृष्ठ अलग-अलग पलटने की

आवश्यकता नहीं पड़ेगी। किस स्तोत्रादि का पाठ कितनी संख्या में तथा कितने दिनों तक करना चाहिए, इसका उल्लेख साथ ही कर दिया गया है। जहाँ संख्या का उल्लेख न हो, वहाँ यथाशक्ति पाठ करना उचित है।

सर्वप्रथम विभिन्न देवताओं से सम्बन्धित एवं बाद में विभिन्न देवियों से सम्बन्धित स्तोत्र-कवचादि संकलित किए गए हैं। अन्त में, ग्रहादि से सम्बन्धित स्तोत्रादि भी दिए गए हैं। प्राय: प्रत्येक देवी-देवता का यन्त्र भी साथ ही दे दिया गया है।

श्रीगणेश से सम्बन्धित स्तोत्रादि – सर्वप्रथम आदिपूज्य गणनायक गणेश जी से सम्बन्धित स्तोत्र-कवचादि का उल्लेख किया जा रहा है, जो निम्नानुसार हैं:-

अथ श्री गणेश प्रातः स्मरणम् ॥ "प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं सिन्दूरपूरपरिशोभितगण्डयुग्मम्। उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्डमाखण्डलादि सुरनायकवृन्दवन्द्यम् ॥१॥ प्रातर्नमामि चतुराननवन्द्यमानमिच्छानुकूलमखिलं च वरं ददानम्। तंतुन्दिलं द्विरसनाधिपयज्ञसूत्रं पुत्रं विलासचतुरं शिवयोः शिवाय ॥२॥ प्रातर्भजाम्यभयदं खलु भक्तशोकदावानलं गणविभुं वरकुञ्जरास्यम्। अज्ञानकाननविनाशनहव्यवाहमुत्साहवर्धनमहं सुतमीश्वरस्य ॥३॥"

फलश्रुति- श्लोकत्रयमिदं पुण्यं सदा साम्राज्यदायकम्। प्रातरुत्थाय सततं यः पठेत्प्रयतः पुमान्। अर्थात्- जो व्यक्ति प्रातः काल उठकर उक्त तीनों पवित्र श्लोकों का संयतचित्त से नित्य पाठ करता है, उसे सदैव साम्राज्य की भाँति अर्थात् राजतुल्य सुख प्राप्त होता है।

अथ सङ्कटनाशन गणेश स्तोत्रम् ॥ "नारद उवाच ॥ प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं वि-नायकम् । भक्तावासं स्मरेन्नित्यमायुः कामार्थसिद्धये ॥१॥ प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम् । तृतीयं कृष्ण पिङ्गाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम् ॥२॥ लम्बोदरं पञ्चमं च षष्ठं विकटमेव च । सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्टमम् ॥३॥ नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम् । एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम् ॥४॥"

फलश्रुति – द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः । न च विघ्नभयं तस्य सर्व सिद्धिकरं प्रभो ॥५॥ विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम् । पुत्रार्थी लभते पुत्रान्मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥६॥ जपेद्गणपतिस्तोत्रं षड्भिर्मासैः फलं लभेत् । संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः ॥७॥ अष्टभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च लिखित्वा यः समर्पयेत् । तस्य विद्या भवेत्सर्वा गणेशस्य प्रसादतः ॥८॥ इति श्रीनारद पुराणे सङ्कट नाशन गणेश स्तोत्रं सम्पूर्णम् । अर्थात् – जो व्यक्ति गणेश जी के बारह नामों –(१) वक्रतुण्ड, (२) एकदन्त, (३) कृष्णपिङ्गाक्ष, (४) गजवक्त्र, (५) लम्बोदर, (६) विकट, (७) विघ्नराज, (८) धूम्रवर्ण, (९) भालचन्द्र, (१०) विनायक, (११) गणपति तथा (१२) गजानन – इन बारह नामों का प्रातः, मध्याह्न तथा सायं – इन तीनों संध्याओं में पाठ करता है, उसे किसी भी प्रकार के विघ्न का भय नहीं रहता । इन नामों का स्मरण समस्त सिद्धियों को देने वाला है । इस स्तोत्र के पाठ से विद्याभिलाषी को विद्या, धनाभिलाषी को धन, पुत्रार्थी को पुत्र एवं मुमुक्षु को मोक्ष प्राप्त होती है। इस स्तोत्र का नित्य जप करते रहने से ६ मास में इच्छित-फल प्राप्त होता है तथा एक वर्ष में पूर्ण सिद्धि मिलती है – इसमें कोई सन्देह नहीं है ।

श्री गणेश पूजन यन्त्र
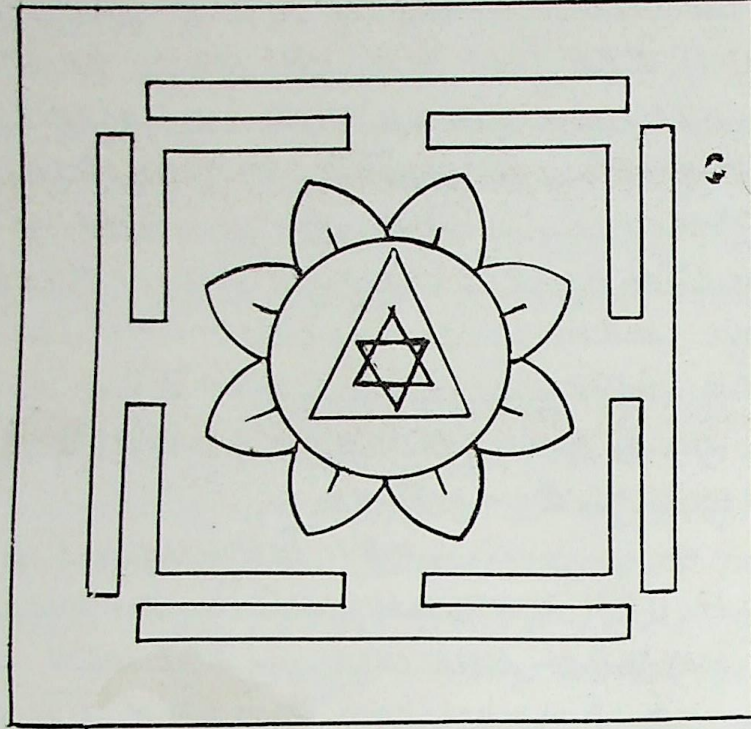
॥ अथ संसार मोहन गणेश कवचम् ॥

शनैश्चर उवाच ॥ सर्वदुःख विनाशाय दुःखप्रशमना-
-य च। कवचं विघ्ननिघ्नस्य वद वेद विदां वर ॥१॥
बभूव नो विवादश्च शक्त्या च मायया सह। तद्विघ्न
प्रशमार्थञ्च कवचं धारयाम्यहम् ॥२॥ श्रीविष्णुरुवा-
च ॥ विनायकस्य कवचं त्रिषुलोकेषु दुर्लभम्।
सुगोप्यञ्च पुराणेषु दुर्लभञ्चागमेषु च ॥३॥ उक्तं
कौथुमशाखायां सामवेदे मनोहरम्। कवचं विघ्न
नायस्य सर्वविघ्नहरं परम् ॥४॥ राज्यं देयं शिरो
देयं प्राणदेयाश्च सूर्यज। एवम्भूतञ्च कवचं
न देयं प्राणसङ्कटे ॥५॥ आविर्भावस्तिरोभावः स्वेच्छ-
या ऽस्य च मायया। नित्यो ऽयमेकदन्तश्च कवचं
चास्य वत्सक ॥६॥ पूजास्य नित्या स्तोत्रञ्च कल्पे
कल्पे ऽस्ति सन्तत। अस्यास्य जन्मनः पूर्वं मुनयश्च
सिषेविरे ॥७॥ यथामदावतारेषु जन्म विग्रह धारण-
म्। तथा गणेश्वरस्यापि जन्म शैलसुतोदरे ॥८॥

यद्धृत्वा मुनयः सर्वे जीवन्मुक्ताश्च भारते। निःशङ्काश्च सुराः सर्वे शत्रुपक्षविमर्दकाः ॥९॥ कवचं
बिभ्रतां मृत्युर्नयाति सन्निधिं धिया। नायुर्भयो नाशुभञ्च ब्रह्माण्डे न पराजयः ॥१०॥ दशलक्ष जपे
नैव सिद्धञ्च कवचं भवेत्। यो भवेत् सिद्धकवचो मृत्युं जेतुं च सक्षमः ॥११॥ सुसिद्धकवचो
वाग्मी चिरजीवी महीतले। सर्वत्र विजयी पूज्यो भवेद्ग्रहणमात्रतः ॥१२॥ मालामन्त्रमिदं पुण्यं
कवचञ्चेदमेव च। बिभ्रतां सर्वपापानि प्रणश्यन्ति सुनिश्चितम् ॥१३॥ भूत प्रेत पिशाचाश्च
कूष्माण्डा ब्रह्मराक्षसाः। डाकिन्यो योगिन्यश्चैव वेतालादय एव च ॥१४॥ बालग्रहा ग्रहश्चैव
क्षेत्रपालादयस्तथा। तेषाञ्च शब्दमात्रेण पलायन्ते च भीरवः ॥१५॥ आधयो व्याधयश्चैव
कोकाश्चैव भयावहाः। न यान्ति सन्निधिं तेषां गरुड़स्य यथोरगाः ॥१६॥ ऋजवे गुरुभक्ता
य स्वशिष्याय प्रकाशयेत्। खलाय परशिष्याय दत्त्वा मृत्युमवाप्नुयात् ॥१७॥

भावार्थः- गणेशजी का यह कवच तीनों लोकों को मोहित करने वाला, समस्त विघ्नों को नष्ट करने वाला, समस्त मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाला एवं सब प्रकार के भय, संकट, रोग, दोष, शोकादि का शमन करने वाला है। यह कवच दस लाख की संख्या में जप करने से सिद्ध होता है। जो व्यक्ति इस कवच को सिद्ध कर लेता है, वह मृत्यु को भी जीतने में सक्षम हो जाता है तथा उसे पृथ्वी पर सर्वत्र विजय प्राप्त होती है। भूत-प्रेत, वेताल, डाकिनी आदि उसका शब्द सुनते ही भाग जाते हैं। यह कवच केवल ऋत्विज, गुरु-भक्त तथा अपने शिष्य को ही देना चाहिए। दुष्ट तथा पर-शिष्य को देना मृत्यु भयदायक हो सकता है। विष्णुजी बोले - हे शनैश्चर! यह विनायक-कवच तीनों लोकों में दुर्लभ है।

"संसार मोहनस्यास्य कवचस्य प्रजापतिः। ऋषिश्छन्दश्च बृहती देवो लम्बोदरः स्वयम्॥
धर्मार्थ काम मोक्षेषु विनियोग प्रकीर्त्तितः। सर्वेषाचकवचान्च सारभूतमिदं मुने॥"

भावार्थः- इस 'संसार मोहन' नामक कवच के ऋषि प्रजापति हैं; छन्द बृहती है तथा देवता स्वयं लम्बोदर गणेशजी हैं। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष की प्राप्ति में इसका विनियोग है। यह कवच अन्य सभी कवचों का सारभूत है।

कवच- "ॐ गं हं श्री गणेशाय स्वाहा मे पातु मस्तकम्। द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो ललाटं मे सदावतु॥१॥ ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं गमिति च सन्ततं पातु लोचनम्। तालुकं पातु विघ्नेश सन्ततं धरणी तले॥२॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीमिति च सन्ततंपातु नासिकाम्। ॐ गौं गं शूर्पकर्णाय स्वाहा पात्वधरं मम॥३॥ दन्तानि तालुकां जिह्वां पातु मे षोडशाक्षरः। ॐ लं श्रीं लम्बोदरायेति स्वाहा गण्डं सदाऽवतु॥४॥ ॐ क्लीं ह्रीं विघ्ननाशाय स्वाहा कर्णं सदाऽवतु। ॐ श्रीं गं गजाननायेति स्वाहा स्कन्धं सदाऽवतु॥५॥ ॐ ह्रीं विनायकायेति स्वाहा पृष्ठं सदाऽवतु। ॐ क्लीं ह्रीमिति कङ्कालं पातु वक्षःस्थल च गम्॥६॥ करौ पादौ सदा पातु सर्वाङ्गं विघ्नविघ्नकृत्। प्राच्यां लम्बोदरः पातु आग्नेयां विघ्ननायकः॥७॥ दक्षिणे पातु विघ्नेशो नैर्ऋत्यान्तु गजाननः। पश्चिमे पार्वती पुत्रो वायव्यां शंकरात्मजः॥८॥ कृष्णस्यांशश्चोत्तरे च परिपूर्णतमस्य च। ऐशान्यामेकदन्तश्च हेरम्बः पातु चोर्ध्वतः॥९॥ अधो गणाधिपः पातु सर्वपूज्यश्च सर्वतः। स्वप्ने जागरणे चैव पातुमां योगिनां गुरुः॥१०॥"

माहात्म्य- "इति ते कथितं वत्स सर्वमन्त्रौघ विग्रहम्। संसार मोहनं नाम कवचं परमाद्भुतम्॥१॥ श्रीकृष्णेन पुरातत्त्वं गोलोके रास मण्डले। वृन्दावने विनीताय मह्यं दिनकरात्मज॥२॥

मयादत्तं च तुभ्यं च यस्मै कस्मै न दास्यसि। परं वरं सर्वपूज्यं सर्वसङ्कट तारणम् ॥ ३॥ गुरुमभ्यर्च्य विधिवत् कवचं धारयेत्तु यः। कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ सोऽपि विष्णुर्नसंशयः ॥ ४॥ अश्वमेध सहस्राणि वाजपेयशतानि च। ग्रहेन्दु कवचस्यास्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥ ५॥ इदं कवचमज्ञात्वा यो भजेच्छङ्करात्मजम्। शतलक्ष प्रजप्तो ऽपि न मन्त्रः सिद्धिदायकः ॥ ६॥ इति श्री ब्रह्मवैवर्ते संसार मोहनं नाम कवचं समाप्तम् ॥"

भावार्थः- यह 'संसार मोहन' नामक कवच परम अद्भुत है। पूर्वकाल में यह कवच गोलोक के रासमण्डल में भगवान् श्रीकृष्ण ने शनिश्चर को देते हुए कहा था - "हे शनैश्चर! तुम यह कवच चाहे जिस व्यक्ति को मत दे बैठना। यह कवच समस्त संकटों से मुक्ति दिलाने वाला है। जो व्यक्ति गुरुदेव की विधिवत् अर्चना करके इस कवच को कण्ठ अथवा भुजा में धारण करता है, वह विष्णु रूप हो जाता है। उसे सहस्रों अश्वमेध तथा सैकड़ों वाजपेय यज्ञों का पुण्य-फल प्राप्त होता है। जो व्यक्ति इस कवच को जाने बिना गणेशजी का जप करता है, वह सौ लाख मन्त्र जप कर भी सिद्धि प्राप्त नहीं कर पाता ॥"

श्रीगणेश न्यासः - अब श्रीगणेशजी का न्यास कहते हैं। आचमन तथा प्राणायाम करके निम्नानुसार न्यास करना चाहिए -

"दक्षिणहस्ते वक्रतुण्डाय नमः। वामहस्ते शूर्पकर्णाय नमः। ओष्ठे विघ्नेशाय नमः। अधरोष्ठे चिन्तामणये नमः। संपुटे गजाननाय नमः। दक्षिणपादे लम्बोदराय नमः। वामपादे एकदन्ताय

नमः। चिबुके ब्रह्मणस्पतये नमः। दक्षिणनासिकायां विनायकाय नमः। वाम नासिकायां ज्येष्ठराजाय नमः
दक्षिण नेत्रे विकटाय नमः। वामनेत्रे कंपिलाय नमः। दक्षिण कर्णे धरणीधराय नमः। वाम कर्णे
आशा पूरकाय नमः। नाभौ महोदराय नमः। हृदये धूम्रकेतवे नमः। ललाटे मयूरेशाय नमः। दक्षिण बाहौ
स्वानन्द वास कारकाय नमः। वाम बाहौ सच्चित्सुखधाम्ने नमः॥ "इति श्री गणेशन्यासः समाप्तम्॥

श्री गणपत्युपनिषद - गणपत्युपनिषद् का पाठ करने से जो फल प्राप्त होता है, उसका उल्लेख अन्त में किया गया है। गणनायक के उपासकों के लिए इस उपनिषद् का नित्य-पाठ आवश्यक है।

ॐ भद्रं कर्णेभिरिति शान्ति॥ हरि ॐ॥ नमस्ते गणपतये। त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि
त्वमेव केवलं कर्ताऽसि। त्वमेव केवलं धर्ताऽसि। त्वमेव केवलं हर्ताऽसि। त्वमेव सर्वं खल्विदं
ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम्। ऋतं वच्मि। अव त्वं माम्। अव वक्तारम्। अव श्रोतारम्।
अव दातारम्। अव धातारम्। अवनूचानमव शिष्यम्। अव पश्चात्तात्। अव पुरस्तात्। अव
चोत्तरात्तात्। अव दक्षिणात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। अव धरात्तात्। सर्वतो मां पाहि पाहि
समन्तात्। त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः। त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः। त्वं सच्चिदानन्दाऽद्वितीयोऽ
सि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि। सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते। सर्वं
जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति। सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति। सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति। त्वं भूमि
रापोऽनलोऽनिलो नभः। त्वं चत्वारि वाक्यपदानि। त्वं गुणत्रयातीतः। त्वं कालत्रयातीतः। त्वं
देहत्रयातीतः। त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम्। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्नि

श्रीगणपति पूजन यन्त्र
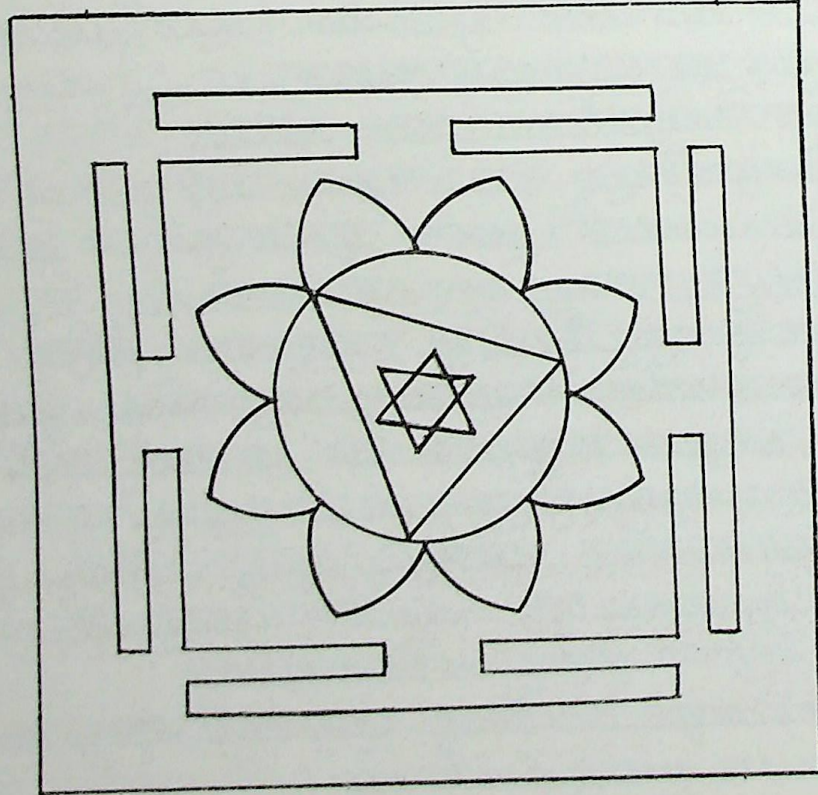
स्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्। गणादि पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम्। अनुस्वारः परतः अर्धेन्दु लसितम्। तारेण रुद्धम्। एतत्तव मनुस्वरूपम्। गकारः पूर्व रूपम्। अकारो मध्यरूपम्। अनुस्वारश्चान्त्य रूपम्। बिन्दुरुत्तर रूपम्। नादः संधानम्। संहिता सन्धिः। सैषा गणेश विद्या। गणक ऋषिः निचृद्गायत्री छन्दः श्रीमहागणपतिर्देवता। ओं गम्। (गणपतयेनमः) एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।

एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमङ्कुश धारिणम्। अभयं वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम्॥ रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्। रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्त पुष्पैः सुपूजितम्॥ भक्तानुकम्पितं देवं जगत्कारणमच्युतम्। आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृते पुरुषात्परम्॥ एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः॥

नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्न विनाशिने शिवसुताय श्री वरदमूर्त्तये नमो नमः।

फलश्रुतिः एतदथर्वशिरो यो ऽधीते स ब्रह्म भूयाय कल्पते। स सर्व विघ्नैर्न बाध्यते। स सर्वतः सुखमेधते। स पञ्च महापातकोपपातकात्प्रमुच्यते। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायं प्रातः प्रयुंजानो ऽपापो भवति। धर्मार्थकाम मोक्षं च विन्दति। इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम्। यो यदि मोहाद्दास्यति स पापीयान्भवति। सहस्रावर्तनाद्यं यं काममधीते तं तमनेन साधयेत्। अनेन गणपतिमभिषिञ्चति स वाग्मी भवति। चतुर्थ्यामनश्नञ्जपति स विद्यावान्भवति। इत्यथर्वण वाक्यम्। ब्रह्माद्याचरणं विद्यात्। न बिभेति कदाचनेति। यो दूर्वांकुरैर्यजति स वैश्रवणोपमो भवति। यो लाजैर्यजति स यशोवान्भवति। स मेधावान्भवति। यो मोदक सहस्रेण यजति स वाञ्छितफलमाप्नोति। यः साज्य समिद्भिर्यजति स सर्वं लभते। अष्टौ ब्राह्मणान्सम्यग्ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वी भवति। महा विघ्नात्प्रमुच्यते। स सर्व विद् भवति। य एवं वेदेत्युपनिषत्। हरि ओं तत्सत्। ॐ भद्रं कर्णेभिरिति शान्तिः॥

माहात्म्य- यह गणपत्युपनिषद् अथर्ववेद की उपनिषद् है। जो व्यक्ति इस उपनिषद् का पाठ करता है, वह ब्रह्मत्व प्राप्त करने का अधिकारी हो जाता है। किसी प्रकार के विघ्न उसके लिए बाधक नहीं रहते। वह सर्वत्र सुख प्राप्त करता है तथा पाँचों प्रकार के महापातकों एवं उप-पातकों से मुक्त हो जाता है। इसका सायंकाल पाठ करने से दिन के पाप नष्ट हो जाते हैं। प्रातःकाल पाठ करने से रात्रि के पाप नष्ट होते हैं। जो व्यक्ति इसका प्रातः- सायं-दोनों समय पाठ

करता है, वह निष्पाप हो जाता है। वह धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष को प्राप्त करता है। इस अथर्वशीर्ष को, जो शिष्य न हो, उसे नहीं देना चाहिए। जो व्यक्ति मोह के कारण इसे अपात्र को देता है, वह पातकी बन जाता है।

इस उपनिषद् का १ सहस्र (1000) बार पाठ करने वाले व्यक्ति की समस्त कामनायें पूर्ण होती हैं। इसके द्वारा गणपति को स्नान कराने वाला सुवक्ता बन जाता है। जो व्यक्ति चतुर्थी तिथि को उपवास रखकर इस उपनिषद् का पाठ करता है, वह विद्वान् होता है। जो व्यक्ति इसके द्वारा तपश्चरण करता है, उसे भय प्राप्त नहीं होता। जो व्यक्ति इस का पाठ करते हुए दूर्वांकुरों से गणपति का पूजन करता है, वह कुबेर जैसा धनी हो जाता है। जो लाजा (चावल की खीलों) द्वारा पूजन करता है, वह यशस्वी तथा मेधावी होता है। जो सहस्र अर्थात् एक हजार लड्डुओं द्वारा पूजन करता है, वह वाञ्छित फल प्राप्त करता है। जो व्यक्ति इसे आठ ब्राह्मणों को सम्यक् रीति से ग्रहण कराता है, वह सूर्य के समान तेजस्वी हो जाता है। सूर्यग्रहण के समय महानदी में अथवा गणेश-प्रतिमा के समीप इसका जप करने से मन्त्र-सिद्धि होती है। मन्त्र-सिद्धि वाला व्यक्ति महाविघ्न से मुक्त हो जाता है। इस उपनिषद् के माहात्म्य को जो इस प्रकार जानता है, वह सर्वज्ञ हो जाता है।

[टिप्पणी- गणपति आदि विभिन्न देवी-देवताओं से सम्बन्धित अनेक स्तोत्र-कवच-हृदय आदि प्राप्त होते हैं, परन्तु इस ग्रंथ में प्रत्येक देवी-देवता से सम्बन्धित केवल उन्हीं प्रमुख स्तोत्रादि को संकलित किया गया है, जो विशेष प्रभावकारी एवं फलदायक सिद्ध होते हैं।]

श्रीविष्णु से सम्बन्धित प्रमुख स्तोत्रादि निम्नलिखित हैं –

श्री विष्णु प्रातः स्मरणम् – "प्रातः स्मरामि भवभीतिमहार्तिशान्त्यै नारायणं गरुडवाहन मब्जनाभम्। ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं चक्रायुधं तरुणवारिजपत्रनेत्रम् ॥१॥ प्रातर्नमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना पादारविन्दयुगलं परमस्य पुंसः। नारायणस्य नरकार्णवतारणस्य पारायणप्रवणविप्र परायणस्य ॥२॥ प्रातर्भजामि भजतामभयङ्करं तं प्राक् सर्वजन्मकृतपापभयापहत्यै। यो ग्राहवक्त्रपतिताङ्घ्रिगजेन्द्रघोर शोकप्रणाशनकरो धृत शङ्ख चक्रः ॥३॥ इति श्री विष्णोः प्रातःस्मरणम् ॥

उक्त श्लोकों का नित्य प्रातःकाल अथवा सोकर उठते ही यथाशक्ति संख्या में जप अथवा उच्चारण करने से पाप नष्ट होते हैं। मनोभिलाषायें पूर्ण होती हैं तथा दिन सुख से बीतता है।

श्री त्रैलोक्य मङ्गल विष्णु कवचम् – "श्रीनारद उवाच॥ भगवन्सर्वधर्मज्ञ कवचंयत्प्रकाशितम्। त्रैलोक्य मङ्गलन्नाम कृपया कथय प्रभो॥ सनत्कुमार उवाच॥ शृणु वक्ष्यामि विप्रेन्द्र कवचम्परमाद्भुतम्। नारायणेन कथितं कृपया ब्रह्मणे पुरा॥ ब्रह्मणा कथितम्मह्यम्परं स्नेहाद्वदामि ते। अति गुह्यतरन्तत्त्वम्ब्रह्ममन्त्रौघ विग्रहम्॥ यद्धृत्वा पठनाद् ब्रह्मा सृष्टिंवितनुते ध्रुवम्। यद्धृत्वा पठनात्पाति महालक्ष्मीर्ज्जगत्त्रयम्॥ पठनाद्धारणाच्छम्भुः संहर्त्ता सर्व्वमन्त्रवित्। त्रैलोक्य जननी दुर्गा महिषादिमहासुरान्॥ वरदृप्तान्जघानैव पठनाद्धारणाद्यतः। एवमिन्द्रादयस्सर्व्वे सर्व्वैश्वर्यमवाप्नुयुः॥ इदङ्कवचमत्यन्त गुप्तङ्कुत्रापिनो वदेत्। शिष्याय भक्तियुक्ताय साधकाय प्रकाशयेत्। शठाय परशिष्याय दत्त्वामृत्युमवाप्नुयात्॥

कवच — त्रैलोक्य मङ्गलस्यास्य कवचस्य प्रजापति। ऋषिश्छन्दश्चगायत्री देवो नारायणः स्वयम्। धर्म्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः॥

प्रणवो मे शिरः पातु नमोनारायणाय च। भालम्मे नेत्र युगलो ऽष्टाण्णोभक्ति मुक्तिदः॥ क्लीम्पायाच्छ्रोत्र युग्मञ्चैकाक्षरस्सर्व्वमोहनः। क्लीं कृष्णाय सदा घ्राण गोविन्दायेति जिह्विकाम॥ गोपीजनपदंवल्लभाय स्वाहा नमम्मम। अष्टादशाक्षरामन्त्रः कण्ठंपातु दशाक्षरः॥ गोपीजन पदंवल्लभाय स्वाहा भुजद्वयम्। क्लीं ग्लौं क्लीं श्याम लाङ्गाय नमः स्कन्धौ दशाक्षरः॥ क्लीं कृष्ण क्लीं करौ पायात्क्लीं कृष्णायाङ्गतो ऽवतु। हृदयम्भुवनेशानि क्लीं कृष्णाय स्तनौ मम॥ गोपालाया ग्नि जायान्तङ् कुक्षियुग्मं सदावतु। क्लीं कृष्णाय सदापातु पार्श्वयुग्म मनुत्तमः॥ कृष्ण गोविन्दकौ कट्यां स्मराद्यौ ङे युतौ मनुः। अष्टाक्षरः पातुनाभिं कृष्णेतिद्व्यक्षरो ऽवतु॥ पृष्ठ क्लीं कृष्ण कङ्कालं क्लीं कृष्णाय द्विणान्तकः। सक्थिनी सततम्पातु श्रीं ह्रीं क्लीं पृष्ठकद्वयम्॥ ऊरू सप्ताक्षरः पायात्त्रयोदशाक्षरो ऽवतु। श्रीं ह्रीं क्लीं पदतो पातु गोपीजनवल्लभ पदतः॥ भायस्वाहे -ति पातुं वै क्लीं ह्रीं श्रीं सदशार्ण्णकः। जानुनी च सदा पातु ह्रीं श्रीं क्लीं च दशाक्षरः॥ त्रयोदशाक्षरः पातु जङ्घे चक्राद्युदायुधः। अष्टादशाक्षरी ह्रीं श्रीं पूर्व्वको विंशद्वर्णकः॥ सर्वाङ्गम्मे सदापातु द्वारकानायको बली। नमो भगवते पश्चाद्वासुदेवाय तत्परम्॥ ताराद्योद्वादशार्ण्णो ऽयम्प्राच्यामां सर्व्वदा ऽवतु। श्रीं ह्रीं क्लीं च दशार्ण्णस्तु क्लीं ह्रीं श्रीं षोडशार्ण्णकः॥ गदाद्युदायुधो विष्णुर्म्मामग्नेर्द्दिशिरक्षतु। ह्रीं श्रीं दशाक्षरो मन्त्रो दक्षिणे मां सदावतु॥ तारो नमो भगवते रुक्मिणी वल्लभाय च। स्वाहेति षोडशार्ण्णो ऽयन्नैर्ऋत्यान्दिशि रक्षतु॥ क्लीं हृषी-

केशदेशाय नमोमां वारुणेऽवतु। अष्टदशार्णः कामान्तो वायव्येमां सदावतु॥ श्रीं माया काम कृष्णा-य ह्रीं गोविन्दायद्वितीयेमनुः। द्वादशार्णात्मको विष्णुरुत्तरे मां सदावतु॥ वाग्भावङ्कामं कृष्णाय ह्रीं गोविन्दाय तत्परम्। श्रीं गोपीजनवल्लभाते भय स्वाहा हसौस्ततः॥ द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो मा-मैशान्ये सदावतु। कालियस्य फणामध्ये दिव्यन्नृत्यङ्करोतितम्॥ नमामि देवकीपुत्रन्नृत्यराजान-मच्युतम्। द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रोऽप्यधोमां सर्व्वदावतु॥ कामदेवाय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात्देवामाम्पातुचोर्द्ध्वतः॥"

माहात्म्य- इति ते कथितंविप्र ब्रह्ममन्त्रौघविग्रहम्। त्रैलोक्यमङ्गलन्नाम कवचम्ब्र-ह्मरूपकम्॥ ब्रह्मणा कथितम्पूर्व्वं नारायणमुखाच्छ्रुतम्। तवस्नेहान्मया ऽऽख्यातम्प्रवक्तव्यन्नकस्यचित्। गुरुम्प्रणम्य विधिवत्कवचम्प्रपठेत्ततः। सकृद्द्विस्त्रिर्यथाज्ञानं सोऽपि सर्व्वतपोमयः॥ मन्त्रेषु सकले-ष्वेव देशिको नात्र संशयः। शतमष्टोत्तरञ्चास्य पुरश्चर्य्या विधिः स्मृतः॥ हवनादीन्दशांशेन कृत्वा तत्सा-धयेद् ध्रुवम्। यदि स्यात्सिद्ध कवचो विष्णुरेव भवेत्स्वयम्॥ मन्त्रसिद्धिर्भवेत्तस्य पुरश्चर्य्या विधानतः। स्पर्द्धामुद्धूयसततं लक्ष्मीर्व्वाणीवसेत्ततः॥ पुष्पाञ्जल्यष्टकन्दत्वा मूलेनैव पठेत्सकृत्। दशवर्ष-सहस्राणाम्पूजायाः फलमाप्नुयात्॥ भूर्ज्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थान्धारयेद्यदि। कण्ठे वादक्षिणे बाहौ सोऽपि विष्णुर्न्न संशयः॥ अश्वमेध सहस्राणि वाजपेय शतानि च। महादानादियान्येव प्रादक्षिण्यम्भुव-स्तया॥ कलान्नार्हन्तितान्येव सकृदुच्चारणात्ततः। कवचस्य प्रसादेन जीवन्मुक्तो भवेन्नरः॥ त्रैलो-क्यङ् क्षोभयत्येव त्रैलोक्य विजयी भवेत्। इदङ्कवचनज्ञात्वायजेद्यः पुरुषोत्तमम्॥ शतलक्ष प्रजप्तो-ऽपि न मन्त्रस्तस्य सिद्ध्यति॥ इति श्री त्रैलोक्य मङ्गलं विष्णु कवचं समाप्तम्॥

मं०
म०
२०६४

श्रीविष्णु पूजन यन्त्र
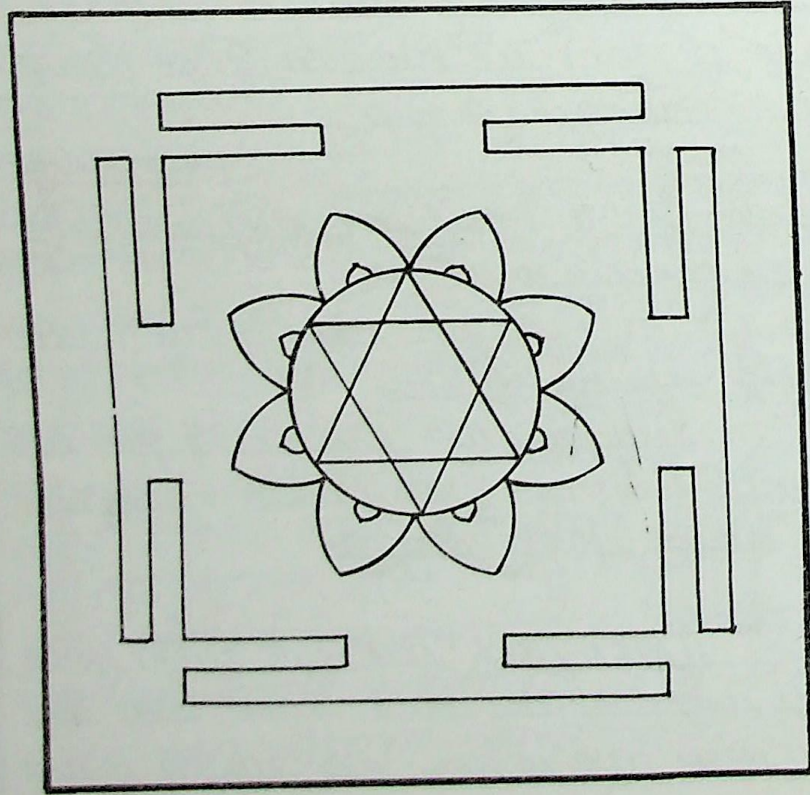
फलश्रुति:- उक्त त्रैलोक्य मङ्गल विष्णु कवच का नित्य नियम पूर्वक पाठ करने से जपकर्त्ता की समस्त कामनाएं पूर्ण होती हैं। गुरुजी को प्रणाम करके इस कवच का पाठ करना चाहिए। यह कवच सर्वोपरि मन्त्र है। १०८ बार जप करके दशांश हवन करने से इसका पुरश्चरण होता है इस कवच को सिद्ध कर लेने वाला व्यक्ति स्वयं विष्णु स्वरूप होजाता है तथा लक्ष्मी एवं सरस्व-ती - दोनों ही उसकी निरन्तर सेवा करती रहती हैं। आठ पुष्पांजलि देकर इस कवच का नित्य आठ बार दशवर्ष तक पाठ करते रहने से सहस्रों पूजनों, सहस्रों अश्वमेध यज्ञों तथा सैकड़ों वाज-पेय यज्ञों का फल प्राप्त होता है। इस कवच को भोजपत्र के ऊपर लिख कर स्वर्ण के ताबीज में मढ़ कर कण्ठ अथवा दाँयी भुजा में धारण करने वाला पुरुष विष्णुरूप होता है। इस कवच की कृपा से मनुष्य को जीवन्मुक्ति प्राप्त होती है। इस

भा०
टी०

कवच का पाठ एवं धारण करने वाला मनुष्य त्रैलोक्य विजयी होता है । इस कवच का ज्ञान-प्राप्त किए बिना अर्थात् इसका पाठ किए बिना किसी भी मन्त्र को यदि एक करोड़ की संख्या में जपा जाय, तो भी सिद्धि प्राप्त नहीं होती ॥इति॥

श्री विष्णु पञ्जर स्तोत्रम् - श्रीगणेशाय नमः। ॐ अस्य श्री विष्णु पञ्जर स्तोत्र मंत्रस्य नारद ऋषिः अनुष्टुप छन्दः श्री विष्णु परमात्मा देवता अहं बीजम् सोऽहं शक्तिः ॐ ह्रीं कीलकम् मम सर्वदेह रक्षणार्थे जपे विनियोगः।

नारद ऋषये नमः गुरवे। श्री विष्णु परमात्म देवतायै नमः हृदये। अहं बीजं गुह्यं। सोऽहं शक्तिः पादयोः। ॐ ह्रीं कीलकं पादाग्रे। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः इति मन्त्रः।

ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रः करतल करपृष्ठाभ्यां नमः। इति करन्यासः।

अथ हृदयादिन्यासः। ॐ ह्रां हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रूं शिखायै वषट्। ॐ ह्रैं कवचाय हुम्। ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ह्रः अस्त्राय फट्। इति अङ्गन्यासः। अहं बीजं प्राणायामं मंत्रत्रयेण कुर्यात्।

अथ ध्यानम्। परं परस्मात्प्रकृतेरनादिमेकं निविष्टं बहुधा गुहायाम्। सर्वाणि भूतानि चराचरस्थं नमामि विष्णुं जगदेकनाथम्॥१॥ ॐ विष्णु पञ्जरकं दिव्यं सर्वदुष्टनिवारणम्

उग्रतेजो महावीर्यं सर्वशत्रुनिकृंतनम् ॥२॥ त्रिपुरं दहमानस्य हरस्य ब्रह्मणोदितम् । तदहं संप्रव-
क्ष्यामि आत्मरक्षाकरं नृणाम् ॥३॥ पादौ रक्षतु गोविन्दो जंघे चैव त्रिविक्रमः । ऊरू मे केशवः
पातु कटिं चैव जनार्दनः ॥४॥ नाभिं चैवाच्युतः पातु गुह्यं चैव तु वामनः । उदरं पद्मनाभश्च
पृष्ठं चावतु माधवः ॥५॥ वामपार्श्वे तथा विष्णुर्दक्षिणे मधुसूदनः । बाहू वै वासुदेवश्च हृद
दामोदरस्तथा ॥६॥ कण्ठं रक्षतु वाराहः कृष्णश्च मुखमण्डलम् । माधवः कर्णमूले तु हृषीकेश-
श्च नासिके ॥७॥ नेत्रे नारायणो रक्षेल्ललाटं गरुडध्वजः । कपोलौ केशवो रक्षेद्वैकुण्ठः सर्व-
तोदिशम् ॥८॥ श्रीवत्साङ्कश्च सर्वेषामङ्गानां रक्षको भवेत् । पूर्वस्यां पुण्डरीकाक्षः आग्नेय्यां
श्रीधरस्तथा ॥९॥ दक्षिणे नारसिंहश्च नैर्ऋत्यां माधवोऽवतु । पुरुषोत्तमो मे वारुण्यां वायव्यां
च जनार्दनः ॥१०॥ गदाधरस्तु कौबेर्यामीशान्यां पातु केशवः । आकाशे च गदा पातु पाताले
च सुदर्शनम् ॥११॥ संनद्धः सर्वगात्रेषु प्रविष्टो भुवनेश्वरः । विष्णुपञ्जरविष्टोऽहं विचरामि
महीतले ॥१२॥ राजद्वारेऽपथे घोरे संग्रामे शत्रुसंकटे । नदीषु च रणे चैव चौरव्याघ्रभयेषु
च ॥१३॥ डाकिनी प्रेत भूतेषु भयं तस्य न जायते । रक्ष रक्ष महादेव रक्ष रक्ष जनेश्वर ॥१४॥
रक्षंतु देवताः सर्वाः ब्रह्मा विष्णु महेश्वराः । जले रक्षतु वाराहः स्थले रक्षतु वामनः ॥१५॥ अट-
व्यां नारसिंहश्च सर्वतः पातु केशवः । दिवा रक्षतु मां सूर्यो रात्रौ रक्षतु चन्द्रमाः ॥१६॥ पंथानं
दुर्गमं रक्षेत्सर्वमेव जनार्दनः । रोगविघ्नहतश्चैव ब्रह्महा गुरुतल्पगः ॥१७॥ स्त्रीहंता बाल
घाती च सुरापी वृषलीपतिः । मुच्यते सर्वपापेभ्यो यः पठन्नात्र संशयः ॥१८॥ अपुत्रो
लभते पुत्रः धनार्थी लभते धनम् । विद्यार्थी लभते विद्यां मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥१९

आपदो हरते नित्य विष्णुस्तोत्रार्थसंपदा। यस्त्विदं पठते स्तोत्रं विष्णु पञ्जर मुत्तमम् ॥२०॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति। गोसहस्र फलं तस्य वाजपेयशतस्य च ॥२१॥ अश्वमेध सहस्रस्य फलं प्राप्नोति मानवः। सर्व कामं लभे -दस्य पठनान्नात्र संशयः ॥२२॥ जले विष्णुः स्थले विष्णुः विष्णुः पर्वतमस्तके। ज्वालामालाकुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥२३॥

॥ इति श्री ब्रह्माण्डपुराणे नारद इन्द्र संवादे श्रीविष्णु पञ्जर स्तोत्रम् समाप्तम् ॥

फलश्रुति- इस विष्णु पंजर स्तोत्र का नित्य पाठ करने से साधक की मनोकामनायें पूर्ण होती हैं तथा समस्त संकटों से रक्षा होती है। यह समस्त पापों को नष्ट करने वाला तथा गोदान, अश्वमेध एवं वाजपेय यज्ञों के फल को देने वाला है। इसके पाठ से रोग, शोक, भय, क्लेश

श्री विष्णु पूजन यन्त्र
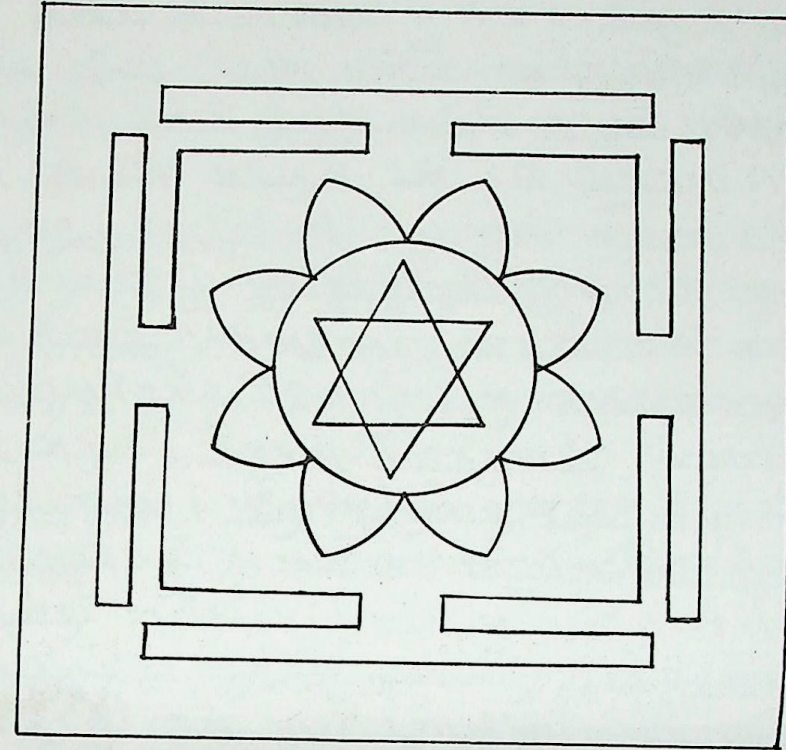
विघ्न, संकट आदि दूर हो जाते हैं। पुत्रहीन को पुत्र, धनार्थी को धन, विद्यार्थी को विद्या तथा मोक्षार्थी को मोक्ष प्राप्त होती है। इसका नित्य पाठ करने वाला समस्त पापों से मुक्त होकर विष्णुलोक को जाता है तथा जीवन में उसकी समस्त आकांक्षाएं सफल होती हैं॥ इति॥

अथ ध्रुवकृत भगवत्स्तुतिः- "ध्रुव उवाच॥ योऽन्तः प्रविश्य मम वाचमिमां प्रसुप्तां संजीवयत्यखिलशक्तिधरः स्वधाम्ना। अन्यांश्च हस्तचरणश्रवणत्वगादीन् प्राणान्नमो भगवते पुरुषाय तुभ्यम्॥१॥ एकस्त्वमेव भगवन्निदमात्मशक्त्या मायाख्ययोरुगुणया महदाद्यशेषम्। सृष्ट्वानुविश्य पुरुषस्तदसद्गुणेषु नानेव दारुषु विभावसुवद् विभासि॥२॥ त्वद्दत्तया वयुनयेदमचष्ट विश्वं सुप्तप्रबुद्ध इव नाथ भवत्प्रपन्नः। तस्यापवर्ग्यशरणं तव पादमूलं विस्मर्यते कृतविदा कथमार्तबन्धो॥३॥ नूनं विमुष्टमतयस्तव मायया ते ये त्वां भवाप्ययविमोक्षणमन्यहेतोः। अर्चन्ति कल्पकतरुं कुणपोपभोग्यमिच्छन्ति यत्स्पर्शजं निरयेऽपि नृणाम्॥४॥ या निर्वृतिस्तनुभृतां तव पादपद्म ध्यानाद् भवज्जनकथाश्रवणेन वा स्यात्। सा ब्रह्मणि स्वमहिमन्यपि नाथ मा भूत् किं त्वन्तकासिलुलितात् पततां विमानात्॥५॥ भक्तिं मुहुः प्रवहतां त्वयि मे प्रसङ्गो भूयादनन्त महताममलाशयानाम्। येनाञ्जसोल्बणमुरुव्यसनं भवाब्धिं नेष्ये भवद्गुणकथामृतपानमत्तः॥६॥ ते न स्मरन्त्यतितरां प्रियमीश मर्त्यं ये चान्वदः सुतसुहृद्गृहवित्तदाराः। ये त्वब्जनाभ भवदीय पदारविन्दसौगन्ध्य लुब्ध हृदयेषु कृतप्रसङ्गाः॥७॥ तिर्यङ्नगद्विजसरीसृपदेवदैत्य मर्त्यादिभिः परिचितं सदसद्विशेषम्। रूपं स्थविष्ठमज ते महदाद्यनेकं नातः परं परम वेद्मि न यत्र वादः

श्रीगोपाल पूजन यन्त्र
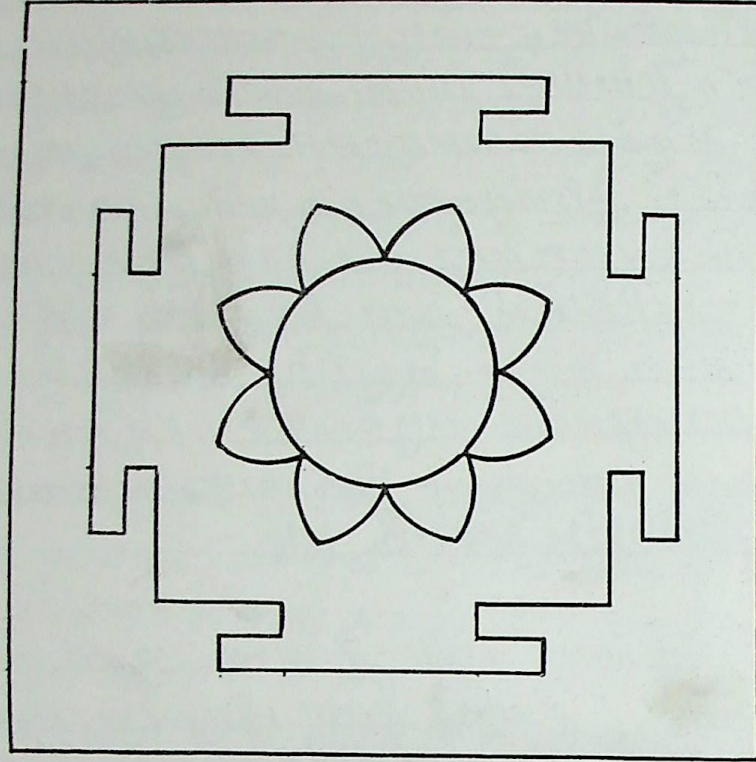
॥८॥ कल्पान्त एतदखिलं जठरेण गृह्णन् शेते पुमान् स्वदृगनन्तसखस्तदङ्के। यन्नाभिसिन्धुरुह काञ्चनलोकपद्म गर्भे द्युमान् भगवते प्रणतोऽस्मि तस्मै ॥९॥ त्वं नित्यमुक्तपरिशुद्धविबुद्ध आत्मा कूटस्थ आदि पुरुषो भगवांस्त्र्यधीशः। यद् बुद्ध्यवस्थितिमखण्डितया स्वदृष्ट्या द्रष्टास्थिताविधिमखो व्यतिरिक्त आस्से ॥१०॥ यस्मिन् विरुद्धगतयो ह्यनिशं पतन्ति विद्यादयो विविधशक्तय आनुपूर्व्यात्। तद् ब्रह्म विश्वभवमेकमनन्तमाद्यमानन्दमात्रमविकारमहं प्रपद्ये ॥११॥ सत्याऽऽशिषो हि भगवंस्तव पादपद्ममाशीस्तथानुभजतः पुरुषार्थमूर्तेः। अप्येवमर्य भगवन् परिपाति दीनान् वाश्रेव वत्सकमनुग्रह कातरोऽस्मान् ॥१२॥

॥इति श्रीमद्भागवते महापुराणे चतुर्थ स्कन्धे नवमेऽध्याये ध्रुवकृता भगवत्स्तुतिः सम्पूर्णा॥

टिप्पणी– उक्त स्तोत्र का नित्य पाठ मनोभिलाषा पूरक है।

अथ श्रीविष्णु हृदय स्तोत्रम् - श्रीगणेशाय नमः। अस्य श्रीविष्णुहृदयस्तोत्रस्य सङ्कर्षण ऋषिः अनुष्टुप् त्रिष्टुप् गायत्री च यथायोग छन्दः श्रीमहाविष्णुः परमात्मा देवता श्रीमहाविष्णु प्रीत्यर्थे विनियोगः।

ममाग्रतस्सदा विष्णुः पृष्ठतश्चापि केशवः। गोविन्दो दक्षिणे पार्श्वे वामे च मधुसूदनः॥ उपरिष्टात्तु वैकुण्ठो वराहः पृथिवीतले। अवान्तरदिशो यास्तु तासु सर्वासु माधवः॥२॥ गच्छतस्तिष्ठतो वापि जाग्रतस्स्वपितोऽपि वा। नरसिंहकृता गुप्तिः वासुदेवमयो ह्यहम्॥३॥ अव्यक्तं चैवास्य योनौ वदन्ति व्यक्तं ते ऽहं दीर्घमायुर्गतिञ्च। वह्निं वक्त्रं चन्द्रसूर्यौ च नेत्रे दिशि श्रोत्रे प्राणमाहुश्च वायुम्॥४॥ वाचं वेदा हृदयं वै नभश्च पृथ्वी पादौ तारका रोमकूपाः। साङ्गोपाङ्गो ह्यधिदेवताश्च विद्या ह्युपस्थं ते सर्व एते समुद्राः॥५॥ तं देवदेवं शरणं प्रजानां यज्ञात्मकं सर्वलोकं प्रतिष्ठम्। यज्ञं वरेण्यं वरदं वरिष्ठं ब्रह्माणमीशं पुरुषं नमस्ते॥६॥ आद्यं पुरुषमीशानं पुरुहूतं पुरुष्टुतम्। ऋतमेकाक्षरं ब्रह्म व्यक्ताव्यक्तं सनातनम्॥७॥ महाभारतकाख्यानं कुरुक्षेत्रं सरस्वतीम्। केशवं गाञ्च गङ्गाश्च कीर्तयन्नावसीदति॥८॥ ॐ भूः पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ भुवः पुरु-षाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ सुवः पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ भूर्भुवस्सुवः पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ प्रद्युम्नाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासु-देवाय नमो नमः। ॐ अनिरुद्धाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ भवोद्भवाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ केशवाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय वासु-देवाय नमो नमः। ॐ नारायणाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ माधवाय पुरुषाय

पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ गोविन्दाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ विष्णवे पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमोनमः। ॐ मधुसूदनाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ त्रिविक्रमाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवायनमोनमः। ॐ वामनाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवायनमोनमः। ॐ श्रीधराय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवायनमोनमः। ॐ हृषीकेशाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमोनमः। ॐ पद्मनाभाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमोनमः। ॐ सत्याय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमोनमः। ॐ ईशानाय पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ तत्पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ सत्पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः। ॐ प्रणवेन्दु विष्णो शतसहस्रनेत्र पुरुषाय पुरुषरूपाय वासुदेवाय नमो नमः।"

श्री नृसिंह पूजन यन्त्र
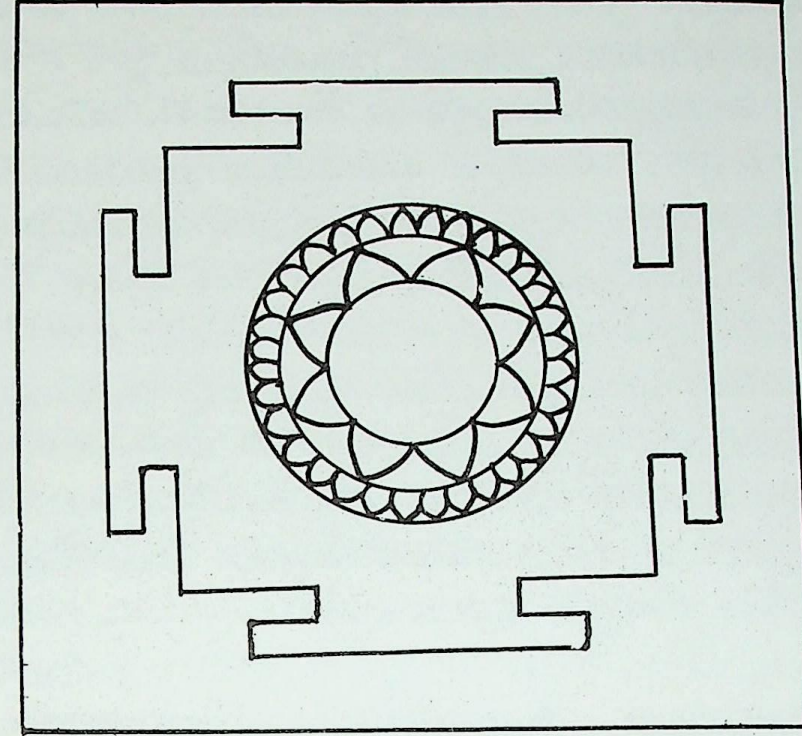
फलश्रुतिः- य इदं विष्णुहृदयमधीते ब्रह्महत्याया पूतो भवंति। पतितसम्भाषणात्पूतो भवंति। सुरापानात्पूतो भवंति। असत्यभाषणात्पूतो भवंति। अगम्यागमनात्पूतो भवंति। वृषलीगमनात्पूतो भवंति। अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवंति। ब्रह्मचारी सद्ब्रह्मचारी भवंति। अनेककतुसहस्रेणेष्टं भवंति। गायत्र्याः षष्टिसहस्राणि जप्तानि भवन्ति। चत्वारो वेदाश्चाधीता भवन्ति। सर्ववेदेषु ज्ञातो भवंति। सर्वतीर्थेषु स्नातो भवन्ति। यदि कस्यचिन्नब्रूयाच्छुचिनी भवन्ति। अष्टौ ब्राह्मणान् ग्राहयित्वा विष्णुलोकमाप्नोति। मानसेन गतिर्भवति। न नश्यंति मन्त्रः। यत्र यत्रेच्छेत्तत्र तत्रोपजायते। स्मरति चात्मानं भगवान्महाविष्णुरित्याह॥ इति श्रीविष्णुहृदय स्तोत्रं समाप्तम्॥

माहात्म्य- उक्त विष्णुहृदय स्तोत्र का पाठ करने वाला व्यक्ति ब्रह्महत्या, पतित-सम्भाषण, सुरापान, असत्य-भाषण, अगम्या-गमन, वृषली-गमन एवं अभक्ष्य-भक्षण आदि पापों से मुक्त हो जाता है। ब्रह्मचारी सद्ब्रह्मचारी बन जाता है। अनेक सहस्र यज्ञों का फल प्राप्त होता है। साठ सहस्र गायत्री-मन्त्र के जप का फल मिलता है। चारों वेदों का ज्ञाता तथा सब शास्त्रों का जानकार होता है। सब तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त होता है। हर किसी को यह स्तोत्र नहीं बताना चाहिए। आठ ब्राह्मणों को यह स्तोत्र लिख कर दान करने से विष्णु लोक प्राप्त होता है। इसके प्रभाव से सिद्ध मन्त्र नष्ट नहीं होता। सब स्थानों पर विजय मिलती है तथा इसका स्मरण एवं पाठ करने से भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं।

टिप्पणी- श्रीविष्णु के उक्त ५ स्तोत्रादि विशेष फलदायक हैं। इनके अतिरिक्त 'श्रीविष्णु सहस्रनाम' एवं 'श्रीगोपाल सहस्रनाम' का नित्य-पाठ भी भुक्ति-मुक्ति दायक एवं कामना-पूरक होता है।

अथ शिव स्तोत्राणि - अब श्री शिव की उपासना से सम्बन्धित प्रमुख स्तोत्रादि को लिखा जाता है।

श्री शिवस्य प्रातः स्मरणम् - निम्नलिखित श्लोकों द्वारा प्रातःकाल शिव जी का स्मरण करना चाहिए-

प्रातः स्मरामि भवभीतिहरं सुरेशं गङ्गाधरं वृषभवाहनमम्बिकेशम्। खट्वाङ्गशूलवरदाभयहस्तमीशं संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥१॥ प्रातर्नमामि गिरिशं गिरिजार्द्धदेहं सर्गस्थितिप्रलयकारणमादिदेवम्। विश्वेश्वरं विजितविश्वमनोऽभिरामं संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥२॥ प्रातर्भजामि शिवमेकमनन्तमाद्यं वेदान्तवेद्यमनघं पुरुषं महान्तम्। नामादिभेदरहितं षड्भावशून्यं संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ॥३॥ प्रातः समुत्थाय शिवं विचिन्त्य श्लोकत्रयं येऽनुदिनं पठन्ति। ते दुःखजातं बहुजन्मसञ्चितं हित्वा पदं यान्ति तदेव शम्भोः ॥४॥

माहात्म्य - जो व्यक्ति नित्य प्रातःकाल उक्त तीनों श्लोकों का पाठ करता है, वह अनेक जन्मों के संचित पापों एवं दुःखों से मुक्त होकर शिवजी के कल्याणमय पद को प्राप्त करता है।

श्री अमोघ शिव कवचम् - निम्नलिखित अमोघ शिव कवच स्कन्द पुराण के ब्रह्मोत्तर खण्ड से उद्धृत किया गया है। यह परम गुह्य, आदरणीय तथा समस्त पापों को नष्ट करने वाला है। यह विघ्न-बाधाओं को दूर करने वाला, समस्त विपत्तियों का नाशक तथा, परम पवित्र, परम हितकारी तथा समस्त भयों को हरने वाला है।

सर्वप्रथम विनियोग को छोड़कर, ऋष्यादिन्यास, करन्यास तथा हृदयादि अङ्गन्यास करके भगवान् शंकर का ध्यान करना चाहिए, तत्पश्चात् कवच का पाठ करना चाहिए।

"अस्य श्रीशिव कवच स्तोत्र मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषि:, अनुष्टुप् छन्द:, श्री सदाशिव रुद्रो देवता, ह्रीं शक्ति: वं कीलकम्, श्रीं ह्रीं क्लीं बीजम्, सदाशिव प्रीत्यर्थे शिव कवच स्तोत्र जपे विनियोग:।"

ऋष्यादि न्यास:- ॐ ब्रह्माऋषये नम: शिरसि। अनुष्टुप् छन्दसे नम: मुखे। श्रीसदाशिव रुद्र देवतायै नम: हृदि। ह्रीं शक्तये नम: पादयो:। वं कीलकाय नम: नाभौ। श्रीं ह्रीं क्लीं इति बीजाय नम: गुह्ये। विनियोगाय नम: सर्वाङ्गे।

अथ करन्यास:- ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ॐ ह्रीं रां सर्वशक्तिधाम्ने ईशानात्मने अङ्गुष्ठाभ्यां नम:।

ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला मालिने ॐ नं रीं नित्य तृप्ति धाम्ने तत्पुरुषात्मने तर्जनीभ्यां स्वाहा।

ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ॐ मं रुं अनादि शक्ति धाम्ने अघोरात्मने मध्यमाभ्यां वषट्।

श्रीशिव पूजन यन्त्र
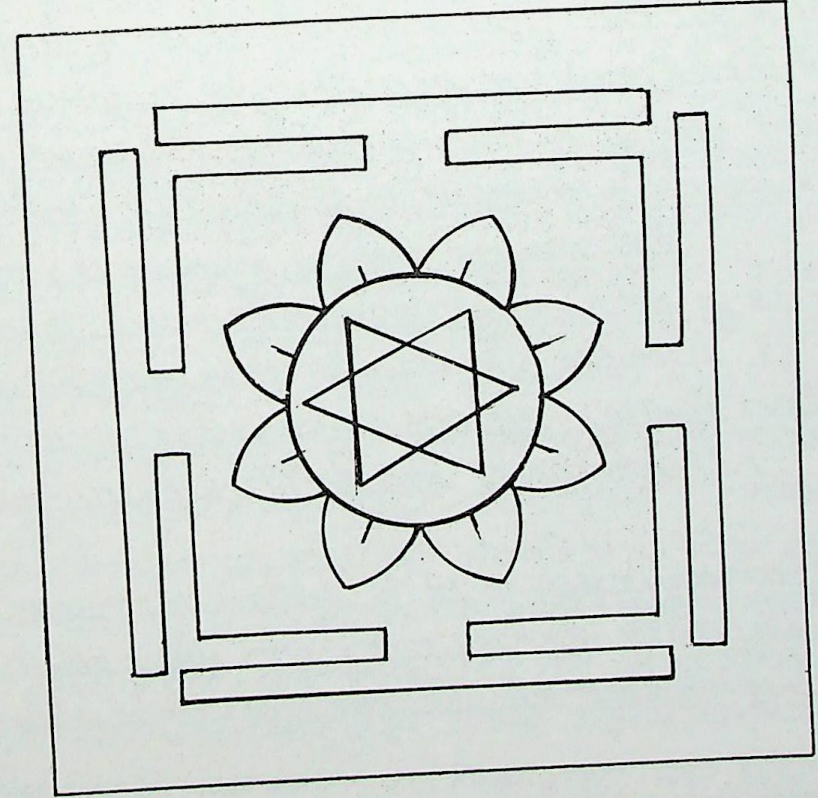
ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ॐ शिं रैं स्वतन्त्र शक्ति धाम्ने वामदेवात्मने अनामिकाभ्यां हुम्।

ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला मालिने ॐ वां रौं अलुप्त शक्ति धाम्ने सद्योजातात्मने कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्।

ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला मालिने ॐ यं रः अनादि शक्ति धाम्ने सर्वात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अथ हृदयाद्यङ्गन्यासः - ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ॐ ह्रीं रां सर्वशक्तिधाम्ने ईशानात्मने हृदयाय नमः।

ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने ॐ नं रीं नित्यतृप्तिधाम्ने तत्पुरुषात्मने शिरसे स्वाहा।

ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला मालिने ॐ मं रूं अनादि शक्ति धाम्ने अघोरात्मने शिखायै वषट्।

ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला मालिने ॐ शिं रैं स्वतन्त्र शक्ति धाम्ने वामदेवात्मने कवचाय हुम्।

ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला मालिने ॐ वां रौं अलुप्त शक्तिधाम्ने सद्योजातात्मने नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ नमो भगवते ज्वलज्ज्वाला मालिने ॐ यं रः अनादि शक्ति धाम्ने सर्वात्मने अस्त्राय फट्।

अथ ध्यानम् - वज्रदंष्ट्रं त्रिनयनं कालकण्ठमरिंदमम्। सहस्रकरमत्युग्रं च वन्दे शम्भुमुमापतिम्॥

अथ कवचम् - ऋषभ उवाच॥ अथापरं सर्वपुराण गुह्यं निःशेष पापौघ हरं पवित्रम्। जय प्रदं सर्वविपद्विमोचनं वक्ष्यामि शैवं कवचं हिताय ते॥ नमस्कृत्य महादेवं विश्वव्यापिनमीश्वरम्। वक्ष्ये शिवमयं वर्म सर्वरक्षाकरं नृणाम्॥ १॥ शुचौ देशे समासीनो यथावत्कल्पितासनः। जितेन्द्रियो जित प्राणश्चिन्तयेच्छिवमव्ययम्॥२॥ हृत्पुण्डरीकान्तर सन्निविष्टं स्वतेजसा व्याप्त नभोऽवकाशम्। अतीन्द्रियं सूक्ष्म मनन्तमाद्यं ध्यायेत्परानन्दमयं महेशम्॥३॥ ध्यानावधूताखिल कर्मबन्धश्चिरं चिदानन्दनिमग्न

चेताः। षडक्षरन्यास समाहितात्मा शैवेन कुर्यात्कवचेन रक्षाम् ॥४॥ मां पातु देवोऽखिलदेवतात्मा संसार
कूपे पतितं गंभीरे। तन्नाम दिव्यं वरमन्त्रमूलं धुनोतु मे सर्वमघं हृदिस्थम् ॥५॥ सर्वत्र मां रक्षतु विश्व
मूर्तिर्ज्योतिर्मयानन्दघनश्चिदात्मा। अणोरणीयानुरुशक्तिरेकः स ईश्वरः पातु भयादशेषात् ॥६॥ यो भूस्वरू
पेण बिभर्ति विश्वं पायात्स भूमेर्गिरिशोऽष्टमूर्तिः। योऽपी स्वरूपेण नृणां करोति संजीवनं सोऽवतु मां जलेभ्यः
॥७॥ कल्पावसाने भुवनानि दग्ध्वा सर्वाणि यो नृत्यति भूरिलीलः। स कालरुद्रोऽवतु मां दवाग्नेर्वात्यादि
भीतेरखिलाच्च तापात् ॥८॥ प्रदीप्तविद्युत्कनकावभासो विद्यावराभीति कुठारपाणिः। चतुर्मुखस्तत्पुरुष
स्त्रिनेत्रः प्राच्यां स्थितं रक्षतु मामजस्रम् ॥९॥ कुठार वेदांकुश पाशशूल कपालढक्काक्ष गुणान् दधानः।
चतुर्मुखो नीलरुचिस्त्रिनेत्रः पायादघोरो दिशि दक्षिणस्याम् ॥१०॥ कुन्देन्दुशंखस्फटिकावभासो वेदाक्ष
माला वरदाभयांकः। त्र्यक्षश्चतुर्वक्त्र उरुप्रभावः सद्योऽधिजातोऽवतु मां प्रतीच्याम् ॥११॥ वराक्ष
माला भयटंकहस्तः सरोज किञ्जल्क समानवर्णः। त्रिलोचनश्चारुचतुर्मुखो मां पायादुदीच्यां दिशि
वामदेवः ॥१२॥ वेदाभयेष्टांकुशटंकपाशकपालढक्काक्षकशूलपाणिः। सितद्युतिः पञ्चमुखोऽवतान्मामी-
शान ऊर्ध्वं परमप्रकाशः ॥१३॥ मूर्द्धानमव्यान्मम चन्द्रमौलिर्भालं ममाव्यादथ भालनेत्रः। नेत्रे ममा-
व्याद् भगनेत्रहारी नासां सदा रक्षतु विश्वनाथः ॥१४॥ पायाच्छ्रुती मे श्रुतिगीतकीर्तिः कपोलमव्यात्
सततं कपाली। वक्त्रं सदा रक्षतु पञ्चवक्त्रो जिह्वां सदा रक्षतु वेदजिह्वः ॥१५॥ कण्ठं गिरीशोऽ
वतु नीलकण्ठः पाणिद्वयं पातु पिनाकपाणिः। दोर्मूलमव्यान्मम धर्मबाहुर्वक्षःस्थलं दक्षमखान्तकोऽ
व्यात् ॥१६॥ ममोदरं पातु गिरीन्द्रधन्वा मध्यं ममाव्यान्मदनान्तकारी। हेरम्बतातो मम पातु नाभिं
पायात्कटी धूर्जटिरीश्वरो मे ॥१७॥ ऊरुद्वयं पातु कुबेरमित्रो जानुद्वयं मे जगदीश्वरोऽव्यात्। जंघायुगं

पुंगवकेतुरव्यात् पादौ ममाव्यात्सुरवन्द्यपाद: ॥१८॥
माहेश्वर: पातु दिनादियामे मां मध्ययामेऽवतु वामदेव:।
त्र्यम्बक: पातु तृतीययामे वृषध्वज: पातु दिनान्त्ययामे
॥१९॥ पायान्निशादौ शशिशेखरो मां गंगाधरं रक्षतु
मां निशीथे। गौरीपति: पातु निशावसाने मृत्युंजयो
रक्षतु सर्वकालम् ॥२०॥ अन्त: स्थितं रक्षतु शंकरो
मां स्थाणु: सदा पातु बहिस्थितं माम्। तदन्तरे पातु
पति: पशूनां सदाशिवो रक्षतु मां समन्तात् ॥२१॥
तिष्ठन्तमव्याद् भुवनैकनाथ: पायाद् व्रजन्तं प्रमथाधि
नाथ:। वेदान्तवेद्यो ऽवतु मां निषण्णं माम व्यय: पातु
शिव: शयानम् ॥२२॥ मार्गेषु मां रक्षतु नीलकण्ठ:
शैलादि दुर्गेषु पुरत्रयारि:। अरण्यवासादि महाप्रवासे
पायान्मृगव्याध उदार शक्ति: ॥२३॥ कल्पान्त काटोपप-
टु प्रकोप: स्फुटाट्टहासोच्चलिताण्ड कोश:। घोरारिसेना
र्णवदुर्निवार महाभयाद् रक्षतु वीरभद्र: ॥२४॥ पत्त्यश्व
मातङ्ग घटावरूथ सहस्रलक्षायुत कोटिभीषणम्। अक्षौ-
हिणीनां शतमाततायिनां छिन्द्यान्मृडो घोर कुठार

श्रीशङ्कर पूजन यन्त्र
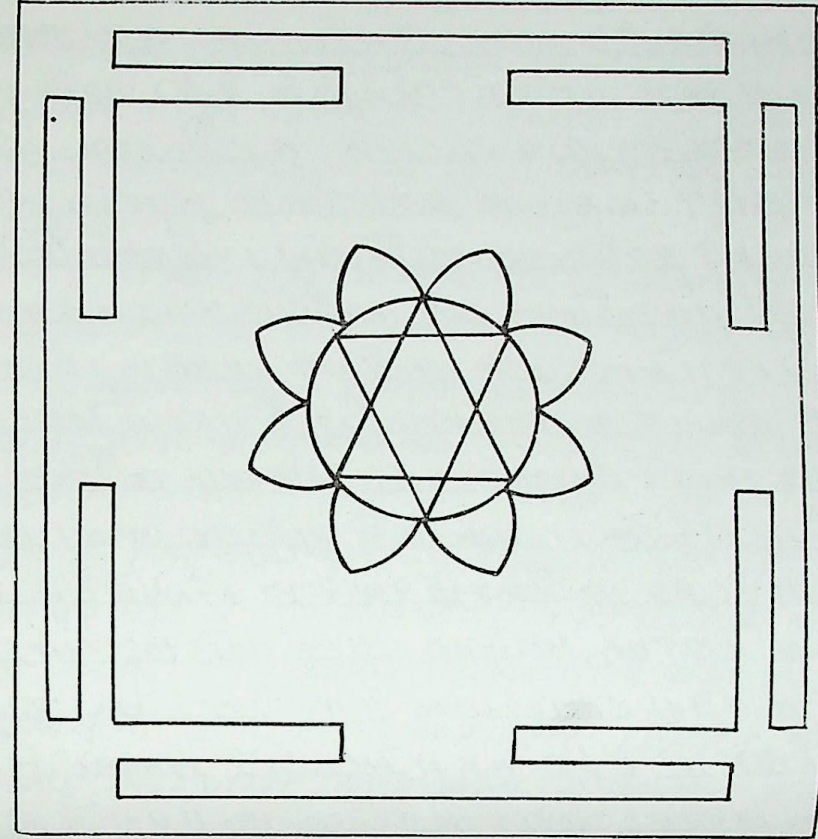
धारया ॥२५॥ निहन्तु दस्यून् प्रलयानलार्चिर्ज्वलत्त्रिशूलं त्रिपुरान्तकस्य। शार्दूल सिंहर्क्ष वृकादि हिंस्रान् संत्रास-
यत्वीश धनुः पिनाकम् ॥२६॥ दुःस्वप्न दुश्शकुन दुर्गति दौर्मनस्य दुर्भिक्ष दुर्व्यसन दुस्सह दुर्यशांसि। उत्पाततापं
विषभीतिमसद्ग्रहार्ति व्याधींश्च नाशयतु मे जगतामधीशः ॥२७॥ सकलतत्त्व विहाराय सकललोकैकभर्त्रे

ॐ नमो भगवते सदाशिवाय सकल तत्त्वात्मकाय सकलनिगमगुह्याय सकलवरप्रदाय सकल
सकललोकैक हर्त्रे सकललोकैक गुरवे सकललोकैक साक्षिणे सकललोकैक शंकराय शशाङ्क शेखराय शाश्वतनिजभासाय
दुरितार्त्तिभञ्जनाय सकलजगदभयंकराय निष्कलंकाय निर्द्वन्द्वाय निस्सङ्गाय
निर्गुणाय निरुपमाय निरूपाय निराभासाय निरामयाय निष्प्रपञ्चाय नित्य शुद्ध बुद्ध परिपूर्ण सच्चिदा-
निर्मलाय निर्ममाय नित्यरूपविभवाय निरुपमविभवाय निराधाराय दुःखदावदारण महाभै-
नन्दाद्वयाय परम शान्त प्रकाशतेजोरूपाय जय जय महारुद्र महारौद्र भद्रावतार ... गदा शक्ति
-रव कालभैरव कल्पान्तभैरव कपालमालाधर खट्वाङ्ग खड्ग चर्म पाशाङ्कुश डमरु शूल चाप बाण गदा शक्ति
भिन्दिपाल तोमर मुसल मुद्गर पट्टिश परशु परिघ भुशुण्डी शतघ्नी चक्राद्यायुध भीषणकर सहस्रमुखदंष्ट्रा
कराल विकटाट्टहास विस्फारित ब्रह्माण्डमण्डल नागेन्द्रकुण्डल नागेन्द्रहार नागेन्द्रवलय नागेन्द्रचर्मधर मृत्युं-
जय त्र्यम्बक त्रिपुरान्तक विरूपाक्ष विश्वेश्वर विश्वरूप वृषभवाहन विषभूषण विश्वतोमुख सर्वतो
रक्ष रक्ष मां ज्वल ज्वल महामृत्युभयमपमृत्युभयं नाशय नाशय रोगभयमुत्सादयोत्सादय विषसर्पभयं
शमय शमय चोरभयं मारय मारय मम शत्रूनुच्चाटयोच्चाटय शूलेन विदारय विदारय कुठारेण
भिन्धि भिन्धि खड्गेन छिन्धि छिन्धि खट्वाङ्गेन विपोथय विपोथय मुसलेन निष्पेषय निष्पेषय
बाणैः संताडय संताडय रक्षांसि भीषय भीषय भूतानि विद्रावय विद्रावय कूष्माण्ड वेताल मारी-

मं० म० ५५३

भा० टी०

गणब्रह्मराक्षसान् संत्रासय संत्रासय ममाभयं कुरु कुरु वित्रस्तं मामाश्वासयाश्वासय नरकभयान्मामुद्धारयोद्धारय संजीवय संजीवय क्षुत्तृड्भ्यां मामाप्याययाप्यायय दुःखातुरं मामानन्दयानन्दय शिवकवचेन मामाच्छादयाच्छादय त्र्यम्बक सदाशिव नमस्ते नमस्ते नमस्ते।

ऋषभ उवाच ॥ इत्येतत्कवचं शैवं वरदं व्याहृतं मया। सर्वबाधाप्रशमनं रहस्यं सर्वदेहिनाम् ॥२८॥ यः सदा धारयेन्मर्त्यः शैवं कवचमुत्तमम्। न तस्य जायते क्वापि भयं शम्भोरनुग्रहात् ॥२९॥ क्षीणायुर्मृत्युमापन्नो महारोगहतोऽपि वा। सद्यः सुखमवाप्नोति दीर्घमायुश्च विन्दति ॥३०॥ सर्वदारिद्र्यशमनं सौमङ्गल्यविवर्धनम्। यो धत्ते कवचं शैवं स देवैरपि पूज्यते ॥३१॥ महापातकसंघातैर्मुच्यते चोपपातकैः। देहान्ते शिवमाप्नोति शिववर्मानुभावतः ॥३२॥ त्वमपि श्रद्धया वत्स शैवं कवचमुत्तमम्। धारयस्व मयादत्तं सद्यः श्रेयो ह्यवाप्स्यसि ॥ ३३॥

॥इति श्रीस्कन्दपुराणे एकाशीतिसाहस्र्यां तृतीये ब्रह्मोत्तरखण्डे सीमन्तिनीमाहात्म्ये भद्रायुषोपाख्याने शिवकवचकथनं नाम द्वादशोऽध्यायः॥

श्रीशिवाष्टकम् - "तस्मै नमः परमकारणकारणाय, दीप्तोज्ज्वलज्ज्वलितपिङ्गललोचनाय, नागेन्द्रहारकृतकुण्डलभूषणाय, ब्रह्मेन्द्रविष्णुवरदाय नमः शिवाय ॥१॥ श्रीमत्प्रसन्नशशिपन्नगभूषणाय, शैलेन्द्रजावदनचुम्बितलोचनाय। कैलासमन्दरमहेन्द्रनिकेतनाय लोकत्रयार्तिहरणाय नमः शिवाय ॥२॥ पद्मावदातमणिकुण्डलगोवृषाय, कृष्णागरुप्रचुरचन्दनचर्चिताय। भस्मानुषक्तविकचोत्पलमल्लिकाय, नीलाब्जकण्ठसदृशाय नमः शिवाय ॥३॥ लम्बत्सपिङ्गलजटामुकुटोत्कटाय, दंष्ट्राकरालविकटोत्कट

भैरवाय । व्याघ्राजिनाम्बर धराय मनोहराय, त्रैलोक्यनाथ नमिताय नमः शिवाय ॥४॥ दक्षप्रजापतिमहामख नाशनाय, क्षिप्रं महात्रिपुर दानव घातनाय । ब्रह्मोर्जितोर्ध्वग करोटिनिकृन्तनाय, योगाय योगनमिताय नमः शिवाय ॥५॥ संसार सृष्टि घटना परिवर्तनाय, रक्षः पिशाच गण सिद्ध समाकुलाय । सिद्धोरगग्रह गणेन्द्र निषेविताय, शार्दूल चर्मवसनाय नमः शिवाय ॥६॥ भस्माङ्ग रागकृत रूप मनोहराय, सौम्यावदात वनमाश्रित माश्रिताय । गौरी कटाक्ष नयनार्ध निरीक्षणाय, गोक्षीरधार धवलाय नमः शिवाय ॥७॥ आदित्य सोम वरुणानिलसेविताय, यज्ञाग्नि होत्र वरधूम निकेतनाय । ऋक् सामवेद मुनिभिः स्तुति संयुताय, गोपाय गोपनमिताय नमः शिवाय ॥८॥ शिवाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ । शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥९॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं शिवाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

श्री मृत्युञ्जय स्तोत्रम् - कैलासस्योत्तरे शृङ्गे शुद्धस्फटिक सन्निभे । तमोगुणविहीने तु जरा मृत्यु विवर्जिते ॥१॥ सर्वार्थ सम्पदाधारे सर्वज्ञान कृतालये । कृताञ्जलि पुटो ब्रह्मा ध्यानासीन सदाशिवम् ॥२॥ पप्रच्छ प्रणतो भूत्वा जानुभ्यामवनिं गतः । सर्वार्थसम्पदाधारो ब्रह्मा लोकपितामह ॥३॥ ब्रह्मोवाच ॥ केनोपायेन देवेश चिरायुर्लोमशोऽभयत । तन्मे ब्रूहि महेशान लोकानां हितकाम्यया ॥४॥ श्रीसदाशिव उवाच ॥ शृणु ब्रह्मन्प्रवक्ष्यामि चिरायुर्मुनिसत्तमः । सञ्जातः कर्मणा येन व्याधि मृत्युविवर्जितः ॥५॥ तस्मिन्नेकाननं घोरे सलिलौघ परिप्लुते । कृतान्त भयनाशाय स्तुतो मृत्युञ्जयः शिवः ॥६॥ तस्य संकीर्त्तनान्नित्यं मुनि मृत्यु विवर्जितः । तमेवं कीर्तये ब्रह्मन्मृत्यु जेतुं न संशयः ॥७॥ श्रीलोमशोवाच ॥ ॐ देवाधिदेव देवेश सर्वप्रणभृताम्बर । प्राणिनामपि नाथस्त्वं मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥८॥ देहिनां जीव

श्रीमृत्युञ्जय पूजन यन्त्र
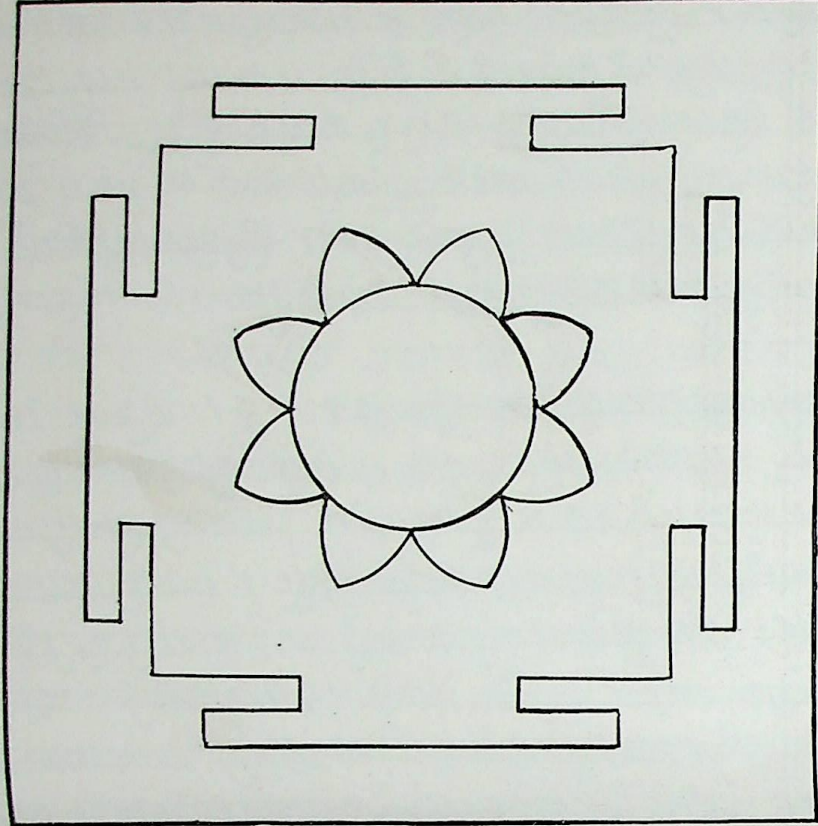
भूतोऽसि जीवो जीवस्य कारणम् । जगतो रक्षकस्त्वं वै
मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥ ९॥ हेमाद्रि शिखराकारं सुधा
वीचि मनोहरम् । पुण्डरीक परं ज्योतिर्मृत्युंजय नमोऽ
स्तुते ॥ १०॥ ध्यानाधारं महाज्ञानं सर्वज्ञानैक कारणम् ।
परित्रासि च लोकानां मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥ ११॥
निहता येन कालेन सदेवासुर मानुषाः । गन्धर्वाप्सर
सश्चैव सिद्ध विद्याधरास्तथा ॥ १२॥ साध्याश्च वस
-वो रुद्रास्तथाश्विनि सुतावुभौ । मारुतश्च दिशा नागाः
स्थावराजङ्गमास्तथा ॥ १३॥ जिता सोऽपि त्वया
ध्यायेन्मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥ १४॥ ये ध्यायन्ति
परां मूर्तिम्पूजयन्त्य वरादयः । न ते मृत्युवशं यान्ति
मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥ १५॥ त्वमोङ्कारोऽसि वेदानां
देवानां च सदाशिवः । आधार शक्तिः शक्तीनां मृत्यु
ञ्जय नमोऽस्तुते ॥ १६॥ स्थावरे जङ्गमे वापि या-
वत्तिष्ठति देहगः । जीवत्यपत्यलोकोऽयं मृत्युञ्जय
नमोऽस्तुते ॥ १७॥ सोमसूर्याग्नि मध्यस्थ व्योम
व्यापिन्सदाशिवः । कालत्रय महाकाल मृत्युञ्जय

नमोऽस्तुते ॥१८॥ प्रबुद्धे चाप्रबुद्धे च त्वमेव सृजते जगत्। सृष्टिरूपेण देवेश मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥१९॥
व्योम्नि त्वं व्योमरूपोऽसि तेजः सर्वत्र तेजसि। ज्ञानिनां ज्ञानरूपोऽसि मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥२०॥ जग
ज्जीवो जगत्प्राणः स्रष्टा त्वं जगतः प्रभुः। कारणं सर्वतीर्थानां मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥२१॥ नेता त्वमि
न्द्रियाणां च सर्वज्ञान प्रबोधकः। सांख्ययोगश्च हंसश्च मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥२२॥ रूपातीतः सुरूपश्च
पिण्डस्थपदमेव च। चतुर्युगकलाधारः मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥२३॥ रेचके वह्निरूपोऽसि सोमरूपोऽ
सि पूरके। कुम्भके शिवरूपोऽसि मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥२४॥ क्षयं करोषि पापानां पुण्यानामपि वर्द्धनम्
हेतुस्त्वं श्रेयसां नित्यं मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥२५॥ सर्वमाया कलातीतं सर्वेन्द्रिय परापरः। सर्वेन्द्रिय कला
धीश मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥२६॥ रूपं गन्धो रसः स्पर्शः शब्द संस्कार एव च। त्वत्तः प्रकाश एतेषां
मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥२७॥ चतुर्विधानां सृष्टीनां हेतुस्त्वं कारणेश्वरम्। भावाभावपरिच्छिन्नं मृत्यु-
ञ्जय नमोऽस्तुते ॥२८॥ त्वमेको निष्कलो लोके सकले भुवनत्रये। अतिसूक्ष्मातिरूपस्त्वं मृत्युञ्जय नमो
स्तुते ॥२९॥ त्वं प्रबोधस्त्वमाधारस्त्वद्बीजं भुवनत्रयम्। सत्त्वं रजस्तमस्त्वं हि मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥३०॥
त्वं सोमस्त्वं दिनेशश्च त्वमात्मा प्रकृतेः परः। अष्टत्रिंशत्कलानाथ मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥३१॥ सर्वे
दिशानामाधारः सर्वभूतगुणाश्रयः। सर्वज्ञानमयानन्त मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥३२॥ त्वमात्मा सर्वभूतानां
गुणानां त्वमधीश्वरः। सर्वानन्दमयाधारः मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥३३॥ त्वं यज्ञः सर्वयज्ञानां त्वं बुद्धिर्बोध
लक्षणः। शब्दब्रह्म त्वमोंकार मृत्युञ्जय नमोऽस्तुते ॥३४॥ श्रीसदाशिव उवाच ॥ एवं संकीर्तयेद्यस्तु शुचिस्त
द्गतमानसः। भक्त्या शृणोति यो ब्रह्मन्न स मृत्युवशो भवेत् ॥३५॥ न च मृत्युभयं तस्य प्राप्तकालं च
लंघयेत्। अपमृत्युभयं तस्य प्रणश्यति न संशयः ॥३६॥ व्याधयो नोपपद्यन्ते नोपसर्गभयं भवेत्। प्र-

-त्यासन्नन्तोर काले शतैकावर्तने कृते ॥३७॥ मृत्युर्न जायते तस्य रोगान्मुञ्चति निश्चितम्। पञ्चम्यां वा दश-म्यां वा पौर्णमास्यामथोऽपि वा ॥३८॥ शतमावर्तयेद्यस्तु शतवर्षं स जीवति। तेजस्वी बलसम्पन्नो लभते श्रियमुत्तमाम् ॥३९॥ त्रिविधंनाशयेत्पापं मनोवाक्काय सम्भवम्। अभिचाराणि कर्माणि कर्माण्याथ -र्वणानि च ॥४०॥ क्षीयन्ते नात्र सन्देहो दुःस्वप्नंच विनश्यति। इदं रहस्यंचपरं देवदेवस्य शूलिनः। दुःश्चिन्तनाशनं पुण्यं सर्वविघ्न विनाशनम् ॥४१॥"

॥इति श्री शिव ब्रह्मा सम्वाद श्री मृत्युञ्जय स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

फलश्रुति - इस मृत्युञ्जय स्तोत्र का पाठ करने वाले व्यक्ति को मृत्यु तथा अपमृत्यु का भय नहीं रहता। रोग और उनके उपसर्ग नष्ट होजाते हैं। पंचमी, दशमी, पूर्णिमा को सदैव पाठ करने वाला सौवर्षतक जीवित बना रहता है और वह बलवान् तथा तेजस्वी होकर उत्तम कल्याण को प्राप्त करता है। तीनो प्रकार के पाप, जो मन तथा वचन से हुए हों, नष्ट होजाते हैं। अभिचारादि अथर्वण के कर्म नष्ट हो जाते हैं। दुःस्वप्नों का फल नष्ट होता है। दुश्चिन्तायें दूर होती हैं; पुण्य की वृद्धि होती है तथा सभी विघ्न नष्ट होते हैं। इति॥

अथ वेदसार शिवस्तवः - "पशूनां पतिं पापनाशं परेशं, गजेन्द्रस्य कृत्तिं वसानं वरेण्यम्। जटाजूटमध्ये स्फुरद्गाङ्गवारिं, महादेवमेकं स्मरामिम् स्मरामिम् ॥१॥ महेशं सुरेशं सुरारातिनाशं, विभुं विश्वनाथं विभूत्यङ्गभूषम्। विरूपाक्षमिन्द्वर्कवह्नित्रिनेत्रं, सदानन्दमीडे प्रभुं पञ्चवक्त्रम् ॥२॥ गिरी-शं गणेशं गले नीलवर्णं, गवेन्द्राधिरूढं गणातीतरूपम्। भवं भास्वरं भस्मना भूषिताङ्गं, भवानी कलत्रं भजे पञ्चवक्त्रम् ॥३॥ शिवाकान्त शम्भो शशाङ्कार्धमौले, महेशान शूलिन् जटाजूटधारिन्।

त्वमेको जगद्व्यापको विश्वरूप, प्रसीद प्रसीद प्रभो
पूर्णरूप ॥४॥ परात्मानमेकं जगद्बीजमाद्यं, निरीहं
निराकारमोङ्कारवेद्यम् । यतो जायते पाल्यते येन
विश्वं, तमीशं भजे लीयते यत्र विश्वम् ॥५॥ न
भूमिर्न चापो न वह्निर्न वायुर्न चाकाशमास्ते न तन्द्रा
न निद्रा । न ग्रीष्मो न शीतं न देशो न वेषो न
यस्यास्ति मूर्तिं स्त्रिमूर्तिं तमीडे ॥६॥ अजं शाश्वतं
कारणं कारणानां शिवं केवलं भासकं भासकानाम् ।
तुरीयं तमः पारमाद्यन्तहीनं, प्रपद्ये परं पावनं द्वैत
हीनम् ॥७॥ नमस्ते नमस्ते विभो विश्वमूर्ते, नमस्ते
नमस्ते चिदानन्दमूर्ते । नमस्ते नमस्ते तपोयोगगम्य
नमस्ते नमस्ते श्रुतिज्ञानगम्य ॥८॥ प्रभो शूलपाणे
विभो विश्वनाथ, महादेव शम्भो महेश त्रिनेत्र ।
शिवाकान्त शान्त स्मरारे पुरारे, त्वदन्यो वरेण्यो
न मान्यो न गण्यः ॥९॥ शम्भो महेश करुणामय
शूलपाणे, गौरीपते पशुपते पशुपाशनाशिन् । काशी
पते करुणया जगदेतदेकस्त्वं हंसि पासि विदधासि

श्री कार्तवीर्य पूजन यन्त्र
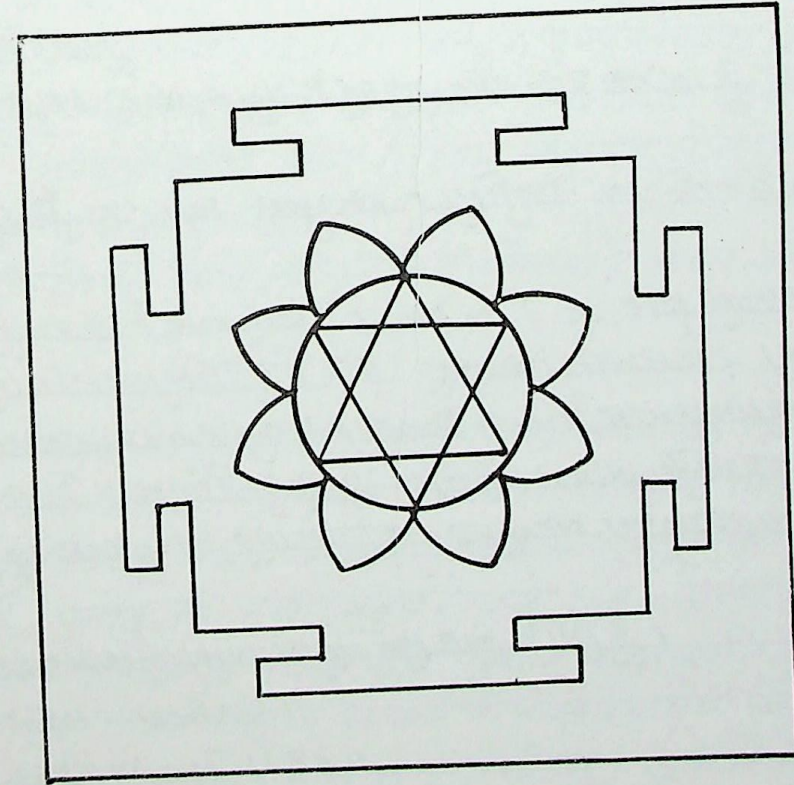
महेश्वरोऽसि ॥ १०॥ त्वत्तो जगद्भवति देव भव स्मरारे, त्वय्येव तिष्ठति जगन्मृड विश्वनाथ। त्वय्येव गच्छति लयं जगदेतदीश, लिङ्गात्मकं हर चराचरविश्वरूपिन् ॥ ११॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतो वेदसारशिवस्तवः सम्पूर्णः ॥

फलश्रुति- इस 'शिवस्तव' का नित्य-पाठ करने से समस्त मनोभिलाषाओं की पूर्ति होती है।

अथ सूर्य स्तोत्राणि- अब भगवान् सूर्य से सम्बन्धित स्तोत्रादि का उल्लेख किया जाता है।

श्री सूर्यस्य प्रातः स्मरणम्- "प्रातः स्मरामि खलु तत्सवितुर्वरेण्यं, रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूंषि। सामानि यस्य किरणाः प्रभवादिहेतुं, ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यरूपम् ॥ १॥ प्रातर्नमामि तरणिं तनुवाङ्मनोभिर्ब्रह्मेन्द्रपूर्वकसुरैर्नतमर्चितं च। वृष्टिप्रमोचनविनिग्रहहेतुभूतं, त्रैलोक्यपालनपरं त्रिगुणात्मकं च ॥ २॥ प्रातर्भजामि सवितारमनन्तशक्तिं, पापौघशत्रुभयरोगहरं परं च। तं सर्वलोककलनात्मककालमूर्तिं, गोकण्ठबन्धनविमोचनमादिदेवम् ॥ ३॥

श्लोकत्रयमिदं भानोः प्रातःकाले पठेत्तु यः। स सर्वव्याधिनिर्मुक्तः परं सुखमवाप्नुयात्॥ इति श्री सूर्य प्रातः स्मरणम् ॥

फलश्रुतिः- जो व्यक्ति नित्य प्रातः काल उक्त तीनों श्लोकों का पाठ करता है, वह समस्त व्याधियों (रोगों) से छुटकारा पाकर, सुख प्राप्त करता है।

श्री सूर्याष्टकम्- "आदिदेव नमस्तुभ्यं प्रसीद मम भास्कर। दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभा-

कर नमोऽस्तुते ॥१॥ सप्ताश्वरथमारूढं प्रचण्डं कश्यपात्मजम्। श्वेतपद्मधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्य-
हम् ॥२॥ लोहितं रथमारूढं सर्वलोकपितामहम्। महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥३॥ त्रैगु-
ण्यं च महाशूरं ब्रह्माविष्णुमहेश्वरम्। महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥४॥ बृंहितं तेजःपुञ्जं
च वायुमाकाशमेव च। प्रभुं च सर्वलोकानां तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥५॥ बन्धूकपुष्पसंकाशं हारकु-
ण्डलभूषितम्। एकचक्रधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥६॥ तं सूर्यं जगत्कर्तारं महातेजः प्रदीपनम्।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥७॥ तं सूर्यं जगतां नाथं ज्ञान विज्ञान मोक्षदम्। महापापहरं
देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥८॥ इति श्रीशिवप्रोक्तं सूर्याष्टकं सम्पूर्णम् ॥

फलश्रुतिः - इस अष्टक का नित्य पाठ करते रहने से रोगों से छुटकारा मिलता है तथा बल, वीर्य, तेज, कान्ति एवं बुद्धि आदि की वृद्धि होती है।

अथ सूर्यमण्डलाष्टकम् - " नमः सवित्रे जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतवे। त्रयी-
मयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरञ्चिनारायणशङ्करात्मने ॥१॥ यन्मण्डलं दीप्तिकरं विशालं रत्नप्रभं तीव्रमनादि-
रूपम्। दारिद्र्यदुःखक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥२॥ यन्मण्डलं देवगणैः सुपूजितं विप्रैः
स्तुतं भावनमुक्तिकोविदम्। तं देवदेवं प्रणमामि सूर्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥३॥ यन्मण्डलं
ज्ञानघनं त्वगम्यं त्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्मरूपम्। समस्ततेजोमयदिव्यरूपं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्य-
म् ॥४॥ यन्मण्डलं गूढमतिप्रबोधं धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम्। यत्सर्वपापक्षयकारणं च पुनातु
मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥५॥ यन्मण्डलं व्याधिविनाशदक्षं यदृग्यजुःसामसु संप्रगीतम्। प्रकाशितं येन

च भूर्भुवः स्वः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ६॥ यन्मण्डलं
वेदविदो वदन्ति गायन्ति यच्चारणसिद्धसंघाः। यद्यो-
गिनो योगजुषां च संघाः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्
॥७॥ यन्मण्डलं सर्वजनेषु पूजितं ज्योतिश्च कुर्यादिह
मर्त्यलोके। यत्कालकल्पक्षयकारणं च पुनातु मां
तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥८॥ यन्मण्डलं विश्वसृजां प्रसिद्ध
मुत्पत्ति रक्षा प्रलय प्रगल्भम्। यस्मिञ्जगत्संहरतेऽखि
लञ्च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥९॥ यन्मण्डलं
सर्वगतस्य विष्णोरात्मा परं धाम विशुद्ध तत्त्वम्।
सूक्ष्मान्तरैर्योगपथानुगम्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरे-
ण्यम् ॥१०॥ यन्मण्डलं वेदविदो वदन्ति गायन्ति
तच्चारणसिद्धसंघाः। यन्मण्डलं वेदविदः स्मरन्ति
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥११॥ यन्मण्डलं वेद-
विदोपगीतं यद्योगिनां योगपथानुगम्यम्। तत्सर्व
वेदं प्रणमामि सूर्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥१२॥
मण्डलाष्टतयं पुण्यं यः पठेत्सततं नरः। सर्वपापविशु-
द्धात्मा सूर्यलोके महीयते ॥१३॥ इति सम्पूर्णम् ॥

श्री सूर्य पूजन यन्त्र

मं० मं० २३८

भा० टी०
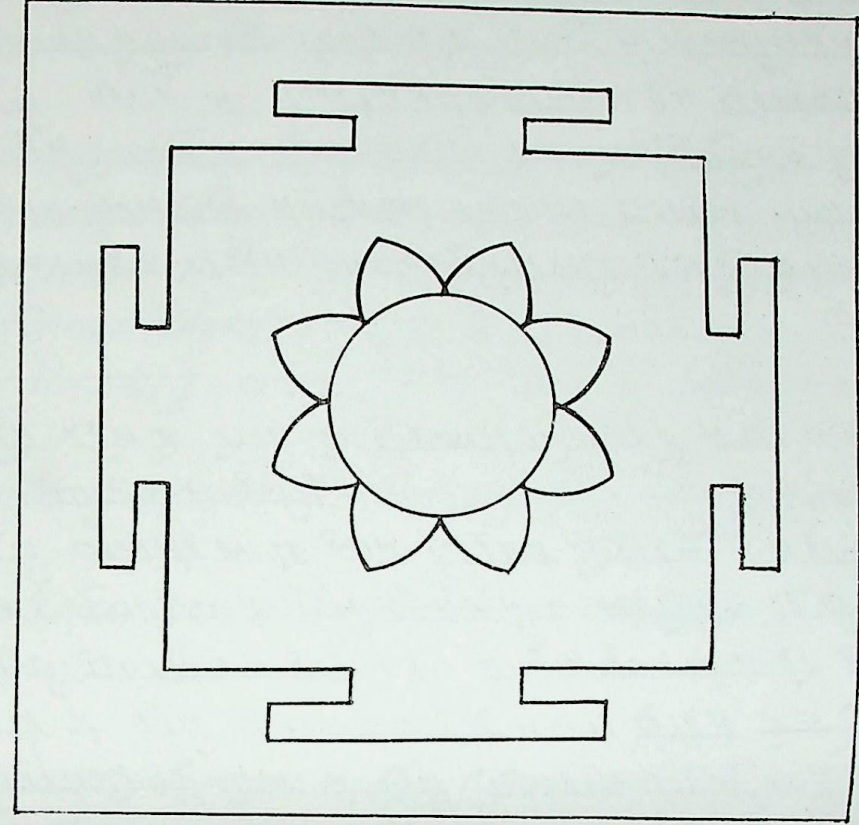
अथ श्री हनुमत् स्तोत्राणि : अब श्री हनुमानजी के स्तोत्रादि का उल्लेख किया जाता है।

एकमुखि हनुमत्कवचम् - "एकदा सुखमासीनं शङ्करं लोक शङ्करम्। पप्रच्छ गिरिजा कान्तं कर्पूरं धवलं शिवम् ॥१॥ पार्वत्युवाच॥ भगवन् देवदेवेश लोकनाथ जगद्गुरो। शोकाऽकुलानां लोकानां केन रक्षा भवेद् ध्रुवम् ॥२॥ संग्रामे सङ्कटे घोरे भूतप्रेतादिके भये। दुःखदावाग्नि सन्तप्त: चेतसां दुःख भोगिनाम् ॥३॥ ईश्वर उवाच॥ शृणुदेवि प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया। विभीषणाय रामेण प्रेम्णा दत्तं च यत्पुरा ॥४॥ कवचं कपिनाथस्य वायुपुत्रस्य धीमत:। गुह्यं ते संप्रवक्ष्यामि विशेषाच्छृणु सुन्दरि ॥५॥

अथ कवचारम्भ: ॥ ॐ अस्य श्री हनुमत्कवच स्तोत्र मन्त्रस्य श्रीरामचन्द्र: ऋषि:। अनुष्टुप् छन्द:। श्रीमहावीरो हनुमान देवता। मारुतात्मज इति बीजम्। ॐ अञ्जनीसूनुरिति शक्ति:। ॐ ह्रैं ह्रीं ह्रौं इति कवचम्। ॐ स्वाहा इति कीलकम्। ॐ लक्ष्मण प्राणदाता इति अपर बीजम्। मम सकल कार्य सिद्ध्यर्थं जपे विनियोग: ॥

अथ न्यास: - ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नम:। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नम:। ॐ ह्रूँ मध्यमाभ्यां नम:। ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नम:। ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नम:। ॐ ह्र: करतलकरपृष्ठाभ्यां नम:। ॐ अञ्जनी सूनवे हृदयाय नम:। ॐ रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा। ॐ वायुसुतात्मने शिखायै वषट्। ॐ वज्रदेहाय कवचाय हुम्। ॐ रामदूताय नेत्र त्रयाय वौषट्। ॐ ब्रह्मास्त्र निवारणाय अस्त्राय फट्। रामदूताय विद्महे कपिराजाय धीमहि तन्नो हनुमान प्रचोदयात्। ॐ हुं फट् इति दिग्बन्ध:।

श्रीहनुमत् पूजन यन्त्र
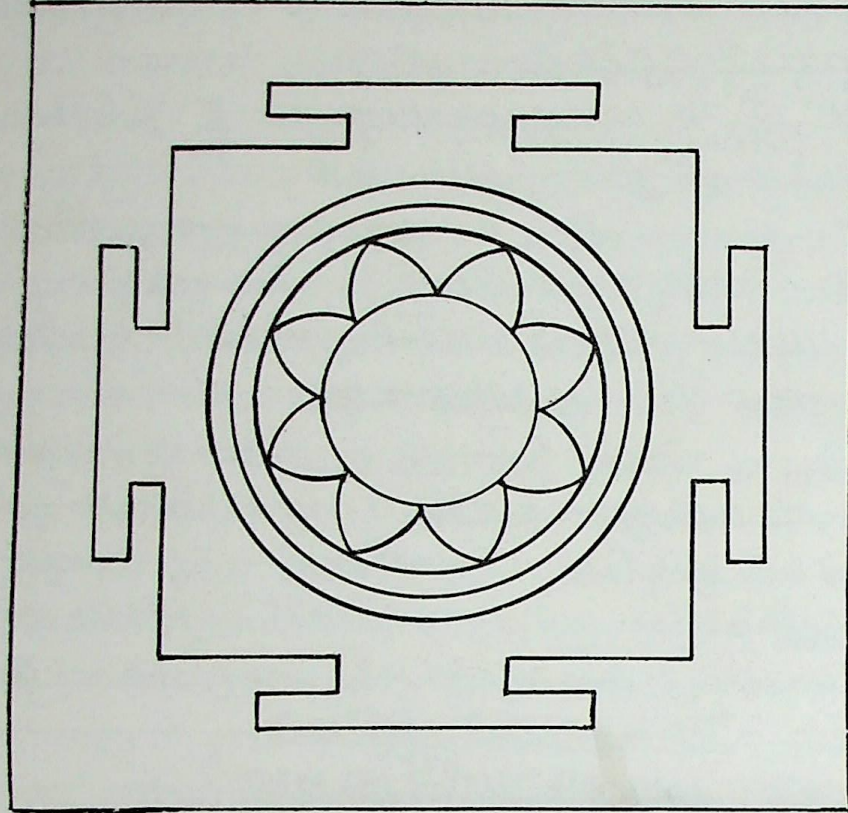
अथ ध्यानम् - ध्यायेद्बाल दिवाकरं द्युतिनिभं देवारि दर्पापहं। देवेन्द्रं प्रमुखं प्रशस्त यशसं दैदीप्यमानं रुचा॥ सुग्रीवादि समस्त वानरयुतं सुव्यक्त तत्त्वप्रियं। संरक्तारुण लोचनं पवनजं पीताम्बरालंकृतम् ॥ १॥ उद्यन्मार्तण्ड कोटिं प्रकट रुचि युतं चारु वीरासनस्थम्। मौञ्जी यज्ञोपवीतारुण रुचिर शिखा शोभितं कुण्डलाङ्कम् ॥ भक्तानामिष्टदं तं प्रणत मुनिजनं वेदनादं प्रमोदम्। ध्यायेद्देवं विधेयं प्लवग कुलपतिं गोष्पदी भूत जलधिम् ॥ २॥ वज्राङ्गं पिङ्ग केशाढ्यं स्वर्ण कुण्डल मण्डितम्। नियुद्ध कर्म कुशलं पारावार पराक्रमम् ॥ ३॥ वामहस्ते महावृक्षं दशास्य कर खण्डनम्। उद्य दक्षिण दोर्दण्डं हनुमन्तं विचिन्तयेत् ॥ ४॥ स्फटिकाभं स्वर्ण कान्तिं द्विभुजं च कृताञ्जलिम्। कुण्डल द्वय संशोभि मुखाम्भोजं हरिं भजेत् ॥ ५॥ उद्यदादित्य संकाश मुदार भुज विक्रमम्। कन्दर्प कोटि लावण्यं सर्व विद्या विशारदम् ॥ ६॥ श्रीराम हृदयानन्दं भक्तकल्प महीरुहम्। अभयं वरदं दोर्भ्यां

कलये मारुतात्मजम् ॥७॥ अपराजित नमस्ते ऽस्तु नमस्ते राम पूजिते। प्रस्थानं च करिष्यामि सिद्धिर्भवतु मे सदा॥८॥ यो वारांनिधिमल्पपल्वलमिवो ल्लंघ्य प्रतापान्वितो। वैदेहीघन शोक ताप हरणो वैकुण्ठ तत्त्व प्रियः॥ अक्षाद्युर्जित राक्षसेश्वर महादर्पापहारी रणे। सोऽयं वानर पुङ्गवोऽवतु सदा युष्मान् समीरात्मजः॥९॥ वज्राङ्गं पिङ्गकेशं कनकमयलसत्कुण्डलाकान्त गण्डं। नाना विद्याधिनाथं करतल विधृतं पूर्ण कुम्भं दृढं च॥ भक्ताभीष्टाधिकारं वितरति च सदा सर्वदा सुप्रसन्नं। त्रैलोक्यं त्राणकारं सकल भुवनगं रामदूतं नमामि॥१०॥ उद्यल्लाङ्गूल केशं प्रलय जलधरं भीममूर्तिं कपीन्द्रम्। वन्दे रामाङ्घ्रि पद्म भ्रमर परिवृतं तत्त्व सारं प्रसन्नम्॥ वज्राङ्गं वज्ररूपं कनकमयलसत्कुण्डलाक्रान्त गण्डम्। दम्भोलिस्तम्भ सारं प्रहरण विकटं भूतरक्षोऽधिनाथम्॥११॥ वामे करे वैरिभयं वहंतं शैलं च दक्षे निजकण्ठलग्नम्। दधानमासाद्य सुवर्ण वर्णं भजेज्ज्वलत्कुण्डल रामदूतम्॥१२॥ पद्मरागमणि कुंडलत्विषा पाटलीकृत कपोल मण्डलम्। दिव्य देवकदली वनान्तरे भावयामि पवमाननन्दनम्॥१३॥ ईश्वर उवाच॥ इति वदति विशेषाद्राघवो राक्षसेन्द्रं प्रमुदित वरचित्तो रावणस्यानुजो हि। रघुवर वरदूतं पूजयामास भूपः स्तुतिभिरतिकृतार्थं स्वं परंमन्यमानः॥१४॥

प्रार्थना- वन्दे विद्युद्वलय सुभगं स्वर्ण यज्ञोपवीतं, कर्ण द्वन्द्वे कनक रुचिरे कुण्डले धारयन्तं। उच्चैर्हृष्यद्द्युमणि किरणश्रेणि संभाविताङ्गं, सत्कौपीनं कपिवरवृतं कामरूपं कपीन्द्रम्॥१॥ मनोजवं मारुत तुल्य वेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्। वातात्मजं वानरयूथ मुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये॥२॥

प्रार्थना के पश्चात आगे लिखे अनुसार अङ्गन्यास करना चाहिए।

अग्नि पूजन यन्त्र

अथाङ्गन्यासः
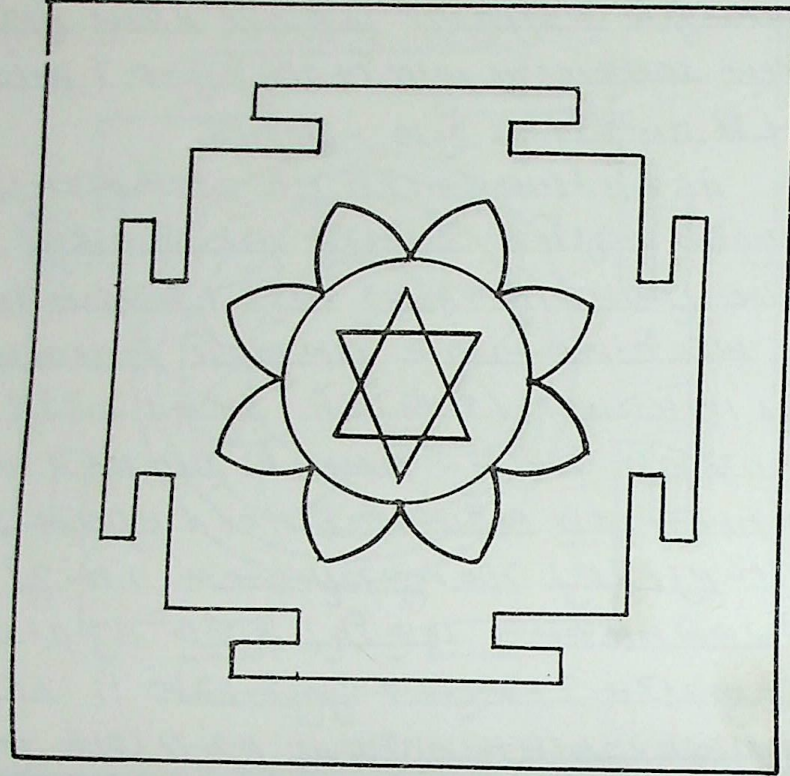
अङ्गन्यास विधि – "ॐ नमो भगवते हृदयाय नमः। ॐ आञ्जनेयाय शिरसे स्वाहा। ॐ रुद्रमूर्त्तये शिखायै वषट्। ॐ रामदूताय कवचाय हुम्। ॐ हनुमते नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अग्निगर्भाय अस्त्राय फट्।

ॐ नमो भगवते अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ आञ्जनेयाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ रुद्रमूर्त्तये मध्यमाभ्यां नमः। ॐ हनुमते कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ अग्निगर्भाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

अथ मन्त्रः – ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः। ॐ ह्रीं ह्रौं ॐ नमो भगवते महाबल पराक्रमाय भूत प्रेत पिशाच शाकिनी डाकिनी यक्षिणी पूतना महामारी यक्ष राक्षस भैरव बैताल राक्षसादिकं क्षणेन हन हन भञ्जय भञ्जय मारय मारय शिक्षय शिक्षय महामहेश्वर रुद्रावतार हुं फट् स्वाहा।

ॐ नमो भगवते हनुमदाख्याय रुद्राय सर्व दुष्टवचनमुख स्तम्भनं कुरु कुरु ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रूं ठं ठं ठं फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते अञ्जनीगर्भ सम्भूताय रामलक्ष्मण नन्दनाय कपि सैन्य प्रकाशनाय पर्वतोत्पाटनाय कुमार सुग्रीव कर्म साधनाय दुष्टकर्णोच्चाटनाय कुमार ब्रह्मचारिणे गम्भीर शब्दोदयाय॥ ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं सर्व दुष्ट निवारणाय स्वाहा। ॐ नमो हनुमते सर्व ग्रहान् भूतभविष्यद्वर्तमानवन्दूर स्थानान् समीपस्थान सर्वकाल दुष्ट दुर्बुद्धीन् उच्चाटय उच्चाटय पर बलानि क्षोभय क्षोभय मम सर्व कार्य साधय साधय हनुमते ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं फट् देहि ॐ शिवम् ॐ सिद्धं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ॐ स्वाहा।

ॐ नमो हनुमते परकृत यन्त्र मन्त्र पराहंकार भूत प्रेत पिशाच परदृष्टि सर्व विघ्न दुर्जन चेटक विद्या सर्व ग्रहान् निवारय निवारय वध वध पच पच दल दल कीलय कीलय सर्व कुयन्त्राणि दुष्टवाचं फट् स्वाहा।

ॐ नमो हनुमते पाहि पाहि एहि एहि सर्व ग्रह भूतानां शाकिनी डाकिनीनां दुष्टानां सर्व विषयान् आकर्षय आकर्षय मर्दय मर्दय भेदय भेदय मृत्युमुत्पाटय उत्पाटय शोषय शोषय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल भूत मंडल निरसय निरसय भूतज्वर प्रेतज्वर तृतीयक चातुर्थिक ज्वर विषमज्वर माहेश्वर ज्वरान् छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि अक्षिशूल वक्षःशूल शिरोऽभ्यन्तर शूल गुल्मशूल पित्तशूल ब्रह्म राक्षस कुल परकुल नागकुल विषं नाशय नाशय निर्विघ्नं कुरु कुरु फट्॥

ॐ ह्रीं सर्व दुष्ट ग्रहान्निवारय स्वाहा। ॐ नमो हनुमते पवनपुत्राय वैश्वानर

मुखाय हन हन अनया दृष्ट्या पापदृष्टिं षण्ढदृष्टिं हन हन हनुमदाज्ञया स्फुर स्फुर स्वाहा ॥

श्रीरामचन्द्र उवाच ॥ हनुमान् पूर्वत: पातु दक्षिणे पवनात्मजः । पातु प्रतीच्यां रक्षोघ्न: पातु सागर पारग: ॥ १ ॥ उदीच्यामूर्ध्वग: पातु केसरी प्रिय नन्दन: । अधस्ताद्विष्णु भक्तस्तु पातु मध्ये च पावनि: ॥२॥ अवान्तर दिश: पातु सीता शोक विनाशन: । लंका विदाहक: पातु सर्वापद्भ्यो निरन्तरम् ॥३॥ सुग्रीव सचिव: पातु मस्तकं वायुनन्दन: । भालं पातु महावीरो भ्रुवोर्मध्ये निरन्तरम् ॥ ४ ॥ नेत्रे छायापहारी च पातुन: प्लवगेश्वर: । कपोलौ कर्णमूले तु पातु श्रीरामकिङ्कर: ॥ ५ ॥ नासाग्रं मञ्जनी सूनुर्वक्त्रं पातु हरीश्वर: । वाचां रुद्रप्रिय: पातु जिह्वां पिङ्गल लोचन: ॥ ६ ॥ पातु दन्तान्फाल्गुनेष्टश्चिबुकं दैत्य प्राणहृत् । पातु कण्ठञ्च दैत्यारि: स्कन्धौ पातु सुरार्चित: ॥ ७ ॥ भुजौ पातु महातेजा: करौ च चरणायुध: । नखान्नखायुध: पातु कुक्षिं पातु कपीश्वर: ॥ ८ ॥ वक्षो मुद्रापहारी च पातु पार्श्वे भुजायुध: । लङ्काविभंजन: पातु पृष्ठदेशे निरन्तरम् ॥ ९ ॥ नाभिं च रामदूतोऽसौ कटिं पात्वनिलात्मज: । गुह्यं पातु महाप्रज्ञ: सक्थिनी च शिवप्रिय: ॥ १० ॥ ऊरू च जानुनी पातु लङ्काप्रासाद भञ्जन: । जंघे पातु महाबाहुर्गुल्फौ पातु महाबली ॥ ११ ॥ अबलोद्धारक: पातु पदौ भास्कर सन्निभ: । पदान्ते सर्व सत्वाढ्य: पातु पादाङ्गुलीस्तथा ॥ १२ ॥ सर्वाङ्गानि महावीर: पातु रोमाणि चात्मवान् । हनुमत्कवचं यस्तु पठेद्विद्वान् विचक्षण: ॥ १३ ॥ स एव पुरुष: श्रेष्ठो भुक्तिं मुक्तिञ्च विन्दति । त्रिकालमेक कालं वा पठेन्मासत्रयं सदा ॥ १४ ॥ सर्वान् रिपून् क्षणे जित्वा स पुमाञ्छ्रियमाप्नुयात् । अर्द्धरात्रौ जले स्थित्वा सप्तवारं पठेद्यदि ॥ १५ ॥ क्षयापस्मार कुष्ठादि ताप त्रय निवारणम् । अर्कवारेऽश्व-

त्थ मूले स्थित्वा पठति य: पुमान् ॥२६॥ अचलां श्रियमाप्नोति संग्रामे विजयी भवेत् ॥२७॥
य: करे धारयेन्नित्यं स पुमान् श्रियमाप्नुयात्। विवाहे दिव्य काले च द्यूते राजकुले रणे ॥२८॥
भूत प्रेत महादुर्गे रणे सागर संप्लवे दशवारं पठेद्रात्रौ मिताहारो जितेन्द्रिय: ॥२९॥ विजयं
लभते लोके मानवेषु नराधिप:। सिंह व्याघ्र भये चोग्रे शरशस्त्रास्त्र पातने ॥३०॥ शृंखला बन्धने
चैव काराग्रहण कारणे। क्रोधस्तम्भे वह्नि दाहे गात्र रोगे च दारुणे ॥३१॥ शोके महारणे चैव ब्रह्मग्रह
विनाशिने। सर्वदा तु पठेन्नित्यं जयमाप्नोत्य संशय: ॥३२॥ भूर्जेषु वसने रक्ते क्षौमे वा तालपत्रके।
त्रिगंधेनाथवा मस्या लिखित्वा धारयेन्नर: ॥३३॥ पञ्चसप्तत्रिलोहैर्वा गोपितं कवचं शुभम्।
गले वा बाहुमूले वा कण्ठे शिरसि धारितम् ॥३४॥ सर्वान् कामानवाप्नोति सत्यं श्रीराम भाषितम्॥
२५॥ उल्लंघ्य सिन्धो: सलिलं सलीलं य: शोक वह्निं जनकात्मजाया:। आदाय तेनैव ददाह लङ्कां
नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ॥२६॥

ॐ श्री हनुमानंजनी सूनुर्वायुपुत्रो महाबला:। श्री रामेष्ट: फाल्गुन सख: पिङ्गाक्षोऽ
मितविक्रम: ॥२७॥ उदधिक्रमणश्चैव सीताशोक विनाशन:। लक्ष्मण प्राणदाता च दशग्रीवस्य
दर्पहा ॥२८॥ द्वादशैतानि नामानि कपीन्द्रस्य महात्मन:। स्वापकाले प्रबोधे च यात्रा काले च य:
पठेत् ॥२९॥ तस्य सर्व भयं नास्ति रणे च विजयी भवेत्। धन धान्यं भवेत्तस्य दु:खं नैव
कदाचन ॥३०॥" इति एकमुखि हनुमत्कवचं सम्पूर्णम्॥

फलश्रुति: उक्त 'श्री एकमुखि हनुमत्कवच' का नित्य पाठ करते रहने से साधक
की समस्त कामनाएं पूर्ण होती हैं तथा सब प्रकार के कष्ट-भय दूर होते हैं।

अथ श्रीपञ्चमुखिहनुमत्कवचम् -

श्रीमन्मथारि सूनवे नमः। ॐ अस्य श्रीपञ्चमुखि हनुमत्कवच स्तोत्र मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः। श्री हनुमान् देवता। रां बीजम्। मं शक्तिः चन्द्र इति कीलकम्। ॐ सौं कवचाय हुम्। ह्रौं अस्त्राय फट्। इति पञ्चमुखि हनुमत्कवचस्य पाठे विनियोगः।

ईश्वर उवाच॥ अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि श्रृणु सर्वाङ्ग सुन्दरम्। यत्कृतं देव देवेशि ध्यानं हनुमतः प्रियम् ॥१॥ पञ्चवक्त्रं महाभीमं कपियूथ समन्वितम्। बाहुभिर्दशभिर्युक्तं सर्व कामार्थ सिद्धिदम् ॥२॥ पूर्वं तु वानरं वक्त्रं कोटि सूर्य सम प्रभम्। दंष्ट्रा कराल वदनं भ्रुकुटीकुटिलेक्षणम् ॥३॥ अस्यैव दक्षिणं वक्त्रं नारसिंहं महाद्भुतम्। अत्युग्र तेजो वपुषं भीषणं भयनाशनम् ॥४॥ पश्चिमे गारुडं वक्त्रं वक्रतुण्ड महाबलम्। सर्वनाग प्रशमनं सर्व भूतादि कृन्तनम्॥५॥ उत्तरे सूकरं वक्त्रं कृष्णदीप्तं नभोमयं। पाताले सिद्ध वेतालं ज्वररोगादि कृन्तनम् ॥६॥ ऊर्ध्वं हयाननं घोरं दानवान्तं करं परम्। येन वक्त्रेण विप्रेन्द्र ताटकाया महाहवे ॥७॥ दुर्गतेश्शरणं तस्य सर्व शत्रु हरं परम्। ध्यात्वा पञ्चमुखं रुद्रं हनुमन्तं दयानिधिम् ॥८॥ खड्गं त्रिशूलं खट्वाङ्गं पाशमङ्कुश पर्वतम्। मुष्टौ तु मौदकौ वृक्ष धारयन्तं कमण्डलुम् ॥९॥ भिन्दिपालं ज्ञानमुद्रां दशमं मुनिपुङ्गवम्। एतान्यायुध जालानि धारयन्तं भयापहम् ॥१०॥ दिव्य मालाम्बरधरं दिव्य गन्धानुलेपनम्। सर्वैश्वर्यमयं देवं हनुमद्विश्वतो मुखम् ॥११॥ पञ्चास्यमच्युतमनेक विचित्र वर्णं, वक्त्रं सशङ्खविभृतं कपिराजवर्यम्। पीताम्बरादि मुकुटै रपि शोभमानं, पिङ्गाक्षमञ्जनिसुतं ह्यनिशं स्मरामि ॥१२॥ मर्कटस्य महोत्साहं सर्व शोक विनाशनम्। शत्रु
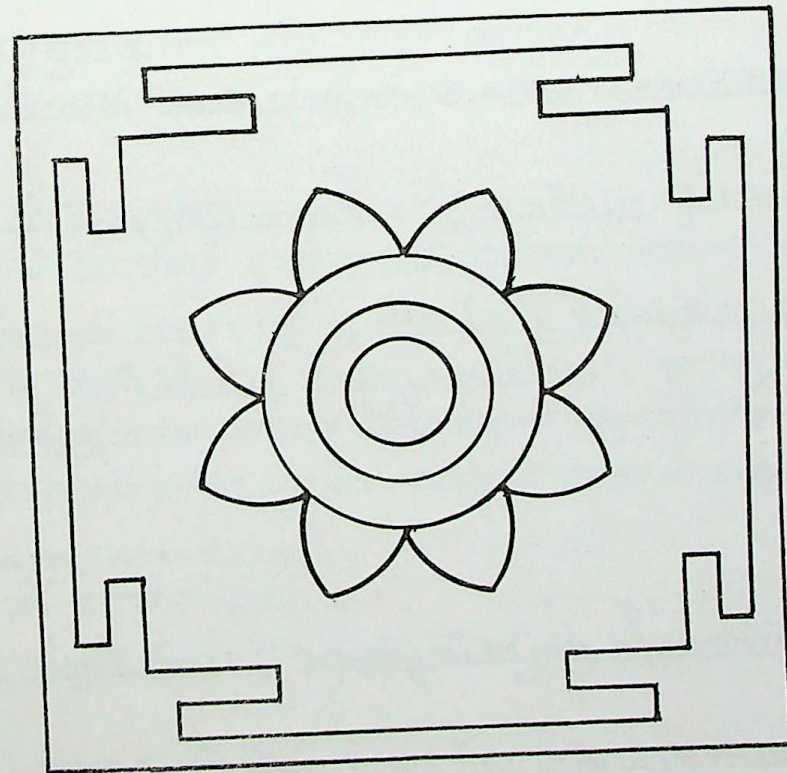
संहारकं चैतत् कवचं ह्यापदं हरेत् ॥१३॥

ॐ हरिमर्कट मर्कटाय स्वाहा ॥१४॥

ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय पूर्वे कपिमु-
खाय सकल शत्रु संहारणाय स्वाहा ॥१५॥

ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय उत्तरे आदि
वाराह मुखाय सकल सम्पत्कराय स्वाहा ॥१६॥

ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय दक्षिणे
नारसिंह मुखाय सकल दुःख विनाशनाय स्वाहा ॥१७॥

ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय पश्चिमे
गारुड़ मुखाय सकल रुज हराय स्वाहा ॥१८॥

ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय ऊर्ध्वे
हयग्रीव मुखाय सकल जन वश्य कराय स्वाहा ॥१९॥

इसके पश्चात् निम्न लिखित मन्त्र को पढ़ने
से पूर्व हाथ में जल लेकर विनियोग करे –

'ॐ अस्य श्री पञ्चमुखि हनुमत्कवच
स्तोत्र मन्त्रस्य श्री रामचन्द्र ऋषिरनुष्टुप छन्दः

श्रीराम पूजन यन्त्र

श्रीरामचन्द्र देवता सीतेति बीजम् । हनुमानिति शक्तिः । हनुमत्प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥"

उक्त मन्त्र का उच्चारण कर, थोड़ा सा जल भूमि पर डाल दें । फिर इसी प्रकार निम्नलिखित विनियोग करें -

"पुनर्हनुमानिति बीजम् । ॐ वायु पुत्राय इति शक्तिः । अञ्जनी सुतायेति कीलकम् । श्रीराम चन्द्र वरप्रसाद सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।"

इस विनियोग का उच्चारण करके पात्र में जल छोड़ दें ।

अथ न्यासः - अब निम्नानुसार न्यास करें -

"ॐ हं हनुमते अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ वं वायु पुत्राय तर्जनीभ्यां नमः । ॐ अं अंजनी सुताय मध्यमाभ्यां नमः । ॐ रां रामदूताय अनामिकाभ्यां नमः। ॐ रुं रुद्रमूर्त्तये कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ सीता शोक निवारणाय करतल करपृष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ अंजनी सुताय हृदयाय नमः । ॐ रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा । ॐ रामदूताय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ पञ्चमुखि हनुमते अस्त्राय फट् ।"

उक्त वाक्यों से न्यास करने के उपरान्त निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करते हुए पुनः विनियोग करें तथा अन्त में जल पात्र में छोड़ दें -

अथ विनियोगः - "श्री रामदूताय आञ्जनेयाय वायुपुत्राय महाबलाय सीता शोक

निवारणाय महाबल प्रचण्डाय लङ्कापुरी दहनाय फाल्गुण सखाय कोलाहल सकल ब्रह्माण्ड विश्वरूपाय सप्त समुद्र निरन्तर लंघिताय पिङ्गल नयनामित विक्रमाय सूर्य बिम्बफल सेवाधिष्ठित निराक्रमाय संजीवन्या अङ्गद लक्ष्मण महाकपिसैन्य प्राणदात्रौ दशग्रीव विध्वंसनाय रामेष्टाय सीता सह रामचन्द्र वर प्रसादाय षट् प्रयोगागम पञ्चमुखि हनुमन्मन्त्र जपे विनियोगः।"

"ॐ हरि मर्कट मर्कटाय स्वाहा। ॐ हरि मर्कट मर्कटाय वं वं वं वं वं स्वाहा। ॐ हरि मर्कट मर्कटाय फं फं फं फं फं फट् स्वाहा।।" इति पूर्वे।

उक्त मन्त्र पढ़कर पूर्व दिशा में अक्षत छोड़ें।

"ॐ हरि मर्कट मर्कटाय खं खं खं खं खं मारणाय स्वाहा। ॐ हरि मर्कट मर्कटाय ठं ठं ठं ठं ठं स्तम्भनाय स्वाहा।।" इति दक्षिणे।।

उक्त मन्त्र पढ़कर दक्षिण दिशा में चावल छोड़ें।

"ॐ हरि मर्कट मर्कटाय डं डं डं डं डं आकर्षणाय सकल सम्पत्कराय पञ्चमुखि वीर हनुमते स्वाहा। ॐ उच्चाटने ढं ढं ढं ढं ढं कूर्ममूर्तये पञ्चमुखि हनुमते परयन्त्र परतन्त्रोच्चाटनाय स्वाहा।।" इति पश्चिमे।

उक्त मन्त्र पढ़कर पश्चिम दिशा में चावल छोड़ें।

"ॐ कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं स्वाहा।।" इत्युत्तरे।

उक्त मन्त्र पढ़कर उत्तर दिशा में चावल छोड़ें।

अथ दिग्बन्धः - निम्नलिखित मन्त्रों का उच्चारण करते हुए दिग्बन्ध करें -

" ॐ पूर्व कपि मुखे पञ्चमुखि हनुमते ठं ठं ठं ठं ठं सकल शत्रु संहारणाय स्वाहा॥ ॐ दक्षिणमुखे पञ्चमुखि हनुमते कराल वदनाय नरसिंहाय ह्रां ह्रां ह्रां ह्रां ह्रां सकल भूतप्रेत दमनाय स्वाहा। ॐ पश्चिम मुखे गरुड़ासनाय पञ्चमुखि वीर हनुमते मं मं मं मं मं सकल विषहराय स्वाहा। ॐ उत्तरमुखे आदि वीराहप लं लं लं लं लं नृसिंहाय नीलकण्ठाय पञ्चमुखि हनुमते स्वाहा॥ अंजनी सुताय वायु पुत्राय महाबलाय रामेष्ट फाल्गुण सखाय सीताशोक निवारणाय लक्ष्मणप्राण रक्षकाय कपि सैन्य प्रकाशाय दशग्रीवाभिमान दहनाय श्रीरामचनुचर प्रसादकाय महावीर्याय प्रथम ब्रह्माण्डनायकाय पञ्चमुखि हनुमते भूत प्रेत पिशाच ब्रह्मराक्षस शाकिनी डाकिनी अन्तरिक्ष ग्रह परमन्त्र पर यन्त्र परतन्त्र सर्वग्रहोच्चाटनाय सकल शत्रु संहारणाय पञ्चमुखि हनुमद्वरं प्रसादय सर्व रक्षकाय जं जं जं जं जं स्वाहा।

फलश्रुतिः - इदं कवचं पठयित्वा तु महा कवचं पठेन्नरः। एकवारं पठेन्नित्यं सर्वशत्रु निवारणम् ॥१८॥ द्विवारं तु पठेन्नित्यं सर्व शोक निवारणम्। त्रिवारं पठेते नित्यं सर्व सम्पत्करं परम् ॥१९॥ चतुर्वारं पठेन्नित्यं सर्व लोक वशीकरम्। पञ्चवारं पठेन्नित्यं सर्व रोग निवारणम् ॥२०॥ षड्वारं तु पठेन्नित्यं सर्व देव वशीकरम्। सप्तवारं पठेन्नित्यं सर्व कामार्थ सिद्धिदम्॥ अष्टवारं पठेन्नित्यं सर्व सौभाग्य दायकम्। नववारं पठेन्नित्यं सर्वैश्वर्य प्रदायकम् ॥२२॥ दशवारं पठेन्नित्यं त्रैलोक्य ज्ञान दर्शनम्। एकादशं पठेन्नित्यं सर्वसिद्धिं लभेन्नरः ॥२३॥ कवचं

स्मृति मात्रेण महालक्ष्मी फल प्रदम्। तस्माच्च प्रयता भाव्यं कार्यं हनुमत: प्रियम्॥" इति श्री पंचमुखि
हनुमत्कवचं समाप्तम्॥"

उक्त कवच का नित्य एक बार पाठ करने से शत्रु-नाश, दो बार करने से शोक-नाश, तीन
बार से सम्पत्ति-लाभ, चार बार से वशीकरण, पाँच बार से रोग-नाश, छै: बार से देव-वशीकरण, सात बार
से कामार्थ-सिद्धि, आठ बार से सौभाग्य, नौ बार से सर्वैश्वर्य, दस बार से त्रैलोक्य-ज्ञान-दर्शन, तथा ग्यारह
बार नित्य पाठ करने से सब प्रकार की सिद्धियों का लाभ होता है। इस कवच के स्मरण मात्र से ही फल
दायक महालक्ष्मी का लाभ होता है, अत: हनुमान् जी को प्रिय यह कवच नित्य पाठ के योग्य है॥ इति॥

श्री हनुमत् स्तोत्रम् : अब 'वीरविंशतिकाख्य श्री हनुमत्स्तोत्र' को लिखा जा रहा है,
इस स्तोत्र का नित्य पाठ करते रहने से साधक की समस्त कामनायें पूर्ण होती हैं।

"लाङ्गूल सृष्ट वियदम्बुधि मध्यमार्गमुत्प्लुत्य यान्तममरेन्द्रमुदो निदानम्। आस्फा-
लितस्वकभुज स्फुटिताद्रि काण्डं द्राङ् मैथिलीनयननन्दनमद्य वन्दे॥ १॥ मध्ये निशाचर महाभयदुर्विषि-
ह्यं घोराद्भुत व्रतमिदं यददश्चचार। पत्ये तदस्य बहुधापरिणामदूतं सीतापुरस्कृत तनुं हनुमन्त
मीडे॥ २॥ य: पादपङ्कजयुगं रघुनाथपत्न्या नैराश्य रूषित विरक्तमपि स्वरागै:। प्रागेव रागि
विदधे बहु वन्दमानो वन्देऽञ्जनाजनुषमेव विशेषतुष्ट्यै॥ ३॥ ताञ्जानकी विरह वेदन हेतुभूतान्
प्रागाकलय्य सदशोकवनीय वृक्षान्। लङ्कालकानिव घनानुदपाटयद्यस्तं हेमसुन्दरकपिं प्रणमामि
पुष्ट्यै॥ ४॥ घोष प्रतिध्वनित शैल गुहा सहस्र सम्भ्रान्तनादितवलन्मृगनाथ यूथम्। अक्षय क्षय क्षणविल

क्षितराक्षसेन्द्रमिन्द्रं कपीन्द्रपृतनावलयस्य वन्दे ॥५॥ हेलाविलङ्घितमहार्णवमप्यमन्दं चूर्णद्रुमदावितिविक्षत राक्षसेषु। स्वम्मोदवारिधिमपारमिवेक्षमाणं वन्देऽहमक्षयकुमारकमारकेशम् ॥६॥ जम्भारिजित्प्रसभलम्भित पाशबन्धं ब्रह्मानुरोधमिव तत्क्षणमुद्वहन्तम्। रौद्रावतारमपि रावणदीर्घदृष्टि सङ्कोचकारणमुदारहरिं भजामि ॥७॥ दर्पोन्नमन्निशिचरेश्वरमूर्धचञ्चत्कोटीरचुम्बि निजबिम्बमुदीक्ष्य हृष्टम्। पश्यन्तमात्मभुजयन्त्रणपिष्यमाणतत्कायशोणितनिपातमपेक्षि वक्षः ॥८॥ अक्षप्रमृत्यमरविक्रमवीरनाशा क्रोधादिव द्रुतमुदञ्चितचन्द्रहासाम्। निन्दापिताम्रघनगर्जनघोरघोषैः संस्तम्भयन्तमभिनौमि दशास्यमूर्तिम् ॥९॥ आशंस्यमानविजयं रघुनाथधाम संसन्तमात्मकृतभूरिपराक्रमेण। दौत्ये समागमसमन्वयमादिशन्तं वन्दे हरेः क्षितिभृतः पृतनाप्रधानम् ॥१०॥ यस्यौचितीं समुपदिष्टवतोऽधिपुच्छं दम्भान्वितां धियमपेक्ष्य विवर्धमानः। नक्तञ्चराधिपतिरोषहिरण्यरेता लङ्कां दिधक्षुरपतत्तमहं वृणोमि ॥११॥ क्रन्दन्निशाचरकुलां ज्वलनावलीढैः साक्षाद्गृहैरिव बहिः परिदेवमानाम्। स्तब्धस्वपुच्छतटलग्नकृपीटयोनिदन्दह्यमाननगरीं परिगाहमानाम् ॥१२॥ मूर्तैर्गृहासुभिरिव धुधुरं व्रजद्भिर्व्योम्नि क्षणं परिगतं पतगैर्ज्वलद्भिः। पीताम्बरं दधतमुच्छ्रितदीप्तिपुच्छं सेनां वहद्भिहगराजमिवाहमीडे ॥१३॥ स्तम्भीभवत्स्वगुरुबालधिलग्नवह्निज्वालोल्ललद्ध्वजपटामिव देवतुष्ट्यै, वन्दे यथोपरि पुरो दिवि दर्शयन्तमद्यैव रामविजयाजिकवैजयन्तीम् ॥१४॥ रक्षश्चयैकचितकल्पकपूश्चितौ यः सीताशुचो निजविलोकनतो मृतायाः। दाहं व्यधादिव तदन्त्यविधेयभूतं लाङ्गूलदत्तदहनेन मुदे स नोऽस्तु ॥१५॥ आशुक्षये रघुपतिप्रणयैकसाक्ष्ये वैदेहराजदुहितुः सरिदीश्वराय। न्यासं ददानमिव पावकमापतन्तमब्धौ प्रभञ्जनतनूजनुषं भजामि ॥१६॥ रक्षस्स्वतृप्ति

रुङ्शान्तिविशेषशोणमक्षक्षय क्षणविधानुमितात्मदाक्ष्यम् । भास्वत्प्रभातरविभानुभरावभासं लङ्काभय-ङ्करममुं भगवन्तमीडे ॥१७॥ तीर्त्वोदधिं जनकजापितमाप्य चूडारत्नं रिपोरपि पुरं परमस्य दग्ध्वा श्रीरामहर्षगलदश्रुचभिषिच्यमानं तं ब्रह्मचारिवरवानरमाश्रये ऽहम् ॥१८॥ यः प्राणवायु जनितो गिरिशस्य शान्तः शिष्योऽपि गौतमगुरुर्मुनि शङ्करात्मा । हव्यो हरस्य हरिजहरितां गतोऽपि धी धैर्य शास्त्रविभवेऽतुलमाश्रये तम् ॥१९॥ स्कन्धोऽधिवाह्य जगदुत्तरगीतिरीत्या यः पार्वतीप्रवर मतोषयदाशुतोषम् । तस्मादवाप च वरानपरानवाप्यान् तं वानरं परमवैष्णवमीश मीडे ॥२०॥ उमा पते कविपतेः स्तुतिर्वाल्पविजृम्भिता । हनूमतस्तुष्टये ऽस्तु वीरविंशतिकाभिधा ॥

॥इति श्री कविपत्युपनामकोमापति शर्मदेव द्विवेदि विरचितं वीरविंशतिकाख्यं श्री हनुमत्स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

श्री हनुमत् प्रार्थना :- अतुलित बलधामं हेमशैलाभ देहं, दनुज वन कृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् सकल गुणनिधानं वानराणामधीशं रघुपति वरदूतं वातजातं नमामि ॥१॥ अञ्जनिः गर्भसम्भूतो वायु-पुत्रो महाबलः । कुमारो ब्रह्मचारी च हनूमान् मे प्रतिष्ठिताम् ॥२॥ अंजनानन्दनं वीरं जानकीशोक नाशनम् । कपीशमक्षहन्तारं वन्दे लङ्का भयङ्करम् ॥३॥ मनोजवं मारुततुल्य वेगं, जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् । वातात्मजं वानरयूथ मुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥४॥ तप्तचामीकरनिभं भीघ्नं संवि-हिताञ्जलिम् । चलत्कुण्डलदीप्तास्यं पद्माक्षं मारुतिं स्मरेत् ॥५॥ मर्कटेश महोत्साह सर्वशोक विनाशन । शत्रून् संहर मां रक्ष श्रियं दापय मे प्रभो ॥६॥ उल्लंघ्य सिन्धोः सलिलं सलीलम् यः शोकवह्निं जनकात्मजायाः । आदाय तेनैव ददाह लङ्कां नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ॥७॥

अथ भैरव स्तोत्राणि :- अब श्री भैरव के स्तोत्रादि का उल्लेख किया जाता है। श्री भैरव के अनेक रूप हैं तथा अनेक रूपों में उनकी उपासना भी की जाती है। उनमें बटुक भैरव तथा काल भैरव की उपासना मुख्य रूप से की जाती है। श्री भैरव के प्रमुख रूपों से सम्बन्धित विभिन्न स्तोत्र, कवचादि को यहाँ दिया जा रहा है।

श्री बटुक भैरव ध्यान मन्त्रा :- प्रणवं कामदं विद्याल्लज्जा बीजं च सिद्धिदम्। वटुकायेति विज्ञेयं महापातक नाशनम् ॥१॥ उद्यद्भास्कर सन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गरागस्रजं, स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः। नीलग्रीवमुदार कौस्तुभधरं शीतांशु चूडोज्ज्व-लं, बंधूकारुण वाससं भयहरं देवं सदा भावयेत् ॥२॥ नमो भैरव रूपाय भैरवाय नमो नमः। नमो भद्रस्वरूपाय जगदाद्य नमो नमः ॥३॥ वन्दे बालं स्फटिक सदृशं कुण्डलोद्भासिताङ्गं, दिव्या कल्पैर्नवमणिमयैः किंकिणी नूपुराढ्यैः। दीप्ताकारं विशद वसनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं, हस्ताग्राभ्यां बटुक सदृशं शूलदण्डौ दधानम् ॥४॥ कर कलित कपालः कुण्डली दण्डपाणिस्तरुण तिमिर नीलो व्याल यज्ञोपवीती। क्रतु समय सपर्या विघ्न विच्छेद हेतु, जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥५॥

श्री बटुक भैरव कवचम् :-- श्री महादेव उवाच॥ प्रीयतां भैरवो देवो नमो वै भैरवाय च। देवेशि देह रक्षार्थं कारणं कथ्यतां ध्रुवम् ॥१॥ म्रियंते साधका येन विना श्मशान भूमिषु। रणेषु चाति घोरेषु महामृत्यु भयेषु च ॥२॥ शृंगी सलिल वज्रेषु ज्वरादि व्याधि वह्निषु॥ देवेषु-

वाच॥ कथयामि शृणु प्राज्ञ बटुकं कवचं शुभं। गोपनीयं प्रयत्नेन मातृकाजारजो यथा ॥३॥

"ॐ अस्य श्री बटुक भैरव कवचस्य आनंद भैरव ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः श्रीबटुक भैरवो देवता वं बीजं हीं शक्तिः ॐ बटुकायेति कीलकम् ममाभीष्ट सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः॥

ॐ सहस्रारे महाचक्रे कर्पूरधवले गुरुः॥४॥ पातु मां बटुको देवो भैरवः सर्व कर्मसु। पूर्वस्यामसिताङ्गो मां दिशि रक्षतु सर्वदा॥५॥ आग्नेयां च रुरुः पातु दक्षिणे चण्डभैरवः। नैर्ऋत्यां क्रोधनः पातु उन्मत्तः पातु पश्चिमे॥६॥ वायव्यां मां कपाली च नित्यं पायात्सुरेश्वरः। भीषणो भैरवः पातु उत्तरस्यां तु सर्वदा॥७॥ संहार भैरवः पायादीशान्यां च महेश्वरः। ऊर्ध्वं पातु विधाता च पाताले नंदको विभुः॥८॥ सद्योजातस्तु मां पायात्सर्वतो देवसेवितः। वामदेवो वनांते च वने घोरस्तथाऽवतु च॥९॥ जले तत्पुरुषः पातु स्थले ईशान एव च। डाकिनी पुत्रकः पातु पुत्रान् मे सर्वतः प्रभुः॥१०॥ हाकिनी पुत्रकः पातु दारांस्तु लाकिनी सुतः। पातु शाकिनिका पुत्रः सैन्यं वै काल भैरवः॥११॥ मालिनी पुत्रकः पातु पशूनश्वान् गजांस्तथा। महाकालोऽवतु क्षेत्रं श्रियं मे सर्वतो गिरा॥१२॥ वाद्यं वाद्यप्रियः पातु भैरवी नित्यसम्पदा। एतत्कवचमीशान तव स्नेहात्प्रकाशितम्॥१३॥ नाख्येयं नरलोकेषु सारभूतं सुरप्रियम्। यस्मै कस्मै न दातव्यं कवचं सुरदुर्लभम्॥१४॥ न देयं परशिष्येभ्यः कृपणेभ्यश्च शङ्कर। यो ददाति निषिद्धेभ्यः सर्वभ्रष्टो भवेत्किल॥१५॥ अनेन कवचेनैव रक्षां कृत्वा विचक्षणः। विचरन्यत्र कुत्रापि न विघ्नैः परिभूयते॥१६॥ मन्त्रेण रक्षते योगी कवचं रक्षकं यतः। तस्मात्सर्व प्रयत्नेन दुर्लभं पापचेतसाम्॥१७॥ भूर्जे रम्भात्वचि वापि लिखित्वा विधिवत्प्रभो। कुंकुमेनाष्टगंधेन

श्री बटुक भैरव पूजन यन्त्र
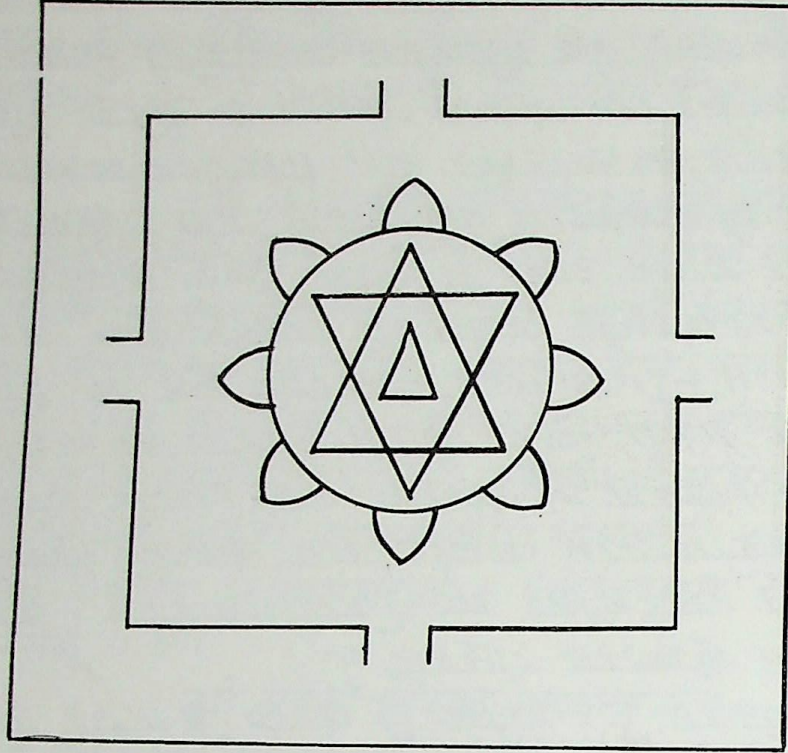
गोरोचनैश्च केसरैः ॥१८॥ धारयेत्पाठयेद्वापि संपठेद्वापि नित्यशः। संप्राप्नोषि फलं सर्वं नात्र कार्याविचारणा ॥१९॥ सततं पठयेत् यत्र तत्र भैरव संस्थितीः। न शक्नोमि प्रभावं वै कवचस्यास्य वर्णितुम् ॥२०॥ नमो भैरव देवाय सर्वभूताय वै नमः। नमस्त्रैलोक्य नाथाय नाथानाथाय वै नमः ॥२१॥

॥ इति श्री भैरवतन्त्रे देवी रहस्योक्तं श्रीबटुक भैरव कवचम् समाप्तम् ॥

॥अथ श्री बटुक भैरव पञ्जर कवचम् ॥

पार्वत्युवाच॥ देवदेव महादेव संसार प्रियकारकः। पञ्जरं बटुकस्यास्य कथनीयं मम प्रभो॥

श्री शिव उवाच ॥ पूर्व भस्मासुरत्रासाद् भय विह्वलतां स्वयम्। पठनादेव मे प्राणा रक्षितः परमेश्वरि ॥२॥ सर्वदुष्ट विनाशाय सर्व रोग

निवारणम् । दुःखशांतिकरं देवि ह्यल्पमृत्यु भयापहम् ॥ ३॥ राजा वश्यकरं चैव त्रैलोक्य विजय प्रदम् । सर्वलोकेषु पूज्यश्च लक्ष्मीस्तस्य गृहे स्थिरा ॥ ४॥ अनुष्ठानं कृतं देवि पूजनं च दिने दिने विना पञ्जर पाठेन तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥ ५॥

अस्य श्री बटुक भैरव पञ्जर कवच मन्त्रस्य कालाग्नि रुद्र ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः बटुक भैरवो देवता । ह्रां बीजं । ॐ भैरवी वल्लभा शक्तिः । ॐ दण्डपाणये नमः कीलकम् । मम सकल कामना सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ॥ ६॥

ॐ ह्रां प्राच्यां डमरुहस्तो रक्तवर्णो महाबलः। प्रत्यक्ष महमीशान बटुकाय नमो नमः ॥ ७॥ ॐ ह्रीं दण्डधारी दक्षिणे च पश्चिमे खड्गधारिणे । ॐ ह्रूं घण्टावादी मूर्त्तिरुत्तरस्यां दिशिस्तथा ॥ ८॥ ॐ ह्रैं अग्निरूपो ह्याग्नेय्यां नैर्ऋत्यां च दिगम्बरः । ॐ ह्रौं सर्वभूतस्था वायव्ये भूतानां हितकारकः ॥ ९॥ ॐ ह्रः अष्टसिद्धिश्च ईशाने सर्व सिद्धिकरः परः । प्रत्यक्ष महमीशान बटुकाय नमोनमः ॥ १०॥ ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः स्वाहा ऊर्ध्वं खेचरिणं न्यसेत् । रुद्ररूपस्तु पाताले बटुकाय नमोनमः ॥ ११॥ ॐ ह्रीं बटुकाय मूर्ध्नि ललाटे भीमरूपिणम् । आपदुद्धरणं नेत्रे मुखे च बटुकं न्यसेत् ॥ १२॥ कुरु कुरु सर्वसिद्धिर्देहे गेहे व्यवस्थितः । बटुकाय ह्रीं सर्वदेहे विश्वस्य सर्वतो दिशि ॥ १३॥ आपदुद्धारकः पातु ह्यापादतल मस्तकम् । हसक्षमलवरयुं पातु पूर्वे दण्डहस्त स्तु दक्षिणे ॥ १४॥ हसक्षमलवरयुं नैर्ऋत्ये हसक्षमलवरयुं पश्चिमे ऽवतु । सर्वभूतस्थो वायव्ये हसक्षमलवरयुं घंटावादिन उत्तरे ॥ १५॥ हंसः सोऽहं तु ईशाने चाष्टसिद्धिकरः परः । क्षं क्षेत्रपाल ऊर्ध्वे तु पाताले शिवसन्निभः ॥ १६॥ एवं दश दिशो रक्षेद् बटुकाय नमोनमः । इति ते

कथितं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सदावतु ॥१७॥ ॐ फ्रें हुं फट् च सर्वत्र त्रैलोक्ये विजयी भवेत्। लक्ष्मीं
ऐं श्रीं लं पृथिव्यां च आकारो हं ममावतु ॥१८॥ स्रौं प्रौं ज्रौं ॐ यं वायव्यां रं रं रं तेजोरूपि
णम्। ॐ कं खं गं घं ङं बटुकं चं छं जं झं ञं कपालिनम् ॥१९॥ टं ठं डं ढं णं क्षेत्रेशं तं थं दं
धं नं उमाप्रियम्। पं फं बं भं मं ममरक्ष यं रं लं भैरवोत्तमम् ॥२०॥ वं शं षं सं आदिनाथं
ळं क्षं वै क्षेत्रपालकम्। एवं पञ्जरमाख्यातं सर्वसिद्धिकरं भवेत् ॥२१॥
दुःख दारिद्र्य शमनं रक्षकं सर्वतो दिशः। आवश्यं सर्वतोवश्यं सर्वबीजैश्च
संपुटम् ॥२२॥ सर्वरोग हरं दिव्यं सर्वत्र सुखमाप्नुयात्। एवं रहस्यमाख्यातं देवानामपि दुर्लभम्
॥२३॥ वज्रपञ्जरनामेदं ये शृण्वन्ति वरानने। आयुरारोग्यमैश्वर्यं कीर्तिलाभं सुखं जपः ॥२४॥ लक्ष्मी
मनोरमा बुद्धिस्तेषां गेहे व्यवस्थिता। सुशीलाय सुदाताय गुरुभक्तिपराय च ॥२५॥ तस्य शीघ्रं च
दातव्यमन्यथा न कदाचन। गोपनीय प्रयत्नेन सर्वगोप्यमयं भवेत् ॥२६॥ यस्मै कस्मै न
दातव्यं न दातव्यं कदाचन। राज्यं देयं शिरो देयं न देयं भैरवाक्षरम् ॥२७॥ एककालं द्विकालं
वा त्रिकालं पठते नरः। सर्व पाप विनिर्मुक्तो शिवेन सह मोदते ॥२८॥

॥ इति श्री शक्ति रहस्ये श्रीबटुक भैरव पञ्जर कवचम् समाप्तम् ॥

फलश्रुति - श्रीबटुक भैरव का यह कवच दुःख - दारिद्र्य नाशक, सर्वसिद्धि दायक, सर्व-रोग हर, सर्वत्र सुख दायक, सब दिशाओं में रक्षा करने वाला एवं आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, कीर्ति, सुख, सम्पत्ति एवं श्रेष्ठ बुद्धि को देने वाला है। जो व्यक्ति इसका नित्य पाठ करता है, वह शिवलोक पाता है।

मं० मं० ३२८

भा० टी०

अथ श्रीबटुक भैरव स्तवराजः - आचमन तथा प्राणायाम के पश्चात् निम्नलिखित श्रीबटुक भैरव स्तवराज का पाठ तथा न्यासादि करने चाहिए।

" मेरुपृष्ठे सुखासीनं देवदेवं त्रिलोचनम्। शङ्करं परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम् ॥१॥ श्री पार्वत्युवाच ॥ भगवन्सर्वधर्मज्ञ सर्वशास्त्रागमादिषु। आपदुद्धारकं मन्त्रं सर्वसिद्धिप्रदं नृणाम् ॥२॥ सर्वेषां चैव भूतानां हितार्थं वाञ्छितं मया। विशेषतस्तु राज्ञां वै शान्तिपुष्टिप्रदायकम् ॥३॥ अङ्गन्यास करन्यास देहन्यास समन्वितम्। वक्तुमर्हसि देवेश मम (प्रसाधनमिति वा पाठः) हर्ष विवर्द्धनम् ॥४॥

ईश्वर उवाच॥ शृणु देवि महामन्त्रमापदुद्धार हेतुकम्। सर्वदुःख प्रशमनं सर्वशत्रुविनाशनम् ॥५॥ अपस्मारादि रोगाणां ज्वरादीनां विशेषतः। नाशनं स्मृति मात्रेण मन्त्रराजमिमं प्रिये ॥६॥ ग्रहराजभयानां च नाशनं सुखवर्द्धनम्। स्नेहाद्वक्ष्यामि मन्त्रं सर्वसारमिमं प्रिये ॥७॥ सर्वकामार्थदं मन्त्रं राजभोगप्रदं नृणाम्। आपदुद्धार मन्त्रस्य मूलविद्यां शृणु प्रिये ॥८॥ यस्य संस्मरणादेव भूतानां नाशनं वरम्। प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य देवी प्रणवमुद्धरेत् ॥९॥ बटुकायेति वै पश्चादापदुद्धारणाय च। कुरु द्वयं ततः पश्चाद् बटुकाय पुनर्वदेत् ॥१०॥ देवी प्रणवमुद्धृत्य मन्त्रोद्धारमिमं प्रिये। एकविंशति वर्णास्तु मंत्रे सत्यं प्रकाशितः ॥११॥ मन्त्रोद्धारमिमं देवि त्रैलोक्ये चातिदुर्लभम्। तद्यन्त्रं च प्रवक्ष्यामि यन्त्रे देवं च पूजयेत् ॥१२॥ त्रिकोणं च तथा दत्त्वा षट्कोणं च ततो न्यसेत्। ततश्च वलये कुर्याच्चतुष्कोणं ततश्चरेत् ॥१३॥ मन्त्रं दलं समारभ्य मन्त्राक्षराणि पूरयेत्। उपरितानि सव्येन सर्वाणि पूरयेत् क्रमात् ॥१४॥ उर्वरित दले

तस्य लक्ष्मीबीजं न्यसेत्सदा। दिक्पालांश्च समारोप्य कोणेष्ट भैरवांलिखेत् ॥२५॥ एवं यन्त्रं च सम्पूज्य स्वस्थो भूत्वा जपेन्नरः। मन्त्राक्षराणां संख्याकैस्तन्तुभिर्ब्रह्मसूत्रजैः॥ वर्त्ति दत्वा घृते नैज दीपं तत्र प्रदापयेत् ॥२६॥

अथ दीपदान मन्त्रम्

"ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं श्रीं वं सर्वह्लादे महाबल पराक्रमाय बटुकाय इमं दीपं गृहाण सर्वकार्यार्थ साधकाय दुष्टान्नाशय नाशय त्रासय त्रासय सर्वतो मम रक्षां कुरु कुरु फट् स्वाहा ॥२७॥

त्रिराचम्य च मन्त्रैश्च हस्तं प्रक्षाल्य वै तदा। हस्ते जलं ततो गृह्य विनियोगं पठेद् द्रुयम् ॥२८॥ अपुकाश्चयमिदं मन्त्रं सर्वशक्ति समन्वितम् स्मरणादेव मन्त्रस्य भूत प्रेत पिशाचकाः॥२९॥ विद्रवंत्यति भीता वै कालरुद्रादिक प्रजाः। पठेद्वा पाठयेद्वापि पूजयेद्वापि पुस्तकम्॥२०

श्रीस्वर्णाकर्षण भैरव यन्त्र

मं० मं० ८ ३ ०

भा० टी०
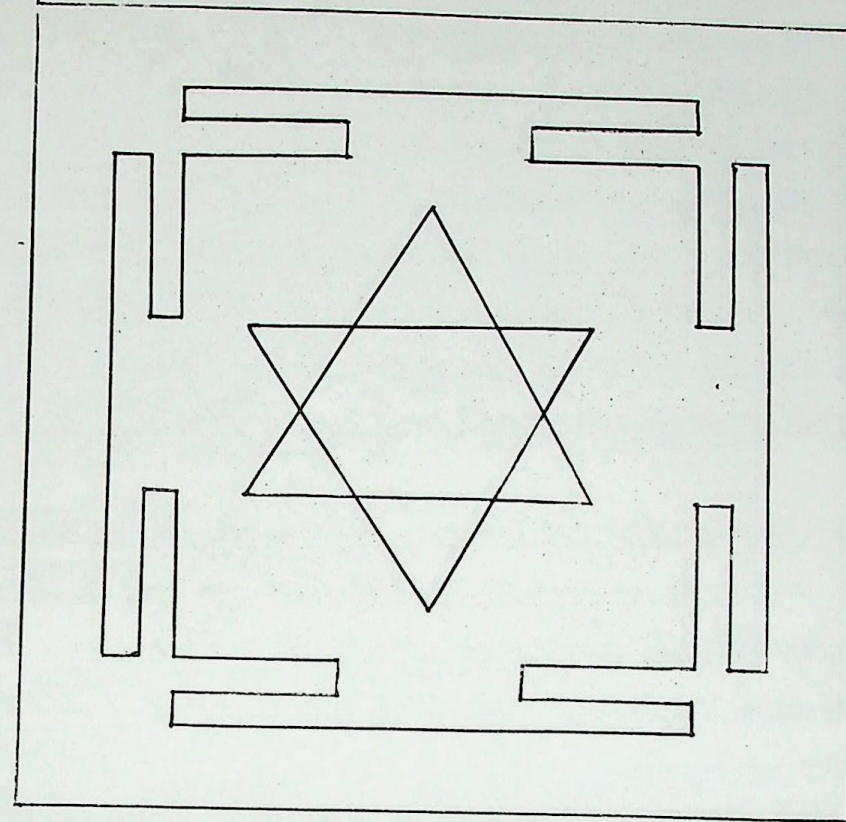
नाग्नि चोर भयं तत्र ग्रहराजभयं तथा। न च मारीभयं क्वापि सर्वत्र सुख माग्भवेत् ॥२१॥ आयुरारो-
ग्यमैश्वर्यं पुत्र पौत्रादि सम्पद:। भवंति सततं तस्य पुस्तकस्यापि पूजनात् ॥२२॥

पार्वत्युवाच:॥ य एष भैरवो नाम आपदुद्धार कोमत:। त्वया च कथितो देव
भैरव: कल्प उत्तम: ॥२३॥ तस्य नाम सहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च। सारमुद्धृत्य तेषां वै नामाष्ट
शतकं वद ॥२४॥ यानि संकीर्तयन्मर्त्य: सर्व दु:ख विवर्जित:। सर्वान्कामानवाप्नोति साधक:
सिद्धि मेव च ॥२५॥

ईश्वर उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि भैरवस्य महात्मन:। आपदुद्धारणस्येह नामा-
ष्टशतमुत्तमम् ॥२६॥ सर्वपापहरं पुण्यं सर्वापद्विनिवारणम्। सर्वकामार्थदं देवि साधकानां सुखावहम् ॥२७॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वोपद्रवनाशनम्। आयुष्करं पुष्टिकरं श्रीकरं च यशस्करं ॥२८॥ नामाष्टशतकस्यास्य
छन्दोऽनुष्टुप् प्रकीर्तितम्। बृहदारण्यको नाम ऋषिर्देवोऽस्य भैरव: ॥२९॥ अष्टबाहुस्त्रिनयनं बीजशक्ति
समीरिते। ॐ कीलकं शेषमिष्ट सिद्धौ तु विनियोजयेत् ॥३०॥ सर्वकामार्थ सिद्ध्यर्थे विनियोग: प्रकीर्तित:।
आदौ कृत्वा षडङ्गं च ह्रां वां बीजादि निर्मितम् ॥३१॥ अङ्गुष्ठादिकरान्तं च यथोक्तं हृदयादिकम्। न्यासं कुर्याच्च
विधिवद्भक्त्या भैरव तुष्टये ॥३२॥ सद्योजातादिभिर्मन्त्रै: कनिष्ठकादि पूर्वकम्। देहाङ्गन्यासकंचैव
पूर्वं कुर्याच्च साधक: ॥३३॥ यथाकामनया ध्यात्वा ध्यानं च त्रिविधं यत:। आद्यान्ते स्तोत्र पाठ
स्य मूलमन्त्रं जपेन्नर: ॥३४॥ अष्टोत्तरशतं धीमान्यथा संख्यमथापि वा। जपांतेऽप्युत्तरन्यासा:
कर्तव्या जपसिद्धये ॥३५॥ एवं न्यासविधिं देवि भैरवस्य महात्मन:। नामाष्टशतकं पश्चा
ज्जपेदापन्निवारकम् ॥३६॥ स्थानेषु येषु नामानि शृणु मत्प्राण वल्लभे।

अथ देहन्यास नामानि -

भैरवं मूर्ध्नि विन्यस्य ललाटे भीमदर्शनम् ॥३७॥ अक्ष्णोर्भूताश्रयं न्यस्य कर्णयोर्भूत
नायकम्। नासिकायां त्रिशूलं च जिह्वायां रक्तपं न्यसेत् ॥ कण्ठमध्ये नागहारं नागहारोपवीतकम्।
क्षेत्रज्ञं करयोर्मध्ये क्षेत्रपालं हृदि न्यसेत् ॥३९॥ क्षेत्रदं नाभिदेशे तु कट्यां सर्वाघनाशनम्।
त्रिनेत्रमूर्वोर्विन्यस्य जंघयो रक्तपायिनम् ॥४०॥ पादयोर्देवदेवेशं सर्वाङ्गे बटुकं न्यसेत्।
एवं न्यास विधिं कृत्वा साक्षाद् भैरवो भवेत् ॥४१॥ अथातः संप्रवक्ष्यामि अंगुलीन्यासमुत्तमम्।
न्यसेद् भैरवमङ्गुष्ठे तर्जन्यां भीमदर्शनम् ॥४२॥ भूतमेशं मध्यमायामनामिकायां भूतनायकम्। कनिष्ठि-
कायां क्षेत्रियं क्षेत्रपालं करद्वये ॥४३॥ क्षेत्रज्ञं दिग्दिशायां वै भैरवं सर्वतः पुनः।

अथाङ्गन्यासः -

भैरवं शिरसि न्यस्य ललाटे भीमदर्शनम् ॥४४॥ नेत्रयोर्भूतहननं सारमेयानुगं भ्रुवोः।
कर्णयोर्भूतनाथं च प्रेतवाहं कपोलयोः ॥४५॥ नासापुटेऽोष्ठयोश्चैव भस्माङ्गं सर्पभूषणम्। अनादि
नाथमास्ये च शक्तिहस्तं गले न्यसेत् ॥४६॥ स्कंधयोर्दैत्यशमनं बाह्वोरतुलतेजसम्। पाण्योः
कपालिनं न्यस्य हृदये मुण्डमालिनम् ॥४७॥ शान्तं वक्षस्थले न्यस्य स्तनयोः कामचारिणम्। उदरे
च सदातुष्टं क्षेत्रेशं पार्श्वयोस्तथा ॥४८॥ क्षेत्रपालं पृष्ठदेशे क्षेत्रज्ञं नाभिदेशके। पापौघ
नाशनं कट्यां बटुकं लिङ्गदेशके ॥४९॥ गुदे रक्षाकरं न्यस्य तथोर्वो रक्तपायिनम्। जानुनोर्घुर्घुरारावं
जंघयो रक्तपायिनम् ॥५०॥ गुल्फयोः पादुकासिद्धं पादपृष्ठे सुरेश्वरम्। आपादमस्तकं चैव आपदु-
द्धारकं तथा ॥५१॥

मं०
मं०
भा०
टी०

ॐ ह्रीं क्ष्मौं ग्रौं ह्रीं ॐ स्वाहा आपदुद्धारणभैरवाय नमः ॥

अनेन व्यापकम्-

पूर्वे डमरुहस्तं च दक्षिणे दण्डधारिणम्। खड्गहस्तं पश्चिमायां घंटा वादिनमुत्तरे ॥
॥५२॥ आग्नेय्यामग्निवर्णं च नैर्ऋत्यां च दिगम्बरम्। वायव्यां सर्वभूतस्थमीशान्यां चाष्टसिद्धिदम् ॥
॥५३॥ ऊर्ध्वे खेचारिणं न्यस्य पाताले रौद्ररूपिणम्। एवं विन्यस्य देहेषु कराङ्गेषु ततोन्यसेत् ॥
॥५४॥ रुद्रमङ्गुष्ठयोर्न्यस्य तर्जन्योस्तु शिखीसखम्। शिवं मध्यमयोर्न्यस्याऽनामिकयोस्तु त्रिशूलिनम् ॥५५
॥ ब्रह्माणं तु कनिष्ठायां तलयोस्त्रिपुरांतकम्। मांसाशिनं कराग्रे च करपृष्ठे दिगम्बरम् ॥५६
॥ सिद्धहृदये भूतनाथाय आदिनाथाय मूर्द्धनि। आनन्दपदपूर्वाय नाथायाथ शिखासु च ॥५७॥ सिद्ध
॥५८॥ श्रीमदानंद शाबरनाथाय कवचे विन्यसेत्तथा। सहजानन्दनाथाय न्यसेन्नेत्रत्रये तथा ॥५८॥ ...
॥५९॥ देवीबीजानाथाय अस्त्रै चैव प्रयोजयेत्। बीजपूर्वोद्धृतं मन्त्रं न्यासं कुर्याद्विचक्षणः ॥५९॥ ...
॥६०॥ ध्यानं तदनंतरम् ॥६०॥ ध्यानं हते भूपात्सिद्धिर्भवति नान्यथा। एवं न्यासं विधिं कृत्वा ध्यायेच्च तदनंतरम् ॥६०॥ ध्यानं
तस्य प्रवक्ष्यामि यथाध्यात्वापठेन्नरः ॥ ६१ ॥

अथ त्रिगुणात्मकं ध्यानम्-

शुद्धस्फटिकसंकाशं सहस्रादित्यवर्चसम्। नीलजीमूतसंकाशं नीलांजनसमप्रभम् ॥
६२॥ अष्टबाहुं त्रिनयनं चतुर्बाहुं द्विबाहुकम्। दंष्ट्राकरालवदनं नूपुरावलिसंकुलम् ॥६३॥ भुजङ्ग
मेखलं देवमग्निवर्णं शिरोरुहम्। दिगंबरं कुमारेशं बटुकाख्यं महाबलम् ॥६४॥ खट्वाङ्गमसिपाशं
च शूलं दक्षिणभागतः। डमरुं च कपालं च वरदं भुजगं तथा ॥६५॥ आत्मवर्णसमोपेतं सारमेयसमन्वितम्

श्रीमहाकाल भैरव यन्त्र
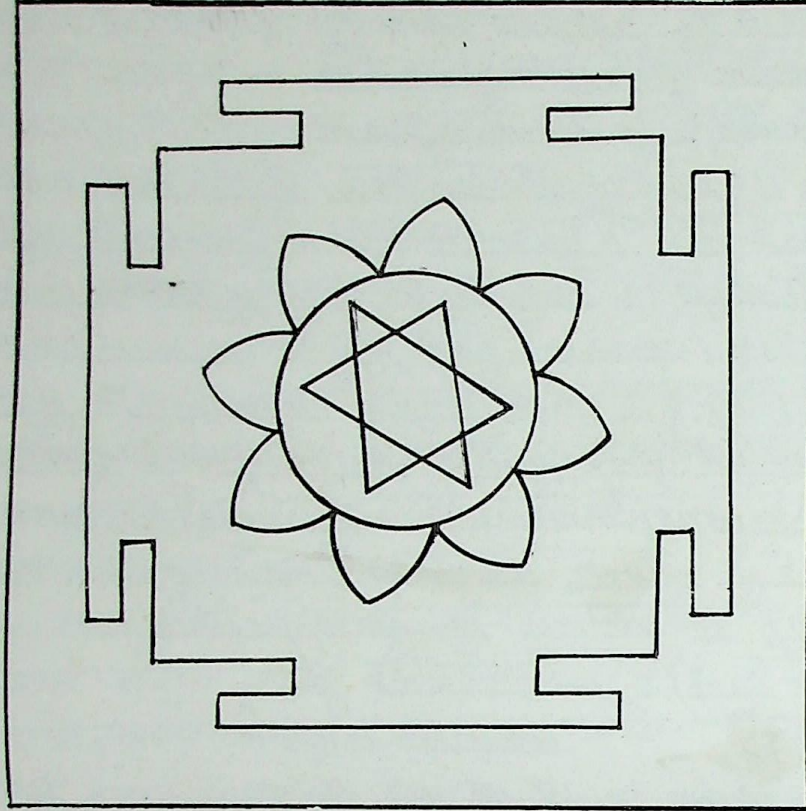
अथ सात्त्विक ध्यानम् -

बन्दे बालं स्फटिक सदृशं कुण्डलोद्भासिताङ्गं ।
दिव्या कल्पैर्नवमणिमयैः किंकिणी नूपुराढ्यैः ॥
दीप्ताकारं विशद रसनां सुप्रसन्नं त्रिनेत्रम् ।
हस्ताग्राभ्यां बटुक सदृशं शूल दण्डोपधानम् ॥

अथ राजस ध्यानम् -

उद्यद् भास्कर सन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्ग रागस्रजं
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करे ॥
नीलग्रीवमुदारभूषणयुतं शीतांशु खण्डोज्ज्वलं ।
बंधूकारुण वाससं भयहरं देवं सदा भावये ॥

अथ तामस ध्यानम् -

ध्यायेन्नीलाद्रिकान्तिं शशिकलधरं मुण्डमालं महेशं,
दिग्वस्त्रं पिङ्गकेशं डमरुमथ सृणिं खड्गपाशाभयानि
नागं घण्टा कपालं करसरसिरुहैर् बिभ्रतं भीमदंष्ट्रं ।
दिव्याकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसद् किंकिणी
नूपुराढ्यम् ॥

अथ साधारणं ध्यानम् -

करकलित कपाल: कुण्डली दण्डपाणिस्तरुणतिमिर नीलो व्याल यज्ञोपवीती।
क्रतुसमय सपर्या विघ्नविच्छेद हेतुर्जयति बटुकनाथ: सिद्धि: साधकानाम् ॥७०॥
आनीलकुंतलमलक्तककरक्त वर्णं मौनी कृतं कृत मनोज्ञ मुखारविन्दम्।
कल्याणकीर्ति कमनीय कपालपाणिं वन्दे महाबटुकनाथमभीष्ट सिद्ध्यै:॥७१॥
आनम्र सर्वगीर्वाण शिरोभृंगागसंगितम्। भैरवस्य पदाम्भोजं भूयोऽस्य नौमि भूतये॥७२॥
ध्यात्वा जपेत्तु संहृष्ट: सर्वान् कामानवाप्नुयात्। आयुरारोग्यमैश्वर्यं सिद्धार्थे विनियोजयेत्॥
साधक: सर्वलोकेषु सत्यं सत्यं न संशय:। लक्षवारं जपेन्मन्त्रं होमं कुर्याद्यथाविधि॥७४॥

ॐ अस्य श्री बटुक भैरव स्तोत्रमंत्रस्य बृहदारण्यक ऋषि। अनुष्टुप छन्द:। श्री बटुक भैरवो देवता। अष्टबाहुमिति बीजम्। त्रिनयनमिति शक्ति:। प्रणव: कीलकम्। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोग:॥

बृहदारण्यक ऋषये नम: शिरसि। अनुष्टुप् छन्दसे नम: मुखे। बटुक भैरव देवता नम: हृदो:। अष्टबाहुमिति बीजाय नम: गुह्ये। त्रिनयनमिति शक्तये नम: पादयो:। ॐ कीलकाय नम: नाभौ। ॐ विनियोगाय नम: सर्वांगे।

ॐ ह्रां बां ईशान: सर्वविद्यानामीश्वर सर्वभूतानां ब्रह्माधिपति ब्रह्मणोऽधिपति ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् अंगुष्ठाभ्यां नम:।

ॐ ह्रीं बीं तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्र: प्रचोदयात्। तर्जनीभ्यां नम:।

ॐ ह्रूं बूं अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर घोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यः सर्व शर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्र रूपेभ्यः । मध्यमाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रैं बैं वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बल विकरणाय नमो बलाय नमो बल प्रमथनाय नमः सर्वभूत दमनाय नमो मनोन्मनाय नमः । अनामिकाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रौं बौं सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमोनमः । कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।

ॐ ह्रः बः पंचवक्त्राय महादेवाय नमः । करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः ।

अथ हृदयादि न्यासः -

ॐ ह्रां बां ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपति ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् । हृदयाय नमः ।

ॐ ह्रीं बीं तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्र : प्रचोदयात् । शिरसेस्वाहा

ॐ ह्रूं बूं अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यः सर्व शर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः । शिखायै वषट् ।

ॐ ह्रैं वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कल विकरणाय नमो बल विकरणाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः । कवचाय हुम् ।

ॐ ह्रौं श्रौं सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः । नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ ह्रः श्रः पंचवक्त्राय महादेवाय नमः । अस्त्राय फट् ।

अथ देहन्यासः-

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः मूर्ध्नि । ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः ललाटे । ॐ ह्रीं भूताश्रयाय नमः नेत्रयोः । ॐ ह्रीं भूतनायकाय नमः कर्णयोः । ॐ ह्रीं त्रिशूलाय नमः नासिकायाम् । ॐ ह्रीं रक्तपाय नमः जिह्वायाम् । ॐ ह्रीं नागहार यज्ञोपवीतिने नमः कण्ठ मध्ये । ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः करयोः ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः हृदये । ॐ ह्रीं क्षेत्रदाय नमः नाभौ । ॐ ह्रीं सर्वविघ्ननाशाय नमः कट्याम् ॐ ह्रीं त्रिनेत्राय नमः ऊर्वोः । ॐ ह्रीं रक्तपायिने नमः जंघयोः । ॐ ह्रीं देवदेशाय नमः सर्वाङ्गे ।

अथ करन्यासः-

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः अङ्गुष्ठाभ्यां । ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः तर्जनीभ्यां । ॐ ह्रीं भूताश्रयाय नमः मध्यमाभ्यां । ॐ ह्रीं भूतनायकाय नमः अनामिकाभ्यां । ॐ ह्रीं क्षत्रियाय नमः कनिष्ठिकाभ्यां । ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः करतलकर पृष्ठाभ्यां । ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः दिग्दिशायाम् । ॐ ह्रीं भैरवाय नमः सर्वाङ्गे ।

अथाङ्गन्यासः -

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः शिरसि। ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः ललाटे। ॐ ह्रीं भूतहननाय नमः नेत्रयोः। ॐ ह्रीं सारमेयानुगाय नमः भ्रुवोः। ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः कर्णयोः। ॐ ह्रीं प्रेतवाहकाय नमः कपोलयोः। ॐ ह्रीं भस्मांगाय नमः नासापुटे। ॐ ह्रीं सर्वभूषणाय नमः ओष्ठयोः। ॐ ह्रीं आदिनाथाय नमः मुखे। ॐ ह्रीं शक्तिहस्ताय नमः गले। ॐ ह्रीं दैत्यशमनाय नमः स्कन्धयोः। ॐ ह्रीं अतुलतेजसे नमः बाह्वोः। ॐ ह्रीं कपालिनमे नमः करयोः। ॐ ह्रीं देवदेवेशाय नमः सर्वाङ्गे।

अथ करन्यासः -

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः अंगुष्ठाभ्यां। ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः तर्जनीभ्यां। ॐ ह्रीं भूतप्रेष्ठाय नमः मध्यमाभ्यां। ॐ ह्रीं भूतनायकाय नमः अनामिकाभ्यां। ॐ ह्रीं क्षत्रियाय नमः कनिष्ठिकाभ्यां। ॐ ह्रीं क्षेत्रपालाय नमः करतलकर पृष्ठाभ्यां। ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः दिग्दिशायाम्। ॐ ह्रीं भैरवाय नमः सर्वाङ्गे।

अथाङ्गन्यासः -

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः शिरसि। ॐ ह्रीं भीमदर्शनाय नमः ललाटे। ॐ ह्रीं भूतहननाय नमः नेत्रयोः। ॐ ह्रीं सारमेयानुगायः नमः भ्रुवोः। ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः कर्णयोः। ॐ ह्रीं

प्रेतवाहकाय नमः कपोलयोः । ॐ ह्रीं भस्माङ्गाय नमः नासापुटे । ॐ ह्रीं सर्वभूषणाय नमः ओष्ठयोः ।
ॐ ह्रीं आदिनाथाय नमः मुखे । ॐ ह्रीं शक्तिहस्ताय नमः गले । ॐ ह्रीं दैत्यशमनाय नमः
स्कन्धयोः । ॐ ह्रीं अतुलतेजसे नमः बाह्वो । ॐ ह्रीं कपालिने नमः करयोः । ॐ ह्रीं मुण्डमा-
लिने नमः हृदये । ॐ ह्रीं शान्ताय नमः वक्षःस्थले । ॐ ह्रीं कामचारिणे नमः स्तनयोः । ॐ ह्रीं
सदा तुष्टाय नमः उदरे । ॐ ह्रीं क्षेत्रेशाय नमः नाभौ । ॐ ह्रीं पापौघनाशनाय नमः कट्याम्
ॐ ह्रीं बटुकाय नमः लिङ्गे । ॐ ह्रीं रक्षकराय नमः गुदे । ॐ ह्रीं रक्तलोचनाय नमः
ऊर्व्वोः । ॐ ह्रीं घुर्घुराय नमः जान्वो । ॐ ह्रीं सिद्धपादुकाय नमः गुल्फयोः । ॐ ह्रीं
सुरेश्वराय नमः पादपृष्ठे । ॐ ह्रीं आपदुद्धारकाय नमः आपादतलमस्तक पर्यन्तं न्यसेत् ।

ॐ ह्रीं क्ष्रौं भ्रौं ह्रीं ॐ स्वाहा आपदुद्धारणाय भैरवाय नमः अनेन सर्वाङ्गव्यापकं कुर्यात् ।

अथ दिङ्न्यासः-

ॐ ह्रीं डमरुहस्ताय नमः पूर्वे । ॐ ह्रीं दण्डधारिणे नमः दक्षिणे । ॐ ह्रीं खड्ग
हस्ताय नमः पश्चिमे । ॐ ह्रीं घण्टावादिनं नमः उत्तरे । ॐ ह्रीं अग्निवर्णाय नमः आग्नेय्यां । ॐ ह्रीं
दिगम्बराय नमः नैर्ऋत्ये । ॐ ह्रीं सर्वभूतस्थाय नमः वायव्ये । ॐ ह्रीं अष्टसिद्धिदाय नमः ईशान्ये । ॐ
ह्रीं खेचारि नमः ऊर्ध्वम् । ॐ ह्रीं रौद्ररूपिणे नमः पाताले ।

अथ कर न्यासः-

ॐ ह्रीं रुद्राय नमः अङ्गुष्ठाभ्यां। ॐ ह्रीं शिखी सखाय नमः तर्जनीभ्यां। ॐ ह्रीं शिवाय नमः मध्यमाभ्यां। ॐ ह्रीं त्रिशूलिने नमः अनामिकाभ्यां। ॐ ह्रीं ब्रह्मणे नमः कनिष्ठिकाभ्यां। ॐ ह्रीं त्रिपुरान्तकाय नमः करतलयो। ॐ ह्रीं मांसाशिने नमः कराग्रेषु। ॐ ह्रीं दिगम्बराय नमः करपृष्ठयोः।

अथ षडङ्ग न्यासः-

ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः हृदये। ॐ ह्रीं आदिनाथाय नमः मूर्द्धनि स्वाहा। ॐ ह्रीं आनन्द नाथाय नमः शिखायै वषट्। ॐ ह्रीं सिद्ध शाबरनाथाय नमः कवचाय हुम्। ॐ ह्रीं सहजानंदनाथाय नमः नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ह्रीं श्री आनन्दनाथाय नमः अस्त्राय फट्।

ॐ अस्य श्री बटुक भैरव मन्त्रस्य बृहदारण्यकः ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः। श्री बटुक भैरवो देवता। बं बीजम्। ह्रीं शक्तिः। ॐ कीलकम्। श्री बटुक भैरव प्रसाद सिद्ध्यर्थे स्तोत्रादौ अष्टोत्तर शत मूलमन्त्र जपे विनियोगः।

अथ मन्त्र न्यासः-

ॐ ह्रीं अङ्गुष्ठाय नमः। ॐ बटुकाय तर्जनीभ्यां नमः। ॐ आपदुद्धारणाय मध्यमाभ्यांनमः। ॐ कुरु कुरु अनामिकाभ्यां नमः।

अथ सकलमनोरथ प्राप्त्यर्थमिदं ध्यानम् -

शुद्ध स्फटिक संकाशं सहस्रादित्य वर्चसम् । नीलजीमूत संकाशं नीलांजन समप्रभम् ॥७५॥ अष्टबाहुं त्रिनयनं चतुर्बाहुं द्विबाहुकम् । दंष्ट्राकरालवदनं नूपुराराव संकुलम् ॥७६॥ भुजङ्गमरि वै देवमग्नि वर्ण शिरोरुहम् । दिगम्बरं कुमारेशं बटुकाख्यं महाबलम् ॥७७॥ खट्वाङ्गमसिपाशं च शूलं दक्षिण भागतः । डमरुं च कपालं च वरदं भुजगं तथा । आत्मवर्ण समोपेतं सारमेय समन्वितम् ॥७८॥

एवं ध्यात्वा 'ॐ ह्रीं भैरव भयकरहर मां रक्षरक्ष हुं फट् स्वाहा ।'- इति मन्त्रेण प्रार्थयित्वा पूर्वोक्त यन्त्र पीठे आवहनादि मुद्राः प्रदर्शयेत् । षोडशोपचारैरभ्यर्चयेत् ॥

अथ बलिदानम् -

शुद्धासन उपविश्य । हां ह्रीं कुं एभिर्बीजैः त्रिभिराचम्य मूलेन प्राणायामं कृत्वा देश कालौ संकीर्त्य । ममामुकफलावाप्तये श्री बटुक प्रीतये बलिदान महं करिष्ये । --- इति संकल्प्य गणपतिं दुर्गां रक्तैश्चन्दनाक्षतपुष्पैरभ्यर्च्य देवस्याग्रे त्रिकोणं चतुरस्रं मण्डलं कृत्वा तत्रगंधाद्यैरभ्यर्च्य पायसं कदला- कारं संपादितं बलिं निधाय गंधपुष्पाभ्यां मूलान्ते 'बलिरूपाय नमः' इति बलिं संपूज्य देवं तत्र संचिन्त्य संपू ज्य हस्ते जलमादाय मूलमन्त्रमुच्चार्य जलं भूमौ निक्षिप्य स्वहस्ते बलिमादाय देवाय समर्पयेत् ।

ततः संकल्पं कुर्यात्

मम सकल कामना सिद्ध्यर्थं श्री बटुक भैरव स्तोत्रस्यैकादश सहस्रपुरश्चरणांगत्वेन प्रति

स्तोत्रं मूल मंत्रस्योत्तर शतसंख्या जप संपुटित पचांशत्संख्यापाठमहं करिष्ये।"

मूलमन्त्रमष्टोत्तरशतवारं जपेत्।

मूलमन्त्रः-"ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ।"

एवं अष्टोत्तरशत मूल मन्त्र जप कृतेन श्रीबटुक भैरवः प्रीयताम्। बटुकाय नमस्कृत्य पंचोपचारैः संपूज्य स्तोत्रं पठेत्।

अष्टोत्तरशत नामानि- ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावन। क्षेत्रदः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रज्ञः क्षत्रियो विराट्॥७९॥ श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरांतकृत्। रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः॥८०॥ कंकालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः। त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।॥८१॥ शूलपाणिः खड्गपाणिः कंकाली धूम्रलोचनः। अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः॥८२॥ धनदो धनहारी च धनवान्प्रीतिभावितः। नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत्॥८३॥ कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः। त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः॥८४॥ त्रिनेत्रतनयो डिम्भः शान्तः शान्तजनप्रियः। बटुको बटुवेशश्च खट्वाङ्ग वर धारकः॥८५॥ भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः। धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः॥८६॥ प्रशान्तः शान्तिदः सिद्धः शंकरः प्रियबान्धवः। अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः॥८७॥ अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः। भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः॥८८॥ कंकालधारी मुंडी च नागयज्ञोपवीतवान्। जृंभणो मोहनः स्तंभी मारणः क्षोभणस्तथा॥८९॥ शुद्धनीलांजनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः। बलिभुग्बलिभुङ्नाथो बालो बाल पराक्रमः॥९०॥ सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः। कामी कलानिधिः कांतः कामि

नीजश कुठशी ॥ ९१ ॥ सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यो प्रभविष्णुरितीव हि। अष्टोत्तरशतं नाम्नां भैरवस्य महात्मनः ॥ ९२ ॥ मया ते कथितं देवि रहस्यं

फलश्रुतिः -

सर्वकामदम्। य इदं पठति स्तोत्रं नामाष्टशतमुत्तमम् ॥ ९३ ॥ न तस्य दुरितं किंचिन्न च भूत भयं तथा।
न च मारीभयं तस्य गृहराज भयं तथा ॥ ९४ ॥ न शत्रुभ्यो भयं क्वापि प्राप्नुयान्मानवः क्वचित्। पातकानां
भयं नैव पठेत्स्तोत्रमनुत्तमम् ॥ ९५ ॥ मारीभये राजभये तथा चौराग्निजे भये। उत्पत्तिके महाघोरे तथा
दुःस्वप्नदर्शने ॥ ९६ ॥ बंधने च तथा घोरे पठेत्स्तोत्रमनन्यधीः। सर्वप्रशमनं याति भयं भैरव कीर्तनात्।
॥ ९७ ॥ एकादश सहस्रं तु पुरश्चरणमुच्यते। यस्त्रिसंध्यं पठेद्देवि संवत्सरमतंद्रितः ॥ ९८ ॥ ससिद्धिं प्राप्नुया
दिष्टां दुर्लभामपि मानवः। षण्मासं भूमिकामस्तु जपित्वा प्राप्नुयान्महीम् ॥ ९९ ॥ राजशत्रुविनाशाय
जपेन्मासाष्टकं पुनः। रात्रौ वारत्रयं चैव नाशयत्येव शात्रवान् ॥ १०० ॥ जपेन्मासत्रयं मर्त्यो राजानं
वशमानयेत्। धनार्थी च सुतार्थी च दारार्थी यस्तु मानवः ॥ १०१ ॥ जपेन्मासत्रयं देवि वारमेकं तथा
निशि। धनं पुत्रं तथा दारान्प्राप्नुयान्नात्र संशयः ॥ १०२ ॥ रोगी रोगात्प्रमुच्येत बद्धो मुच्येत बंधनात्। भीतो
भयात्प्रमुच्येत देवि सत्यं न संशयः ॥ १०३ ॥ निगडैश्चापि बद्धो यः कारागारे निपातितः। शृंखला बंधनं
प्राप्तं पठेच्चैव दिवानिशिम् ॥ १०४ ॥ यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्। अप्रकाश्यं परं
गुह्यं न देयं यस्य कस्यचित् ॥ १०५ ॥ सुकुलीनाय शांताय ऋजवे दम्भ वर्जिते। दद्यात्स्तोत्रमिदं पुण्यं
सर्वकाम फल प्रदम् ॥ १०६ ॥ इति श्रुत्वा ततो देवी नामाष्टशतमुत्तमम्। जजाप परया भक्त्या सदा सर्वे-
प्रवरेश्वरि ॥ १०७ ॥ भैरवस्य प्रहृष्टो ऽभूत्सर्वलोक महेश्वरः। वरं ददाति भक्तेभ्यो पठेत्स्तोत्रमनन्यधीः॥
१०८ ॥ संतोषं परमं प्राप्य भैरवस्य महात्मनः ॥ १०९ ॥ वारं वारं भुवनजननी प्रोच्यते साधुवादः।

सत्यं सत्यं जगत सकलो भैरवो देव एक:। यां यां सिद्धिं भुवन जठरे कामयेत्मानवोऽपि:। स्तां तां सिद्धिं वितरति सदा भैरव: सुप्रसन्न: ॥११०॥ पाणिभ्यां परित: प्रपीड्य सुदृढं निश्चोत्य निश्चोत्य च, ब्रह्माण्डं सकलं प्रचालित रसालो चचै: फलाभं मुहु:॥ पायं पायमपाययत्त्रिजगति उन्मत्तवत्तैरसैर्नृत्यं स्ता: डवमंबरेणशिरसा पायान्महाभैरव:॥१११॥ बिभ्राण: शुभ्रवर्णं द्विगुणनवभुजं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं। ह्यानं मुद्रेन्दुशास्त्रं विषममुतकं (?) शंखवभैष्णवपञ्चापम्। शूलं खट्वाङ्गबाणान्डमरुमसि गदा वह्नि मारोग्यमाला मिष्टाभीति च दर्भिर्जियति खलुमहाभैरव: सर्व सिद्ध्यै ॥११२॥ क्वाकाश: क्व समीरण: क्व दहन: क्वा पश्च विश्वंभर:। क्व ब्रह्मा क्व जनार्दन: क्व तरणिक्वेन्दुश्च देवासुरा:। कल्पान्तेभादिशारन प्रमुदित: श्रीसिद्धयोगीश्वरो। क्रीडानाटक नायको विजयते देवो महाभैरव:॥११३॥

लिखित्वा परमा भक्त्या भैरवस्तोत्रमुत्तमम्। अष्टानां ब्राह्मणानां च देयं पुस्तकमादरात्॥११४॥ पायान्समीहते कामां स्तांस्ताम्प्राप्नोत्य संशयम्। इह लोके सुखं प्राप्य पुस्तकस्य प्रसादत:॥ शिवलोकमनु प्राप्य शिवेन सह मोदते॥११५॥ लिखित्वा भूर्जपत्रे तु त्रिलोह परिवेष्टितम्। सौम्ये च वस्तु वसने कर्वटे च सुशोभने॥११६॥ करे बाहौ गले कट्यां मूर्ध्नि त्रि-लोह गोपितम्। यस्तु धारयते स्तोत्रं सर्वत्र जयमाप्नुयात्॥११७॥

॥इति श्री रुद्रयामलोक्तापदुद्धारकं श्री बटुक भैरव स्तोत्रम् समाप्तम्॥

अथ श्री काल भैरवाष्टकम् – देवराज सेव्यमान पावनांघ्रि पंकजं, कालयज्ञ सूत्रमिन्दु
शेखरं कृपाकरम् । नारदादि योगिवृन्दवन्दितं दिगम्बरं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे ॥१॥ भानुकोटि
भास्वरं भवाब्धितारकं परं, नीलकंठमीप्सितार्थ दायकं त्रिलोचनम् । कालकाल मंबुजाक्ष मक्षशूल मक्षरं,
काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे ॥२॥ शूलटंक पाश दंडपाणिमादिकारणं, श्यामकायमादिदेवमक्षरं
निरामयम् । भीम विक्रमं प्रभुं विचित्र ताण्डव प्रियं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे ॥३॥ भुक्ति
मुक्तिदायकं प्रशस्त चारुविग्रहं, भक्तवत्सलं स्थितं समस्त लोक विग्रहम् । विनिक्वणन्मनोज्ञ हेमकिं-
किणीलसत्कटिं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे ॥४॥ धर्मसेतु पालकं त्वधर्ममार्ग नाशकं.
कर्मपाश मोचकं सुशर्मदायकं विभुम् । स्वर्णवर्ण शेषपाश शोभितांग मण्डलं, काशिकापुराधिनाथ
कालभैरवं भजे ॥५॥ रत्नपादुका प्रभाभिराम पादयुग्मकं, नित्यमद्वितीयमिष्ट दैवतं निरंजनम् । मृत्यु
दर्पनाशनं करालदंष्ट्र मोक्षणं, काशिकापुराधिनाथ काल भैरवं भजे ॥६॥ अट्टहास भिन्नपद्मजां
डकोश संतति, दृष्टिपात नष्टपाप जालमुग्रशासनम् । अष्ट सिद्धि दायकं कपालमालि कंधरं,
काशिका पुराधिनाथ काल भैरवं भजे ॥७॥ भूतसंघ नायकं विशाल कीर्ति दायकं, काशिवास
लोक पुण्यपाप शोधकं विभुम् । नीतिमार्ग कोविदं पुरातनं जगत्पतिं, काशिकापुराधिनाथ कालभै-
रवं भजे ॥८॥

काल भैरवाष्टकं पठंति ये मनोहरं, ज्ञानमुक्ति साधनं विचित्र पुण्य वर्द्धनम् । शोक
मोह दैन्य लोभ कोपताप नाशनं, ते प्रयांति काल भैरवांघ्रिसन्निधिं ध्रुवम् ॥ ९ ॥

टिप्पणी: श्रीभैरव के उक्त सभी कवच तथा स्तोत्र नित्य पाठ करने योग्य तथा फल दायक हैं।

स्फुट स्तोत्राणि - प्रमुख देवताओं के स्तोत्र तथा कवचादि का उल्लेख किया जा चुका अब विभिन्न देवताओं से सम्बन्धित कुछ अन्य स्तोत्र यहाँ दिए जा रहे हैं। ये सभी स्तोत्र नित्य पाठ करने योग्य तथा मनोभिलाषा पूरक हैं। विभिन्न देवियों से सम्बन्धित स्तोत्र कवचादि का उल्लेख आगे किया जाएगा।

श्रीराम रक्षास्तोत्रम् :- "अस्य श्री रामरक्षा स्तोत्र मन्त्रस्य बुध कौशिक ऋषिः, श्रीसीतारामचन्द्रो देवता, अनुष्टुप् छन्दः, सीता शक्तिः, श्रीमान् हनुमान् कीलकं श्रीरामचन्द्र प्रीत्यर्थे रामरक्षा स्तोत्र जपे विनियोगः।

अथ ध्यानम् - ध्यायेदाजानु बाहुं धृतशर धनुषं बद्धपद्मासनस्थं, पीतं वासो वसानं नवकमलदलस्पर्धि नेत्रं प्रसन्नम्। वामाङ्कारूढ सीतामुख कमलमिलल्लोचनं नीरदाभं, नानालङ्कारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डलं रामचन्द्रम्॥

स्तोत्रम् - चरितं रघुनाथस्य शतकोटि प्रविस्तरम्। एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥१॥ ध्यात्वा नीलोत्पलं श्यामं रामं राजीव लोचनम्। जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुट मण्डितम्॥२॥ सासितूण धनुर्बाणपाणिं नक्तंचरान्तकम्। स्वलीलया जगत्त्रातुमाविर्भूतमजं विभुम्॥३॥ रामरक्षां पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम्। शिरो मे राघवः पातु भालं दशरथात्मजः॥४॥ कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वामित्रप्रियः श्रुती। घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सलः॥५॥ जिह्वां विद्यानिधिः पातु कण्ठं भरत वन्दितः। स्कंधौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेश कार्मुकः॥६॥ करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदग्न्यजित्। मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जाम्बवदाश्रयः॥७॥ सुग्रीवेशः कटिं पातु

सक्थिनी हनुमत्प्रभुः । ऊरू रघूत्तमः पातु रक्षःकुलविनाशकृत् ॥ ८॥ जानुनी सेतुकृत्पातु जङ्घे दशमुखान्त-
कः । पादौ विभीषण श्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः ॥ ९॥ एतां रामबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत् । स
चिरायुः सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ॥ १०॥ पाताल भूतल व्योम चारिणश्छद्म चारिणः । न द्रष्टुमपि
शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः ॥ ११॥ रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन् । नरो न लिप्यते पापै-
र्भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ॥ १२॥ जगज्जैत्रैक मन्त्रेण रामनाम्नाभिरक्षितम् । यः कण्ठे धारयेत्तस्य करस्था:
सर्वसिद्धयः ॥ १३॥ वज्रपञ्जर नामेदं यो रामकवचं स्मरेत् । अव्याहताज्ञः सर्वत्र लभते जयमङ्गलम् ॥ १४॥
आदिष्टवान्यथा स्वप्ने रामरक्षामिमां हरः । तथा लिखितवान्प्रातः प्रबुद्धो बुधकौशिकः ॥ १५॥ आरामः कल्प
वृक्षाणां विरामः सकलापदम् । अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान्स नः प्रभुः ॥ १६॥ तरुणौ रूपसम्पन्नौ
सुकुमारौ महाबलौ । पुण्डरीक विशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनाम्बरौ ॥ १७॥ फलमूलाशिनौ दान्तौ तापसौ ब्रह्मचा-
रिणौ । पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥ १८॥ शरण्यौ सर्वसत्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम् । रक्षःकुल
निहन्तारौ त्रायेतां नो रघूत्तमौ ॥ १९॥ आत्तसज्ज धनुषाविषुस्पृशावक्षयाशुगनिषङ्गसङ्गिनौ । रक्षणाय मम
रामलक्ष्मणावग्रतः पथि सदैव गच्छताम् ॥ २०॥ सन्नद्धः कवची खड्गी चापबाण धरो युवा । गच्छन्म-
नोरथान्नश्च रामः पातु सलक्ष्मणः ॥ २१॥ रामो दाशरथिः शूरो लक्ष्मणानुचरो बली । काकुत्स्थः पुरुषः
पूर्णः कौसल्येयो रघूत्तमः ॥ २२॥ वेदान्त वेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः । जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमेय
पराक्रम ॥ २३॥ इत्येतानि जपन्नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयान्वितः । अश्वमेधाधिकं पुण्यं सम्प्राप्नोति न
संशयः ॥ २४॥ रामं दूर्वादलं श्यामं पद्माक्षं पीतवाससम् । स्तुवन्ति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नराः
॥ २५॥ रामं लक्ष्मण पूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरम् । काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं

धार्मिकम्। राजेन्द्रं सत्यसंधं दशरथतनयं श्यामलं शान्तमूर्तिम्। वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम्॥२६॥ रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे। रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः॥२७॥ श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम, श्रीराम राम भरताग्रज राम राम। श्रीराम राम रणकर्कश राम राम, श्रीराम राम शरणं भव राम राम॥२८॥ श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि, श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि। श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि, श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये॥२९॥ माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालुर्नान्यं जाने नैव जाने न जाने॥३०॥ दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा। पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनन्दनम्॥३१॥ लोकाभिरामं रणरङ्गधीरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम्। कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये॥३२॥ मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्। वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये॥३३॥ कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम्। आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम्॥३४॥ आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्। लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम्॥३५॥ भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसम्पदाम्। तर्जनं यमदूतानां रामरामेति गर्जनम्॥३६॥

रामो राजमणिः सदा विजयते रामं रमेशं भजे। रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः॥३७॥ रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं, रामे चित्तलयः सदा भवतु मे भो राम मामुद्धर॥३७॥ राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे। सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने॥

॥ इति श्री बुधकौशिकमुनि विरचितं श्रीरामरक्षास्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

श्रीकृष्णाष्टकम् :- "भजे व्रजैकमण्डलं समस्त पापखण्डनं, स्वभक्तचित्तरञ्जनं सदैव नन्दनन्दनम् । सुपिच्छगुच्छमस्तकं सुनादवेणुहस्तकं, अनङ्गरङ्गसागरं नमामि कृष्णनागरम् ॥१॥ मनोजगर्वमोचनं विशाललोललोचनं, विधूतगोपशोचनं नमामि पद्मलोचनम् । करारविन्दभूधरं स्मितावलोकसुन्दरं, महेन्द्रमानदारणं नमामि कृष्णवारणम् ॥२॥ कदम्बसूनकुण्डलं सुचारुगण्डमण्डलं, व्रजाङ्गनैकवल्लभं नमामि कृष्णदुर्लभम् । यशोदया समोदया सगोपया सनन्दया युतं सुखैकदायकं नमामि गोपनायकम् ॥३॥ सदैव पादपङ्कजं मदीयमानसे निजं, दधानमुक्तमालकं नमामि नन्दबालकम् । समस्तदोषशोषणं समस्तलोकपोषणं समस्तगोपमानसं नमामि नन्दलालसम् ॥४॥ भुवो भरावतारकं भवाब्धिकर्णधारकं, यशोमती किशोरकं नमामि चित्तचोरकम् । दृगन्तकान्तभङ्गिनं सदा सदालसङ्गिनं, दिने दिने नवं नवं नमामि नन्दसम्भवम् ॥५॥ गुणाकरं सुखाकरं कृपाकरं कृपापरं, सुरद्विषन्निकन्दनं नमामि गोपनन्दनम् । नवीनगोपनागरम् नवीन केलिलम्पटं, नमामि मेघसुन्दरं तडित्प्रभालसत्पटम् ॥६॥ समस्तगोपनन्दनं हृदम्बुजैकमोदनं, नमामि कुञ्जमध्यगं प्रसन्नभानुशोभनम् । निकामकामदायकं दृगन्तचारुसायकं, रसालवेणुगायकं नमामि कुञ्जनायकम् ॥७॥ विदग्धगोपिकामनोमनोज्ञतल्पशायिनं, नमामि कुञ्जकानने प्रवृद्धवह्निपायिनम् । यदा तदा यथा तथा तथैव कृष्ण सत्कथा, मया सदैव गीयतां तथा कृपाविधीयताम् ॥८॥

प्रमाणिकाष्टकद्वयं जपत्यधीत्य यः पुमान् । भवेत्स नन्दनन्दने भवे भवे सुभक्तिमान् ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं श्रीकृष्णाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

मं० मं० २८०

भा० टी०

अथ चर्पटपञ्जरिका स्तोत्रम् :- दिनमपि रजनी सायं प्रातः शिशिर वसन्तौ पुनरायातः । कालः क्रीडति गच्छत्यायुस्तदपि न मुञ्चत्याशावायुः ॥१॥ भजगोविन्दं भज गोविन्दं भजगोविन्दं मूढमते । प्राप्ते सन्निहिते मरणे नहि नहि रक्षति डुकृञ् करणे ॥ (ध्रुवपदम्)

अग्रे वह्निः पृष्ठे भानुः रात्रौ चिबुक समर्पित जानुः । करतल भिक्षा तरुतल वासस्तदपि न मुञ्चत्याशापाशः ॥ भज०॥२॥ यावद्वित्तोपार्जनसक्तस्तावन्निजपरिवारो रक्तः । पश्चाद्धावति जर्जर देहे वार्तां पृच्छति कोऽपि न गेहे ॥ भज०॥३॥ जटिलो मुण्डी लुञ्चित केशः काषायाम्बर बहुकृत वेषः । पश्यन्नपि च न पश्यति लोको ह्युदरनिमित्तं बहुकृत शोकः ॥ भज०॥४॥ भगवद्गीता किञ्चिदधीता गङ्गाज-ललवकणिका पीता । सकृदपि यस्य मुरारिसमर्चा तस्य यमः किं कुरुते चर्चाम् ॥ भज०॥५॥ अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं दशनविहीनं जातं तुण्डम् । वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं तदपि न मुञ्चत्याशा पिण्डम् ॥ भज०॥६॥ बालस्तावत्क्रीडासक्तस्तरुणस्तावत्तरुणीरक्तः । वृद्धस्तावच्चिन्तामग्नः पारे ब्रह्मणि कोऽपि न लग्नः ॥ भज०॥७॥ पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनम् । इह संसारे खलु दुस्तोर कृपया पारे पाहि मुरारे ॥ भज०॥८॥ पुनरपि रजनी पुनरपि दिवसः पुनरपि पक्षः पुनरपि मासः । पुनरप्ययनं पुनरपि वर्षं तदपि न मुञ्चत्याशामर्षम् ॥ भज०॥९॥ वयसि गते कः कामविकारः शुष्के नीरे कः कासारः । नष्टे द्रव्ये कः परिवारो ज्ञाते तत्त्वे कः संसारः ॥ भज०॥१०॥ नारीस्तनभरनाभिनिवेशं मिथ्यामाया मोहावेशम् । एतन्मांसवसादिविकारं मनसि विचारय बारम्बारम् ॥ भज०॥११॥ कस्त्वं कोऽहं कुत आयातः का मे जननी को मे तातः । इति परिभावय सर्वमसारं विश्वं त्यक्त्वा स्वप्न विचारम् ॥ भज०॥१२॥ गेयं गीतानाम सहस्रम् ध्येयं श्रीपति रूपमजस्रम् । नेयं सज्जन सङ्गे चित्तं देयं दीनजनाय च वित्तम् ॥ भज०

॥२३॥ यावज्जीवो निवसति देहे कुशलं तावत्पृच्छति गेहे। गतवति वायौ देहापाये भार्या बिभ्यति तस्मिन्काये ॥भज०॥२४॥ सुखतः क्रियते रामाभोगः पश्चाद्धन्त शरीरे रोगः। यद्यपि लोके मरणं शरणं तदपि न मुञ्चति पापाचरणम् ॥भज०॥२५॥ रथ्याचर्पटविरचितकन्थः पुण्यापुण्यविवर्जितपन्थः। नाहं न त्वं नायं लोकस्तदपि किमर्थं क्रियते शोकः ॥भज०॥२६॥ कुरुते गङ्गासागरगमनं व्रतपरिपालनमथवा दानम्। ज्ञानविहीनः सर्वमतेन मुक्तिं न भजति जन्मशतेन ॥भज०॥२७॥

॥इति श्रीशङ्कराचार्यविरचितं चर्पटपञ्जरिका स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

टिप्पणी- उक्त स्तोत्र का नित्य पाठ करते रहने से आत्म-ज्ञान प्राप्त होता है तथा संसार से विरक्ति होती है। आत्मकल्याण के इच्छुकों को इसका नित्य चिन्तन सहित पाठ करना चाहिए।

अथ देवी स्तोत्राणि:- अब भगवती दुर्गा, महामायाकाली आदि देवियों से सम्बन्धित स्तोत्र कवचादि का उल्लेख किया जा रहा है।

श्री दुर्गा कवचम् - "ॐ अस्य श्रीचण्डीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, चामुण्डा देवता, अङ्गन्यासोक्तमातरो बीजम्, दिग्बन्ध देवतास्तत्त्वम्, श्री जगदम्बा प्रीत्यर्थे सप्तशती पाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः।'

ॐ नमश्चण्डिकायै ॥ मार्कण्डेय उवाच॥ ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम्। यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥१॥ ब्रह्मोवाच॥ अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारकम्।

देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥२॥ प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी। तृतीयं चन्द्रघण्टे-
ति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥३॥ पञ्चमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च। सप्तमं कालरात्रीति महा-
गौरीति चाष्टमम् ॥४॥ नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः। उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महा-
त्मना ॥५॥ अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे। विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः ॥६॥ न
तेषां जायते किंचिदशुभं रणसंकटे। नापदं तस्य पश्यामि शोकदुःखभयं न हि ॥७॥ यैस्तु भक्त्या
स्मृता नूनं तेषां वृद्धिः प्रजायते। ये त्वां स्मरन्ति देवेशि रक्षसे तान्न संशयः ॥८॥ प्रेतसंस्था तु चामु-
ण्डा वाराही महिषासना। ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुडासना ॥९॥ माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी
शिखिवाहना। लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया ॥१०॥ श्वेतरूपधरा देवी ईश्वरी वृषवाहना।
ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरणभूषिता ॥११॥ इत्येता मातरः सर्वाः सर्वयोगसमन्विताः। नानाभरणशोभा-
ढ्या नानारत्नोपशोभिताः ॥१२॥ दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः। शङ्खं चक्रं गदां शक्तिं हलं च
मुसलायुधम् ॥१३॥ खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च। कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ॥१४॥
दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च। धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ॥१५॥ नमस्तेऽस्तु
महारौद्रे महाघोरपराक्रमे। महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि ॥१६॥ त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां
भयवर्द्धिनि। प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ॥१७॥ दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां खड्ग-
धारिणी। प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद् वायव्यां मृगवाहिनी ॥१८॥ उदीच्यां पातु कौमारी ऐशान्यां शूल-
धारिणी। ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद् वैष्णवी तथा ॥१९॥ एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना।
जया मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः ॥२०॥ अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता। शिखा-

उद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ॥२१॥ मालाधारी
ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद् यशस्विनी । त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये
यमघण्टा च नासिके ॥२२॥ शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये
श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी । कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले तु
शाङ्करी ॥२३॥ नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च
चर्चिका । अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती
॥२४॥ दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठदेशे तु चण्डिका ।
घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके ॥२५॥
कामाक्षी चिबुकं रक्षेद् वाचं मे सर्वमङ्गला । ग्रीवायां
भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी ॥२६॥ नीलग्रीवा
बहिःकण्ठे नलिकां नलकूबरी । स्कन्धयोः खड्गिनी
रक्षेद् बाहू मे वज्रधारिणी ॥२७॥ हस्तयोर्दण्डि-
नी रक्षेदम्बिका चाङ्गुलीषु च । नखाञ्छूलेश्वरी
रक्षेत्कुक्षौ रक्षेत्कुलेश्वरी ॥२८॥ स्तनौ रक्षेन्महादेवी
मनः शोकविनाशिनी । हृदये ललितादेवी उदरे
शूलधारिणी ॥२९॥ नाभौ च कामिनी रक्षेद् गुह्यं
गुह्येश्वरी तथा । पूतना कामिका मेढ्रं गुदे महिष-

श्री दुर्गा पूजन यन्त्र
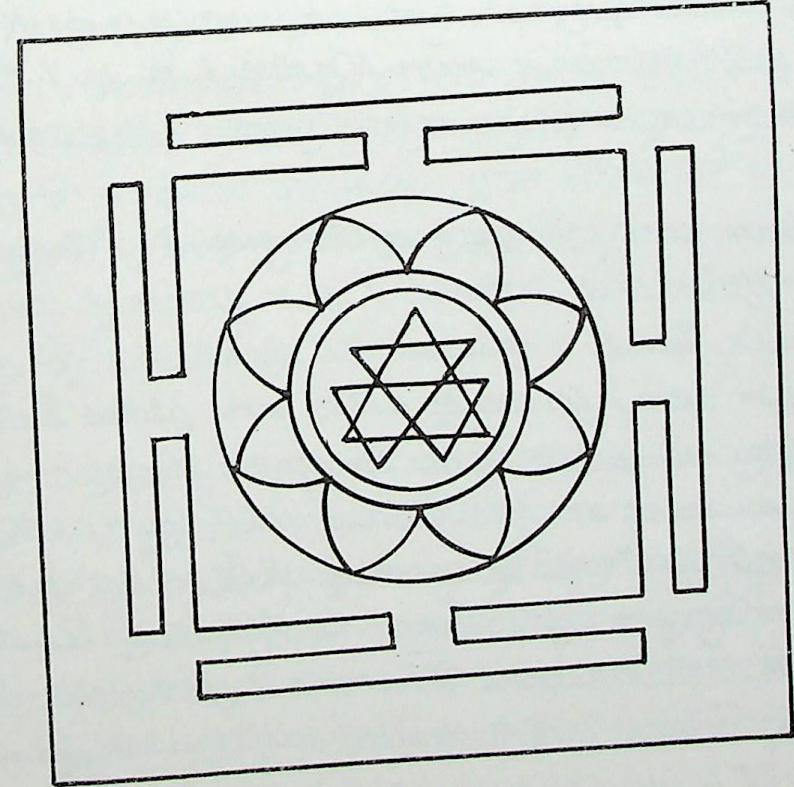
वाहिनी ॥३०॥ कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी । जङ्घे महाबला रक्षेत्सर्वकामप्रदायिनी ॥३१॥ गुल्फ-
योर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी । पादाङ्गुलीषु श्री रक्षेत्पादाधस्तलवासिनी ॥३२॥ नखान् दंष्ट्राकराली
च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी । रोमकूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा ॥३३॥ रक्तमज्जा वसामांसान्य-
स्थिमेदांसि पार्वती । अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ॥३४॥ पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडा-
मणिस्तथा । ज्वालामुखी नखज्वालामभेद्या सर्वसन्धिषु ॥३५॥ शुक्रं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी
तथा । अहंकारं मनोबुद्धिं रक्षेन्मे धर्मधारिणी ॥३६॥ प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम् । वज्र-
हस्ता च मे रक्षेत्प्राणं कल्याणशोभना ॥३७॥ रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी ।
सत्त्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ॥३८॥ आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी । यशः कीर्तिं च
लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ॥३९॥ गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके । पुत्रान् रक्षेन्महाल-
क्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी ॥४०॥ पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा । राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया
सर्वतः स्थिता ॥४१॥ रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु तत्सर्वं रक्ष मे देवि जयन्ती पापनाशिनी
॥४२॥

फलश्रुति: पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः । कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छ-
ति ॥४३॥ तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सर्वकामिकः । यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चि-
तम् ॥४४॥ परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् ॥ निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः ।
त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ॥४५॥ इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् ।
यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ॥४६॥ दैवी कला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः । जीवेद्

वर्षशतं सागमपमृत्युविवर्जित: ॥४७॥ नश्यन्ति व्याधय: सर्वे लूताविस्फोटकादय: । स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं चापि यद्विषम् ॥४८॥ अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्र यन्त्राणि भूतले । भूचरा: खेचराश्चैव जलजा श्चोपदेशिका: ॥ ४९॥ सहजा कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा । अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबला: ॥५०॥ ग्रह भूत पिशाचाश्च यक्ष गन्धर्व राक्षसा: । ब्रह्म राक्षस वेताला: कूष्माण्डा भैरवादय: ॥५१॥ नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते । मानोन्नतिर्भवेद् राज्ञस्तेजोवृद्धि करं परम् ॥५२॥ यशसा वर्द्धते सोऽपि कीर्तिमण्डित भूतले । जपेत्सप्तशती चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ॥ ५३॥ यावद् भूमण्डलं धत्ते सशैल वनकाननम् । तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्तति: पुत्र पौत्रिकी ॥ ५४॥ देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् । प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामाया प्रसादत: ॥ ५५॥ लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते ॥ ॐ ॥ ५६॥"

॥ इति श्री देव्या: कवचं सम्पूर्णम् ॥

अथ अर्गला स्तोत्रम् :- " ॐ अस्य श्री अर्गला स्तोत्र मन्त्रस्य विष्णु ऋषि: अनुष्टुप छन्द:, श्री महालक्ष्मी देवता, श्री जगदम्बा प्रीतये सप्तशती पाठाङ्गत्वेन जपे विनियोग: ॥"

ॐ नमश्चण्डिकायै ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ ॐ जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥ १॥ जयत्वं देवि चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणि । जय सर्वगते देवि कालरात्रि नमोऽस्तु ते ॥ २॥ मधुकैटभविद्राविविधातृ वरदे नम: । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥३॥ महिषासुरनिर्णाशि भक्तानां सुखदे नम: । रूपं देहि जयं देहि यशो

देहि द्विषो जहि ॥४॥ रक्तबीज वधे देवि चण्डमुण्डविनाशिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि
॥५॥ शुम्भस्यैव निशुम्भस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥६॥
वन्दिताङ्घ्रियुगे देवि सर्व सौभाग्यदायिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥७॥ अचि-
न्त्यरूपचरिते सर्वशत्रुविनाशिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥८॥ नतेभ्यः सर्वदा
भक्त्या चण्डिके दुरितापहे। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥९॥ स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं
त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१०॥ चण्डिके सततं ये
त्वामर्चयन्तीह भक्तितः। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥११॥ देहि सौभाग्यमारोग्यं
देहि मे परमं सुखम्। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१२॥ विधेहि द्विषतां नाशं विधे-
हि बलमुच्चकैः। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१३॥ विधेहि देवि कल्याणं विधेहि
परमां श्रियम्। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१४॥ सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्टचरणेऽम्बिके।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१५॥ विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु। रूपं
देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१६॥ प्रचण्डदैत्यदर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे। रूपं देहि जयं
देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१७॥ चतुर्भुजे चतुर्वक्त्र संस्तुते परमेश्वरि। रूपं देहि जयं देहि यशो
देहि द्विषो जहि ॥१८॥ कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्त्या सदाम्बिके। रूपं देहि जयं देहि यशो
देहि द्विषो जहि ॥१९॥ हिमाचलसुतानाथ संस्तुते परमेश्वरि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो
जहि ॥२०॥ इन्द्राणीपति सद्भाव पूजिते परमेश्वरि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२१॥
देवि प्रचण्डदोर्दण्डदैत्यदर्पविनाशिनि। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२२॥ देवि भक्त

दशमहाविद्यान्तर्गत दुर्गा पूजन यन्त्र
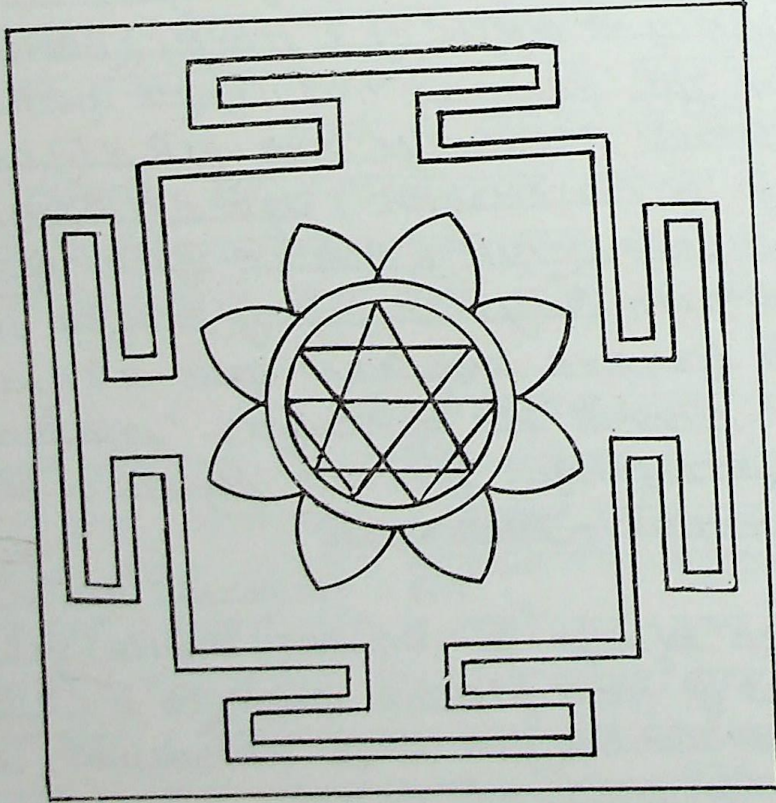
जनोद्दामदत्तानन्दोदये ऽम्बिके। रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२३॥ पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्। तारिणीं दुर्ग संसारसागरस्य कुलोद्भवाम् ॥२४॥ इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः। स तु सप्तशती संख्या वरमाप्नोति सम्पदाम् ॥२५॥

॥इति श्री देव्या अर्गला स्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

टिप्पणी: 'श्री दुर्गा सप्तशती' का पाठ करने से पूर्व उक्त कवच तथा स्तोत्र का पाठ करना आवश्यक है। यदि सप्तशती का पाठ न किया जाय, केवल उक्त कवच तथा स्तोत्र का ही नित्य पाठ किया जाय तो भी साधक की समस्त कामनाऐं पूर्ण होती हैं तथा रोग, शोक, भय आदि से छुटकारा मिलता है।

अगले पृष्ठों में देवी से सम्बन्धित अन्य प्रमुख स्तोत्रादि का उल्लेख किया गया है।

अथ श्री दुर्गास्तोत्रराजम् :- ॥ श्री भैरव उवाच ॥ अधुना देवि वक्ष्यामि दुर्गास्तोत्रं मनोहरम्। मूलमन्त्रमयं दिव्यं सर्व सारस्वत प्रदम् ॥ १ ॥ दुर्गातिशमनं पुण्यं साधकानां जयप्रदम्। दुर्गाया अद्भूतं तु स्तोत्रराजं परात्परम् ॥ २ ॥ श्री दुर्गास्तोत्र राजस्य ऋषिर्देवो महेश्वरः। छन्दोऽनुष्टुब्देवता श्री दुर्गाऽष्टाक्षरा शिवे ॥ ३ ॥ दुं बीजं च पराशक्तिर्नमः कीलकमीश्वरि। धर्मार्थ काम मोक्षार्थे दुर्गा स्तोत्र पाठे विनियोगः ॥ ४ ॥

अथ ध्यानम् - दूर्वानिभां त्रिनयनां विलसत्किरीटां, शङ्खाब्ज खड्ग शर खेटक शूल चापान्। सन्तर्जनीं च दधतीं महिषासनस्थां, दुर्गां नवार कुल पीठगतां भजेऽहम् ॥ ५ ॥ तारे तारं मन्त्र मालासु बीजं, ध्यायेदन्तर्यो बलं बालकान्तः। तस्य स्मारं स्मारमंघ्रिद्वयीं द्राग्रम्भाऽयाति स्वर्गता कामवश्या ॥ ६ ॥ मायां जपेद्यस्तव मन्त्रमध्ये दुर्गे सदा दुर्गति खेदखिन्नः। भवेत्स भूमौ नृप मौलि माला माणिक्य निर्घृष्ट पदारविन्दः ॥ ७ ॥ चाक्रिकं यदि जपेत्तवाम्बिके चक्रमध्यगत ईश्वरेश्वरि। साधको भवति चक्रवर्तिनां नायको नयविलास कोविदः ॥ ८ ॥ चक्रिबीजमपरं स्मरेच्छिवे योऽरि वर्ग विहिताहित व्ययः। आजिमण्डलगतो जपेद्रिपून्वाजिवारणरथाश्रितो नरः ॥ ९ ॥ दूर्वा बीजं यो जपेत्प्रेत भूमौ सायं माया भस्मना लिप्तकायः। गीर्वाणानां नायको देवमन्त्री भुक्त्वा राज्यं प्राज्यप्राज्यं करोति ॥ १० ॥ वायव्यबीजं यदि साधको जपेत्प्रियाकुच द्वन्द्व विमर्दन क्षमः। समस्त कान्ता जन नेत्र वागुरै र्विलास हंसो भविता स पार्वति ॥ ११ ॥ विश्वे विश्वेश्वरि यदि जपेत्कामवेलाकलातौ रात्रौ मात्राक्षरविलसितन्यास ईशानि मातः। तस्य स्मेराननसरसिजभ्राजमानाङ्घ्रि लक्ष्मीर्वश्याऽवश्यं सुरसुरवधू मौलिमालोर्वशी सा ॥ १२ ॥ भूगेहाञ्चित सत्त्रिवृत्त विलसन्नागार वृत्ताञ्चित व्यग्रारोल्लसिता

त्रिकोणविलसच्छ्रीविन्दुपीठस्थिताम्। ध्यायेच्चेतसि शर्वपत्नि भवतीं माध्वीरसाघूर्णितां, यो मन्त्री स
भविष्यति स्मरसमः स्त्रीणां धरण्यां दिवि ॥२३॥ दुर्गास्तवं मनुमयं मनुराजमौलि माणिक्यमुत्तमशिलाङ्;
रहस्यभूतम्। प्रातः पठेद्यदि जपावसरेऽर्चनायां भूमौ भवेत्स नृपतिर्दिवि देवनाथः ॥२४॥ इति स्तोत्रं
महापुण्यं पञ्चाङ्गैक शिरोमणिम्। यः पठेदर्धरात्रे तु तस्य वश्यं जगत्त्रयम् ॥२५॥

॥ इति श्री देवी रहस्ये श्रीदुर्गास्तोत्रराजम् सम्पूर्णम् ॥

टिप्पणी – यह दुर्गास्तोत्रराज सर्वोत्तम है। यदि प्रातः काल पूजन के समय इसका पाठ किया जाय
तो पाठकर्ता पृथ्वी पर राजा तथा स्वर्ग में इन्द्र का पद प्राप्त करता है। जो व्यक्ति अर्द्धरात्रि में इस
का पाठ करता है, वह तीनों लोकों को अपने वश में कर लेता है।

अथ श्री ब्रह्माण्डविजय दुर्गाकवचम् - ॥नारद उवाच॥ कवचं कथितं ब्रह्मन् पद्मा-
क्षस्य मनोहरम्। परं दुर्गतिनाशिन्या कवचं कथय प्रभो ॥१॥ पद्माक्षः प्राणतुल्यं च जीवनाय
चकार यम्। कवचानां च यत्सारं दुर्गनाशन कारणम् ॥२॥ ॥नारायण उवाच॥ शृणु नारद वक्ष्यामि
दुर्गायाः कवचं शुभम्। श्रीकृष्णेनैव यद्दत्तं गोलोके ब्रह्मणे पुरा ॥३॥ ब्रह्मा त्रिपुरसंग्रामे शङ्कराय
ददौ पुरा। जघान त्रिपुरं रुद्रो यद्धृत्वा भक्तिपूर्वकम् ॥४॥ हरो ददौ गौतमाय पद्माक्षाय च
गौतमः। यतो बभूव पद्माक्षः सप्तद्वीपेश्वरो महान् ॥५॥ यद्धृत्वा पठनाद् ब्रह्मा ज्ञानवान् शक्ति-
मान् प्रभुः। शिवो बभूव सर्वज्ञो योगिनां च गुरुर्यतः ॥६॥ शिवतुल्यो गौतमश्च बभूव मुनि
सत्तमः। यतो बभूव पद्माक्षः सप्तद्वीपेश्वरो जयी ॥७॥

ब्रह्माण्डविजयस्यास्य कवचस्य प्रजापतिः ।
ऋषिश्छन्दश्च गायत्री देवी दुर्गतिनाशिनी ॥८॥
ब्रह्माण्डविजयेष्वेव विनियोगः प्रकीर्तितः । पुण्य
जीवश्च महतां कवचं परमाद्भुतम् ॥९॥

दुर्गा दुर्गतिनाशिन्यै स्वाहा मे पातु मस्तकम्
ह्रीं मे पातु कपालं च ऐं ह्रीं श्रीं पातु लोचने ॥१०
पातु मे कर्णयुग्मं च दुं दुर्गायै नमः सदा । ऐं
ह्रीं श्रीं इति नासां मे सदा मां पातु सर्वतः ॥११॥
दुर्गे दुर्गे रक्षणीति स्वाहा चास्यं सदाऽवतु ।
श्रीं ह्रीं क्लीं इति दंताली पातु ह्रीमोष्ठयुग्मकम् ॥
१२॥ ह्रीं ह्रीं ह्रीं पातु कण्ठं च दुर्गे रक्षतु गण्डक
म् । स्कन्धं दुर्गविनाशिन्यै स्वाहा पातु निरन्तरम्
॥१३॥ वक्षो विपद्विनाशिन्यै स्वाहा मे पातु सर्वतः
दुर्गे दुर्गे रक्षणीति स्वाहा नाभिं सदाऽवतु ॥१४॥
दुर्गे दुर्गे रक्ष रक्ष पृष्ठं मे पातु सर्वतः । ॐ दुं
दुर्गायै स्वाहा च हस्तौ पादौ सदाऽवतु ॥१५॥
श्रीं ह्रीं दुर्गायै स्वाहा च सर्वाङ्गं मे सदाऽवतु ।

दशमहाविद्यान्तर्गत त्रिपुर भैरवी पूजन यन्त्र
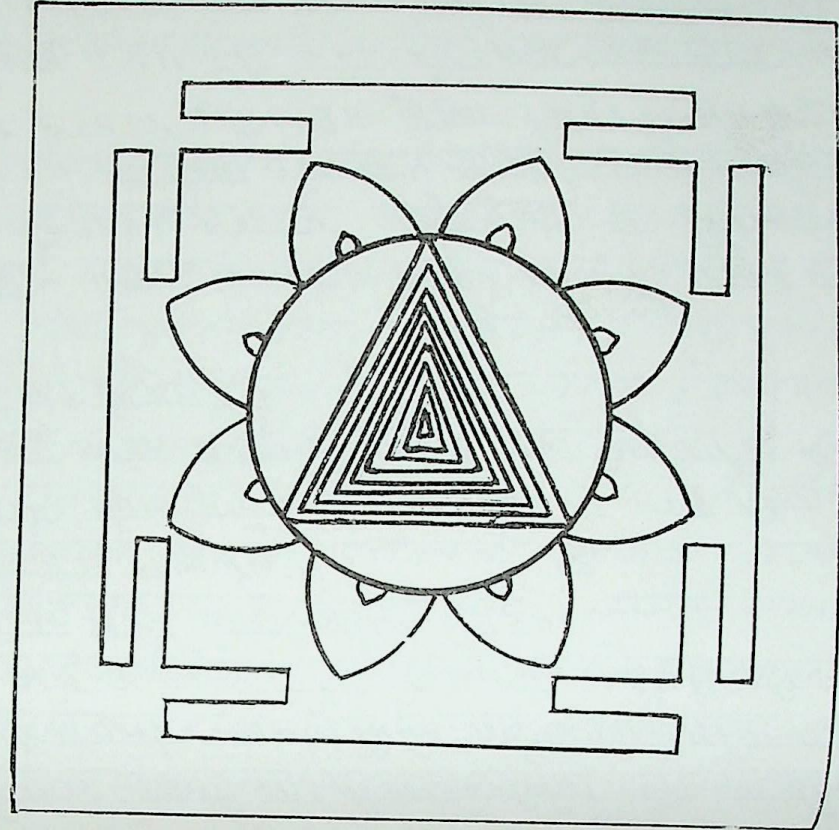
प्राच्यां पातु महामाया आग्नेय्यां पातु कालिका ॥१६॥ दक्षिणे दक्षकन्या च नैऋत्यां शिवसुन्दरी। पश्चिमे पार्वती पातु वाराही वारुणे सदा ॥१७॥ कुबेरमाता कौबेर्यामीशान्यामीश्वरी सदा। ऊर्ध्वं नारायणी पातु ह्यम्बिकाऽधः सदाऽवतु ॥१८॥ ज्ञानं ज्ञानप्रदा पातु स्वप्ना स्वप्ने सदाऽवतु। इति ते कथितं वत्स सर्वमन्त्रौघविग्रहम् ॥१९॥

फलश्रुतिः - ब्रह्माण्ड विजयं नाम कवचं परमाद्भुतम्। स्नानात् सर्वतीर्थेषु सर्वदानेषु यत्फलं ॥२०॥ सर्वव्रतोपवासे च तत्फलं लभते नरः। गुरुमभ्यर्च्य विधिवद्वस्त्रालङ्कारचन्दनैः ॥२१॥ कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ कवचं धारयेत्तु यः। कवचं काण्वशाखोक्तमुक्तं नारद सुन्दरम् ॥२२॥ यस्मै कस्मै न दातव्यं गोपनीयं सुदुर्लभम् ॥२३॥"

॥ इति श्री ब्रह्मवैवर्त्ते श्रीब्रह्माण्डविजय दुर्गा कवचम् सम्पूर्णम् ॥

टिप्पणी - उक्त कवच समस्त मनोभिलाषाओं का पूरक तथा समस्त पाप-तापों को नष्ट करने वाला है। इसको धारण करने से सब प्रकार के व्रतों का फल प्राप्त होता है। गुरुदेव की विधि पूर्वक पूजा करके इसे कण्ठ अथवा दाहिनी भुजा में धारण करने से सर्वत्र रक्षा होती है तथा समस्त तीर्थों में स्नान एवं समस्त तीर्थों के जल का पान करने का फल प्राप्त होता है।

श्रीदुर्गा आपदुद्धार स्तोत्रम् :- "नमस्ते शरण्ये शिवे सानुकम्पे, नमस्ते जगद्व्यापिके विश्वरूपे। नमस्ते जगद्वन्द्य पादारविन्दे, नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥१॥ नमस्ते जगच्चिन्त्य मानस्वरूपे, नमस्ते महायोगिनि ज्ञानरूपे। नमस्ते नमस्ते सदानन्दरूपे, नमस्ते जगत्तारिणि

त्राहि दुर्गे ॥२॥ अनाथस्य दीनस्य तृष्णातुरस्य, भयार्तस्य भीतस्य बद्धस्य जन्तोः। त्वमेका गतिर्देवि निस्तारकर्त्री, नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥३॥ अरण्ये रणे दारुणे शत्रुमध्येऽनले सागरे प्रान्तरे राजगेहे। त्वमेका गतिर्देवि निस्तारनौका, नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥४॥ अपारे महादुस्तरेऽत्यन्तघोरे, विपत्सागरे मज्जतां देहभाजाम्। त्वमेका गतिर्देवि निस्तारनौका, नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥५॥ नमश्चण्डिके चण्डदुर्दण्डलीला, समुत्खण्डिता खण्डिताशेषशत्रो। त्वमेका गतिर्देवि निस्तारबीजं, नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥६॥ त्वमेवाघभावा धृत सत्यवादीन्न जाताजिता क्रोधनात् क्रोधनिष्ठा। इडा पिङ्गला त्वं सुषुम्ना च नाडी, नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥७॥ नमोदेवि दुर्गे शिवे भीमनादे, सरस्वत्यरुन्धत्यमोघस्वरूपे। विभूतिः शची कालरात्रिः सती त्वं, नमस्ते जगत्तारिणि त्राहि दुर्गे ॥८॥

शरणमसि सुराणां सिद्धविद्याधराणां, मुनि मनुज पशूनां दस्युभिस्त्रासितानाम्। नृपति गृहगतानां व्याधिभिः पीडितानां, त्वमसि शरणमेका देवि दुर्गे प्रसीद ॥ ९॥

फलश्रुति - इदं स्तोत्रं मया प्रोक्तमापदुद्धारहेतुकम्। त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा पठनाद्घोर सङ्कटात् ॥१०॥ मुच्यते नात्र सन्देहो भुवि स्वर्गे रसातले। सर्वं वा श्लोकमेकं वा यः पठेद्भक्तिमान् सदा ॥११॥ स सर्वं दुष्कृतं त्यक्त्वा प्राप्नोति परमं पदम्। पठनादस्य देवेशि किं न सिद्ध्यति भूतले ॥१२॥ स्तवराजमिदं देवि संक्षेपात्कथितं मया ॥१३॥

॥ इति श्री सिद्धेश्वरी तन्त्रे श्री दुर्गा आपदुद्धारस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥

मं० म० यन्त्र २३

भा० टी०

अथ श्रीबगला कवचम् - कैलासाचलमध्यगम्पुरवहं शान्तं त्रिनेत्रं शिवम् । वाम-
स्था कवचं प्रणम्य गिरिजा भूतिप्रदम्पृच्छति ॥ १॥ देवि श्री बगलामुखी रिपुकुलारण्याग्निरूपा च या
तस्याश्चाप विमुक्त मन्त्र सहितम्प्रीत्याधुना ब्रूहि माम् ॥२॥ श्रीशङ्कर उवाच ॥ देवि श्री भव वल्लभे
शृणु महा मन्त्रं विभूति प्रदं, देव्या वर्म युतं समस्त सुखदं साम्राज्यदम्मुक्तिदम् ॥ तारं रुद्र वधूं विर-
ञ्चिमहिला विष्णुप्रिया काम युक्कान्ते श्रीबगलानने मम रिपून्नाशाय युग्मन्त्विति ॥ ४॥ ऐश्वर्य-
र्याणि पदं च देहि युगलं शीघ्रम्मनोवाञ्छितं, कार्यं साधय युग्म युक् शिववधू वह्निप्रियान्तो
मनुः ॥ कंसारेस्तनयञ्च बीजमपराशक्तिश्च वाणी तथा, कीलं श्रीमिति भैरवर्षि सहितं छन्दो
विराट् संयुतम् ॥ ५॥ स्वेष्टार्थस्य परस्य वेत्ति नितरां कार्यस्य सम्प्राप्तये । नानासाध्य महागदस्य
नियतन्नाशाय वीर्यप्रदे ॥ ध्यात्वा श्रीबगलाननाम्मनुवरं जप्त्वा सहस्राख्यकन्दीर्घैः षट्कयुतैश्च
रुद्रमहिला बीजैर्विन्यस्याङ्गके ॥६॥

सौवर्णासन संस्थितां त्रिनयनां पीतांशुकोल्लासिनीं, हेमाभाङ्गरुचिं शशाङ्कमुकुटां
सच्चम्पक स्रग्युताम् । हस्तैर्मुद्गर वज्र पाश रसना: संबिभ्रतीं भूषणैर्व्याप्ताङ्गीं बगलामुखीं त्रिजग-
तां संस्तम्भिनीं चिन्तये ॥ ७॥

ॐ अस्य श्रीबगलामुखी ब्रह्मास्त्र मन्त्र कवचयोः भैरव ऋषिः, विराट् छन्दः, श्रीबग-
लामुखी देवता, क्लीं बीजं, ऐं शक्तिः, श्रीं कीलकं, मम मनोरथ सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

अथाङ्गन्यासः - ॐ भैरव ऋषये नमः शिरसि । ॐ विराट् छन्दसे नमः मुखे ।
ॐ बगलामुखी देवतायै नमः हृदि । ॐ क्लीं बीजाय नमः गुह्ये । ॐ ऐं शक्तये नमः पादयोः ।

ॐ श्रीं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रः करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।

ॐ ह्रां हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा ॐ ह्रूं शिखायै वषट्। ॐ ह्रैं कवचाय हुम्। ॐ ह्रौं नेत्र त्रयाय वौषट्। ॐ ह्रः अस्त्राय फट्।

ॐ ह्रां ऐं श्रीं क्लीं बगलानने मम रिपून्नाशय नाशय मामैश्वर्याणि देहि देहि शीघ्रं मनोवांछित कार्यं साधय साधय ह्रीं स्वाहा॥

अथ कवचम्- शिरो मे पातु ॐ ह्रीं ऐं श्रीं क्लीं पातु ललाटकम्। संबोधन पदं पातु नेत्रे श्री बगलानने॥१॥ श्रुतौ मम रिपुम्पातु नासिकान्नाशय द्वयम्। पातु गण्डौ सदामामैश्व-र्याण्यन्तन्तु मस्तकम्॥२॥ देहि द्वन्द्वं सदाजिह्वां पातु शीघ्रं वचो मम। कण्ठदेशं मनः पातु
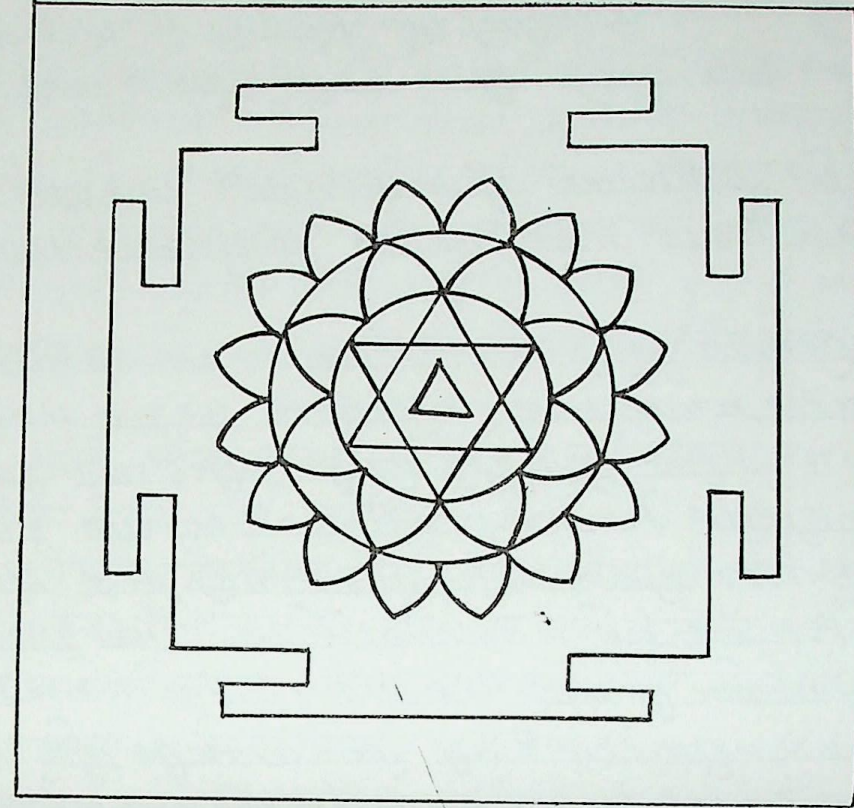
वाञ्छितम्वातु मूलकम् ॥ ३॥ कार्यं साधयद्वन्द्वं करौ पातु सदा मम। माया युक्ता तथा स्वाहा हृदयं पातु सर्वदा ॥ ४॥ अष्टचत्वारिंशद्वर्णा चिरव्याता बगलामुखी। रक्षां करोतु सर्वत्र गृहेऽरण्ये सदा मम ॥ ५॥ ब्रह्मास्त्राख्या मनुः पातु सर्वाङ्गं सर्वसन्धिषु। मन्त्रराजः सदा रक्षां करोतु मम सर्वदा ॥ ६॥ ॐ ह्रीं पातु नाभिदेशं कटिं मे बगलाऽवतु। मुखि वर्णद्वयं पातु लिङ्गं मे मुष्क युग्मकम् ॥ ७॥ जानुनी सर्वदुष्टानां पातु मे वर्ण पञ्चकम्। वाचं मुखं तथा पादं षड्वर्णा परमेश्वरी ॥ ८॥ जंघायुग्मे सदा पातु बगलारिपुमोहिनी। स्तम्भयेति पदं पृष्ठं पातु वर्णत्रयं मम ॥ ९॥ जिह्वां वर्णद्वयं पातु गुल्फौ मे कीलयेति च। पदोर्ध्वं सर्वदा पातु बुद्धिं पादतले मम ॥ १०॥ विनाशय पदः पातु पादाङ्गुल्यो नखानि मे। ह्रीं बीजं सर्वदा पातु बुद्धीन्द्रिय वचांसि मे ॥ ११॥ सर्वाङ्गं प्रणवः पातु स्वाहा रोमाणिमेव तु। ब्राह्मी पूर्वदले पातु चाग्नेय्यां विष्णुवल्लभा ॥ १२॥ माहेशी दक्षिणे पातु चामुण्डा राक्षसेऽवतु। कौमारी पश्चिमे पातु वायव्ये चापराजिता ॥ १३॥ वाराही चोत्तरे पातु नारसिंही शिवेऽवतु। ऊर्ध्वं पातु महालक्ष्मीः पाताले शारदाऽवतु ॥ १४॥ इत्यष्टौ शक्तयः पान्तु सायुधाश्च सवाहनाः। राजद्वारे महादुर्गे पातु मां गणनायकः ॥ १५॥ श्मशाने जलमध्ये च भैरवश्च सदाऽवतु। द्विभुजा रक्तवसनाः सर्वाभरणभूषिताः ॥ १६॥ योगिन्यः सर्वदा पातु महारण्ये सदा मम ॥"

फलश्रुति- इति ते कथितं देवि कवचम्परमाद्भुतम् ॥ १७॥ श्रीविश्वविजयं नाम कीर्तिश्रीविजयप्रदम्। अपुत्रो लभते पुत्रं धीरं शूरं शतायुषम् ॥ १८॥ निर्धनो धनमाप्नोति कवचस्यास्य पाठतः। जपित्वा मन्त्रराजं तु ध्यात्वा श्री बगलामुखीम् ॥ १९॥ पठेदिदं हि कवचं

निशायां नियमात्तय:। यद्यत्काममपते कामं साध्यासाध्ये महीतले ॥ २० ॥ तत्तत्काममवाप्नोति सप्त
रात्रेण शाङ्करि। गुरुं ध्यात्वा सुरां पीत्वा रात्रौ शक्ति समन्वित: ॥ २१ ॥ कवचं य: पठेद्देवि तस्यासा-
ध्यं न किंचन। यन्ध्यात्वा प्रजपेन्मंत्र सहस्र कवचं पठेत् ॥ २२ ॥ त्रिरात्रेण वशं याति मृत्योस्त-
न्नात्र संशय:। लिखित्वा प्रतिमां शत्रोस्सतालेन हरिद्रया ॥ २३ ॥ लिखित्वा हृदितन्नाम तन्ध्यात्वा-
प्रजपेन्मनुम्। एकविंशद्दिनंयावत्प्रत्यहं च सहस्रकम् ॥ २४ ॥ जप्त्वा पठेत्तु कवचं चतुर्विंशतिवारकम्
सस्तम्भं जायते शत्रोर्नात्र कार्या विचारणा ॥ २५ ॥ विवादे विजयं तस्य संग्रामे जयमाप्नुयात्। श्म-
शाने च भयन्नास्ति कवचस्य प्रभावत: ॥ २६ ॥ नवनीतं चाभिमन्त्र्य स्त्रीभ्यो दद्यान्महेश्वरी।
वन्ध्यायां जायते पुत्रो विद्याबल समन्वित: ॥ २७ ॥ श्मशानाङ्गारमादाय भौमे रात्रौ शनावथ।
पादोदकेन स्पृष्ट्वा च लिखेल्लोह शलाकया ॥ २८ ॥ भूमौ शत्रो: स्वरूपं च हृदिनाम समालिखेत्।
हस्तन्तद्धृदये दत्वा कवचन्तिथि वारकम् ॥ २९ ॥ ध्यात्वाजपेन्मंत्र राज्यं नवरात्रम्प्रयत्नत:।
म्रियते ज्वर दाहेन दशमेऽह्नि न संशय: ॥ ३० ॥ भूर्जपत्रेष्विदं स्तोत्र मष्टगंधेन संलिखेत्। धार
येद्दक्षिणे बाहौ नारी वामभुजे तथा ॥ ३१ ॥ संग्रामे जयमाप्नोति नारी पुत्रवती भवेत्। ब्रह्मास्त्रा-
दीनि शस्त्राणि नैव कृन्तन्ति तज्जनम् ॥ ३२ ॥ सम्पूज्य कवचं नित्यं पूजाया: फलमाप्नुयात्।
बृहस्पति समोवापि विभवे धनदोपम: ॥ ३३ ॥ कामतुल्यश्च नारीणां शत्रूणां च यमोपम:।
कविता लहरी तस्य भवेद् गंगा प्रवाहवत् ॥ ३४ ॥ गद्यपद्यमयी वाणी भवेद्देवी प्रसादत:। एकाद-
शशतं यावत्पुरश्चरणमुच्यते ॥ ३५ ॥ पुरश्चर्या विहीनं तु न चेदं फलदायकम्। नदेयं परशिष्ये-
भ्यो दुष्टेभ्यश्च विशेषत: ॥ ३६ ॥ देयं शिष्याय भक्ताय पञ्चत्वं चान्यथाप्नुयात्। इदं कवचं

मत्वा भजेद्यो बगलामुखीम् ॥३७॥ शत कोटिं जपित्वापि तस्य सिद्धिर्न जायते ॥
दाराढ्यो मनुजोऽस्य लक्ष जपतः प्राप्नोति सिद्धिं परां, विद्यां श्री विजयं तथा
सुनियतं धीरं च वीरं वरम् । ब्रह्मास्त्राख्य मनुं विलिख्य नितरां भूर्जेऽष्ट गंधेन वै, धृत्वा
राजपुरं व्रजन्ति खलु ये दासोऽस्ति तेषां नृपः ॥३८॥

॥ इति श्रीविश्वसारोद्धार तन्त्रे पार्वतीश्वर संवादे बगला कवचं सम्पूर्णम् ॥

अथ श्री बगला स्तोत्रम् — " ॐ अस्य श्री बगलामुखी स्तोत्रस्य नारद ऋषिः,
बगलामुखी देवता, मम सर्वेषां विरोधिनां वाङ्मुखपदबुद्ध्यादीनां स्तंभनार्थे जपे विनियोगः ।
अथ ध्यानम् - मध्ये सुधाब्धि मणिमण्डप रत्नवेदी सिंहासनो परिगतां परिपीतवर्णाम् ।
पीताम्बराभरण माल्य विभूषिताङ्गीं देवीं स्मरामि धृत मुद्गर वैरि जिह्वाम् ॥१॥ जिह्वाग्र मादाय
करेण देवीं वामेन शत्रून्परि पीडयन्तीम् । गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि ॥२॥ चलत्कनक कुण्डलोल्लसित चारु गण्डस्थलां लसत्कनक-चम्पक द्युतिमदिन्दु बिम्बा-
ननाम् । गदाहत विपक्षकां कलित लोल जिह्वां चलां स्मरामि बगलामुखीं विमुखवाङ्मुखस्त-
म्भिनीम् ॥३॥ पीयूषो दधि मध्य चारु विलसद्रक्तोत्पले मण्डपे सत्सिंहासन मौलि पातित रिपुम्प्रे-
तासनाध्यासिनीम् ॥ स्वर्णाभां कर पीडितारि रसनां भ्राम्यद् गदां विभ्रमामित्थं ध्यायति यान्ति
तस्य विलयं सद्योऽथ सर्वापदः ॥४॥

मं॰ म॰ २३५ भा॰ टी॰

देवित्वच्चरणाम्बुजार्चन कृते यः पीतपुष्पाञ्जलीम्, भक्त्या वामकरे निधाय च मनुं मन्त्री मनोज्ञाक्षरम्। पीठध्यान परोऽथ कुम्भकवशाद्बीजं स्मरेत्पार्थिवस्तस्यामित्रमुखस्य वाचि हृदये जाड्यं भवेत्तत्क्षणात् ॥५॥ वादी मूकति रंकति क्षितिपति वैश्वानरः शीतति, क्रोधी शाम्यति दुर्जनः सुजनति क्षिप्रानुगः खंजति। गर्वी खर्वति सर्व विच्च जडति त्वद्यन्त्रणा यन्त्रितः श्री नित्ये बगलामुखि प्रतिदिनं कल्याणि तुभ्यं नमः ॥६॥ मन्त्रस्तावदलं विपक्ष दलने स्तोत्रम्पवित्रं च ते, यन्त्र वादिनियन्त्रणं त्रिजगतां जैत्रं च चित्र रचयेत्। मातः श्री बगलेति नाम ललितं यस्यास्ति जन्तोर्मुखे, त्वन्नामग्रहणेन संसदि मुखस्तंभोभवेद्वादिनाम् ॥७॥ दुष्टस्तम्भन मुग्रविघ्न शमनं दारिद्र्य विद्रावणम्भूभृद्भीषणनं चलन्मृग दृशां चेतः समाकर्षणम्। सौभाग्यैक निकेतन समदृशः कारुण्य पूर्णा मृत मृत्योर्मारणमाविरस्तु पुरतो मातस्त्वदीयं वपुः ॥८॥

मातर्भञ्जय मद्विपक्ष वदनं जिह्वां च संकीलय, ब्राह्मीं मुद्रय मुद्रयाशुधिषणामुग्रांगतिं स्तम्भय। शत्रूंश्चूर्णय चूर्णयाशु गदया गौराङ्गि पीताम्बरे, विघ्नौघं बगले हर प्रणमतां कारुण्य पूर्णेक्षणे ॥९॥ मातर्भैरवि भद्रकालि विजये वाराहि विश्वाश्रये, श्रीनित्ये बगले महेशि कमले कामेशि वामे रमे। मातङ्गि त्रिपुरे परात्परतरे स्वर्गापवर्गप्रदे। दासोऽहं शरणागतोऽस्मि कृपया विश्वेश्वरि त्राहिमाम् ॥१०॥ संरम्भे चौरसंघे प्रहरण समये बन्धने वारि मध्ये, विद्यावादे विवादे प्रकुपित नृपतौ दिव्यकाले निशायाम्। वश्ये वा स्तम्भने वा रिपुवधसमये निर्जने वा वने वा, गच्छंस्तिष्ठंस्त्रिकालं यदि पठति शिवं प्राप्नुयादाशु-

चीरः ॥११॥ नित्यं स्तोत्रमिदम्पवित्रमिह्या देव्याः पठत्यादराद् धृत्वा यन्त्रमिदं तथैव समेर वाहौ करे बागले। राजानो ऽप्यरयो मदान्ध करिणस्सर्पा मृगेन्द्रादिका स्ते वै यान्ति विमोहि-
-ता रिपुगणा लक्ष्मीः स्थिरास्सिद्धयः ॥१२॥
त्वं विद्या परमा त्रिलोक जननी विघ्नौघ संछेदिनी, योषाकर्षण कारिणी त्रिजगतामानन्द संवर्धिनी। दुष्टोच्चाटन कारिणी जनमनः सम्मोह सन्दायिनी, जिह्वां कीलय भैरवी विजयते ब्रह्मादि मन्त्रो यथा ॥१३॥ विद्यालक्ष्मीः सर्व सौभाग्यमायुः पुत्रैः पौत्रैः सर्वसाम्राज्यसिद्धिः। मानम्भोगो वश्यमारोग्य सौख्यम्प्राप्तं चाद् भूतले ऽस्मिन्नरेण॥ १४॥ यत्कृत जप संख्यानं चिन्तनं परमेश्वरि। दुष्टानां निग्रहार्थाय तद्गृहाण नमोस्तुते ॥१५॥ ब्रह्मास्त्रमिति विख्यातं त्रिलोकेषु च विश्रुतम्। गुरु भक्ताय दातव्यं न देयं यस्य कस्य चित् ॥१६॥ पीताम्बरां द्विभुजां च त्रिनेत्रां गात्रकोज्वलाम्। शिलामुद्गरहस्तां च स्मरेत्तां बगलामुखीम् ॥१७॥

॥ इति श्रीरुद्रयामले बगलामुखी स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अथ बगला हृदयम् - "ॐ अस्य श्री बगलामुखी हृदय माला मंत्रस्य नारद ऋषिरनुष्टुप छन्दः, श्री बगलामुखी देवता, ह्रीं बीजम्, क्लीं शक्तिः, ऐं कीलकम्, श्री बगलामुखी प्रसन्नार्थे जपे विनियोगः।

अथ न्यासः - "नारद ऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमो मुखे। श्री बगलामुखी देवतायै नमो हृदि। ॐ ह्रीं बीजाय नमो गुह्ये। क्लीं शक्तये नमः पादयो। ऐं कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

अथ करन्यासः - ॐ ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ ऐं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ ऐं करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।

अथाङ्गन्यासः - ॐ ह्रीं हृदयाय नमः। ॐ क्लीं शिरसे स्वाहा। ॐ ऐं शिखायै वषट्। ॐ ह्रीं कवचाय हुम्। ॐ क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ऐं अस्त्राय फट्। ॐ ह्रीं क्लीं ऐं इति दिग्बन्धः।

"पीताम्बरां पीतमाल्यां पीताभरण भूषिताम्। पीतपद्म पदद्वन्द्वां बगलां चिन्तयेऽनिशम् ॥१॥" — इति ध्यात्वा सम्पूज्य प्रार्थनां कुर्यात् — "पीत खड्ग गदा हस्ते पीतचन्दन चर्चिते। बगले मे वरं देहि शत्रु संघ विदारिणी ॥२॥"

"ॐ ह्रीं क्लीं ऐं बगलामुख्यै गदाधारिण्यै प्रेतासनाध्यासिन्यै स्वाहा।" - इत्य ष्टोत्तर शतं यथाशक्ति वा जपित्वा पूर्ववद् हृदयादि षडङ्गन्यासं कृत्वा स्तोत्रमपठेत्॥ तद्यथा -

अथस्तोत्रम् – "वन्देऽहं बगलान्देवीं पीतभूषणभूषिताम् । तेजोरूपमयीं देवीं पीततेजः स्वरूपिणीम् ॥ १॥ गदाभ्रमणभिन्नाभ्रां भ्रुकुट्या भीषणाननाम् । भीषयन्तीं भीमशत्रून्भजे भक्तस्य भव्यदाम् ॥२॥ पूर्णचन्द्र समानस्यामपीत गन्धानुलेपनाम् । पीताम्बरपरीधानाम्पवित्रामाश्रयाम्यहम् ॥३॥ पालयन्ती मनुष्याणाम्पुसमीक्ष्यावनी तले । पीताचाररतान्भक्तांस्ताम्भवानीं भजाम्यहम् ॥४॥ पीतपद्मपदद्वन्द्वां चम्पकारण्यरोपिणीम् । पीतावतंसां परमां वन्दे पद्मजवन्दिताम् ॥५॥

लसच्चारुसिंजत्सुमंजीर पादां चलत्स्वर्णकर्णावतंसाञ्चितास्याम् । चलत्पीतचन्द्राननां चन्द्रवन्द्यां भजे पद्मजादीड्य सत्पादपद्माम् ॥६॥

सुपीताभया मालया पूतमन्त्रं परं ते जपन्तो जयं संलभन्ते । रणे रागरोषाप्लुतानां रिपूणां विवादे बलादैर कूहात्मातः ॥७॥

श्री मातङ्गी पूजन यन्त्र
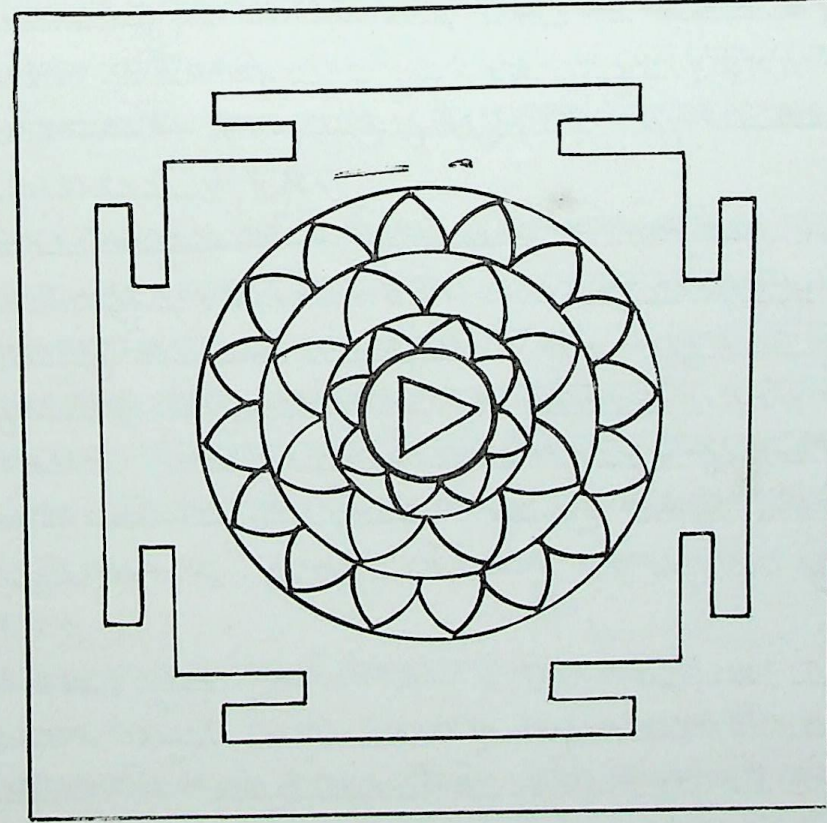
भरत्वीतभास्वत्प्रभाहस्करा भाकुंदा गंजिता मित्र गर्वांगरिष्ठाम्। गरीयो गुणागार गात्रां गुणाढ्यां गणेशादिगम्यां श्रयेनिर्गुणाढ्याम् ॥८॥ जनायेजपन्ध्रुग्रवीजं जगत्सु परस्तुत्य-हन्त स्मरन्तः स्वरूपम्। भवेद्वादिनां वाङ्मुखस्तम्भ आद्ये जयो जायते जल्पतामाश्रुतेषाम् ॥९॥ तपं ध्यानतिष्ठा प्रतिष्ठात्म प्रह्लावतामाद पद्मार्चनं प्रेमयुक्ता:। प्रसन्नान्नृपा: प्राकृता: पण्डिता वा पुराणादिगादासतुल्या भवन्ति ॥१०॥

नमामस्ते मात: कनककमनीयांघ्रिजलजं, चलद्विद्युद्वर्णं घनतिमिर विध्वंस करणम्। भवाब्धौ मग्नात्मोचरण करणं सर्व शरणम्प्रपन्नानाम्मात र्जगति बगले दु:खदमनम् ॥११॥ ज्वलज्ज्योत्स्ना रत्नाकरमणिविषक्ताङ्घ्र भवनं, स्मरामस्ते धाम स्मरहर हरीन्द्रेन्दुजमुखै: अहोरात्रं प्रात: प्रणयिनवनीयं सुविशदम्पर म्पीताकारं परिचितमणिद्वीप वसनम् ॥१२॥ वदामस्ते मात: श्रुतिसुखकरन्नाम ललितं लसन्मात्रा वर्णं जगति बगलेति प्रचरितम्। चलन्तस्तिष्ठन्तो वय मुपविशन्तोपिशयने, नभेमोपच्छेयो दिविदुखलभ्यन्दिविपदाम् ॥१३॥ पदार्च्चायाम्प्रीति: प्रति-दितमपूर्वाप्रभवतु यथाते प्रासन्यस्तुतिपलमवेक्ष्यम्प्रणमताम्। अनल्पन्तन्मातर्भवति भूतभक्त्या भवतु नो दिशातस्सदुभक्तिम्मुवि भगवती भूरि भवदाम् ॥१४॥

मम सकल परिपूर्णां वाङ्मुखे स्तम्भयाशु भगवति रिपुजिह्वां कीलय प्रस्यतुल्याम्। व्यवसित खलबुद्धिं नाशयाशु प्रगल्भाम्ममकुरु बहुकार्यं सत्कृपे ऽम्ब प्रसीद ॥१५॥ अजतुम-मरिपूर्णां सद्मनिप्रेतसंस्था: करधृतगदयाताल्यातयित्वाशुरोषात्। सघन वसन धान्यं सद्मतेषां प्रदह्य पुनरपि बगला स्वस्थानमायातु शीघ्रम् ॥१६॥ करधृतरिपुजिह्वापीड-

न व्यग्रहस्ता मुहुरपि गदया तां स्ताडयन्ती सुतन्त्राम्। अगात सुरगणानामप्यालिकामीत वस्त्रां बह मं० जप बगलान्तां पीत देहां नमाम: ॥१७॥ हृदयवचन कायै: कुर्वतामभक्ति पुञ्जम्प्रकटित करुणार्द्रसूनवे जल्पतीति। धनमथ बहुधान्यपुत्र पौत्रादि वृद्धि: सकलमपि किमेभ्यो देयमेवं त्ववश्यम् ॥१८॥ तव चरण सरोजं सर्वदा सेव्यमानन्दुहिणहरिहराद्यैर्देववृन्दै: शरण्यम्। मृदुमति चरणन्तेशर्मदं सूरि सेव्यं वयमहकरवीमो मातरेतद्विधेयम् ॥१९॥

फलश्रुति: - बगला हृदयस्तोत्रमिदम्भक्ति समन्विता:। पठेद्यो बगला तस्य प्रसन्ना पाठतो भवेत् ॥२०॥ पीतध्यान परोभक्तो य: शृणोत्यपि कल्पत:। निष्कल्मषो भवेन्मर्त्यो मृतोमोक्षमवाप्नुयात् ॥२१॥ आश्विनस्य सिते पक्षे महाष्टम्यां दिवानिशम्। यस्त्विदम्पठते प्रेम्णा बगला प्रीति मेति स: ॥२२॥ देव्यालये पठेन्मर्त्यो बगलान्ध्यायतीश्वरीम्। पीतवस्त्रावृतोयस्तु तस्य नश्यन्ति शत्रव: ॥२३॥ पीताचाररतानित्यं पीतभूषा विचिन्तयन्। बगलां य: पठेन्नित्यं हृदयस्तोत्रमुत्तमम् ॥२४॥ न किंचिद् दुर्लभस्तस्य दृश्यते जगतीतले। शत्रवो ग्लानिमायान्ति तस्य दर्शनमात्रत: ॥२५॥

॥ इति श्री सिद्धेश्वर तन्त्रे उत्तरखण्डे बगला हृदयस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

टिप्पणी - भगवती बगलामुखी अर्थात् पीताम्बरादेवी के उक्त कवच, स्तोत्र तथा हृदय का नित्य पाठ करते रहने से साधक की समस्त मनोभिलाषाओं की पूर्ति होती है तथा कष्ट दूर होते हैं।

अथ कमला स्तोत्राणि: अब भगवती कमला अर्थात लक्ष्मी के स्तोत्रादि का उल्लेख किया जाता है । ये सभी स्तोत्रादि नित्य पाठ करने योग्य हैं तथा इनसे प्रसन्न हो कर भगवती लक्ष्मी साधक को धन-धान्य, ऐश्वर्यादि प्रदान करती हैं तथा उसके सभी दुःख-कष्टों को दूर करती हैं।

अथ कमला कवचम् - 'अथ वक्ष्ये महेशानि कवचं सर्व कामदम् । यस्य विज्ञात मात्रेण भवेत्साक्षात्सदाशिव: ॥१॥ नार्चनं तस्य देवेशि मन्त्रमात्रं जपेन्नर: । स भवेत् पार्वतीपुत्र: सर्वशास्त्र विशारद: ॥२॥ विद्यार्थिनां सदा विद्याधनदात् विशेषत: । धनार्थिभि: सदा सेव्या कमला विष्णुवल्लभा ॥३॥

अस्याश्चतुरक्षरी विष्णुवल्लभाया: कवचस्य भगवान् ऋषिरनुष्टुप्छन्दो वाग्भवी शक्तिर्देवता वाग्भवं बीजं लज्जा रमा कीलकं कामबीजात्मकं कवचं मम सुपाण्डित्य कवित्व सर्वसिद्धि समृद्धये विनियोग: ।

ऐंकारो मस्तके पातु वाग्भवी सर्व सिद्धिदा । ह्रीं पातु चक्षुषोर्मध्ये चक्षुर्युग्मे च शाङ्करी ॥४॥ जिह्वायां मुखवृत्ते च कर्णयोर्दन्तयोर्नसि । ओष्ठाधरे दन्तपंक्तौ तालुमूले हनौ पुन: ॥५॥ पातु मां विष्णु वनिता लक्ष्मी: श्रीविष्णु रूपिणी ॥६॥ कर्णयुग्मे भुजद्वन्द्वे स्तनद्वन्द्वे च पार्वती, हृदये मणिबन्धे च ग्रीवायां पार्श्वयो: पुन: ॥७॥ पृष्ठदेशे तथा गुह्ये वामे च दक्षिणे तथा । उपस्थे च नितम्बे च नाभौ जंघाद्वये पुन: ॥८॥ जानु चक्रे पदद्वन्द्वे घुटिकेंगुलि मूलके । स्वधातु प्राणशक्त्यात्म सीमन्ते मस्तके पुन: ॥९॥ विजया पातु भवने जया पातु सदा मम ।

सर्वाङ्गं पातु कामेशी महादेवी सरस्वती ॥२०॥ तुष्टिः पातु महामाया उत्कृष्टिः सर्वदावतु। ऋद्धिः पातु महादेवी सर्वत्र शम्भुवल्लभा ॥२१॥ वाग्भवी सर्वदा पातु पातु मां हरगेहिनी। रमा पातु सदा देवी पातु माया स्वराट् स्वयं ॥२२॥ सर्वाङ्गं पातु मां लक्ष्मीर्विष्णुमाया सुरेश्वरी। शिवदूती सदा पातु सुन्दरी पातु सर्वदा ॥२३॥ भैरवी पातु सर्वत्र भेरुण्डा सर्वदावतु। त्वरिता पातु मां नित्यमुग्रतारा सदावतु ॥२४॥ पातु मां कालिका नित्यं कालरात्रिः सदावतु। नवदुर्गा सदा पातु कामाक्षी सर्वदावतु ॥२५॥ योगिन्यः सर्वदा पान्तु मुद्राः पान्तु सदा मम। मात्रा पातु सदा देव्यश्चक्रस्था योगिनीगणाः ॥२६॥ सर्वत्र सर्व कार्येषु सर्व कर्मसु सर्वदा। पातु मां देवदेवी च लक्ष्मीः सर्वसमृद्धिदा

फलश्रुति :- इति ते कथितं दिव्यं कवचं सर्वसिद्धये। यत्र तत्र न वक्तव्यं यदीच्छेदात्मनो हितम् ॥२८॥ शठाय भक्तिहीनाय निन्दकाय महेश्वरी। न्यूनाङ्गे चातिरिक्ताङ्गे दर्शयेन्न कदाचन ॥२९॥ न स्तवं दर्शयेद्दिव्यं सन्दर्श शिवहा भवेत्। कुलीनाय महेच्छाय दुर्गाभक्ति पराय च ॥२०॥ वैष्णवाय विशुद्धाय दद्यात्कवचमुत्तमम्। निजशिष्याय शान्ताय धनिने ज्ञानिने तथा ॥२१॥ दद्यात् कवचमित्युक्तं सर्वतंत्र समन्वितम्। शनौ मङ्गलवारे च रक्तचन्दनकेन वा ॥२२॥ यावकेन लिखेन्मन्त्रं सर्वतन्त्र समन्वितम्। विलिख्य कवचं दिव्यं स्वयम्भु कुसुमैः शुभैः ॥२३॥ स्वशुक्रैः परशुक्रैर्वा नानागन्ध समन्वितैः। गोरोचना कुंकुमेन रक्तचन्दन केन वा ॥२४॥ सुतिथौ शुभयोगे वा श्रवणायां रवेर्दिने। आश्विन्यां कृत्तिकायां वा फाल्गुन्यां वा मघासु च ॥२५॥ पूर्व भाद्रपदा योगे स्वात्यां मङ्गलवासरे। विलिखेत्प्रपठेत्स्तोत्रं शुभयोगे सुरालये ॥२६॥ आयुष्म-

श्रीकमला पूजन यन्त्र
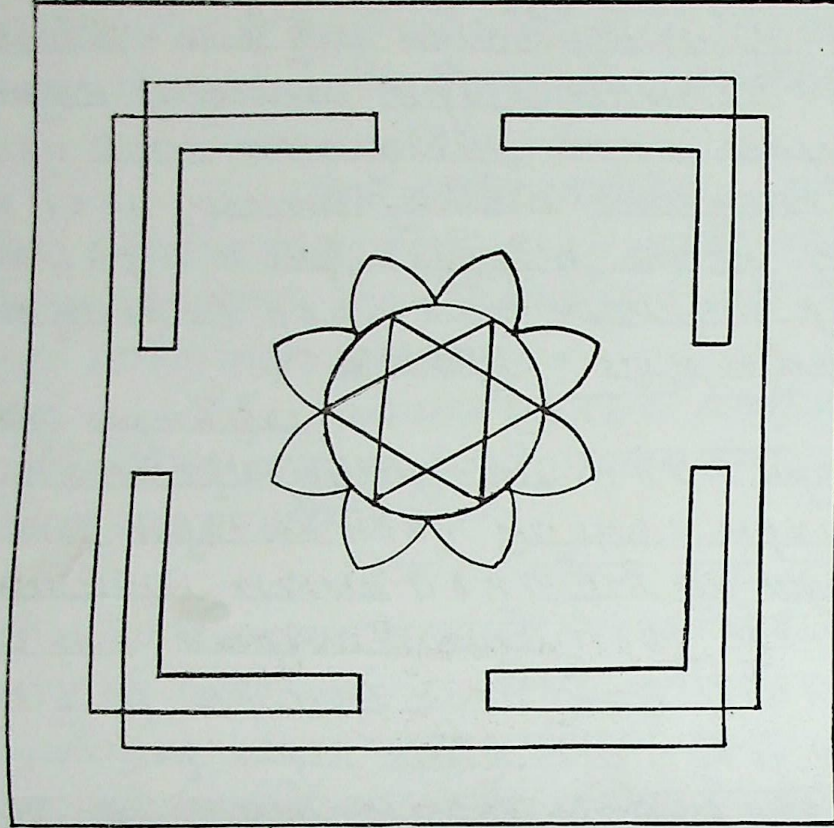
प्रीतियोगे च ब्रह्मयोगे विशेषतः। इन्द्रयोगे शुभे
योगे शुक्रयोगे तथैव च ॥२७॥ कौलवे बालवे
चैव वणिजे चैव सत्तमः। शून्यागारे श्मशाने
च विजने च विशेषतः ॥२८॥ कुमारीं पूजयि-
त्वादौ यजेद्देवीं सनातनीम्। मत्स्यैर्मांसै
शाक सूपैः पूजयेत्परदेवताम् ॥२९॥ घृताद्यैः
सोपकरणैः पूपसूपैर्विशेषतः। ब्राह्मणान् भोज-
यित्वा च पूजयेत्परमेश्वरीं ॥३०॥ अखेटक-
मुपाख्यानं तत्र कुर्याद्दिनत्रयम्। तदाचरेन्महा
विद्यां शङ्करेण प्रभाषिताम् ॥३१॥ मारणद्वेषणा
दीनि लभते नात्र संशयः। स भवेत्पार्वती
पुत्रः सर्वशास्त्र पुरस्कृतः ॥३२॥ गुरुर्देवो
हरः साक्षात्पत्नी तस्य हरप्रिया। अभेदेन
भजेद्यस्तु तस्य सिद्धिरदूरतः ॥३३॥ पठति य
इह मर्त्यो नित्यमार्द्रान्तरात्मा जपफलमनुमेयं
लप्स्यते यद्विधेयम्। स भवति पदमुच्चैः सम्पदां
पादनम्रः क्षितिपमुकुटलक्ष्मीर्लक्षणानां चिराय॥

॥ इति श्रीविश्वसार तन्त्रे कमलात्मिका कवचम् ॥

अथ श्रीसूक्तं –" ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजां। चन्द्रां हिरण्मयीं
लक्ष्मीं जातवेदो ममावह ॥ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीं। यस्यां हिरण्यं विन्देयं
गामश्वं पुरुषानहं ॥ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनाद प्रमोदिनीं ॥ श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी
जुषताम् ॥

कांसोस्मि तां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्। पद्मे स्थितां पद्म
वर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।
तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि ॥ आदित्यवर्णे तपसोऽधिजाते
वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः। तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः
उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह। प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्ति
मृद्धिं ददातु मे ॥ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां नि
र्णुद मे गृहात् ॥ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोप-
ह्वये श्रियम् ॥ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि। पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां
यशः ॥ कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भव कर्दम। श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥
आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे। नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलां पद्ममालिनीम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आव-
ह ॥ आर्द्रां यष्करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्। सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म
आवह ॥ तां म ऽआवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्यो

ऽ श्रयान्त्विन्देयं पुरुषानहम् ॥" यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्य मन्वहम् । सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्री कामः सततं जपेत् ॥

॥ इति श्री सूक्तम् सम्पूर्णम् ॥

अथ लक्ष्मी सूक्तम् :– "सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुक गन्धमाल्य शोभे । भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम् ॥ १॥

धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसुः । धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणो धनम-श्विनौ ॥२॥ वैनतेय सोमं पिब सोमं पिबतु वृत्रहा । सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः ॥३॥ न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः । भवंति कृतपुण्यानां भक्तानां सूक्त जापिनाम् ॥४॥ पद्मानने पद्म ऊरु पद्माक्षि पद्म सम्भवे । तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम् ॥५॥ विष्णु पत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम् । विष्णुप्रियां सखीं देवी नमाम्यच्युतवल्लभाम् ॥६॥

महालक्ष्मी च विद्महे विष्णुपत्नी च धीमहि । तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥

पद्मानने पद्मिनि पद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्म दलायताक्षि । विश्वप्रिये विश्व मनोनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्व ॥८॥

आनन्दः कर्दमः श्रीदश्चिक्लीत इति विश्रुताः । ऋषयः श्रियः पुत्राश्च मयि श्रीर्देवि देवता ॥ ॥९॥ ऋण रोगादि दारिद्र्यं पापञ्च अपमृत्यवः । भयशोकमनस्तापा नश्य-

नु मम सर्वदा ॥२०॥
श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधाच्छोभमानं महीयते। धनं धान्यं पशुं बहुपुत्रलाभं
शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ॥

॥इति श्रीलक्ष्मी सूक्तम् सम्पूर्णम्॥

अथ कमला स्तोत्रम् :- "ओङ्काररूपिणी देवि विशुद्धसत्त्वरूपिणी। देवानां जननी त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥१॥ तन्मात्रञ्चैव भूतानि तव वक्षःस्थलं स्मृतम्। त्वमेव वेदगम्या तु प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥२॥ देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसकिन्नरैः। स्तूयसे त्वं सदा लक्ष्मि प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥३॥ लोकातीता द्वैतातीता समस्तभूतवेष्टिता। विद्वज्जनकीर्तिता च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥४॥ परिपूर्णा सदा लक्ष्मि त्रात्री तु शरणार्थिषु। विश्वाद्या विश्वकर्त्री च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥५॥ ब्रह्मरूपा च सावित्री त्वद्दीप्त्या भासते जगत्। विश्वरूपा वरेण्या च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥६॥ क्षित्यप्तेजोमरुद्व्योमपञ्चभूतस्वरूपिणी। बन्धादेः कारणं त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥७॥ महेशे त्वं हैमवती कमला केशवेऽपि च। ब्रह्मणः प्रेयसी त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥८॥ चण्डी दुर्गा कालिका च कौशिकी सिद्धरूपिणी। योगिनी योगगम्या च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥९॥ बाल्ये च बालिका त्वं हि यौवने युवतीति च। स्थविरे वृद्धरूपा च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥१०॥ गुणमयी गुणातीता आद्या विद्या सनातनी। महत्तत्त्वादिसंयुक्ता प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥११॥ तपस्विनी तपःसिद्धिः स्वर्गसिद्धिस्तदर्थिषु।

चिन्मयी प्रकृतिस्त्वं तु प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥
१२॥ त्वमादिर्जगतां देवि त्वमेव स्थिति कारिणीम्।
त्वमन्ते निधनस्थानं स्वेच्छाचारा त्वमेव हि ॥
१३॥ चराचराणां भूतानां बहिरन्तस्त्वमेव हि।
व्याप्यव्यापक रूपेण त्वं भासि भक्तवत्सले ॥१४॥
त्वन्मायया हृतज्ञाना नष्टात्मानो विचेतसः। गतागतं
प्रपद्यन्ते पापपुण्यवशात्सदा ॥१५॥ तावत्सत्यं
जगद्भाति शुक्तिकारजतं यथा। यावन्न ज्ञायते
ज्ञानं चेतसा नान्वगामिनी ॥१६॥ त्वज्ज्ञाना-
त्तु सदा युक्ताः पुत्रदारगृहादिषु। रमन्ते विषया-
न्सर्व्वानन्ते दुःखप्रदान् ध्रुवम् ॥१७॥ त्वदा-
ज्ञया तु देवेशि गगने सूर्यमण्डलम्। चन्द्रश्च
भ्रमते नित्यं प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥१८॥ ब्र-
-ह्मेशविष्णु जननी ब्रह्माख्या ब्रह्मसंश्रया।
व्यक्ताव्यक्ता च देवेशि प्रसन्ना भव सुन्दरि
॥१९॥ अचला सर्वगा त्वं हि मायातीता महे-
श्वरि। शिवात्मा शाश्वता नित्या प्रसन्ना भव सुन्दरि

श्री अन्नपूर्णेश्वरी भजन यन्त्र
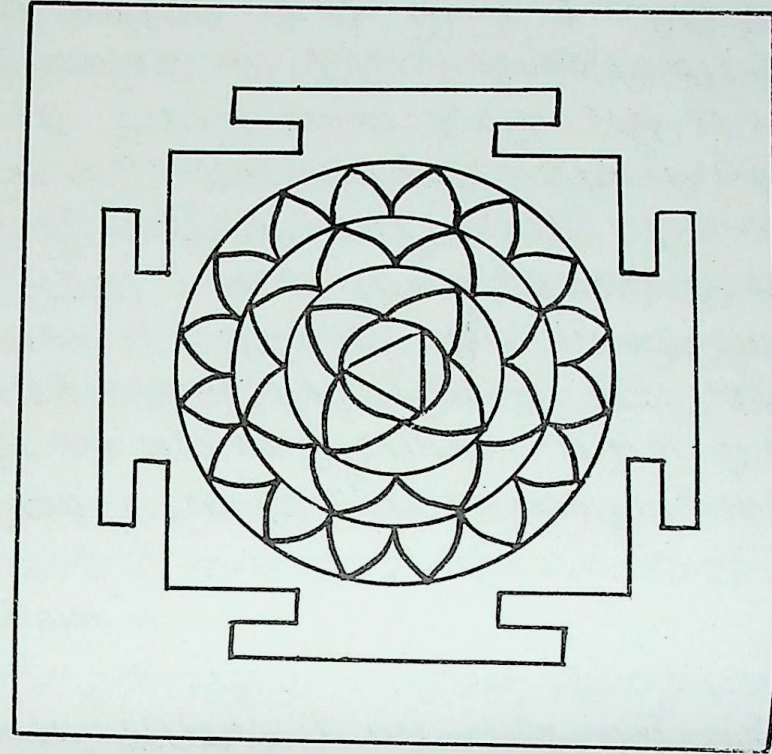
॥२०॥ सर्वकार्य नियन्त्री च सर्वभूतेश्वरेश्वरी। अनन्ता निष्कला त्वंहि प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥२१॥
सर्वेश्वरी सर्ववन्द्या अचिन्त्या परमात्मिका। भुक्ति मुक्ति प्रदा त्वंहि प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥२२॥
ब्रह्माणी ब्रह्मलोके त्वं वैकुण्ठे सर्वमङ्गला इन्द्राणी अमरावत्यामम्बिका वरुणालये ॥२३॥ यमालये
कालरूपा कुबेरभवने शुभा। महानन्दाग्नि कोणे च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥२४॥ नैर्ऋत्यां रक्त-
दन्ता त्वं वायव्यां मृगवाहिनी। पाताले वैष्णवी रूपा प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥२५॥ सुरसा त्वं मणि-
द्वीपे ऐशान्यां शूलधारिणी। भद्रकाली च लङ्कायां प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥२६॥ रामेश्वरी सेतु-
बन्धे सिंहले देवमोहिनी। विमला त्वं च श्री क्षेत्रे प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥२७॥ कालिका त्वं
कालिघट्टे कामाख्या नीलपर्वते। विरजा ओड्रदेशे त्वं प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥२८॥ वाराणस्या-
मन्नपूर्णा अयोध्यायां महेश्वरी। गयासुरी गयाधाम्नि प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥२९॥ भद्रका-
ली कुरुक्षेत्रे त्वञ्च कात्यायनी व्रजे। महामाया द्वारकायां प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥३०॥ क्षुधा त्वं
सर्वजीवानां वेला च सागरस्य हि। महेश्वरी मथुरायां प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥३१॥ रामस्य
जानकी त्वं च कंसासुर विनाशिनी। रावणनाशिनी चैव प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥३२॥

फलश्रुतिः- लक्ष्मी स्तोत्रमिदं पुण्यं यः पठेद् भक्ति संयुतः। सर्वज्वर भयं
नश्येत्सर्वव्याधि निवारणम् ॥३३॥ इदं स्तोत्रं महापुण्यमापदुद्धारकारणम्। त्रिसंध्यमेकसंध्यं
वा यः पठेत्सततं नरः ॥३४॥ मुच्यते सर्व पापेभ्यो तथा तु सर्वसङ्कटात्। मुच्यते नात्र
सन्देहो भुवि स्वर्गे रसातले ॥३५॥ समस्तं च तथा चैकं यः पठेद् भक्तितत्परः। स सर्व
दुष्करं तीर्त्वा लभते परमां गतिम् ॥३६॥ सुखदं मोक्षदं स्तोत्रं यः पठेद् भक्ति संयुतः।

स तु कोटि तीर्थ फलं प्राप्नोति नात्र संशयः ॥ ३७॥ एका देवी तु कमला यस्मिंस्तुष्टा भवेत्सदा। तस्याऽसाध्यं तु देवेशि नास्ति किञ्चिज्जगत्त्रये ॥ ३८॥ पठनादपि स्तोत्रस्य किं न सिद्ध्यति भूतले। तस्मात्स्तोत्रवरं प्रोक्तं सत्यं सत्यं हि पार्वति ॥ ३९॥

॥ इति श्रीकमला स्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥

अथ श्रीलक्ष्मी स्तोत्रम् :- "क्षमस्व भगवत्यम्ब क्षमाशीले परात्परे। शुद्धसत्त्व स्वरूपे च कोपादि परिवर्जिते ॥ १॥ उपमे सर्वसाध्वीनां देवीनां देवपूजिते। त्वया विना जगत्सर्वं मृततुल्यं च निष्फलम् ॥ २॥ सर्वसम्पत्स्वरूपा त्वं सर्वेषां सर्वरूपिणी। रासेश्वर्यधिदेवी त्वं त्वत्कलाः सर्वयोषितः ॥ ३॥ कैलासे पार्वती त्वं च क्षीरोदे सिन्धुकन्यका। स्वर्गे च स्वर्गलक्ष्मीस्त्वं मर्त्यलक्ष्मीश्च भूतले ॥ ४॥ वैकुण्ठे च महालक्ष्मीर्देवदेवी सरस्वती। गङ्गा च तुलसी त्वं च सावित्री ब्रह्म लोकतः ॥ ५॥ कृष्णप्राणाधिदेवी त्वं गोलोके राधिकास्वयं। रासे रासेश्वरी त्वं च वृन्दावनवने वने ॥ ६॥ कृष्णप्रिया त्वं भाण्डीरे चन्द्रा चन्दनकानने। विरजा चम्पक वने शतशृङ्गे च सुन्दरी ॥ ७॥ पद्मावती पद्मवने मालती मालती वने। कुन्ददन्ती कुन्दवने सुशीला केतकी वने ॥ ८॥ कदम्बमाला त्वं देवी कदम्बकाननेऽपि च। राजलक्ष्मी राजगेहे गृहलक्ष्मीर्गृहे गृहे ॥ ९॥"

इत्युक्त्वा देवताः सर्वे मुनयो मानवस्तथा। रुरुदुर्नम्रवदनाः शुष्ककण्ठोष्ठ तालुकाः ॥ १०॥ इति लक्ष्मी स्तवं पुण्यं सर्वदेवैः कृतं शुभं। यः पठेत्प्रातरुत्थाय स वै

सर्वं लभेद् ध्रुवं ॥ ११ ॥ अभार्यो लभते भार्यां विनीतां च सुतां सतीं । सुशीलां सुन्दरीं रम्या
मतिसुप्रियवादिनीं ॥ १२ ॥ पुत्रपौत्रवतीं शुद्धां कुलजां कोमलां वरां । अपुत्रो लभते पुत्रं वैष्णवं
चिरजीवनम् ॥ १३ ॥ परमैश्वर्ययुक्तं च विद्यावन्तं यशस्विनम् । भ्रष्टराज्यो लभेद्राज्यं भ्रष्ट-
श्रीर्लभते श्रियं ॥ १४ ॥ हतबन्धुर्लभेद् बन्धुं धनभ्रष्टो धनं लभेत् । कीर्तिहीनो लभेत्कीर्तिं प्र-
तिष्ठां च लभेद् ध्रुवं ॥ १५ ॥ सर्वमङ्गलदं स्तोत्रं शोक सन्ताप नाशनम् । हर्षानन्दकरं शश्वद्धर्म
मोक्ष सुहृत्प्रदम् ॥ १६ ॥

॥इति श्रीलक्ष्मी स्तोत्रम् सम्पूर्णम्॥

अथ छिन्नमस्ता स्तोत्राणि: अब भगवती छिन्नमस्ता से सम्बन्धित
कवच, स्तोत्र आदि का उल्लेख किया जाता है।

अथ त्रैलोक्य विजय छिन्नमस्ता कवचम् :- श्री देव्युवाच ॥ कथिताश्छि
न्नमस्ताया या या विद्या सुगोपिता:। त्वया नाथेन जीवेश श्रुताश्चाधिगता मया ॥ १ ॥
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं पूर्व सूचितम् । त्रैलोक्य विजयं नाम कवचं कथ्यतां प्रभो ॥ २ ॥
भैरव उवाच ॥ शृणु वक्ष्यामि देवेशि सर्वदेव नमस्कृते । त्रैलोक्यविजयं
नाम कवचं विश्वमोहनम् ॥ ३ ॥ सर्वविद्यामयं साक्षात् सुरासुर जयप्रदम् । धारणात्पठना
दीशस्त्रैलोक्य विजयी विभु: ॥ ४ ॥ ब्रह्मा नारायणो रुद्रो धारणात्पठनाद्यत:। कर्ता पाता

च संहर्त्री भुवनानां सुरेश्वरि ॥ ५॥ न देयं परशिष्येभ्य अभक्तेभ्यो विशेषतः । देयं शिष्याय भक्ताय प्राणेभ्यो ऽप्यधिकाय च ॥ ६॥

देव्याश्च छिन्नमस्तायाः कवचस्य च भैरवः । ऋषिर्विराट् च छन्दश्च देवता छिन्नमस्तका ॥ ७॥ त्रैलोक्य विजये मुक्तौ विनियोगः प्रकीर्तितः ॥

अथ कवचम् - "ॐ हूं कारो मे शिरः पातु छिन्नमस्ता बलप्रदा ॥ ८॥ ह्रीं ह्रीं ऐं त्र्यक्षरी पातु भालं वक्त्रं दिगम्बरी । श्रीं ह्रीं हूं ऐं दृशौ पातु मुण्डकर्तृधरापि सा ॥ ९॥ सा विद्या प्रणवाद्यन्ता श्रुतियुग्मं सदावतु । वज्रवैरोचनीये हूं फट् स्वाहा च ध्रुवादिकम् ॥ १०॥ घ्राणं पातु छिन्नमस्ता मुण्डकर्तृविधारिणी । श्रीमाया कूर्च वाग्बीजैः वज्रवैरोचनीये हूँ ॥ ११॥ हूँ फट् स्वाहा महाविद्या षोडशी ब्रह्मरूपिणी । स्वपार्श्वे वर्णिका चासृग्धारां पाययती मुदा ॥ १२॥ वदनं सर्वदा पातु छिन्नमस्ता स्वशक्तिका । मुण्डकर्तृधरा रक्ता साधकाभीष्टदायिनी ॥ १३॥ वर्णिनी डाकिनी युक्ता सापि मामभितोऽवतु । रामाद्या पातु जिह्वां च लज्जाद्या पातु कण्ठकं ॥ १४॥ कूर्चाद्या हृदयं पातु वागाद्या स्तनयुग्मकम् । रमया पुटिता विद्या पार्श्वौ पातु सुरेश्वरी ॥ १५॥ मायया पुटिता विद्या नाभिदेशं दिगम्बरी । कूर्चेन पुटिता देवी पृष्ठदेशं सदावतु ॥ १६॥ वाग्बीज पुटिता तेषां मध्यं पातु सशक्तिका । ईश्वरी कूर्चवाग्बीजे वज्रवैरोचनीये हूं ॥ १७॥ हूँ फट् स्वाहा महाविद्या सूर्यकोटि समप्रभा । छिन्नमस्ता सदा पायादुरुयुग्मं सशक्तिका ॥ १८॥ ह्रीं हूं वर्णिनी जानू श्रीं हूं ह्रीं हूं च डाकिनीपदम् सर्वविद्या स्थिता नित्या सर्वाङ्गं मे सदाऽवतु ॥ १९॥ प्राच्यां पाया देकलिङ्गा योगिनी

पावके ऽवतु । डाकिनी दक्षिणे पातु श्रीमहाभैरवी
च माम् ॥ २० ॥ नैर्ऋत्यां सततं पातु भैरवी
पश्चिमे ऽवतु । इन्द्राणी पातु वायव्ये ऽसिताङ्गी
पातु चोत्तरे ॥२१॥ संहारिणी सदा पातु शिव-
कोणे सकर्तृका । इत्यष्ट शक्तयः पान्तु दिग्वि-
दिक्षु सकर्तृकाः ॥२२॥ क्रीं क्रीं क्रीं सा पातु
पूर्वे हूं हूं मां पातु पावके । ह्रीं ह्रीं मां दक्षिणे
पातु दक्षिणे कालिका ऽवतु ॥ २३ ॥ क्रीं क्रीं क्रीं
चैव नैर्ऋत्यां ह्रीं ह्रीं मां पश्चिमे ऽवतु । ह्रीं
ह्रीं पातु मरुत्कोणे स्वाहा पातु सदोत्तरे ॥
२४॥ महाकाली खड्गहस्ता शिवकोणे सदाऽ-
वतु । तारा मायावधूः कूर्च फट्कारा मां महा-
मनुः ॥२५॥ खड्गकर्तृधरा तारा चोर्द्धदेशं
सदावतु । ह्रीं स्त्रीं हूं फट् च पाताले मां पातु
चैकजटा सती ॥ २६ ॥ तारातु सहिता खेऽ
व्यान्महानील सरस्वती । इति ते कथितं देव्याः
कवचं मन्त्र विग्रहम् ॥२७॥

श्री छिन्नमस्ता रजत पत्र
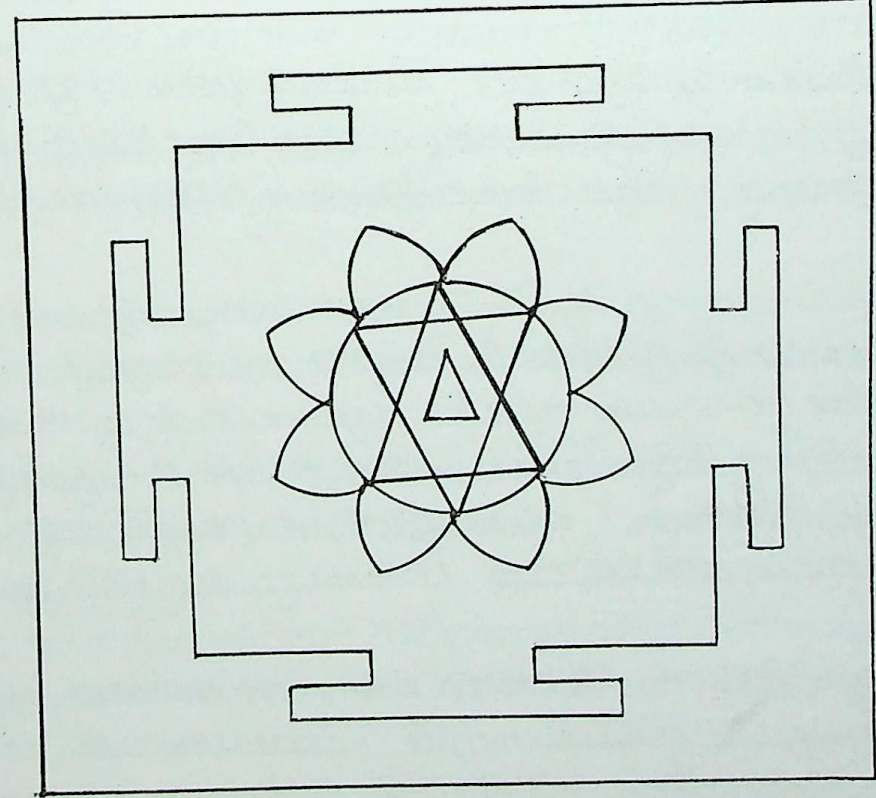
यद्धृत्वा पठनाद् भीमः क्रोधाख्यो भैरवः प्रभुः। सुरासुर मुनीन्द्राणां कर्ता हर्ता भवेत्स्वयम् ।।२८।। यस्याङ्गपा मधुमती याति सा साधकालयम्। भूतिन्याद्याश्च योगिन्यो यक्षिण्याद्याश्च खेचराः ।।२९।। आज्ञां गृह्णन्ति तास्तस्य कवचस्य प्रसादतः एतदेव परं ब्रह्म कवचं मन्मुखोदितम् ।।३०।।

फलश्रुतिः - देवीमभ्यर्च्य गन्धाद्यैर्मूलेनैव पठेत्सकृत्। संवत्सरकृतायाश्च पूजायाः फलमाप्नुयात् ।।३१।। भूर्जे विलिखितं चैव गुटिकां काञ्चनीस्थितां। धारयेद् दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा यदि वान्यतः ।।३२।। सर्वैश्वर्ययुतो भूत्वा त्रैलोक्यं वशमानयेत्। तस्य गेहे वसेल्लक्ष्मी वाणी च वदनाम्बुजे ।।३३।। ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्रे यान्ति सौम्यतां। इदं कवचमज्ञात्वा यो भजेत् छिन्नमस्तकाम्। सोपि शस्त्र प्रहारेण मृत्युमाप्नोति सत्वरम् ।।३४

।।इति श्री भैरवतन्त्रे त्रैलोक्य विजयं नाम छिन्नमस्ता कवचं सम्पूर्णम् ।।

अथ छिन्नमस्ता स्तोत्रम् :- ।। ईश्वर उवाच ।। स्तवराजमहं वन्दे वैरोचन्याः शुभप्रदम् ।। नाभौ शुभ्रारविन्दं तदुपरि विलसन्मण्डलं चण्डरश्मेः। संसारस्यैकसारां त्रिभुवन जननीं धर्म कामार्थदात्रीम् ।। तस्मिन्मध्ये त्रिमार्गे त्रितय तनुधरां छिन्नमस्तां प्रशस्तां। तां वन्दे छिन्नमस्तां शमनभयहरां योगिनीं योगमुद्राम् ।। १।।

नाभौ शुद्ध सरोज वक्त्रविलसद् बंधूक पुष्पारुणं। भास्वद् भास्कर मण्डलं तदुदरे तद् योनिचक्रं महत् ।। तन्मध्ये विपरीतमैथुनरत प्रद्युम्नसत्कामिनी- पृष्ठस्थां तरुणार्क कोटि विलसत्तेजः

स्वरूपां भजे ॥२॥ वामे छिन्नशिरोधरां तदितरे पाणौ महत्कर्तृकां । प्रत्यालीढपदां दिगन्तवसना मुन्मुक्तकेशा
व्रजाम् । छिन्नात्मीयशिरस्समुच्छलदसृग्धारां पिबन्तीं परां । बालादित्यसम प्रकाश विलसन्नेत्रत्रयोद्
भासिनीम् ॥३॥

वामादन्यत्र नालं बहुगहनगलद्रक्तधाराभिरुच्चैः । गायंतीमस्थिभूषां करकमल
लसत्कर्तृकामुग्ररूपाम् ॥ रक्तामारक्तकेशीमपगतवसनां वर्णिनीमात्मशक्ति । प्रत्यालीढोरुपादामरुणि-
तनयनां योगिनीं योगनिद्राम् ॥४॥

दिग्वस्त्रां मुक्तकेशीं प्रलयघनघटा घोररूपां प्रचण्डां । दंष्ट्रां दुष्प्रेक्ष्य वक्त्रोदर
विवरलसल्लोलजिह्वाग्रभासाम् ॥ विद्युल्लोलाक्षियुग्मां हृदयतटलसद्भोगिनीं भीममूर्तिम् । सद्यश्छि-
न्नात्मकण्ठप्रगलितरुधिरैर्डाकिनीं वर्द्धयन्तीम् ॥५॥

ब्रह्मेशानाच्युताद्यैः शिरसि विनिहता मन्दपादारविन्दै – राप्तैर्योगीन्द्रमुख्यैः
प्रतिपदमनिशं चिन्तितां चिन्त्यरूपाम् ॥ संसारे सारभूतां त्रिभुवनजननीं छिन्नमस्तां प्रशस्ता- मिष्टां
"तामिष्टदात्रीं कलिकलुषहरां चेतसा चिन्तयामि ॥६॥

उत्पत्तिस्थिति संहृतीर्घटयितुं धत्ते त्रिरूपां तनुं । त्रैगुण्याज्जगतो यदीय विकृति
र्ब्रह्माच्युतः शूलभृत् ॥ तामाद्यां प्रकृति स्मरामि मनसा सर्वार्थसंसिद्धये । यस्याः स्मेरपदारविन्दयुगले
लाभं भजन्ते नराः ॥७॥

अभिलषित परस्त्री योग पूजा परोऽहं । बहुविध जनभावारम्भ सम्भावितोऽहम् ।
पशुजन विरतोऽहं भैरवी संस्थितोऽहं । गुरुचरणपरोऽहं भैरवोऽहं शिवोऽहं ॥८॥"

फलश्रुति:- इदं स्तोत्रं महापुण्यं ब्रह्मणा भाषितं पुरा। सर्वसिद्धिप्रदं साक्षान्महापातक नाशनम् ॥९॥
यः पठेत्प्रात रुत्थाय देव्याः सन्निहितोऽपि वा। तस्य सिद्धिर्भवेद्देवि वाञ्छितार्थ प्रदायिनी ॥१०॥
धन धान्यं सुतं जायां हयं हस्तिन मेव च। वसुन्धरां महाविद्यामष्टसिद्धिं लभेद् ध्रुवम् ॥११॥

वैयाघ्राजिन रञ्जित स्वजघने ऽरण्ये प्रलम्बोदरे। खर्वे ऽनिर्वचनीय पर्व सुभगे मुण्डावली मण्डिते। कर्त्रीं कुन्दरुचिं विचित्रवनितां ज्ञाने दधाने पदे। मातर्भक्त जनानुकम्पिनि महामाये ऽस्तु तुभ्यं नमः॥ १२॥

॥ इति श्री ब्रह्मकृत छिन्नमस्तास्तोत्रम् ॥

श्रीछिन्नमस्ता के उक्त कवच, स्तोत्र तथा आगे वर्णित अष्टोत्तरशतनाम का नित्य पाठ करते रहने से साधक की समस्त कामनाऐं पूर्ण होती हैं।

दशमहाविद्यान्तर्गत छिन्नमस्ता पूजन यन्त्र
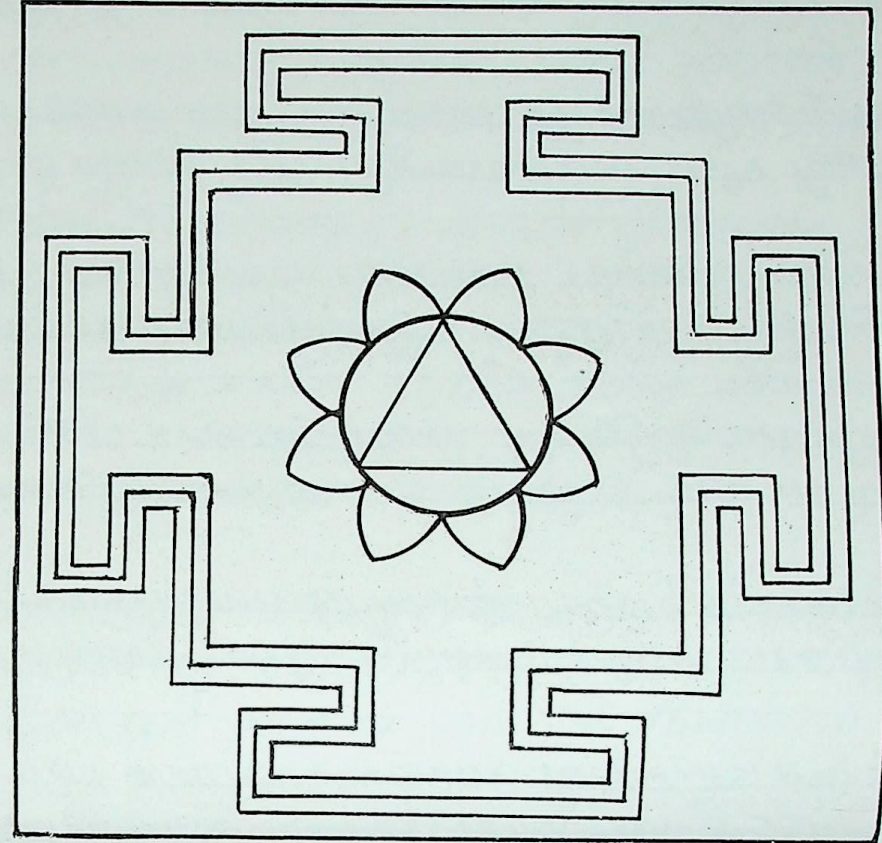
अथ श्री छिन्नमस्ता अष्टोत्तरशतनाम स्तोत्रम् :- ॥श्रीपार्वत्युवाच॥ नाम्नां सहस्रं
परमं छिन्नमस्ता प्रियं शुभम्। कथितं भवता शम्भो सद्यः शत्रुनिकृन्तनम् ॥१॥ पुनः पृच्छाम्यहं देव
कृपां कुरु ममोपरि। सहस्रनाम पाठे च अशक्तो यः पुमान् भवेत् ॥२॥ तेन किं पठ्यते नाथ तन्मे
ब्रूहि कृपामय। श्रीसदाशिव उवाच॥ अष्टोत्तरशतं नाम्नां पठ्यते तेन सर्वदा ॥३॥ सहस्रनाम पाठ-
स्य फलं प्राप्नोति निश्चितम्।

ॐ अस्य श्रीछिन्नमस्ताष्टोत्तरशतनाम स्तोत्रस्य सदाशिव ऋषिरनुष्टुप् छन्दः
श्रीछिन्नमस्ता देवता मम सकल सिद्धि प्राप्तये जपे विनियोगः।

" ॐ छिन्नमस्ता महाविद्या महाभीमा महोदरी। चण्डेश्वरी चण्डमाता चण्डमुण्ड
प्रभञ्जिनी ॥४॥ महाचण्डा चण्डरूपा चण्डिका चण्डखण्डिनी। क्रोधिनी क्रोधजननी क्रोधरूपा कुहू कला॥
५॥ कोपातुरा कोपयुता कोपसंहारकारिणी। वज्रवैरोचनी वज्रा वज्रकल्पा च डाकिनी ॥६॥ डाकिनी
कर्मनिरता डाकिनी कर्मपूजिता। डाकिनी सङ्गनिरता डाकिनी प्रेमपूरिता ॥७॥ खट्वाङ्गधारिणी
खर्वा खड्गखर्परधारिणी। प्रेतासना प्रेतयुता प्रेतसङ्गविहारिणी ॥८॥ छिन्नमुण्डधरा छिन्नचण्डविद्या
च चित्रिणी। घोररूपा घोरदृष्टिर्घोररावा घनोदरी ॥९॥ योगिनी योगनिरता जपयज्ञपराय-
णा। योनिचक्रमयी योनिर्योनिचक्रप्रवर्तिनी ॥१०॥ योनिमुद्रा योनिगम्या योनियन्त्रनिवासिनी
यन्त्ररूपा यन्त्रमयी यन्त्रेशी यन्त्रपूजिता ॥११॥ कीर्त्या कपर्दिनी काली कङ्काली कलकारिणी।
आरक्ता रक्तनयना रक्तपान परायणा ॥१२॥ भवानी भूतिदा भूतिर्भूतिदात्री च भैरवी। भैरवा-
चारनिरता भूतभैरवसेविता ॥१३॥ भीमा भीमेश्वरी देवी भीमनाद परायणा। भवाराध्या

भवनुता भवसागर तारिणी ॥ १४॥ भद्रकाली भद्रतनुर्भद्ररूपा च भद्रिका। भद्ररूपा महाभद्रा सुभद्रा भद्रपालिनी ॥ १५॥ सुभव्या भव्यवदना सुमुखी सिद्धसेविता। सिद्धिदा सिद्धिनिवहा सिद्धासिद्धनिषे-
-विता ॥ १६॥ शुभदा सुभगा सिद्धा शुद्धसत्वा शुभावहा। श्रेष्ठा दृष्टिमयी देवी दृष्टिसंहारकारिणी ॥ १७॥ शर्वाणी सर्वगा सर्वा सर्वमङ्गलकारिणी। शिवा शान्ता शान्तिरूपा मृडानी मदनातुरा ॥ १८॥
इति ते कथितं देवि स्तोत्रं परम दुर्लभम्। गुह्याद् गुह्यतरं गोप्यं गोपनीयं प्रयत्नत: ॥ १९॥ किमत्र बहुनोक्तेन त्वदग्रे प्राणवल्लभे। मारणं मोहनं देवि ह्युच्चाटनमत: परम् ॥ २०॥ स्तम्भनादिक कर्म्माणि ऋद्धय: सिद्धयोऽपि च। त्रिकाल पठनादस्य सर्वे सिध्यन्त्यसंशय: ॥ २१॥
महोत्तमं स्तोत्रमिदं वरानने मयेरितं नित्यमनन्य बुद्धय:। पठन्ति ये भक्तियुता नरोत्तमा भवेन्न तेषां रिपुभि: पराजय: ॥ २॥

॥ इति श्री छिन्नमस्ता अष्टोत्तरशत नाम स्तोत्रम् ॥

अथ बाला स्तोत्राणि: अब श्री बाला त्रिपुर सुन्दरी देवी के स्तोत्र कवचादि का उल्लेख किया जाता है।

श्री बाला त्रिपुर सुन्दरी भी दशमहाविद्याओं के अन्तर्गत हैं। इनकी पूजा, उपा-
-सना, ध्यान, स्तोत्र-पाठ आदि से साधक के समस्त रोग, शोक, कष्ट, भय, ताप आदि दूर होते हैं तथा समस्त मनोकामनाएं सफल होती हैं।

अथ श्री त्रैलोक्य विजय बाला कवचम् :- श्री भैरव उवाच ॥ अधुना ते प्रवक्ष्या-
मि कवचं मन्त्रविग्रहं । त्रैलोक्यविजयं नाम रहस्यं देवदुर्लभम् ॥१॥ श्री देव्युवाच ॥ या देवी त्र्य-
-क्षरी बाला चित्कला श्री सरस्वती । महाविद्येश्वरी नित्या महात्रिपुरसुन्दरी ॥२॥ तस्याः कवचमी-
-शान मन्त्रगर्भं परात्मकं । त्रैलोक्यविजयं नाम श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ॥३॥ श्री भैरव उवाच ॥
देवदेवि महादेवि बालाकवचमुत्तमं । मन्त्रगर्भं परं तत्त्वं लक्ष्मीसंवर्धनं महत् ॥४॥ सर्वस्वं मे
रहस्यं मे गुह्यं त्रिदिशगोपितं । प्रवक्ष्यामि तव स्नेहान्नाख्येयं यस्य कस्यचित् ॥५॥ यं धृत्वा
कवचं देव्या मातृकाक्षरमण्डितम् । नारायणोऽपि दैत्येन्द्रान् जघान रणमण्डले ॥६॥ त्र्यम्बकं
कामदेवोऽपि बलं शक्रो जघान हि । कुमारस्तारकं दैत्यमन्धकं चन्द्रशेखरः ॥७॥ अवधीद्रावणं
रामो वातापीं कुम्भसम्भवः । कवचस्यास्य देवेशि धारणात्पठनादपि ॥८॥ स्रष्टा प्रजापतिर्ब्रह्मा
विष्णुस्त्रैलोक्य पालकः । शिवोऽणिमादि सिद्धीशो मघवा देवनायकः ॥९॥ सूर्यस्तेजोनिधिर्देवि
चन्द्रस्ताराधिपः स्थितः । वह्निर्मखोर्मिनिलयो वरुणोऽपि दिशांपतिः ॥१०॥ समीरो बलवांल्लोके
यमो धर्मनिधिः स्मृतः । कुबेरो निधिनाथोऽस्ति नैरृतिः सर्वराक्षसां ॥११॥ ईश्वरः शङ्करो रुद्रो
देवि रत्नाकरोऽम्बुधिः । अस्य स्मरणमात्रेण कौलिकस्य कुलेश्वरि ॥१२॥ आयुः कीर्तिर्धिया
लक्ष्मीर्वृद्धिर्भवति संततं । कवचं सुभगं देवि बालायाः कौलिकेश्वरि ॥१३॥
ऋषिः स्याद्दक्षिणा मूर्तिः पंक्तिश्छन्द उदाहृतः । बाला सरस्वती देवि देवता
त्र्यक्षरी स्मृता ॥१४॥ बीजं तु वाग्भवं प्रोक्तं शक्तिः शक्तिरुदाहृता । कीलकं कामराजं तु
षडाशा बंधनं तथा ॥१५॥ भोगापवर्गसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः ।

ऐं बीजं मे शिरः पातु क्लीं बीजं भृकुटी मम ॥१६॥ सौः भालं पातु मे बाला ऐं क्लीं सौः नयने मम। अं आं इं ईं श्रुतौ पातु बाला पञ्चाक्ष-री मम ॥१७॥ उं ऊं ऋं ॠं सदा पातु मम नासा-पुट द्वयं। लृं ॡं एं ऐं पातु गण्डौ ऐं क्लीं सौः त्रिपुरांबिका ॥१८॥ ओं औं अं अः मुखं पातु सौः क्लीं ऐं त्रिपुरेश्वरी। कं खं गं घं ङं मे पातु सौः क्लीं ऐं भगमालिनी ॥१९॥ चं छं जं झं ञं मे पातु बाहौ सौः सर्वसिद्धिदा। टं ठं डं ढं णं मे पातु वक्षौ क्लीं वीरनायिका ॥२०॥ तं थं दं धं नं मे पातु ऐं कुक्षौ कुलनायिका। पं फं बं भं मं मे पातु पार्श्वौ परम सुन्दरी ॥२१॥ यं रं लं वं पातु पृष्ठं सौः क्लीं ऐं विश्वमातृका। शं षं सं हं पातु नाभिं सौः सौः सौः त्रिगुणात्मिका ॥ २२॥ ळं क्षं कटिं सदा पातु क्लीं क्लीं क्लीं मातृकेश्वरी। ऐं ऐं ऐं पातु लिङ्गं मे भगलिङ्गा मृतेश्वरी ॥२३॥ ऐं क्लीं गुल्फं सदा पातु भगलिङ्ग

श्रीबाला पूजन यन्त्र

मं० मं० ३२३
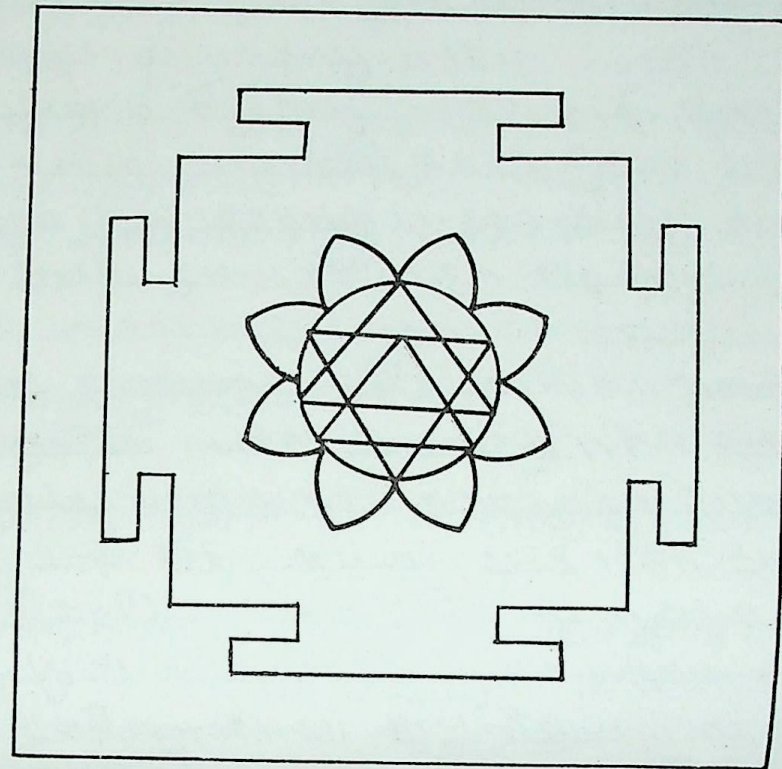
स्वरूपिणी । सौ: क्लीं उरू सदा पातु वेदमाताष्ट सिद्धिदा ॥२४॥ सौ: ऐं जानु सदा पातु महामुद्रा-
भिमुद्रिता । सौ: ऐं क्लीं पातु मे जंघौ बाला त्रिभुवनेश्वरी ॥२५॥ ऐं ऐं सौ: सौ: पातु गुल्फौ
त्रैलोक्य विजयप्रदा । ऐं ऐं क्लीं क्लीं पातु पादौ बाला त्र्यक्षररूपिणी ॥२६॥ शिरस: पादपर्यन्तं
सर्वावयव संपुटम् । पायात्पादादि शीर्षान्तं ऐं क्लीं सौं सकलं वपु: ॥२७॥ ब्राह्मी मां पूर्वत: पातु
वह्नौ नारायणी तथा । माहेश्वरी दक्षिणे ऽव्यान्नैरृत्ये चण्डिकाऽवतु ॥२८॥ पश्चिमे पातु कौमारी
वायव्ये चापराजिता । वाराही तूत्तरे पायादीशान्यां नारसिंहिका ॥२९॥ प्रभाते भैरवी पातु मध्याह्ने
योगिनी क्रमात् । सायं मां वटुक: पायादर्द्धरात्रे शिवोऽवतु ॥३०॥ निशान्ते सर्वग: पातु सर्वदश्चक्र
नायक: । रणे राजकुले द्यूते विवादे शत्रुसंकटे ॥३१॥ सर्वत्र सर्वत: पातु ऐं क्लीं सौ: बीज
भूषिता ।

इतीदं कवचं दिव्यं बालाया: सारमुत्तमम् ॥३२॥ मन्त्रविद्यामयं तत्त्वं मातृकाक्षर
भूषितम् । ब्रह्मविद्यामयं ब्रह्मसाधनं मन्त्रसाधनम् ॥३३॥ य: पठेत्सततं भक्त्या धारयेद्वा महेश्वरि ।
तस्य सर्वार्थसिद्धि: स्यात् साधकस्य न संशय: ॥३४॥ रवौ भूर्जे लिखित्वादौ स्वयंभू कुसुमै: परम् ।
वन्ध्यापि काकवन्ध्यापि मृतवत्सापि पार्वति ॥३५॥ लभेत्पुत्रो महावीरो मार्कण्डेय समायुष: । चित्तं
दरिद्रो लभते मतिमान यश: स्त्रियम् ॥३६॥ य एतद्धारयेद्वर्म संग्रामे स रिपून् जयेत् । जित्वा
वैरिकुलं घोरं कल्याणं गृहमाविशेत् ॥३७॥ बहुनोक्तेन किं देवि धारयेन्मूर्ध्नि संततम् । इहलोके
धनारोग्यं परमायुर्यश: श्रियम् ॥३८॥ प्राप्य भक्त्या नरो भोगानन्ते याति परं पदं । इदं रहस्यं परमं
सर्वतत्त्वेषु ह्युत्तमम् ॥३९॥ गुह्याद्गुह्यमिमं नित्यं गोपनीयं स्वयोनिवत् ॥४०॥ इति कवचम् ॥

भा० टी०

अथ श्री बाला हृदय स्तोत्रम् :- " ॐ अस्य श्री बाला देव्या हृदयमहामन्त्रस्य सदाशिव ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीत्रिपुरसुन्दरी बाला देवता वाग्भवं बीजं तार्तीयं शक्तिः कामराजं कीलकं श्री बालादेवी प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः ।

अथ ध्यानम् - वन्दे देवीं स्थितां बालां भास्वन्मण्डलमध्यगां । चन्द्रचन्द्रा-ननां तप्तां चामीकरसमप्रभाम् ॥ १ ॥ नृत्यत् खंजन नेत्रस्य लोकानत्यन्तवल्लभाम् । मध्यभागे लसत्काञ्ची मणिमुक्ताविनिर्मिताम् ॥ २ ॥ पदविन्यस्त हंसालीं शुकनासाविराजिताम् । करिशुण्डोरुयुगलां मत्तकोकिल निःस्वनाम् ॥ ३ ॥ पुस्तकं जपमालाञ्च वराभयकराणिनीम् । कुमारी वेश शोभाढ्यां कुमारी वृन्दमण्डिताम् ॥ ४ ॥ विद्रुमाधर शोभाढ्यां विद्रुमालिन खालिकाम् । क्वणत्कांचीं कलानाथ समान रुचिराननाम् ॥ ५ ॥ मृणाल बाहुलतिकां नानारत्नविराजिताम् । करपद्मसमानाभां पादपद्मविराजिताम् ॥ ६ ॥ चारुचम्पेलवसनां देवदेवनमस्कृताम् । चन्द्रेन्दु वलिपाङ्गीं रोमराजी विचित्रताम् ॥ ७ ॥ तिलपुष्प समानाभां नासारत्नसमन्विताम् । गजगण्डनितम्बाभां रम्भा जंघा विराजिताम् ॥ ८ ॥ हरविष्णु महेन्द्राद्यैः पूज्यते पादपङ्कजाम् । कल्याणीं कमलां कालीं कुञ्चिकां कमलेश्वरीम् ॥ ९ ॥ पार्वतीं परमां शक्तिं पवित्रां पावनीं शिवाम् । भवानीं भवपाशघ्नीं भीतिहां भुवनेश्वरीम् ॥ १० ॥ भवानीं भवशक्तिञ्च भेरुण्डां मुण्डमालिनीम् । जलंधरगिर्युत्संगां पूर्णगिर्यनुरागिणीम् ॥ ११ ॥ कामरूपां च कामाख्यां देवी कोट कृतालयाम् । ॐकार पीठनिलयां महामायां महेश्वरीम् ॥ १२ ॥ विश्वेश्वरीं च मधुरां नानारूप कृतापुरीम् । ऐं क्लीं सौः त्र्यक्षरां बालां तडित्लोमा कुमारिकां ॥ १३ ॥ ह्रौः ऐं हंसः नमो देवि त्रिपुरां जीव भैरवीम् । नारदो चास्य देवर्षि महाशान्ति फल प्रदाम् ॥ १४ ॥

मं०

मं० ३२५

भा० टी०

ॐ नमो श्री महालक्ष्म्यै लक्ष्मीं त्रिपुरभैरवीं । ॐ ह्रीं जूं सः प्राणग्रन्थि द्विधा-
जकि वचलपम् ॥१५॥ इयं सञ्जीविनी देवि मृतान् जीवत्व दायिनीं । क्रें फ्रें न क ल व र ष्ट्रं
-ष्ट्रौं श्रौं अमृतमावदेत् ॥१६॥ स्रावय स्रावय तथा श्रीं श्रीं मृत्युञ्जयाभिधा तथा । ॐ नमो प्रथ-
मामाष्य कालीबीजं द्विधा पठेत् ॥१७॥ कूर्चद्वयं तथा माया आगामिपदतो वदेत् । मृत्युं
छिंदि तथा भिंदि महामृत्युञ्जयो भवेत् ॥१८॥ तव शब्दं समाभाष्य खड्गेन च विदारय ।
द्विधा भाष्य महेशानि तदन्ते वह्नि सुन्दरी ॥१९॥ इयं देवि महाविद्या आगामि कालवंचि-
नी । प्रातर्दीपदलाकारं वाग्भवं रसनातले ॥२०॥

फलश्रुतिः- विचिन्त्य प्रजपेत्तच्च महाकवि भवेद् ध्रुवम् । मध्याह्ने काम-
राजाख्यं जपाकुसुम सन्निभम् ॥२१॥ विचिन्त्य हृदि मध्ये तु तच्च मन्त्रं जपेत्प्रिये । धर्मा-
-र्थ काम मोक्षाणां भाजनो जायते ध्रुवम् ॥२२॥ तार्तीयं चन्द्र सकाशं सायंकाले विचिन्त्य
च । प्रजपेत्तच्च देवेशि जायते मदनोपमः ॥२३॥ वाग्भवं कामराजं तु तार्तीयं वह्नि वल्लभा-
-म् । अयुतं प्रजपेन्नित्यं आगतं काल वंच्यते ॥२४॥ त्रिकोणं चक्रमालिख्य मायायुक्तं महेश्व-
-रि । यस्योपरि लिखेत्पश्चं मातृकामन्त्र गर्भितम् ॥२५॥ तस्योपरि समस्तीर्य चासनं रक्तवर्णक-
म् । तस्योपरि विशेद्देवि साधको प्राङ्मुखो निशि ॥२६॥ क्रमेण प्रजपेद् वर्णा वागादि नियतः
शुचिः । मण्डले त्रितये देवि प्राप्यते सिद्धिमुत्तमाम् ॥२७॥ नवयोन्यात्मकं चक्रं प्रजपेत्
शास्त्रवर्त्मना । प्रजपेत् त्र्यक्षरीं बालां सर्वसिद्धिप्रदो भवेत् ॥२८॥ यं यं चिन्तयते कामं तं
तं प्राप्नोति सर्वशः । इदं तु हृदयं देवि तवाग्रे कथितं मया ॥२९॥

श्री कामेश्वरी पूजन यन्त्र
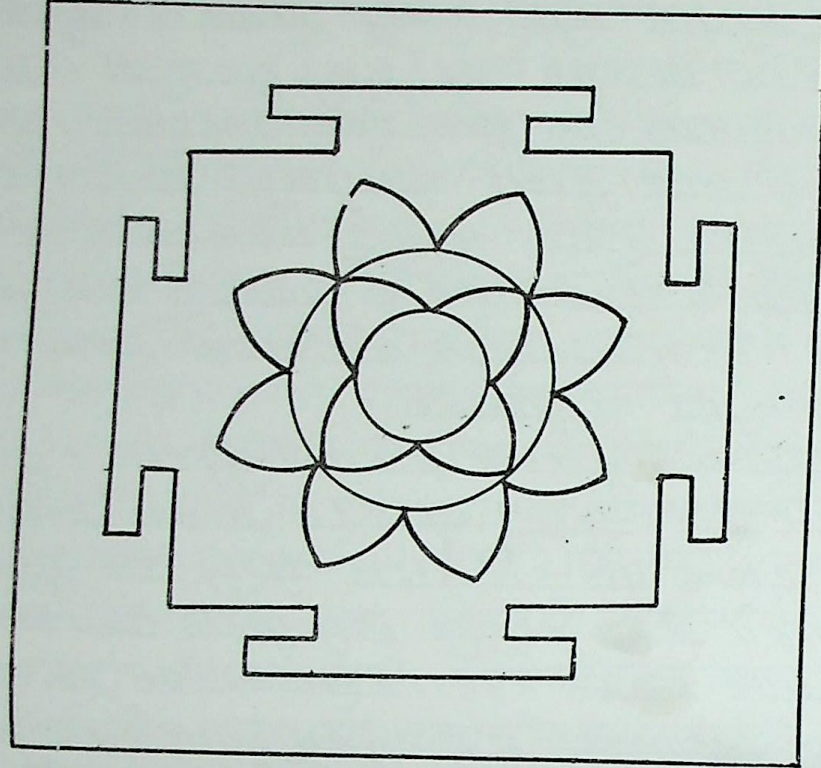
मम भाग्यं च सर्वस्वं ब्रह्मादीनां च दुर्लभम्।
गोपनीयं त्वया भद्रे स्वयोनिरिव पार्वति ॥ ३०॥
शतावर्तेन देवेशि मानुषी वशमाप्नुयात्। सहस्रावर्तना देवि देवानां कार्यपेक्षणात् ॥ ३१॥
लक्षमावर्तनाद्देवि सुनासीर स्वमासनात्। क्षणात् स्रवति तत्र वै किं पुनः क्षुद्रजन्तवः ॥ ३२॥ बालादेव्या सुहृदयमज्ञात्वा यो जपेदधमः। निष्फला तस्य पूजा च बालादेवी च क्रुद्ध्यति ॥ ३३॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन ज्ञात्वा देवि जपेन्मनुम्।
सर्वसिद्धिमवाप्नोति सर्वदा सुखमाप्नुतेत् ॥ ३४॥

॥ इति श्री जालसंवर महातन्त्रे त्रिपुरा बालादेव्या हृदयं सम्पूर्णम् ॥

टिप्पणी - भगवती त्रिपुरा बाला सुन्दरी का यह हृदय स्तोत्र नित्य पाठ करने योग्य तथा समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला है।

अथ श्री बाला स्तवराजः- ॥ श्री पार्वत्युवाच ॥ गुणाधीश महादेव रहस्यं वद
स्तवरम् । बालादेव्याः परं श्रेष्ठं स्तवराजं कथं प्रभो ॥ ईश्वर उवाच ॥ शृणु प्राणेश्वरि वक्ष्ये
स्तवराजं महाफलम् । यन्न कस्यचिदाख्यातं गोप्यं कुरु सदाऽनघे ॥२॥ तव भक्त्या महेशानि
अकथ्यं कथ्यतेऽधुना । गोपनं कुरु रुद्राणि गोपयेन्मातृजारवत् ॥३॥

ॐ अस्य श्री बालास्तवराजस्तोत्रस्य श्रीमृत्युञ्जय ऋषिः । ककुप्छन्दः । श्री बाला
देवता । क्लीं बीजं । सौः शक्तिः । ऐं कीलकम् । भोगमोक्षार्थे जपे विनियोगः ।

त्रिबीज भाजा युक्तेन कराङ्गे न्यासमाचरेत् । ध्यानं ततो शृणुष्वाशु सर्वैश्वर्य
प्रदायकम् ॥४॥ अक्षपुस्त धरां रक्तां वराभयकराम्बुजाम् । चन्द्रमुण्डां त्रिनेत्रां च ध्यायेद्
बालां फलप्रदाम् ॥५॥

ऐं त्रैलोक्य विजयायै हुँ फट् । क्लीं त्रिगुणरहितायै हुँ फट् । सौः सर्वैश्वर्य
दायिन्यै हुँ फट् ॥६॥

नातः परतरा सिद्धिर्नातः परतरा गतिः । नातः परतरो मंत्रस्सत्यं सत्यं वदाम्य-
-हम् ॥७॥ रक्तां रक्तच्छदां तीक्ष्णां रक्तपां रक्तवाससीम् । स्वरूपां रत्नभूषां च लालजिह्वां
परां भजे ॥८॥ त्रैलोक्य जननीं सिद्धां त्रिकोणस्थां त्रिलोचनाम् । त्रिवर्ग फलदां शान्तां
वन्दे बीज त्रयात्मिकाम् ॥९॥ श्री बालां वारुणी प्रीतां बालार्क कोटि द्योतिनीम् । वरदां बुद्धि-
दां श्रेष्ठां वामाचारप्रियां भजे ॥१०॥ चतुर्भुजां चारुनेत्रां चन्द्रमौलि कपालिनीम् । चतुः-
षष्टि योगिनीशां वीरवन्द्यां भजाम्यहम् ॥११॥ कौलिकां कुलतत्त्वस्थां कौलाचारांक वाहनाम्

कौसुम्भवर्णां कौमारां कवर्मधारिणीं भजे ॥१२॥ द्वादशस्वररूपायै नमस्तेऽस्तु नमोनमः। नमो नमस्ते बालायै कारुण्यायै नमोनमः ॥१३॥ विद्याविद्यादविद्यायै नमस्तेऽस्तु नमो नमः। विद्याराज्ञै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ॥१४॥

ऐं बालायै विद्महे क्लीं त्रिभुवनेश्वर्यै धीमहि। सौः तन्नो देवी प्रचोदयात्

ऐं बालायै स्वाहा।

द्वादशान्तालयां श्रेष्ठां षोडशाधारगां शिवाम्। पञ्चेन्द्रियस्वरूपाख्यां भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥१५॥ ब्रह्मविद्यां ब्रह्मरूपां ब्रह्मज्ञानप्रदायिनीम्। वसुप्रदां वेदमातां वन्दे बालां शुभाननाम् ॥१६॥ अघोरां भीषणामाद्यामनन्तोपरि संस्थिताम्। देवदेवेश्वरीं भद्रां श्रीबालां प्रणमाम्यहम् ॥१७॥ भवप्रियां भवाधारां भगरूपां भगप्रियाम्। भयानकां भूतमातां भूदेव पूजितां भजे ॥१८॥ अकारादिक्षकारान्तां क्लीबाक्षरात्मिकां पराम्। वन्दे वन्दे महामायां भवभय भयापहाम् ॥१९॥ नाडीरूप्यै नमस्तेऽस्तु धातुरूप्यै नमोनमः। जीवरूप्यै नमस्यामि ब्रह्मरूप्यै नमोनमः ॥२०॥ नमस्ते मन्त्ररूपायै पीठगायै नमोनमः। सिंहासनेश्वरि तुभ्यं सिद्धिरूप्यै नमो नमः ॥२१॥ नमस्ते मातृरूपिण्यै नमस्ते भैरवप्रिये। नमस्ते योगपीठायै बालायै सततं नमः ॥२२॥ योगेश्वर्यै नमस्तेऽस्तु योगदायै नमोनमः। योगनिद्रास्वरूपिण्यै बालादेव्यै नमोनमः ॥२३॥ सुषुम्णायै नमस्तेऽस्तु सुषुप्तायै नमो नमः। सुयुम्नायै नमस्तेऽस्तु बालादेव्यै नमो नमः ॥२४॥ योनिप्रियायै योन्यै वै योनिरूप्यै नमो नमः। योनिसर्पि विलेपिन्यै योनिस्था-यै नमो नमः ॥२५॥

फलश्रुतिः- इतीदं स्तवराजाख्यं सर्वस्तोत्रोत्तमोत्तमम्। ये पठन्ति महेशानि पुनर्जन्म न विद्यते ॥२६॥ महाकष्टे महारोगे त्रिधा वा पञ्चधा पठेत्। महाकष्टं महारोगं नश्यते नात्र संशयः ॥२७॥ सर्वपापहरं पुण्यं सर्वस्फोट विनाशकम्। सर्वसिद्धि प्रदं श्रेष्ठं भोगैश्वर्य प्रदायकम् ॥२८॥ यज्ञानां षोडशानां च कोटि कोटिगुणोत्तरम्। फलं प्राप्नोति पाठेन चैकवारेण सुन्दरि ॥२९॥ षोडशानां च दानानां कोट्यर्बुदफलं स्मृतम्। पाठमात्रेण लभते नात्र कार्या विचारणा ॥३०॥ पूजान्ते पठते स्तोत्रं मैथुने च विशेषतः। पठेच्च चक्रपूजायां फलं वक्तुं न शक्यते ॥३१॥ विशेषतश्चार्धरात्रे ये पठन्ति महेश्वरि। सर्वारिष्टानि नश्यन्ति लभते वाञ्छितं फलम् ॥३२॥ धातृमूले बिल्वमूले वटधत्तूरमूलके। मुण्डोपरि शवपृष्ठे श्मशाने च चतुष्पथे ॥३३॥ शिवागारे शून्यगेहे चैकलिङ्गे शिवाग्रके। दुर्ग पर्वत चोद्याने वारुणीघट चार्चने ॥३४॥ पठेत्स्तोत्रं सदा भक्त्या त्रैलोक्य विजयी भवेत्। रजस्वला भगं स्पृष्ट्वा पठेदेकाग्रमानसः ॥३५॥ सत्यं सत्यं वरारोहे लभते परमं पदम्। तस्मात्सर्वप्रयत्नेन पठनीयं सदा बुधैः ॥३६॥

॥ इति श्री ब्रह्मयामल तन्त्रे श्री बालादेव्याः स्तवराजः सम्पूर्णम् ॥

टिप्पणी - श्री बाला त्रिपुर सुन्दरी देवी का यह स्तवराज साधक की समस्त कामनाओं की पूर्ति करने वाला है। यह समस्त पापों को नष्ट करता है तथा तीनों प्रकार के रोगों को दूर करता है। आधीरात के समय इसका पाठ करने से समस्त अरिष्ट नष्ट हो जाते हैं।

अथ श्री भुवनेश्वरी स्तोत्राणि : अब श्री भुवनेश्वरी देवी के कवच, हृदय तथा स्तोत्रादि का उल्लेख किया जाता है, जिनके नित्य पाठ से साधक की समस्त मनोभिलाषायें पूर्ण होती हैं।

अथ श्री भुवनेश्वरी त्रैलोक्य मङ्गल कवचम् :- देव्युवाच॥ भुवनेश्यारश्च देवेश या या विद्या: प्रकाशिता:। श्रुताश्चाधिगता: सर्वा: श्रोतुमिच्छामि साम्प्रतम् ॥१॥ त्रैलोक्यमङ्गलं नाम कवचं यत्पुरोदितम् ॥

ईश्वर उवाच॥ शृणु पार्वति वक्ष्यामि सावधानाऽवधारय॥२॥ त्रैलोक्य मङ्गलं नाम कवचं मन्त्र विग्रहम्। सिद्धविद्यामयं देवि सर्वैश्वर्य प्रदायकम् ॥३॥ पाठनाद्धारणान्मर्त्यस्त्रैलोक्यैश्वर्य भाग्भवेत् ॥४॥

त्रैलोक्य मङ्गलस्यास्य कवचस्य ऋषिश्शिव:। छन्दो विराट् जगद्धात्री देवता भुवनेश्वरी ॥५॥ धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोग: प्रकीर्तित:।

अथ कवचम्- ह्रीं बीजं मे शिर: पातु भुवनेशी ललाटकम् ॥६॥ ऐं पातु दक्ष नेत्रं मे ह्रीं पातु वामलोचनम्। श्रीं पातु दक्षकर्णं मे त्रिवर्णात्मा महेश्वरी ॥७॥ वामकर्णं सदा पातु ऐं घ्राणं पातु मे सदा। ह्रीं पातु वदनं देवी ऐं पातु रसनां मम ॥८॥ वाक्पुटा च त्रिवर्णात्मा कण्ठं पातु पराम्बिका। श्रीं स्कन्धौ पातु नियतं ह्रीं भुजौ पातु सर्वदा ॥९॥ क्लीं करौ त्रिपुटेशानी त्रिपुटैश्वर्यदायिनी। ॐ पातु हृदयं ह्रीं मे मध्यदेशं सदाऽवतु ॥१०॥ क्रौं पातु नाभिदेशं सा त्र्यक्षरी भुवनेश्वरी। सर्व बीज प्रजा पृष्ठं पातुं मे सर्वशङ्करी ॥११॥ ह्रीं पातु गुददेशं मे नमो भगवती

कटिम् । माहेश्वरी सदा पातु सक्थिनी जानुयुग्मकम् ॥१२॥ अन्नपूर्णा सदा पातु स्वाहा पातु पद
द्वयम् । सप्तदशाक्षरी पायादन्नपूर्णात्मिका परा ॥१३॥ तारं माया रमा कामः षोऽशार्णा ततः परम् ।
शिरस्था सर्वदा पातु विंशत्यर्णात्मिका परा ॥१४॥ तारं दुर्गे युगं रक्षिणी स्वाहेति च दशाक्षरी ।
जयदुर्गा घनश्यामा पातु मां पूर्वतो मुदा ॥१५॥ मायाबीजादिका चैवा दशार्णा च परा तथा । उत्तप्त
काञ्चनाभासा जयदुर्गाऽनलेऽवतु ॥१६॥ तारं ह्रीं दुं दुर्गायै नमोऽष्टार्णात्मिका परा । शङ्ख चक्रधनुर्बा-
-ण धरा मां दक्षिणेऽवतु ॥१७॥ महिषमर्दिनी स्वाहा वसुवर्णात्मिका परा । नैर्ऋत्यां सर्वदा पातु महि-
षासुरनाशिनी ॥१८॥ माया पद्मावती स्वाहा सप्तार्णा परिकीर्तिता । पद्मावती पद्मसंस्था पश्चिमे
मां सदावतु ॥१९॥ पाशांकुशपुटा माये हि परमेश्वरि स्वाहा । त्रयोदशार्णा ताराद्या अश्वारूढाऽनले
ऽवतु ॥२०॥ सरस्वती पञ्चशरे नित्यक्लिन्ने मदद्रवे । स्वाहा रव्यक्षरी विद्या मामुत्तरे सदाऽवतु
॥२१॥ तारं माया तु कवचं खे रक्षेत् सततं वधूः । हूं क्षें ह्रीं फट् महाविद्या द्वादशार्णाखिल प्रदा ॥
२२॥ त्वरिताष्टाहिभिः पायात् शिवकोणे सदा च माम् । ऐं क्लीं सौः ततो बाला मामूर्ध्वदेशतोऽवतु ॥
२३॥ बिन्द्वन्ता भैरवी बाला भूमौ च मां सदाऽवतु । इति ते कथितं पुण्यं त्रैलोक्य मङ्गलं परम् ॥२४॥
सारं सारतरं पुण्यं महाविद्यौघविग्रहम् । अस्यापि पठनात् सद्यः कुबेरोऽपि
धनेश्वरः ॥२५॥ इन्द्राद्याः सकला देवाः पठनाद्धारणाद्यतः । सर्वसिद्धीश्वराः सन्तः सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः
॥२६॥ पुष्पाञ्जल्यष्टकं दत्वा मूलेनैव पठेत्सकृत् संवत्सर कृतायास्तु पूजाया फलमाप्नुयात् ॥२७॥
प्रीतिमन्योन्यतः कृत्वा कमला निश्चला गृहे । वाणी च निवसेद्वक्त्रे सत्यं सत्यं न संशयः ॥२८॥
यो धारयति पुण्यात्मा त्रैलोक्यमङ्गलाभिधम् । कवचं परमं पुण्यं सोऽपि पुण्यवतां वरः ॥२९॥

श्री भुवनेश्वरी पूजन यन्त्र
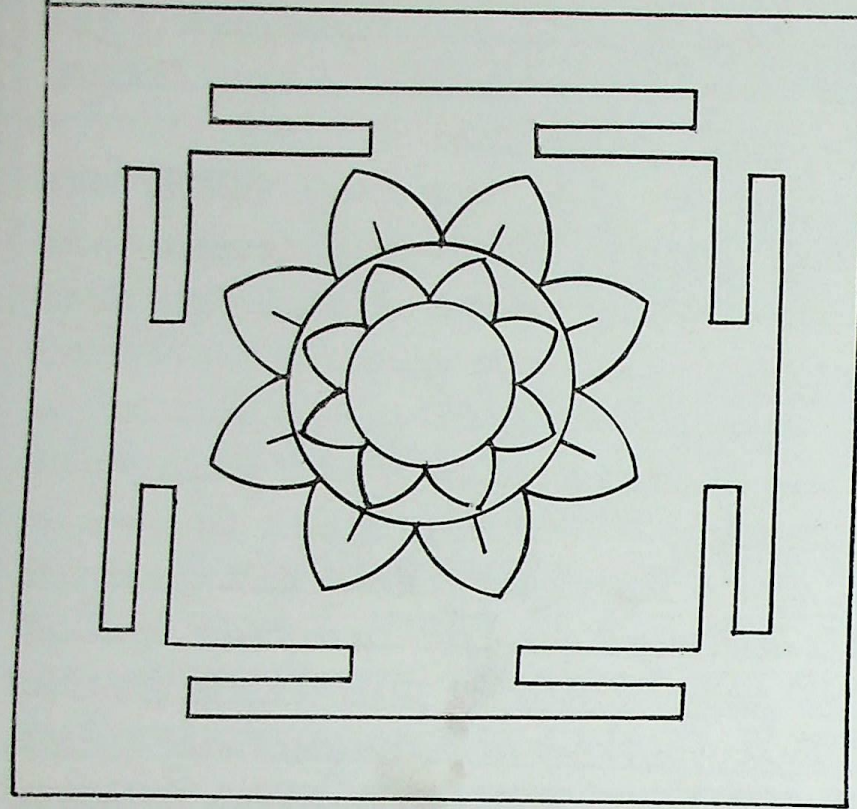
सर्वैश्वर्य युतो भूत्वा त्रैलोक्य विजयी भवेत्। पुरुषो दक्षिणे बाहौ नारी वाम भुजे तथा ॥ ३०॥ बहु पुत्रवती भूत्वा वन्ध्यापि लभते सुतम्। ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि नैव कृन्तन्ति तं जनम् ॥३१॥ एतत्कवचमज्ञात्वा यो जपेद् भुवनेश्वरीम्। दारिद्र्यं परमं प्राप्य सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ॥ ३२॥

॥ इति श्री रुद्रयामले त्रैलोक्य मङ्गलं नाम श्रीभुवनेश्वरी कवचं सम्पूर्णम् ॥

टिप्पणी: भगवती भुवनेश्वरी का यह त्रैलोक्य मङ्गल नामक कवच साधक की समस्त कामनाएं पूर्ण करता है। इसका नित्य पाठ करने वाला समस्त ऐश्वर्यों से युक्त तथा त्रैलोक्य विजयी होता है। पुरुष को यह कवच दांई भुजा में तथा स्त्री को बाँई भुजा में धारण करने से सर्वत्र रक्षा होती है तथा सन्तान-सुख प्राप्त होता है।

मं०
मं०
३३
३३

भा०
टी०

अथ श्रीभुवनेश्वरी हृदय स्तवः -" देव्युवाच ॥ भगवन् ब्रूहि तत्स्तोत्रं सर्वकाम प्रसाधनम् । यस्य श्रवण मात्रेण नान्यच्छ्रोतव्यमिष्यते ॥ १॥ यदि मेऽनुग्रहः कार्यः प्रीतिश्चापि ममोपरि । तदिदं कथय भगवन् विमलं यन्महीतले ॥२॥

ईश्वर उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि सर्वकाम प्रसाधनम् । हृदयं भुवनेश्वर्याः स्तोत्रमस्ति यशोदयम् ॥

ॐ अस्य श्री भुवनेश्वरी हृदय स्तोत्रस्य शक्तिर्ऋषिः, गायत्री छन्दः, भुवनेश्वरी देवता. ह्रं बीजं, ईं शक्तिः, रं कीलकं सकलमनोवाञ्छित सिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः॥

ह्रीं श्रीं ऐं एवं हृदयादि, षडङ्गानि तथा एवं करन्यासः।

अथ ध्यानम् - ध्यायेद् ब्रह्मादिकानां कृतजनि जननीं योगिनीं योगयोनिं। देवानां जीवनायोज्ज्वलित जय परं ज्योतिरुग्राङ्गधात्रीम् ॥ शंखं चक्रं च बाणं धनुरपि दधतीं दोश्चतुष्काम्बुजातैर्मायामाद्यां विशिष्टां भवभव भुवनां भूभवा भारभूमिम् ॥

मानसोपचारैः सम्पूज्य पठेत् -

यदाज्ञया यो जगदाद्यशेषं सृजत्यजः श्रीपतिरौरसं वा। बिभर्ति संहर्ति भवस्तदन्ते भजामहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ १॥ जगज्जनानन्दकरीं जयाख्यां यशस्विनीं यन्त्र सुयन्त्र योनिम् । जितामिताभित्र कृत प्रपञ्चां भजामहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ २॥ हरौ प्रसुप्ते भुवनत्रयान्ते अवातरन्नाभिजपद्मजन्मा । विधिस्ततोऽध्ये विदधार यत्पदं भजामहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ ३॥ न विद्यते क्वापि तु जन्म यस्या न वा स्थितिः सान्ततिकी हि यस्याः

न वा निरोधे ऽखिल कर्म यस्याः भजाम्यहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ ४॥

कटाक्षमोक्षा चरणोग्रवित्ता निवेशितार्णाः करुणार्द्रचित्ता । सुभक्तये एति समीप्सितं या भजाम्यहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ ५॥ यतो जगज्जन्म बभूव योनेस्तदेव मध्ये प्रतिपाति यां वा । तदत्ति यान्ते ऽखिलमुग्रकाली भजाम्यहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ ६॥ सुषुप्तिकाले जनमध्यपन्त्या मया जनः स्वप्नमवैति किंचित् । प्रबुध्यते जागृति जीव एव भजाम्यहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥७॥ दयास्फुरत्कोरकटाक्षलाभान्नैकत्र यस्या प्रलभन्ति सिद्धाः । कवित्वमीशित्वमपि स्वतन्त्रा भजाम्यहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ ८॥

लसन्मुखाम्भोरुहमुत्स्फुरन्तं हृदि प्रणिधाय दिशि स्फुरन्तः । यस्याः कृपार्द्रं प्रविकाशयन्ति भजाम्यहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ ९॥ पदानुरागानुगतालिचित्ताश्चिरन्तन प्रेम परिप्लुतांगाः । मुनिर्मया : सन्ति प्रमुच्य यस्याः भजाम्यहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ १०॥ हरिविरिञ्चिहरईश्वतारः पुरोऽवतिष्ठन्ति पर ब्रताङ्गाः । यस्या समिच्छन्ति सदानुकूलं भजाम्यहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ ११॥ मनुं यदीयं हरमग्नि संस्थं ततश्च वामश्रुति चन्द्रसक्तम् । जपन्ति ये स्युः सुरवन्दितास्ते भजाम्यहे श्री भुवनेश्वरीं ताम् ॥ १२॥

प्रसीदतु प्रेमरसार्द्रचित्ता सदा हि सा श्री भुवनेश्वरी मे । कृपाकटाक्षेण कुबेरकल्पा भवन्ति यस्याः पदभक्तिभाजः ॥१३॥ मुदा सुपाठ्यं भुवनेश्वरीयं सदासतां स्तोत्रमिदं सुसेव्यं । सुखप्रदं स्यात् कलिकल्मषघ्नं सुश्रृण्वतां सम्पठतां प्रशस्यम् ॥ १४॥

एतत्तु हृदयस्तोत्रं पठेद्यस्तु समाहितः । भवेत्तस्येष्टदा देवी प्रसन्ना भुवनेश्वरी ॥

१५॥ ददाति धनमायुष्यं पुण्यं पुण्यमतिं तथा। नैष्ठिकीं देवभक्तिं च गुरुभक्तिं विशेषत: ॥१६॥
पूर्णिमायां चतुर्दश्यां कुजवारे विशेषत:। पठनीयमिदं स्तोत्रं देवसद्मनि यत्नत: ॥१७॥ यत्र कुत्रापि
पाठेन स्तोत्रस्यास्य फलं भवेत्। सर्व स्थानेषु देवेश्या: धृतदेह: सदा पठेत् ॥१८॥
पूर्ववत् न्यास ध्यानादि कुर्वन् निवेद्य प्रणमेत् ॥
॥ इति श्री भुवनेश्वरी हृदयस्तव: सम्पूर्णम् ॥

अथ श्री भुवनेश्वरी पञ्जर स्तोत्रम् :- "इदं श्री भुवनेश्वर्या: पञ्जरं भुवि दुर्लभम्।
येन संरक्षितो मर्त्यो बाणै: शस्त्रैर्न बाध्यते ॥१॥ ज्वर मारी पशु व्याघ्र कृत्या चौराद्युपद्रवै:। नद्यम्बु
धरणी विद्युत्कृशानु भुजगारिभि: ॥२॥
सौभाग्यारोग्य सम्पत्ति कीर्ति कान्ति यशोर्पदम्। ओं क्रों श्रीं ह्रीं ऐं सौ: पूर्वेऽ
धिष्ठाय मां पाहि चक्रिणि भुवनेश्वरी ॥३॥
योगविद्ये महामाये योगिनीगण सेविते। कृष्णवर्णे महद्भूते बृहत्कर्णे भयङ्करि
॥४॥ देवि देवि महादेवि मम शत्रून् विनाशय। उत्तिष्ठ पुरुषे किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं॥
यदि शक्यमशक्यं तन्मे भगवति शमय स्वाहा। त्रैलोक्यमोहिन्यै विद्महे
विश्वजनन्यै धीमहि तन्न: शक्ति प्रचोदयात् ॥६॥
ममाग्नेय्यां स्थिता पाहि गदिनी भुवनेश्वरी। योगविद्ये महामाये योगिनीगण
सेविते ॥७॥ कृष्णवर्णे महद्भूते लम्बकर्णे भयङ्करि। देवि देवि महादेवि मम शत्रून् विनाशय॥८॥

उत्तिष्ठ पुरुषे किं स्वपिषि भयं मे समुपस्थितं।
यदि शक्यमशक्यं वा तन्मे भगवति शमय स्वाहा ॥९॥

त्रैलोक्य मोहिन्यै विद्महे विश्व जनन्यै धीमहि
तन्नः शक्ति प्रचोदयात्। याम्ये ऽधिष्ठाय मां पाहि
शङ्खिनी भुवनेश्वरी ॥१०॥

नैर्ऋत्ये मां स्थिता पाहि खड्गिनी भुवनेश्वरी।
योगविद्ये महामाये शंखिनी भुवनेश्वरी ॥११॥
पश्चिमे मां स्थिता पाहि पाशिनी भुवनेश्वरी।
योगविद्ये महामाये शंखिनी भुवनेश्वरी ॥१२॥
वायव्ये मां स्थिता पाहि शक्तिनी भुवनेश्वरी।
योगविद्ये महामाये शंखिनी भुवनेश्वरी ॥१३॥
सौम्ये ऽधिष्ठाय मां पाहि चापिनी भुवनेश्वरी।
योगविद्ये महामाये शंखिनी भुवनेश्वरी ॥१४॥
ईशे ऽधिष्ठाय मां पाहि शूलिनी भुवनेश्वरी।
योगविद्ये महामाये शंखिनी भुवनेश्वरी ॥१५॥
ऊर्ध्वे ऽधिष्ठाय मां पाहि पद्मिनी भुवनेश्वरी।
योगविद्ये महामाये शंखिनी भुवनेश्वरी ॥१६॥

श्री मधुमती पूजन यन्त्र

अधस्तान्मां स्थिता पाहि वाणिनी भुवनेश्वरी। योगविद्ये महामाये शांखिनी भुवनेश्वरी ॥१८॥ ...
अग्रतो मां स्थिता पाहि पाशिनी भुवनेश्वरी। योगविद्ये महामाये शांखिनी भुवनेश्वरी ॥१९॥
पृष्ठतो मां स्थिता पाहि वरदे भुवनेश्वरी। योगविद्ये महामाये शांखिनी भुवनेश्वरी ॥२०॥
पश्चिमे मां सदा पाहि सांकुशे भुवनेश्वरी। योगविद्ये महामाये शांखिनी भुवनेश्वरी ॥२१॥
सर्वतो मां सदा पाहि सायुधे भुवनेश्वरी। योगविद्ये महामाये शांखिनी भुवनेश्वरी ॥२२॥ (?)
प्रोक्ता दिङ्मनवो देवि चतुर्दश शुभप्रदाः। एतत् पञ्जरमाख्यातं सर्वरक्षाकरं नृणाम् ॥२२॥
गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति। न भक्ताय प्रदातव्यं नाशिष्याय कदाचन ॥२३॥
सिद्धिकामो महादेवि गोपयेन्मातृजारवत्। जपकाले होमकाले पूजाकाले विशेषतः ॥२४॥
दीपस्यारम्भकाले वै यः कुर्यात्पञ्जरं सुधीः। सर्वान् कामानवाप्नोति प्रत्यूहैर्नाभिभूयते ॥२५॥
रणे राजकुले द्यूते सर्वत्र विजयी भवेत्। कृत्या रोग पिशाचाद्यैर्न कदाचित् प्रबाध्यते ॥२६॥
प्रातः काले च मध्याह्ने सन्ध्यायामर्द्धरात्रिके। यः कुर्यात् पञ्जरं मर्त्यो देवीं ध्यात्वा समाहितः॥
कालमृत्युमपि प्राप्तं जयेदत्र न संशयः। ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्रं न जगन्ति च ॥
पुत्रवान् धनवांल्लोके यशस्वी जायते नरः ॥२७-२८-२९॥

॥ इति श्री रुद्रयामले भुवनेश्वरी पञ्जर स्तोत्रम् समाप्तम् ॥

इस पंजर स्तोत्र का नित्य प्रातः, मध्याह्न, सायं अथवा अर्द्धरात्रि में पाठ करने से समस्त कामनाएं पूर्ण होती हैं।

अथ श्रीतारास्वरूपाख्य स्तवराज :- "श्रीकण्ठामर केशवर्ण घटितं चन्द्रार्द्धविन्दूज्ज्वलं, बीजं यत्परमं गुणत्रयमयं कामप्रदं मुक्तिदम् ॥ मातः शङ्कर वल्लभे प्रतिदिनं ध्यायन्ति ये ये सदा ; ते ते यान्ति चिदात्मकं हरिहर ब्रह्मादि साम्यं मुदा ॥ १॥ व्योमार्णं वामनेत्रान्वितमनल युतं बिन्दु चन्द्रार्धयुक्तं बीजं ते गुह्यमेतत्त्रिभुवन जननि त्रिक्षणे ये जपन्ति ॥ तेषां वक्त्रारविन्दे विहरति मधुरा गद्य पद्यावली गीर्मतिश्चन्द्रार्धचूडे सकलभयहरे सिद्धिभाजां नराणाम् ॥२॥ शुक्रार्णं शत-नास्यं कलित शशिकला बिन्दुभूषं सवह्नि भ्राजद् वामाक्षि युक्तं जननि तव वधूबीजमेतज्जपंति ते ते लोले क्षणानां विगलित रसना पीत वक्षोज वासः केशानां चित्तमाशु स्मरहर महिले मोहयंति प्रकामं ॥३॥ ईशानं वाम कर्णोल्लसित शशिकला विन्दु युक्तं प्रगुह्यं बीजं मातस्त्वदीयं यदि जप-ति जनो वारमेकं जडात्मा । चञ्चत्पञ्चाशदुग्र ग्रथित नर शिरो मालिका क्रान्त कण्ठे, मातः शैलेन्द्र पुत्रि त्रिभुवनमपि संक्षोभयत्येव शीघ्रम् ॥४॥

पश्चादस्त्रं तदनु पुरहर महिले बीजमत्यन्त गुह्यं, भालोद्यत् पञ्चमुद्रे प्रकट विकट दंष्ट्रोग्र वक्त्रारविन्दे ॥ नित्यं ये भावयन्ति प्रतिदिनममले घोररूपाट्टहासे ते नूनं भ्रामय-न्ति त्रिजगदघहरे चक्रवद् विश्वमेतत् ॥५॥ माया स्त्री कूर्च बीजैर्नवतपन हरित् सार्द्र चन्द्रांशु वर्णे, मातर्न्नीलाख्यमेतत्तव मनुमनिशं ये प्रकामं जपन्ति ॥ वित्तैर्वित्तेशतुल्याः सुरगुरु सदृशा स्तर्क काव्यागमादौ । ते ते नीलांबुदाली रुचिरुचिर तनो कामरूपा भवन्ति ॥६॥

भवान्येभिर्बीजैर्हिमगिरि सुते चास्त्र सहितैर्निगूढं ये मातस्तव मनु जपन्त्येकजटि-ले । त्रियामानाथार्ध प्रविलसित भाले त्रिनयने ; गृहे तेषां नित्यं निवसति मुदा सिन्धुतनया ॥७॥

अमीभिर्वीजैस्ते प्रणवसहितैः शैलतनये। निजस्थाने स्वस्थं परिजपति पञ्चाक्षर मिति ।। स सिद्धः स
त्यागी स तु पुरहरोऽसौ मुरहरः। स धाताऽसौ मुक्तो भवति हि चिदानन्दरसिके ।।८।।
शवासीनां कण्ठे कलितनृकरीटीं करलसत् । कपालासि श्यामोत्पलरुचिरकर्त्रीं त्रिनय-
नाम् ।। नवाम्भोदश्यामां विकटरदभीमां पृथुकुचां। स देव त्वां ध्यायन् जननि स जडो वाक्पति
सम: ।।९।। तटे नद्याः सिन्धोर्गिरिशिरसि मालूरगहने। श्मशाने गोष्ठे वा गिरिश भवने शून्यसदने।।
हविष्याशी लक्षं प्रजपति वशीभावनपरः। स सर्वज्ञो वाग्मी भवति सुजनो पीनजघने ।। १०।।
मुदा मातः शुद्धोदकरुचिर गन्धाक्तसलिलैः। स्वयम्भू पुष्पस्रक् कुलतनुभगक्षालित
जलैः ।। शिवे त्वां संध्यायन् हरमहिषि सन्तर्पयति यः। सदैव स्त्रीवृन्दं वशयति स विद्या-
धरपतिः ।। ११।। जवापुष्पैर्विल्वैर्मरुवकुलमुख्यैश्च कुसुमैः। सुगन्धैः कर्पूरैरगरुसहितैर्धूपनिकरैः
प्रदीपैरुज्ज्वालैर्घृतरचितनैवेद्यनिकरैः स्तवार्चां यः कुर्यात् स भवति हि पूज्यः क्षितिपतेः ।।१२।।
स दूर्वाभिः पद्मैस्त्रिमधुललितैः श्रीफलदलैर्घृतैर्गव्यैरक्तैः सुकुल भगलिङ्गामृ
त रसैः ।। त्रिकोणे कुण्डे यो हुतवहमुखे होमविधिना। जुहोति त्वां मातः स भवति कवीन्द्रः
क्षितिपतिः ।। १३ ।। निशीथे कल्याणि प्रमुदितमना यः पितृवने। बलिं ते मेषाद्यैः स नरमहिषै-
र्वा परिचरेत् ।। स राजानं क्षिप्रं वशयति मृगाक्षी समुदयं। त्रिलोकी वा भूमौ स भवति नरः
सत्कविवरः ।।१४।।
महापूजां मातस्तव वितनुते यस्तु मधुना तथा मांसैर्मत्स्यैर्विविधनवमुद्रादिभि
रपि ।। वरस्त्रीभिः सार्धं त्रिभुवनविनोदेन मुदितो। निशीथे संसारात्स भवति विमुक्तः पशु-

भपात ॥२५॥ त्रिकोणे पीठे त्वां वरनिभुवना सक्त
हृदयो । महाकालेनोच्चपुलकनिचयां स्मेर वदनाम्
स्वयं नक्तं कान्तारतिरस समासक्त हृदयो। मनु-
ष्यो यो ध्यायेद् भवति शिवतुल्यः स धरणौ॥
॥२६॥

समुत्तुंगापीन स्तनजघन राजत्कुलवधू
व्यवाय व्यासक्तो जपति तव भक्तो यदि मनुम्
गलद् वासः केशो जननि मनुजो मेदिनितले।
स सिद्धीशः शक्त्या जयति सुचिरं सर्व सुजनम्
॥२७॥ भवानि श्रीमातर्निजगलित वीर्यार्चितकु-
रमव प्रेम्णा लब्ध्वा वचन भुवनेशी युत मनुम्॥
समुच्चार्य्य क्षोणीतनय दिवसे प्रेत सदने। स दी-
-र्घायुर्वाग्मी भवति शत होमात् क्षिति तले॥२८॥

अजस्रं यो मन्त्रं जपति भूमीधरसुते।
विचिन्त्याग्रे मातः कुसुमललितं मारभवनम्॥
धरण्यां कन्दर्प प्रतिमतनुभृतः स सकलान्। निजे
ष्टानाप्नोति प्रविशति मुदा तारिणिपदम् ॥२९॥

दशमहाविद्यान्तर्गत श्रीतारा पूजन यन्त्र
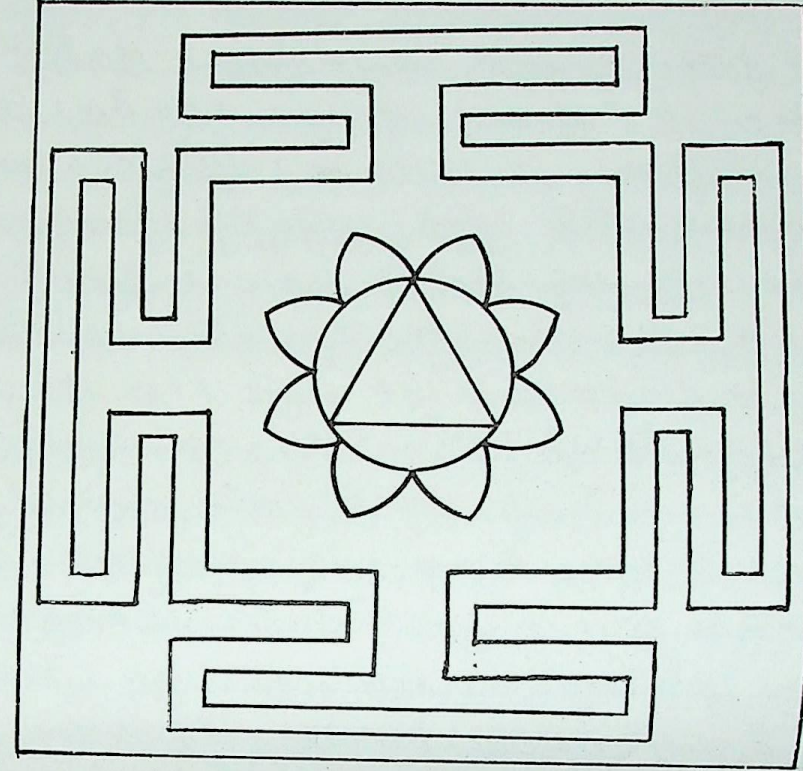
तमोग्रस्ते चन्द्रे यदि जपति लोकस्तव मनुं । नवम्यां वा मातर्धरणिधर कन्ये वितनुते ।। तथा सूर्ये पृथ्वीवलयतिलकः काव्यतरनी पयोधिः सिद्धीनां भवति भवनं सर्वविदितः ।। २० ।।

सदापादाम्भोजे भ्रमत हृदयं भृङ्ग इव मे । सदा पाणिद्वन्द्वं परिचरत कर्णस्तव कथाम् ।। शृणोतु त्वत्कीर्तिं हरमहिषि गीर्गायत सदा । सदा दृष्टिर्भूयाद् भवदनुचरा लोकनपरा ।। २१ कदा काले शैलेश्वरतनु भवे पादयुगलं । मुदा द्रक्ष्ये ब्रह्म प्रमुख विबुधानां परिणुतम् ।। कृपापारावारे भवजनन भीतैक शरणे । शरण्ये कारुण्यं मयि वितर दीने भगवति ।। २२ ।।

सदैव स्तोत्रं यः पठति मुदितः साधकवरो । न दारिद्र्यं तस्य प्रभवति कदाचित क्षिति तले ।। त्रिवर्गो हस्ते स्याज्जगदखिल मेतच्च वशगं । चिरं जीवन्नन्ते जननि लभते मोक्षपदवीम् ।। २३ ।। इदं स्तोत्रं मातः प्रपठति दिवारात्रिमनिशं । स सर्वज्ञो योगीश्वरनिकर चूडामणिसमः ।। जडोऽपि त्वद्रूपं जपति यदि संचिन्त्य मनसा । त्वदग्रे भूयोच्चैः क्षितिपति समानः क्षिति तले ।। २४ ।।

महापुण्यं धन्यं सकल पुरुषार्थैकनिलयं । यशस्यं चायुष्यं सतत भवतापापहमिदम् । रहस्यं प्राकाम्यं नहि खलु कदाचित पशुजने । पठेत पूजाकाले जननि लभते मोक्ष पदवीम् ।। २५ ।।

।। इतिश्री फेत्कारिणी तन्त्रे श्रीशिव पार्वती सम्वादे श्री तारा स्वरूपाख्य स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

इस स्तोत्र के नित्य पाठ से भगवती तारा प्रसन्न होकर साधक को अभीप्सित फल देती है।

अथ श्रीकालिका स्तोत्राणि :- अब भगवती काली के स्तोत्र, कवच, हृदय आदि का उल्लेख किया जाता है। इनके नित्य-पाठ से साधक की समस्त कामनाऐं पूर्ण होती हैं।

अथ श्रीत्रैलोक्य विजय काली कवचम् :- श्रीसदाशिव उवाच ॥ त्रैलोक्य विजयस्यास्य कवचस्य ऋषिः शिवः। छन्दोऽनुष्टुप्देवता च आद्याकाली प्रकीर्तिता ॥ माया बीजं बीजमिति रमा शक्तिरुदाहृता। क्रीं कीलकं काम्यसिद्धौ विनियोगः प्रकीर्तितः ॥

अथ न्यासः शिरसि ओं सदाशिवाय ऋषये नमः। मुखे ओं अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदि। ओं आद्या कालिकायै देवतायै नमः गुह्ये। ओं ह्रीं बीजाय नमः पादयोः। ॐ श्रीं शक्तये नमः सर्वाङ्गे। ॐ क्रीं कीलकाये नमः सकल कामना सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः॥

अथ कवचम्- ह्रीमाद्या मे शिरः पातु श्रीं काली वदनं मम। हृदयं क्रीं पराशक्तिः पायात्कण्ठं परात्परा ॥१॥ नेत्रे पातु जगद्धात्री कर्णौ रक्षतु शङ्करी। घ्राणं पातु महामाया रसनां सर्वमङ्गला ॥२॥ दन्तान् रक्षतु कौमारी कपोलौ कमला तथा। ओष्ठाधरौ क्षमा रक्षेच्चिबुकं चारुहासिनी ॥३॥ ग्रीवां पायात्कुलेशानी ककुत्पातु कृपामयी। द्वौ बाहू बाहुदा रक्षेत्करौ कैवल्यदायिनी ॥४॥ स्कन्धौ कपर्दिनी पातु पृष्ठं त्रैलोक्यतारिणी। पार्श्वे पायादपर्णा मे कटिं मे कमठासना ॥५॥ नाभौ पातु विशालाक्षी प्रजास्थानं प्रभावती। उरू रक्षतु कल्याणी पादौ मे पार्वती सदा ॥६॥ जयदुर्गाऽवतु प्राणान्सर्वाङ्गं सर्वसिद्धिदा। रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन च ॥ तत्सर्वं मे सदा रक्षेदाद्याकाली सनातनी ॥७-८॥

फलश्रुति :- इति ते कथितं दिव्यं त्रैलोक्य विजयाभिधम्। कवचं कालिका देव्या आद्यायाः परमाद्भुतम् ॥१९॥ पूजाकाले पठेद्यस्तु आद्याधिकृत मानसः। सर्वान्कामानवाप्नोति तस्याद्याशु प्रसीदति ॥२०॥ मन्त्रसिद्धिर्भवेदाशु किङ्कराः क्षुद्र सिद्धयः। अपुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी प्राप्नुयाद्धनम् ॥२१॥ विद्यार्थी लभते विद्यां कामी कामानवाप्नुयात्। सहस्रावृत्ति पाठेन वर्मणे ऽस्य पुरस्क्रिया ॥२२॥ पुरश्चरण सम्पन्नं यथोक्तफलदं भवेत्। चन्दनागरु कस्तूरी कुङ्कुमै रक्तचन्दनैः ॥२३॥ भूर्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि। शिखायां दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा साधकः कटौ ॥२४॥ तस्याद्या कालिका वश्या वाञ्छितार्थं प्रयच्छति। न कुत्रापि भयं तस्य सर्वत्र विजयी कविः ॥२५॥ अरोगी चिरजीवी स्याद् बलवान्धारण क्षमः। सर्व विद्यासु निपुणः सर्वशास्त्रार्थ तत्त्ववित् ॥२६॥ वशे तस्य महीपाला भोगमोक्षौ कर स्थितौ। कलिकल्मष युक्तानां निःश्रेय स्करं परम् ॥२७॥

॥ इति श्री महानिर्वाण तन्त्रे त्रैलोक्य विजयं नाम कालिका कवचं सम्पूर्णम् ॥

अथ श्रीकालिका हृदय स्तोत्रम् :- तत्रादौ विनियोगः ॥ ॐ अस्य श्री दक्षिणकालिकाया हृदय स्तोत्र महा मन्त्रस्य महाकाल भैरव ऋषिः उष्णिक् छन्दः ह्रीं बीजं हूं शक्तिः क्रीं कीलकं महायोद्धा स्वरूपिणी महाकाल महिषी श्री दक्षिण कालिकाम्बा देवता प्रसादात् धर्मार्थकाममोक्षार्थे जपे विनियोगः।
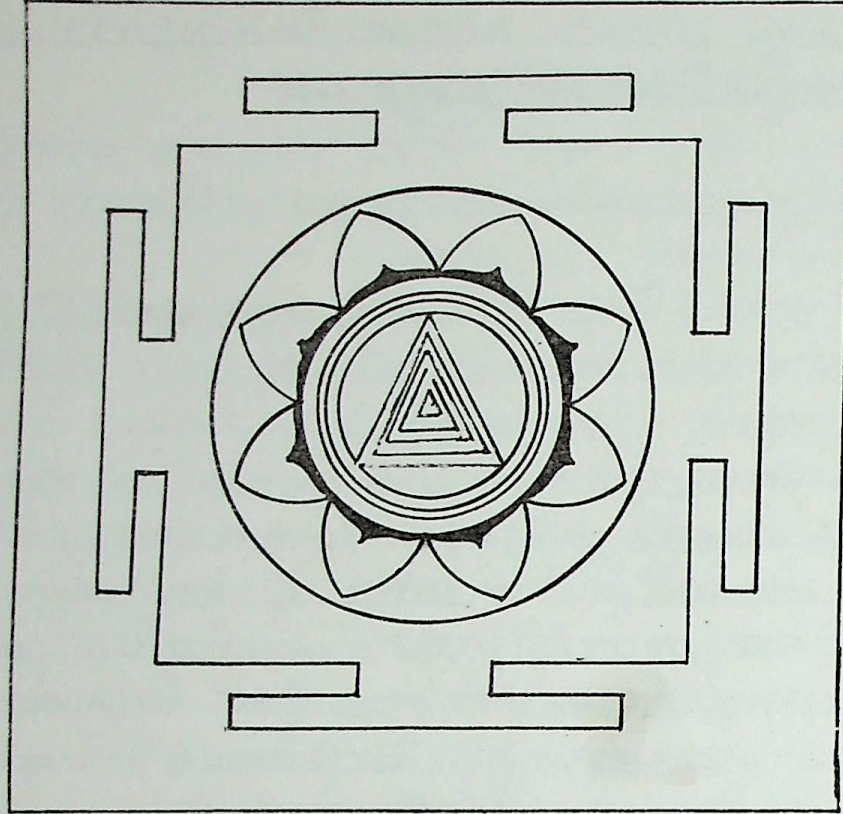
श्री काली पूजन यन्त्र

अथ षडङ्ग न्यास :— "ॐ क्रां ॐ क्रीं ॐ क्रूं ॐ क्रैं ॐ क्रौं ॐ क्रः" - इत्यनेन करषडङ्गः

अथ ध्यानम् :— "शवारूढां महाभीमां घोरदंष्ट्रां ... प्रलय घनघटां घोररूपां प्रचण्डां। दिग्वस्त्रां पिङ्गकेशीं डमरुमथसृणीं खड्गपाशान पाणि ॥ नागं घंटा कपालं करसरसिरुहां कालिकां कृष्णवर्णां। ध्यायामि ध्येयमाता सकल सुखकरी कालिकां तां नमामि ॥

अथ हृदयम् :- " ॐ क्रीं क्रीं क्रूं ह्रूं ह्रूं ह्रूं ह्रीं ह्रीं ॐ ॐ ॐ ॐ हंसः सोऽहं ॐ हंसः ॐ ह्रीं श्रीं ऐं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा स्वरूपिणी । अं आं रूपयोगेण योगसूत्रग्रंथिं भेदय भेदय ईं ईं रुद्र ग्रंथिं भेदय भेदय ॐ ॐ विष्णु ग्रंथिं भेदय भेदय ॐ अं क्रीं आं क्रीं इं क्रों ईं क्रों उं हूं ऊं हूं ऋं ह्रीं ॠं ह्रीं लृं दं लॄं क्लिं ऐं णे ऐं कालि ओं के औं क्रीं ॐ अं क्रीं क्रीं अः ह्रूं ह्रूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा

महाभैरवी हूं हूं महाकालरूपिणी ह्रीं ह्रीं प्रसीद प्रसीद रूपिणी ह्रीं ह्रीं ठः ठः क्रीं अनिरुद्धा सरस्वती
हूं हूं ब्रह्म विष्णु ग्रहबन्धनी रुद्रग्रहबन्धनी गोत्रदेवता ग्रहबन्धनी आधि व्याधि ग्रहबन्धनी सन्निपात
ग्रहबन्धनी सर्वदुष्ट ग्रहबन्धनी सर्वदानव ग्रहबन्धनी सर्वदेव ग्रहबन्धनी सर्वगोत्र देवता ग्रहबन्धनी
सर्व ग्रहान् त्रोटि त्रोटि चिक्पट चिक्पट क्रीं कालिके ह्रीं कपालिनि हूं कुल्ले ह्रीं कुरुकुल्ले हूं विरो-
-धिनि ह्रीं विप्रचित्ते स्फ्रें ह्रौं उग्रे उग्रप्रभे ह्रीं उ दीप्ते ह्रीं घने हूं त्विषे ह्रीं नीले स्त्रूं स्त्रूं नील-
-पताके ॐ ह्रीं घने घनाशने ह्रीं बलाके ह्रीं ह्रीं ह्रीं मिते असिते असित कुसुमोपमे हूं हूं हूंकारि
हां हां हांकारि कां कां काकिनि रां रां राकिनि लां लां लाकिनि हां हां हाकिनि क्षिस क्षिस मम
मम उत्त उत्त तत्त्वविग्रहे अरूपे अमाये विमले अजिते अपराजिते क्रीं स्त्रीम् स्त्रीम् हूं हूं
ऐं ऐं दुष्ट विद्राविणी आं ब्राह्मी ईं माहेश्वरी ऊं कौमारी ॠं वैष्णवी लृं वाराही ऐं इन्द्रा-
-णी ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै औं महालक्ष्म्यै अः हूं हूं पंचप्रेतोपरिसंस्थितायै श्मशालंकारायै चिता-
-न्तस्थायै भैं भैं भद्रकालिके दुष्टान् दारय दारय दारिद्र्यं हन हन पापं मथ मथ आरोग्यं कुरु
कुरु विरूपाक्षी विरूपाक्ष वरदायिनि अष्टभैरवीरूपे ह्रीं नवनाथात्मिके ॐ ह्रीं ह्रीं सत्ये
रां रां राकिनि लां लां लाकिनि हां हां हाकिनि कां कां काकिनि क्षिस क्षिस वद वद उत्त उत्त
तत्त्व विग्रहे अरूपे स्वरूपे आद्यमाये महाकालमहिषि ह्रीं ह्रीं ह्रीं ॐ ॐ ॐ ॐ क्रीं क्रीं क्रीं
हूं हूं ह्रीं ह्रीं महामाये दक्षिणकालिके ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं मां रक्ष रक्ष मम पुत्रान्
रक्ष रक्ष मम स्त्रीं रक्ष रक्ष ममोपरि दुष्टबुद्धि दुष्ट प्रयोगान् कुर्वन्ति कारयन्ति करिष्य-
-न्ति तान् हन हन मम मन्त्रसिद्धिं कुरु कुरु दुष्टान् दारय दारय दारिद्र्यं हन हन पापं मथ

मम आरोग्यं कुरु कुरु आत्मतत्त्वं देहि देहि हंसः सोऽहं ॐ क्रीं क्रीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ सप्तकोटि स्वरूपे आद्ये आद्यविद्ये अनिरुद्धा सरस्वति स्वात्मचैतन्यं देहि देहि मम हृदये तिष्ठ तिष्ठ मम मनोरथं कुरु कुरु स्वाहा।" — **इति हृदयम्।**

फलश्रुतिः- इदन्तु हृदयं दिव्यं महापापौघ नाशनम्। सर्वदुःखादि शमनं सर्व व्याधि विनाशनं ॥१॥ सर्वशत्रु क्षयकरं सर्वसङ्कट नाशनं। ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमम्॥२॥ सर्वशत्रुहरं त्वेव हृदयस्य प्रसादतः। भौमवारे च संक्रान्तौ अष्टम्यां जन्मवासरे॥३॥ चतुर्दश्यां च षष्ठ्यां च शनिवारे च साधकः। हृदयानेन संकीर्त्य किं न साधयते नरः॥४॥ अप्रकाश्यमिदं देवि हृदयं देव दुर्लभम्। सत्यं सत्यं पुनः सत्यं यदिच्छेच्छुभमात्मनः॥५॥ प्रकाशयति देवेशि हृदयं मन्त्र विग्रहम्। प्रकाशात् सिद्धहानिः स्यात् शिवस्य निलयं व्रजेत्॥६॥ दारिद्र्यं तु चतुर्दश्यां योषितः संगमैः सह। वारत्रयं पठेद्देवि प्रभाते साधकोत्तमः॥७॥ षण्मासेन महादेवि कुबेर सदृशो भवेत्। विद्यार्थी प्रजपेन्मन्त्रं पौर्णिमायां सुधाकरे॥८॥ सुधीसंवर्तिनों ध्यायेद्देवि माबर्णैः सह। शतमष्टोत्तरं मन्त्रं कविर्भवति वत्सरात्॥९॥ अर्कवारेऽर्कबिम्बस्थां ध्यायेद्देवी समाहितः। सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं देवता दर्शनं कलौ॥१०॥ भवत्येव महेशानि कालीमन्त्र प्रभावतः। मकारपञ्चकं देवि तोषयित्वा यथाविधि॥११॥ सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं इदन्तु हृदयं पठेत्। सकृदुच्चारमात्रेण पलायन्ते महापदः॥१२॥ उपपातक दौर्भाग्य शमनं भुक्ति मुक्तिदम्। क्षयरोगाग्नि कुष्ठघ्नं मृत्यु संहारकारकम्॥१३॥ सप्तकोटिमहामन्त्र पारायण फलप्रदम्। कोट्यश्वमेध फलदं जरामृत्यु निवारकम्॥१४॥ किंपुनर्बहुनोक्तेन सत्यं

सत्यं महेश्वरी । मद्यमांसासवैर्देवि मत्स्यमाक्षिक पायसैः ॥ २५॥ शिवाबलिं प्रकर्तव्यमिदन्तु हृदयं पठेत् । इहलोके भवेद्राजा मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ २६॥ शताव धनो भवति मासमात्रेण साधकः। संवत्सर प्रयोगेन साक्षात् शिवमयो भवेत् ॥ २७॥ महादारिद्र्य निर्मुक्तं शापानुग्रहणे क्षमः । काशी यात्रा सहस्राणि गंगास्नान शतानि च ॥ २८॥ महाहत्यादिभिर्पापैः महापातक कोटयः । सद्यः प्रलयतां याति मेरुमन्दिर सन्निभम् ॥ २९॥ भक्तियुक्तेन मनसा साधयेत् साधकोत्तमः । साधकाय प्रदातव्यं भक्तियुक्ताय चेतसे ॥ २०॥ अन्यथादापयेद्यस्तु स नरो शिवहा भवेत् । अभक्ते वञ्चके धूर्ते मूढे पण्डितमानिने ॥ २१॥ न देयं यस्य कस्यापि शिवस्य वचनं यथा । इदं सदाशिवेनोक्तं साक्षात्कारं महेश्वरि ॥ २२॥"

॥ इति श्री देवीयामले श्री कालिका हृदय स्तोत्रम् समाप्तम् ॥

अथ श्री जगन्मङ्गल काली कवचम् :- ॥ भैरव्युवाच ॥ कालीपूजा श्रुता नाथ भावाश्च विविधाः प्रभो । इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं पूर्व सूचितम् ॥ १॥ त्वमेव शरणं नाथ त्राहि मां दुःख सङ्कटात् । सर्वदुःख प्रशमनं सर्व पाप प्रणाशनम् ॥ २॥ सर्व सिद्धि प्रदं पुण्यं कवचं परमाद्भुतम् अतो वै श्रोतुमिच्छामि वद मे करुणानिधे ॥ ३॥

श्रीभैरव उवाच ॥ रहस्यं शृणु वक्ष्यामि भैरवि प्राणवल्लभे । श्रीजगन्मङ्गलं नाम कवचं मन्त्र विग्रहम् ॥ ४॥ पठयित्वा धारयित्वा त्रैलोक्यं मोहयेत् क्षणात् । नारायणोऽपि यद्

धृत्वा नारी भृत्वा महेश्वरम् ॥५॥ योगिनं क्षोभमनयत् यद् धृत्वा च रघूद्वह:। वरदीप्तां जघानैव
रावणादि निशाचरान् ॥६॥ यस्य प्रसादादीशो ऽपि त्रैलोक्य विजयी प्रभु:। धनाधिप: कुबेरोऽपि
सुरेशोऽभूच्छचीपति: ॥७॥ एवं च सकला देवा: सर्व सिद्धीश्वरा: प्रिये ॥

ॐ श्री जगन्मङ्गलस्याय कवचस्य ऋषि: शिव:। छन्दो ऽनुष्टुप् देवता च
कालिका दक्षिणेरिता ॥८॥ जगतां मोहने दुष्ट विजये भुक्तिमुक्तिषु। योषिदाकर्षणे चैव वि-
नियोग: प्रकीर्तित: ॥९॥

अथ कवचम्- "शिरो मे कालिका पातु क्रींकारैकाक्षरी परा। क्रीं क्रीं क्रीं
मे ललाटं च कालिका खड्ग धारिणी ॥१०॥ हूं हूं पातु नेत्रयुग्मं ह्रीं ह्रीं पातु श्रुति द्वयम्। दक्षि-
-णे कालिके पातु घ्राणयुग्मं महेश्वरि ॥११॥ क्रीं क्रीं क्रीं रसनां पातु हूं हूं पातु कपोलकम्। वद-
नं सकलं पातु ह्रीं ह्रीं स्वाहा स्वरूपिणी ॥१२॥ द्वाविंशत्यक्षरी स्कन्धौ महाविद्याखिलप्रदा।
खड्गमुण्ड धरा काली सर्वाङ्गमभितो ऽवतु ॥१३॥ क्रीं हूं ह्रीं त्र्यक्षरी पातु चामुण्डा हृदयं मम।
ऐं हूं ओं ऐं स्तनद्वन्द्वं ह्रीं फट् स्वाहा ककुत्स्थलम् ॥१४॥ अष्टाक्षरी महाविद्या भुजौ पातु
सकर्तृका। क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं पातु करौ षडक्षरी मम ॥१५॥ क्रीं नाभिं मध्यदेशं च दक्षिणे
कालिकेऽवतु। क्रीं स्वाहा पातु पृष्ठं च कालिका सा दशाक्षरी ॥१६॥ क्रीं मे गुह्यं सदा पातु
कालिकायै नमस्ततः। सप्ताक्षरी महाविद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥१७॥ ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके
हूं हूं पातु कटिद्वयम्। काली दशाक्षरी विद्या स्वाहान्ता चोरुयुग्मकम् ॥१८॥ ॐ ह्रीं क्रीं मे
स्वाहा पातु जानुनी कालिका सदा। काली हृन्नामविद्येयं चतुर्वर्ग फलप्रदा ॥१९॥

क्रीं हूं ह्रीं पातु सा गुल्फं दक्षिणे कालिकेऽवतु। क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा पदं पातु चतुर्दशाक्षरी मम ॥२०॥ खड्गमुण्डधरा काली वरदाभयधारिणी। विद्याभिः सकलाभिः सा सर्वाङ्गमभितोऽवतु ॥२१॥ काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी। विप्रचित्ता तथोग्रोग्रप्रभा दीप्ता घनत्विषः ॥२२॥ नीला घना वलाका च मात्रा मुद्रा मिता च माम्। एताः सर्वाः खड्गधरा मुण्डमाला विभूषणाः ॥२३॥ रक्षन्तु मां दिग्विदिक्षु ब्राह्मी नारायणी तथा। माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता ॥२४॥ वाराही नारसिंही च सर्वाश्चामित भूषणाः। रक्षन्तु स्वायुधैर्दिक्षु मातरः मां यथा तथा ॥२५॥

फलश्रुतिः - इति ते कथितं दिव्यं कवचं परमाद्भुतम्। श्रीजगन्मङ्गलं नाम महामन्त्रौघ विग्रहम् ॥२६॥ त्रैलोक्याकर्षणं ब्रह्म कवचं मन्मुखोदितम्। गुरु पूजां विधायाथ विधिवत्प्रपठेत्ततः ॥२७॥ कवचं त्रिः सकृद्वापि यावज्ज्ञानं च वा पुनः। एतच्छतार्धमावृत्य त्रैलोक्य विजयी भवेत् ॥२८॥ त्रैलोक्यं क्षोभयत्येव कवचस्य प्रसादतः। महाकविर्भवेन्मासात् सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥२९॥ पुष्पाञ्जलीन् कालिका यै मूलेनैव पठेत्सकृत्। शतवर्ष सहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥३०॥ भूर्जे विलिखितं चैतत् स्वर्णस्थं धारयेद्यदि। शिखायां दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा धारणाद् बुधः ॥३१॥ त्रैलोक्यं मोहयेत् क्रोधात् त्रैलोक्यं चूर्णयेत्क्षणात्। पुत्रवान् धनवान् श्रीमान् नानाविद्यानिधिर्भवेत् ॥३२॥ ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्रस्पर्शवात्ततः। नाशमायान्ति सर्वत्र कवचस्यास्य कीर्तनात् ॥३३॥ मृतवत्सा च या नारी वन्ध्या वा मृतपुत्रिणी। कण्ठे वा वामबाहौ वा कवचस्यास्य धारणात् ॥३४॥ बहुपत्या जीववत्सा

जीववत्सा भवत्येव न संशयः। न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः॥३५॥ शिष्येभ्यो भक्तियुक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमाप्नुयात्। स्पर्धामुद्धूय कमला वाग्देवी मन्दिरे मुखे॥३६॥ पौत्रान्तं स्थैर्यमास्थाय निवसत्येव निश्चितम्। इदं कवचमज्ञात्वा यो जपेद्दक्षकालिकाम्॥३७॥ शतलक्षं प्रजप्त्वापि तस्य विद्या न सिद्ध्यति। सहस्रघातमाप्नोति सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात्॥३८॥ जपेदादौ जपेदन्ते सप्तवाराण्यनुक्रमात्। नोद्धृत्य यत्र कुत्रापि गोपनीयं प्रयत्नतः॥३९॥ लिखित्वा स्वर्णपात्रे वै पूजाकाले तु साधकः। मूर्ध्नि धार्य प्रयत्नेन विद्यारत्नं प्रपूजयेत्॥४०॥

॥इति श्री जगन्मङ्गलकाली कवचं सम्पूर्णम्॥

टिप्पणी - इस कवच का नित्य पाठ करने वाले की समस्त कामनायें पूर्ण होती हैं तथा सभी कष्ट दूर होते हैं

श्री श्यामा पूजन यन्त्र
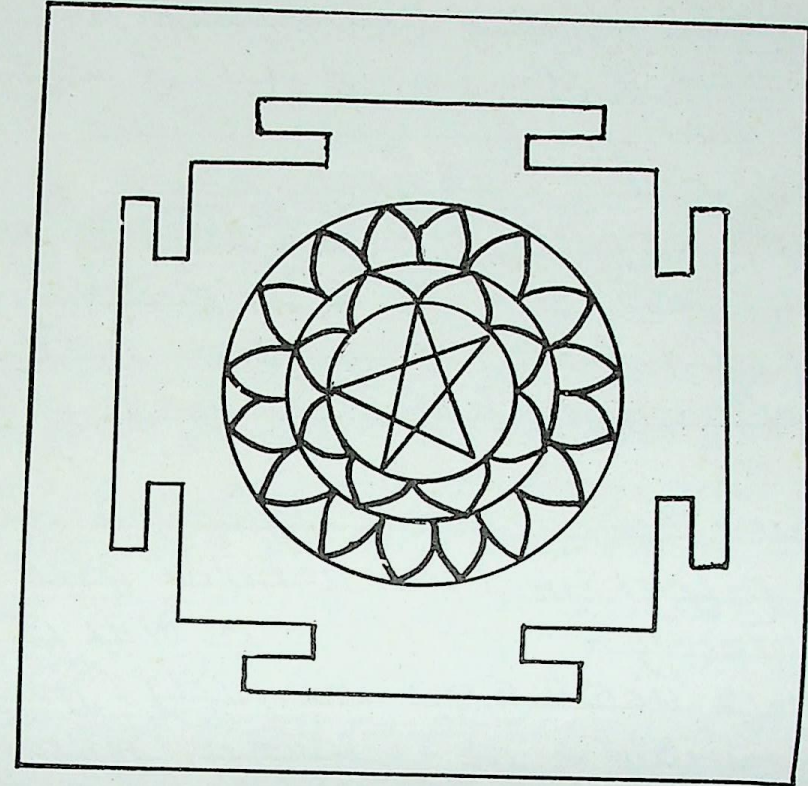
अथ श्रीकाली कीलकम् :— "ॐ अस्य श्री कालिका कीलकस्य सदाशिव ऋषि रनुष्टुप् छन्दः श्री दक्षिण कालिका देवता सर्वसिद्धि साधने कीलकन्यासे जपे विनियोगः।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कीलकं सर्वकामदम्। कालिकायाः परं तत्त्वं सत्यं सत्यं त्रिभिर्मम: ॥१॥ दुर्वासाश्च वशिष्ठश्च दत्तात्रेयो बृहस्पतिः। सुरेशो धनदश्चैव अङ्गिराश्च भृगूद्वहः ॥२॥ च्यवनः कार्तवीर्यश्च कश्यपोऽथ प्रजापतिः। कीलकस्य प्रसादेन सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः॥

अथ कीलकम् — "ॐकारं तु शिखा प्रान्ते लम्बिका स्थान उत्तमे। सहस्रारे पङ्कजे तु क्रीं क्रीं क्रीं वाग्विलासिनी ॥१॥ कूर्च बीज युगं भाले नाभौ लज्जा युगं प्रिये। दक्षिणे-कालिके पातु स्वनासा पुट युग्मके ॥२॥ हुंकार द्वन्द्वं गण्डे द्वे द्वे माये श्रवणद्वये। आद्यातृतीयं विन्यस्य उत्तराधर सम्पुटे ॥३॥ स्वाहा दशन मध्ये तु सर्ववर्णन्न्यसेत् क्रमात्। मुण्डमाला असिकरा काली सर्वार्थ सिद्धिदा ॥४॥ चतुरक्षरी महाविद्या क्रीं क्रीं हृदय पङ्कजे। ॐ हूँ ह्रीं क्रीं ततो हूं फट् स्वाहा च कण्ठ कूपके ॥५॥ अष्टाक्षरी कालिका या नाभौ विन्यस्य पार्वती। क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं स्वाहान्तो च दशाक्षरी ॥६॥ मम बाहु युगे तिष्ठ मम कुण्डलिकुण्डले। हूं ह्रीं मे वह्निजाया च हूं विद्या तिष्ठ पृष्ठके ॥७॥ क्रीं हूं ह्रीं वक्षदेशे च दक्षिणे-कालिके सदा। क्रीं हूं ह्रीं वह्निजायान्ते चतुर्दशाक्षरेश्वरी ॥८॥ क्रीं तिष्ठ गुह्यदेशे मे एकाक्षरी च कालिका। ह्रीं हूं फट् च महाकाली मूलाधार निवासिनी ॥९॥ सर्वरोमाणि मे काली करांगुल्यङ्क पालिनी। कुल्ला कटिं कुरुकुल्ला तिष्ठंतु सकली मम ॥१०॥ विरोधिनी जानु युग्मे विप्रचित्ता पदद्वये। तिष्ठमे च तथा चोग्रा पाद मूले न्यसेत्क्रमात् ॥११॥

ऊर्ध्वातिष्ठतु पादाग्रे दीप्ता पादाङ्गु लीनपि । नीली न्यसेद् विन्दु देशे घना नादे च तिष्ठमे ॥१२॥ बलाकां विन्दु मार्गे च न्यसेत्सर्वाङ्ग सुन्दरी । मम पातालके मात्रा तिष्ठ स्वकुल नायिके ॥१३॥ मुद्रा तिष्ठ त्वमर्त्ये मां मितास्वङ्गकुलेषु च । एता नृमुण्डमालास्रग्धारिण्यः खड्गपाणयः ॥१४॥ तिष्ठन्तु मम गात्राणि सन्धिकूपानि सर्वशः । ब्राह्मी ब्रह्मरन्ध्रं तु तिष्ठस्व घटिका परा ॥१५॥ नारायणी नेत्र युगे मुखे माहेश्वरी तथा । चामुण्डा श्रवण द्वन्द्वे कौमारी चिबुके शुभे ॥१६॥ तथा मुदर मध्ये तु तिष्ठ मे चापराजिता । वाराही चास्थि सन्धौ च नारसिंही नृसिंहके ॥१७॥ आयुधानि गृहीतानि तिष्ठ ख्वेतानि मे सदा ॥

फलस्तुतिः- इति ते कीलकं दिव्यं नित्यं यः कीलयेत्स्वकम् ॥ कवचादौ महेशानि तस्य सिद्धिर्न संशयः ॥१॥ श्मशाने प्रेतयोर्वापि प्रेतदर्शनतत्परः । यः पठेत्पाठयेद्वापि सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥२॥ स वाग्मी धनवान्दक्षः सर्वाध्यक्षः कुलेश्वरः । पुत्र बान्धव सम्पन्नः समीर सदृशो बले ॥३॥ न रोगवान् सदा धीरस्तापत्रय निषूदनः । मुच्यते कालिका पापात् तृणराशिमिवानलः ॥४॥ न शत्रुभ्यो भयं तस्य दुर्गमेभ्यो न बाध्यते । यस्य देशे कीलकं तु धारणं सर्वदाम्बिके ॥५॥ तस्य सर्वार्थ सिद्धिः स्यात्सत्यं सत्यं वरानने । मन्त्राच्छत गुणं देवि कवचं यन्मयोदितम् ॥६॥ तस्माच्छतगुणं चैव कीलकं सर्व कामदम् । तथा चाप्यसिता मन्त्रं नील सारस्वते मनौ ॥७॥ नसिद्ध्यति वरारोहे कीलकार्गलके विना । विहीने कीलकार्गलके काली कवचं च यः पठेत् । तस्य सर्वाणि मन्त्राणि स्तोत्राण्य सिद्धये प्रिये ॥८॥

॥ इति श्री कालिका कीलकम् समाप्तम् ॥

मं०
म०
१९
५३

भा०
टी०

अथ श्रीकाली कर्पूरस्तवराजः - तत्रादौ विनियोगः ॥ "ॐ अस्य श्रीकर्पूरस्तव राजस्य महाकाल ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीदक्षिणा कालिका देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, अव्यक्तं कीलकं, श्री दक्षिण कालिका देवता प्रसाद सिद्ध्यर्थं अमुक कामना सिद्ध्ये ना जपे विनियोगः। (यहाँ 'अमुक' के स्थान पर साधक की जो भी कामना हो, उसके नाम का उच्चारण करना चाहिए)

अथ ऋष्यादि न्यासः - श्री महाकाल ऋषये नमः शिरसि। गायत्री छन्दसे नमः मुखे। श्रीदक्षिण कालिका देवतायै नमः हृदि। हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः पादयोः। अव्यक्ताय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

अथ करन्यास :- क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, क्रैं अनामिकाभ्यां हुं, क्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, क्रः करतल कर पृष्ठाभ्यां फट्।

अथाङ्गन्यासः - क्रां हृदयाय नमः। क्रीं शिरसे स्वाहा। क्रूं शिखायै वषट्। क्रैं कवचाय हुं। क्रौं नेत्र त्रयाय वौषट्। क्रः अस्त्राय फट्।

अथ स्तोत्रम् :- "कर्पूरं मध्यमान्त्यस्वर परहितं सेन्दु वामाक्षि युक्तं। बीजं ते मातरेतत् त्रिपुरहर वधू त्रिः कृतं ये जपन्ति॥ तेषां गद्यानि पद्यानि च मुखकुहरादुल्लसन्त्येव वाचः। स्वच्छन्दं ध्वान्त धाराधर रुचि रुचिरे सर्वसिद्धिं गतानाम् ॥१॥ ईशानः सेन्दुवाम श्रवण परिगतो बीजमन्यन् महेशि। द्वन्द्वं ते मन्दचेता यदि जपति जनो वारमेकं

कदाचित् ॥ जित्वा वाचामधीशं धनदमपि चिरं मोहयन्नम्बुजाक्षी वृन्दं चन्द्रार्द्ध चूडे प्रभवति स महाघोरबाणावतंसे ॥२॥ ईशो वैश्वानरस्थः शशधरविलसद् वामनेत्रेण युक्तो। बीजं ते द्वन्द्वमन्यद् विगलितचिकुरे कालिके ये जपन्ति ॥ द्वेष्टारं घ्नन्ति ते च त्रिभुवनमभितो वश्यभावं नयन्ति। सृक्कद्वन्द्वास्रधाराद्वयधर वदने दक्षिणे कालिके ति ॥ ३॥ ऊर्ध्वं वामे कृपाणं करकमलतले छिन्नमुण्डं तथोऽधः। सव्येऽभीतिं वरं च त्रिजगदघहरे दक्षिणे कालिके च ॥ जप्त्वैतन् नाम ये वा तव विमलतनुं भावयन्त्येतदम्ब। तेषामष्टौ करस्थाः प्रकटितरदने सिद्धयस्त्र्यम्बकस्य ॥ ४ ॥

वर्गाद्यं वह्नि संस्थं विधुरंतिललितं तत्त्रयं कूर्चयुग्मं। लज्जाद्वन्द्वं च पश्चात् स्मितमुखि तदधो ष्ठद्वयं योजयित्वा ॥ मातर्ये त्वां जपन्ति स्मरहरमहिले भावयन्तः स्वरूपं। ते लक्ष्मीलास्यलीला कमलदलदृशः कामरूपा भवन्ति ॥ ५॥ प्रत्येकं वा द्वयं वा त्रयमपि च परं बीजमत्यन्तगुह्यं। स्वन्नाम्ना योजयित्वा सकलमपि सदा भावयन्तो जपन्ति ॥ तेषां नेत्रारविन्दे विहरति कमला वक्त्रशुभ्रांशुविम्बे। वाग्देवी देवि मुण्डस्रगतिशयलसत्कण्ठि पीनस्तनाढ्ये ॥ ६॥

गतासूनां बाहुप्रकरकृतकाञ्चीपरिलसन् नितम्बां दिग्वस्त्रां त्रिभुवनविधात्रीं त्रिनयनाम् ॥ श्मशानस्थे तल्पे शवहृदि महाकालसुरतप्रसक्तां त्वां ध्यायन् जननि जडचेता अपि कविः ॥ ७॥ शिवाभिर्घोराभिः शवनिवहमुण्डास्थिनिकरैः। परं संकीर्णायां प्रकटित चितायां हरवधूम् ॥ प्रविष्टां सन्तुष्टामुपरि सुरतेनाति युवतीं। सदा त्वां ध्यायन्ति

क्वचिदपि न तेषां परिभवः॥ ८॥ वदामस्ते किं वा जननि वयमुच्चैर्जडधियो। न धाता नापीशो हरिरपि न ते वेत्ति परमम्॥ तथापि त्वद्भक्तिर्मुखरयति चास्माकममिते। तदेतत् क्षन्तव्यं न खलु पशुरोषः समुचितः॥ ९॥ समन्तादापीनस्तनजघनधृग्यौवनवती रतासक्तो नक्तं यदि जपति भक्तस्तव मनुम्॥ विवासास्त्वां ध्यायन् गलितचिकुरस्तस्य वशगाः। समस्ताः सिद्धौघा भुवि चिरतरं जीवति कविः॥ १०॥

समाः स्वस्थीभूतां जपति विपरीतां यदि सदा। विचिन्त्य त्वां ध्यायन्नतिशयमहाकालसुरताम्॥ तदा तस्य क्षोणीतलविहरमाणस्य विदुषः। कराम्भोजे वश्या हरवधु महासिद्धिनिवहाः॥ ११॥ प्रसूते संसारं जननि जगतीं पालयति च। समस्तं क्षित्यादि प्रलयसमये संहरति च॥ अतस्त्वं धाताऽसि त्रिभुवनपतिः श्रीपतिरपि। महेशोऽपि प्रायः सकलमपि किं स्तौमि भवतीम्॥ १२॥ अनेके सेवन्ते भवदधिकगीर्वाणनिवहान्। विमूढास्ते मातः किमपि नहि जानन्ति परमम्॥ समाराध्यामाद्यां हरिहरविरिञ्च्यादिविबुधैः। प्रपन्नोऽस्मिन् स्वैरं रतिरसमहानन्दनिरताम्॥ १३॥ धरित्री कीलालं शुचिरपि समीरोऽपि गगनं। त्वमेका कल्याणी गिरिशरमणी कालि सकलम्॥ स्तुतिः का ते मातर्निजकरुणया ('मातस्तव करुणया' — इति पाठभेदः) मामगतिकं। प्रसन्ना त्वं भूया भव मनु न भूयान्मम जनुः॥ १४॥

श्मशानस्थः स्वस्थो गलितचिकुरो दिक्पटधरः। सहस्रं त्वर्काणां निजगलितवीर्येण कुसुमम्॥ जपंस्त्वत् प्रत्येकं मनुमपि तव ध्याननिरतो। महाकालि स्वैरं

स भवति धरित्रीपरिवृढः ॥१५॥ गृहे संमार्जन्या परिगलितवीर्यं हि चिकुरं । समूलं मध्याह्ने वितरति चितायां कुजदिने ॥ समुच्चार्य प्रेम्णा मनुमपि सकृत् कालि सततं । गजारूढो याति क्षितिपरिवृढः सत्कविवरः ॥१६॥

स्वपुष्पैराकीर्णं कुसुमधनुषो मन्दिरमहो । पुरो ध्यायन् ध्यायन् यदि जपति भक्तस्तव मनुम् ॥ स गन्धर्वश्रेणीपतिरपि कवित्वामृतनदी नदीनः पर्यन्ते परमपदलीनः प्रभवति ॥१७॥ त्रिपञ्चारे पीठे शवशिवहृदि स्मेरवदनां । महाकालेनोच्चैर्मदनरसलावण्यनिरताम् समासक्तो नक्तं स्वयमपि रतानन्दनिरतो । जनो यो ध्यायेत्त्वामयि जननि स स्यात् स्मरहरः ॥१८॥ सलोमास्थि स्वैरं पललमपि मार्जारमसिते । परं चौष्ट्रं मैषं नरमहिषयोश्छागमपि वा। बलिं ते पूजायामपि वितरतां मर्त्यवसतां । सतां सिद्धिः सर्वा प्रतिपदमपूर्वा प्रभवति ॥१९॥ वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशनरतो । दिवा मातर्युष्मच्चरणकमले ध्याननिरतः ॥ परं नक्तं नग्नो निधुवनविनोदेन च मनुं । जपेल्लक्षं स स्यात् स्मरहरसमानः क्षितितले ॥20॥

इदं स्तोत्रं मातस्तव मनुसमुद्धारणजनुः । स्वरूपाख्यं पादाम्बुजयुगलपूजाविधियुत-म् ॥ निशार्धे वा पूजासमयमधि वा यस्तु पठति । प्रलापस्तस्यापि प्रसरति कवित्वामृतरसः ॥२१॥ कुरङ्गाक्षीवृन्दं तमनुसरति प्रेमतरलं । वशस्तस्य क्षोणीपतिरपि कुबेरप्रतिनिधिः ॥ रिपुः कारा-गारं कलयति च तं केलिकलया । चिरं जीवन्मुक्तः प्रभवति स भक्तः प्रतिजनुः ॥२२॥

॥ इति श्री महाकाल विरचितं दक्षिणकालिकायाः स्वरूपाख्यं स्तोत्रं समाप्तम् ॥

अथ श्रीसरस्वती स्तोत्रम् :- अब भगवती श्री सरस्वती के स्तोत्र का उल्लेख किया जाता है, जिसके नित्य पाठ से विद्या-बुद्धि एवं वांछित फल की प्राप्ति होती है।

"श्री भैरव उवाच ।। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि स्तोत्रं परम दुर्लभम् । वागीश्वरी मन्त्रगर्भं तु भुक्ति मुक्ति फल प्रदम् ।।

ॐ अस्य श्री सरस्वती स्तोत्र मन्त्रस्य श्रीकण्व ऋषि: विराट् छन्द: श्रीसरस्वती देवता ह्रीं बीजं ॐ शक्ति: ऐं कीलकं त्रिवर्ग फल साधने पाठे विनियोग: ।

ॐ ह्रीं ह्रीं हृद्यैक बीजे शशिरुचिकमले कल्पवृक्षस्य शोभे । भव्ये भव्यानुकूले कुमतिवन दवे विश्ववन्द्याङ्घ्रि पद्मे ।। पद्मे पद्मोपविष्टे प्रणतजनमनो मोद सम्पादयित्रि । प्रोत्फुल्लज्ञान कूटे हरिनिजदयिते देवि संसार सारे ।। १ ।।

श्री सरस्वती पूजन यन्त्र
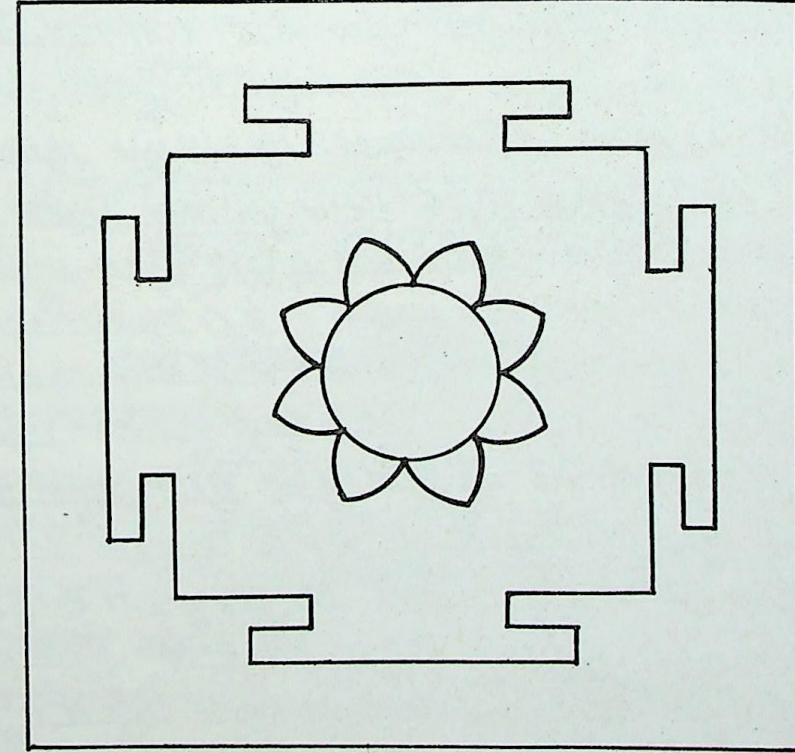
ऐं ऐं ऐं दृष्टमन्त्रे कमलभवमुखाम्भोजभूते स्वरूपे। रूपारूप प्रकाशे सकलगुणमये निर्गुणे निर्विकारे
न स्थूले नापि सूक्ष्मे ऽप्यविदितविभवे नापि विज्ञानतत्त्वे । विश्वे विश्वान्तराले सुरवर नमिते नि-
ष्कले नित्य शुद्धे ॥२॥ ह्रीं ह्रीं ह्रीं जाप्यतुष्टे हिमरुचि मुकुटे वल्लकी व्यग्र हस्ते । मातर्मातर्नमस्ते
दह दह जडतां देहि बुद्धिं प्रशस्ताम् ॥ विद्ये वेदान्त गीते श्रुतिपरिपठिते मोक्षदे मुक्ति मार्गे।
मार्गातीतस्वभावे भव मम वरदा शारदे शुभ्रहारे ॥३॥ धीं धीं धीं धारणाख्ये धृतिमतिनति-
भिर्नामभिः कीर्त्तनीये । नित्येऽनित्ये निमित्ते मुनिगण नमिते नूतने वै पुराणे ॥ पुण्ये पुण्यप्र-
वाहे हरिहरनमिते नित्य शुद्धे सुवर्णे । मातर्मात्रार्द्धतत्त्वे मति मति मति दे माधव प्रीति मोदे ॥४॥

ह्रूं ह्रूं ह्रूं ह्रूं स्वरूपे दह दह दुरितं पुस्तकं व्यग्र हस्ते । सन्तुष्टा कार चित्ते
स्मितमुखि सुभगे जृम्भिणि स्तम्भविद्ये॥ मोहे मुग्ध प्रवाहे कुरु मम विमति ध्वान्त विध्वंस
मीडे । गीर्गौर्वाग्भारति त्वं कविवररसना सिद्धिदा सिद्धविद्या ॥५॥ स्तौमि त्वां त्वां च वन्दे भज
मम रसनां मा कदाचित् त्यजेथाः। मामे बुद्धिर्विरुद्धा भवतु न च मनो देवि मे यातु पापम् ॥ मा मे दुःखं कदाचित्
क्वचिदपि विषयेऽप्यस्तु मे नाकुलत्वं। शास्त्रे वादे कवित्वे प्रसरतु मम धी मास्तु कुण्ठा कदापि ॥६॥

इत्येतैः श्लोक मुख्यैः प्रतिदिनमुषसि स्तौति यो भक्ति नम्रो । वाणीं वाचस्पते
रप्यभिमतविभवो वाक् पटुर्मृष्ट कण्ठः॥ सः स्यादिष्टार्थ लाभैः सुतमिव सततं पाति तं सा च देवी।
सौभाग्यं तस्य लोके प्रवसति कविता विघ्नमस्तं प्रयाति ॥७॥ ब्रह्मचारी व्रती मौनी त्रयोदश्यां
निरामिषः । सारस्वतो नरः पाठादस्य स्यादिष्ट लाभवान् ॥८॥ पक्षद्वये ऽपि यो भक्त्या त्रयो-
दश्येक विंशतिम् । अविच्छेदं पठेद्धीमान् ध्यात्वा देवीं सरस्वतीम् ॥९॥ शुक्लाम्बरधरां देवीं
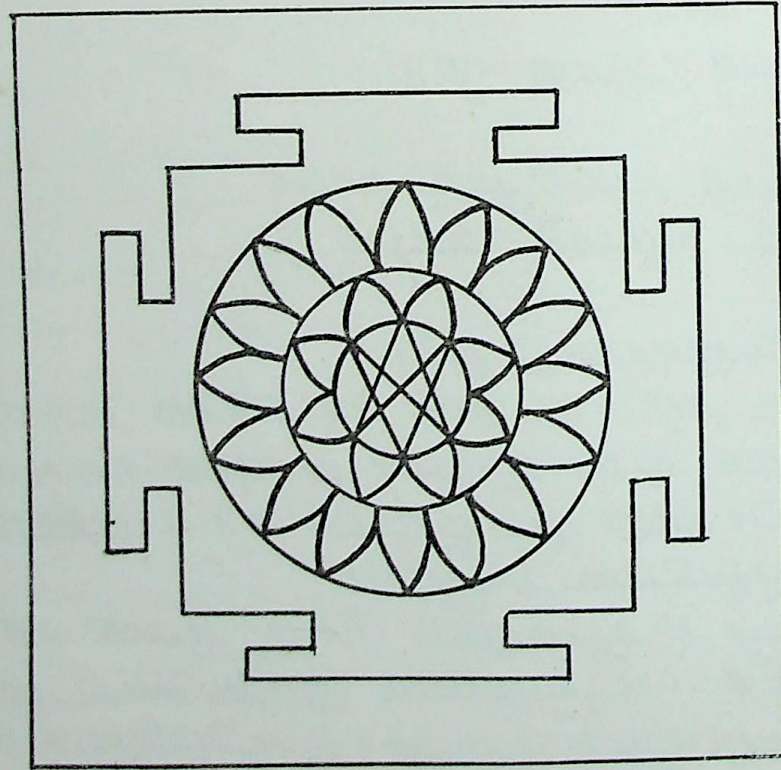
शुक्लाभरण भूषिताम् । वाञ्छितं फलमाप्नोति स लोके
नात्र संशयः ॥ १० ॥ इति ब्रह्मा स्वयं प्राह: सरस्व-
त्याः स्तवं शुभम् । प्रयत्नेन पठेन्नित्यं सोऽमृतत्वं
च गच्छति ॥ ११ ॥

॥ इति श्रीरुद्रयामल तन्त्रे दशविद्या रहस्ये सरस्वती
स्तोत्रम् समाप्तम् ॥

अथ श्रीसरस्वत्यष्टकम् :- वीणाधरे विपुल
मङ्गलदान शीले भक्तार्ति नाशिनि विरञ्चि हरीश
वन्द्ये ॥ कीर्तिप्रदेऽखिल मनोरथदे महार्हे विद्या
प्रदायिनि सरस्वति नौमि नित्यम् ॥ १ ॥ श्वेता-
ब्जपूर्ण विमलासन संस्थिते हे श्वेताम्बरावृत
मनोहर मञ्जुगात्रे । उद्यन्मनोज्ञ सित पङ्कज मञ्जु
लास्ये विद्याप्रदायिनि सरस्वति नौमि नित्यम् ॥
२ ॥ मातस्त्वदीय पदपङ्कज भक्तियुक्ता ये त्वां
भजन्ति निखिलानपरान्विहाय । ये निर्जरत्वमिह

यान्ति कलेवरेण भूवह्नि वायु गगनाम्बु विनिर्मितेन ॥ ३॥ मोहान्धकार भरिते हृदये मदीये मातः सदै-
कुरु वासमुदार भावे। स्वीयाखिलावयव निर्मल सुप्रभाभिः शीघ्रं विनाशय मनोगतमन्धकारम् ॥ ४॥
ब्रह्मा जगत् सृजति पालयतीन्दिरेशः शम्भुर्विनाशयति देवि तव प्रभावैः। न स्यात्कृपा यदि तव
प्रकट प्रभावे न स्युः कथञ्चिदपि ते निज कार्य दक्षाः ॥ ५॥
लक्ष्मीर्मेधा धरा पुष्टिर्गौरी तुष्टिः प्रभा धृतिः। एताभिः पाहि तनुभिरष्टाभिर्मां
सरस्वति ॥ ६॥ सरस्वत्यै नमो नित्यं भद्रकाल्यै नमो नमः। वेदवेदान्त वेदाङ्ग विद्यास्थानेभ्य एव
च ॥ ७॥ सरस्वति महाभागे विद्ये कमल लोचने। विद्या रूपे विशालाक्षि विद्यां देहि नमोऽस्तु
ते ॥ ८॥ यदक्षरं पदं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत्। तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि ॥ ९॥
॥ इति श्री सरस्वत्यष्टकम् सम्पूर्णम् ॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

॥ समाप्तोऽयं ग्रंथः ॥